इकाई – 1 व्यावसायिक नीति : प्रकृति, उद्देश्य एवं नीतियाँ

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 व्यावसायिक नीति का अर्थ
1.3 व्यावसायिक नीति की परिभाषा
1.4 व्यावसायिक नीति का अभ्युदय एवं विकास
1.5 व्यावसायिक नीति की प्रकृति
1.6 व्यावसायिक नीति का क्षेत्र
1.7 व्यावसायिक नीति के उद्देश्य
1.8 व्यावसायिक नीति का महत्व
1.9 व्यावसायिक नीति की सीमायें
1.10 सारांश
1.11 शब्दावली
1.12 बोध प्रश्न
1.13 बोध प्रश्नों के उत्तर
1.14 स्वपरख प्रश्न
1.15 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः

- व्यावसायिक नीति के आशय को जान सकें।
- व्यावसायिक नीति के उद्देश्यों को समझ सकें।
- व्यावसायिक नीति की प्रकृति का वर्णन कर सकें।
- व्यावसायिक नीति के महत्व का विवेचन कर सकें।

1.1 प्रस्तावना

किसी भी व्यावसायिक संगठन में लिए जाने वाले निर्णयों की प्रकृति भिन्न–भिन्न होती है। कुछ निर्णय उच्च प्रबन्ध जैसे संचालक मण्डल आदि के द्वारा लिए जाते हैं। यह समस्त संगठन से सम्बन्धित होते हैं और ऐसे निर्णयों की प्रकृति दीर्घकालीन होती है। उदाहरण के लिए कम्पनी के द्वारा नये व्यवसाय में प्रवेश संयुक्त उपकम प्रारम्भ करना, दूसरी कम्पनी के व्यवसाय का कय अथवा दूसरी कम्पनी का विलय, विनिवेश, कम्पनी के व्यवसाय का विकय, विस्तारीकरण, आधुनिकीकरण, नयी तकनीकी को अपनाना इत्यादि ऐसे निर्णय हैं, जिनका सम्बन्ध किसी एक विभाग अथवा प्रकार्य से नही होता बल्कि वह समूचे कम्पनी संगठन को प्रभावित करते हैं। दूसरी ओर अनेक निर्णय कम्पनी के किसी विशेष विभाग अथवा प्रकार्य से सम्बन्धित होते हैं और कियात्मक प्रबन्धकों द्वारा लिए जाते है। इनका अल्पकालीन प्रभाव होता है। उदाहरणार्थ मानव संसाधनों का स्थानान्तरण पदोन्नति, विकयकर्ताओं की नियुक्ति अथवा प्रशिक्षण, उत्पाद की कीमतों में परिवर्तन, वसूली नीति में परिवर्तन इत्यादि

नैत्यिक प्रकृति के निर्णय हैं, जो समूचे संगठन को प्रभावित नहीं करते हैं। बल्कि विशिष्ट विभाग अथवा कार्यो को ही प्रभावित करते हैं। प्रथम कोटि के दीर्घावधि निर्णय जो उच्च प्रबन्ध के द्वारा किये जाते हैं, व्यावसायिक नीति का निर्माण करते हैं। व्यावसायिक नीति कम्पनी के स्वरूप में आमूल चूल परिवर्तन करने के लिए उच्च प्रबन्ध के एकीकृत दृष्टिकोंण को व्यक्त करती है, जिससे कम्पनी के ध्येय एवं उद्देश्यों और प्रबंधकीय निर्णयों को मार्गदर्शन प्राप्त होता है। व्यावसायिक नीति प्रबन्ध की एक आधुनिक नवीन शाखा है, जिसे दीर्घावधि नियोजन, कम्पनी नियोजन, व्यूहनीतिक नियोजन के नाम से भी जाना जाता है। हाल के वर्षों में व्यूहनीतिक प्रबन्ध ने व्यावसायिक नीति का स्थान ग्रहण कर लिया है।

इस इकाई में आप व्यावसायिक नीति के अर्थ एवं प्रकृति का अध्ययन करेंगे तथा व्यावसायिक नीति के उद्देश्य एवं महत्व पर प्रकाश डालेंगे।

1.2 व्यावसायिक नीति का अर्थ

' व्यावसायिक नीति' का निर्माण दो शब्दों से मिलकर हुआ है।

(i) व्यवसाय और (ii) नीति

व्यूहनीतिक दृष्टिकोंण से व्यवसाय का आशय यह निर्धारित करने से है कि संगठन किस प्रकार के व्यवसाय में है, जिससे उत्पाद अथवा सेवा प्रदान करने के व्यवसाय के विशिष्ट क्षेत्र की स्पष्ट रूप में पहचान हो सके। व्यवसाय को परिभाषित करने से व्यवसाय की सीमाओं के निर्धारण अथवा व्यवसाय के क्षेत्र को परिसीमित करने की क्रिया सम्पन्न की जाती है। प्रायः व्यवसाय का ध्येय वाक्य प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में व्यवसाय को परिभाषित करता है, जो न केवल यह अभिव्यक्त करता है कि ' हम किस प्रकार के व्यवसाय में हैं' बल्कि यह भी कि ' हमें किस प्रकार के व्यवसाय में होना चाहिए ' को भी निर्धारित करता है।

नीति (Policy) से आशय संगठन के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए उसके सदस्यों की क्रियाओं को निर्देशित करने हेतु मार्ग निर्देशों से है। वी0पी0 माइकेल के अनुसार नीति "उन सामान्य सीमाओं एवं दिशाओं, जिनमें प्रबन्धकीय कार्यवाहियां की जाऐंगी , को निर्धारित करने का एक मौखिक, लिखित या गर्भित सम्पूर्ण मार्गनिर्देश है।'' फिलिप कोटलर के अनुसार नीतियॉ यह परिभाषित करती हैं कि "कम्पनी किस प्रकार अपने हितधारकों, कर्मचारियों, उपभोक्ताओं, आपूर्तिकर्ताओं, वितरकों एवं अन्य महत्वपूर्ण समूहों के साथ व्यवहार करेगी। नीतियॉ व्यक्तिगत विवेक की सीमा को संकुचित कर देती है, ताकि महत्वपूर्ण प्रकरणों पर कर्मचारी संगत क्रिया कर सकें।''

इस प्रकार व्यावसायिक नीति कम्पनी के व्यवसाय की एक सम्पूर्ण नीति है, जो कम्पनी के ध्येय एवं उद्देश्यों को दिशा प्रदान करती है और इन्हें प्राप्त करने के लिए प्रबन्धकीय क्रियाओं एवं निर्णयों का मार्ग निर्देशन करती है। व्यावसायिक नीति कम्पनी के उच्च प्रबन्ध के द्वारा व्यावसायिक क्रियाओं के प्रभावपूर्ण परिचालन के उद्देश्य से निर्मित की जाती है। अतः यह व्यवसाय के प्रति उच्च प्रबन्ध के दृष्टिकोंण को व्यक्त करती है, जिसमें उसकी व्यूहनीतिक संदृष्टि (Vision) एकीकृत होती है। अतः

व्यावसायिक नीति केवल नियमों, पद्धतियों और मार्ग निर्देशों से कहीं अधिक व्यापक एवं विस्तृत होती है, जिसमें कम्पनी की संदृष्टि, ध्येय एवं उद्देश्य, वातावरणीय जॉच, परिचालन की एक व्यूहनीति तथा समय–तत्व इत्यादि सम्मिलित होते है।

स्टॉनफोर्ड ने व्यावसायिक नीति में चार विशेषताओं अर्थात (i) विस्तृत दृष्टिकोंण (ii) एकीकृत प्रकृति (iii) व्यूहनीतिक दृष्टि तथा (iv) सामान्य प्रबन्ध के दायित्व को सम्मिलित किया है।

व्यावसायिक नीति कम्पनी का वह भावी नीति कथन है, जो यह अभिकल्पित करता है कि कम्पनी क्या है,? वह क्या बनना चाहती है? और दिए हुए समय में, दी हुई परिस्थितियों के अन्तर्गत वह इसे किस प्रकार प्राप्त कर सकती है ?

1.3 व्यावसायिक नीति की परिभाषा

क्राइस्टेन्सन एवं अन्य के अनुसार व्यावसायिक नीति '' वरिष्ठ प्रबन्धन के कार्यों और उत्तरदायित्वों, जो सम्पूर्ण उपक्रम की सफलता को प्रभावित करने वाली मुख्य समस्यायें हैं और संगठन की दिशा और उसके भविष्य को निर्धारित करने वाले निर्णयों का अध्ययन है। व्यवसाय में नीति की समस्यायें, सार्वजनिक कार्यों की नीति के समान, उद्देश्यों के चयन, संगठनात्मक पहचान एवं चरित्र का स्वरूप परिवर्तित करने, यह लगातार परिभाषित करने कि प्रतियोगिता अथवा विपरीत परिस्थितियों में लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए क्या किए जाने की आवश्यकता है और इसके लिए संसाधनों को गतिमान करने से सम्बन्ध रखती है।''

1.4 व्यावसायिक नीति का अभ्युदय एवं विकास

ज्ञान की एक शाखा के रूप में व्यावसायिक नीति का अभ्यूदय वर्ष 1911 मे माना जाता है, जबकि सर्वप्रथम प्रबन्ध में एक एकीकृत पाठ्यक्रम के रूप में व्यावसायिक नीति को हार्वर्ड बिजनैस स्कूल में प्रारम्भ किया गया, इस पाठ्यक्रम का उद्देश्य सामान्य प्रबन्धन की दक्षता में सुधार करना था। इसके लगभग पैतालीस वर्षों के पश्चात व्यावसायिक नीति को एक अध्ययन विषय के रूप तक मान्यता प्राप्त हुई, जब कि फोर्ड फाउन्डेशन एवं कार्नेगी फाउन्डेशन ने दो शोध अध्ययन आयोजित किये। गोर्डन एवं हॉवेल रिपोर्ट (1959) में यह संस्तुति दी गयी कि व्यावसायिक नीति पर एक पाठ्यक्रम प्रारम्भ किया जाय, जिससे विद्यार्थियों को अपने विभिन्न पृथक व्यावसायिक क्षेत्रों में अर्जित ज्ञान को एकीकृत करने तथा उसे जटिल व्यवसाय नीति के विश्लेषण में उपयोग करने का अवसर प्रदान कर सके। दूसरी रिपोर्ट, जिसे पियर्सन रिपोर्ट कहा जाता है, भी 1959 में ही प्रकाशित हुई। जिसने प्रथम रिपोर्ट के समान ही यह संस्तुति की कि व्यावसायिक एवं प्रशासन पाठ्यक्रमों के समस्त विद्यार्थियों को अनिश्चिता पूर्ण परिस्थितियों में विश्लेषण एवं नीति को एकीकृत करते हुए प्रशासनिक प्रक्रियाओं के अध्ययन की आवश्यकता हैं। तब से अमेरिकन व्यावसायिक शैक्षणिक संस्थाओं में व्यावसायिक नीति का पाठ्यक्रम अनिवार्य कर दिया गया, जिसे पाठ्यक्रम में कुछ अन्तरों के साथ दूसरे देशों में भी अंगीकार किया गया।

वास्तव में व्यावसायिक नीति आज प्रबन्धकीय प्रशिक्षण संस्थानों के एकीकृत पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग बन गयी है। व्यावसायिक नीति के प्रति वर्तमान दृष्टिकोंण

असतत परिवर्तनों के प्रति प्रबन्धकीय आवश्यकताओं से उत्पन्न हुआ है , जिसके अन्तर्गत आज के जटिल संगठनों की सामाजिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक एवं व्यवस्थागत विशेषताओं को अध्ययन में रखा जाता है। ग्लूक के अनुसार व्यावसायिक नीति प्रबन्धनों के द्वारा नियोजन तकनीकों के उपयोग से विकसित हुई है। प्रबन्धकों के द्वारा नियोजन तकनीकों का उपयोग पहले से ही होता आया है, किन्तु पूर्वानुमान लगाने की तकनीकें जैसे बजट, दीर्घकालीन नियोजन, पूँजी, बजटन और उद्देश्यों के द्वारा प्रबन्ध इत्यादि लगातार अधिक सटीक एवं प्रभावशाली होते गये हैं। बाद के वर्षों में इसने व्यूहनीतिक नियोजन का स्वरूप ग्रहण कर लिया है, जो भविष्य की भूमिका का अपेक्षाकृत अधिक सटीक पूर्वानुमान करने में सक्षम था। वर्तमान में व्यूहनीतिक नियोजन का स्थान भी व्यूहनीतिक प्रबन्ध के द्वारा ले लिया गया है, जो व्यूहनीतिक निर्णयन की प्रक्रिया का उपयोग करता है। व्यावसायिक संगठनों के प्रबन्ध को मात्र व्यावसायिक नीति निर्माण एवं प्रकार्यात्मक एकीकरण से आगे लेकर व्यूहनीतिक नियोजन के नये दृष्टिकोंण एवं विधियों के विकास का क्रम जारी है। इस व्यावसायिक नीति का सिद्धान्त आज भी एक विकासमान अध्ययन शाखा बनी हुई है। व्यावसायिक नीति उन व्यूहनीतिक प्रकरणों का समाधान करती है जिनसे व्यवसाय के भविष्य का निर्धारण होता है। परंपरागत सामान्य प्रबन्ध, जो नैत्यिक प्रकृति की समस्याओं का समाधान कर सकता है, के विपरीत व्यावसायिक नीति सामान्य सिद्धान्तों को विभिन्न परिस्थितियों में सुदृढ़ विस्तृत जानकारी के साथ उपयोग करने योग्य बनाती है। सामान्य सिद्धान्तों में व्यूहनीतिक दृष्टिकोंण समाविष्ट करने से प्रबन्धकों की सोच नवीन अस्वाभाविक एवं व्यूहनीतिक प्रकृति की हो जाती है। यह आवश्यक भी है, क्योंकि भावी सोच रखने वाले संगठनों का दायित्व केवल वस्तुओं का उत्पादन या लाभ अर्जित करना न होकर साथ में अत्यधिक जटिल पारिस्थितिकीय, नैतिक, राजनीतिक, साप्रदायिक, लैंगिग और सामाजिक समस्याओं के समाधान करने के लिए योगदान करना भी होता है। (टोफलर) व्यावसायिक नीति का अध्ययन एवं प्रशिक्षण जो निरन्तर विशिष्टीकृत होता जा रहा है, भावी पीढ़ी के प्रबन्धनों को नये उत्तरदायित्व ग्रहण करने के लिए तैयार करता है, जिसके लिए विद्यमान अवधारणाओं एवं तकनीकों का पुनरावलोकन, परीक्षण एवं परिवर्द्धन करने की आवश्यकता होती है।

1.5 व्यावसायिक नीति की प्रकृति

व्यावसायिक नीति की उपरोक्त परिभाषा के आधार पर व्यावसायिक नीति की निम्नांकित विशेषतायें स्पष्ट होती है :

(1) **व्यावसायिक नीति का सम्बन्ध उच्च प्रबन्ध से होता है:** व्यावसायिक नीति उच्च प्रबन्ध की भूमिका, कार्यो एवं उत्तरदयित्वों से सम्बन्धित होती है। उच्च प्रबन्ध में मुख्य कार्याधिकारी, अध्यक्ष, सामान्य प्रबन्धक, कार्यकारी संचालक एवं अन्य मुख्य व्यूनीतिकार सम्मिलित होते है, जिनका सम्बन्ध कम्पनी के नैत्यिक संचालनात्मक कार्यो से न होकर सम्पूर्ण संगठन की भावी दिशा निर्धारित करने से होता है। इन प्रबन्धकों की भूमिका कार्य को करने की अपेक्षा सोचने की होती है, जो उन संगठनात्मक समस्याओं पर चिन्तन करते हैं, जिनसे संगठन अपनी भावी दिशायें निर्धारित करता है। उच्च प्रबन्ध पर व्यूहनीतिक

नियोजन व्यूहनीति के निर्माण, संगठन को संदृष्टि एवं ध्येय तथा उद्देश्यों को निर्धारित करने, संसाधनों की व्यवस्था करने एवं मूल्यांकन का दायित्व होता है।

(2) **व्यावसायिक नीति कम्पनी के सम्पूर्ण व्यवसाय के लिए निर्मित की जाती है:** व्यावसायिक नीति का सम्बन्ध संगठन की उस व्यूहनीति से होता है, जिसके द्वारा संगठन अपने व्यवसाय की भावी दिशाओं एवं क्षेत्र का निर्धारण करता है। विश्लेषणात्मक रूप में व्यूहनीति के तीन स्तर होते हैं :

(i) कम्पनी स्तर की व्यूहनीति

(ii) व्यवसाय स्तर की व्यूहनीति

(iii) क्रियात्मक स्तर की व्यूहनीति

व्यूहनीति के स्तर

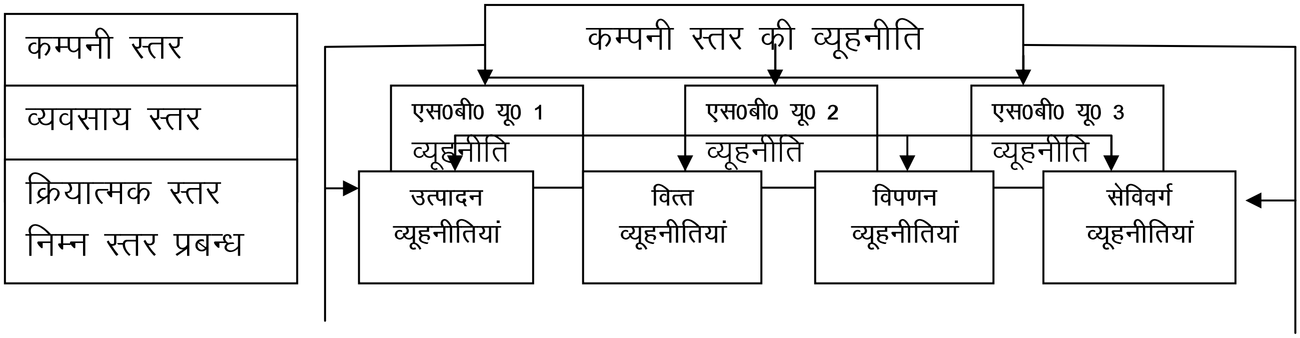

कम्पनी स्तर की व्यूहनीति सम्पूर्ण संगठन के लिए निर्मित की जाती है, जबकि व्यवसाय स्तर की व्यूहनीति उसी फर्म के अन्तर्गत एक व्यक्तिगत उत्पाद अथवा सेवा या एक वस्तु या सेवा के व्यवसाय के बाजार से सम्बन्धित होती है। संचालनात्मक स्तर की व्यूहनीति क्रियात्मक इकाइयों जैसे प्लान्ट, विक्रय प्रभाग, विपणन क्षेत्र इत्यादि नैत्यिक संचालनात्मक क्रियाओं तक सीमित होती है। व्यावसायिक नीति कम्पनी स्तर की व्यूहनीति होती है, जिसका क्षेत्र व्यवसाय की व्यक्तिगत इकाइओं की अपेक्षा सम्पूर्ण व्यवसाय तक विस्तृत होता है।

(3) **व्यावसायिक नीति मार्ग** निर्देशन **से कहीं अधिक व्यापक होती है:** यद्यपि व्यावसायिक नीति कम्पनी के ध्येय एवं उद्देश्यों तथा प्रबन्धकीय निर्णयन हेतु मार्ग निर्देशन एवं दिशानिर्देशन करती है, किन्तु इसका वास्तविक प्रभाव इससे कहीं अधिक व्यापक होता है। यह केवल नियमों एवं पद्धतियों तक ही सीमित नहीं होती है। बल्कि सभी सम्बद्ध पक्षों के बीच सम्बन्धों एवं दायित्वों का व्यापक क्षेत्र निर्मित करती है। कम्पनी के व्यावसायिक नीति के कथन में यह परिलक्षित होता है कि कम्पनी वर्तमान में कहॉ पर है, यह क्या प्राप्त करना चाहती है और इसे वह दी हुई परिस्थितियों में किस प्रकार एवं कितने समय में प्राप्त कर लेगी।

(4) **व्यावसायिक नीति संगठन के भावी स्वरूप को निर्धारित करती है:** व्यावसायिक नीति व्यवसाय की भावी पहचान एवं चरित्र में मूलभूत रूपान्तरण करती है, जिससे यह निश्चित होता है कि व्यवसाय का भावी स्वरूप क्या होगा अर्थात क्या संगठन विद्यमान व्यवसाय के साथ ही नए व्यवसाय, नए बाजार में प्रवेश करेगा अथवा क्या वह अपने विद्यमान व्यवसाय मे ही प्रभावशाली स्थिति प्राप्त करेगा। व्यावसायिक नीति भविष्योन्मुख होती है और इस बात पर निर्भर करती है कि उच्च प्रबन्ध भावी व्यावसायिक वातावरण के दृष्टिगत संगठन मे किस प्रकार के परिवर्तन लाना चाहता है।

(5) **व्यावसायिक नीति संगठन की** संदृष्टि, **ध्येय एवं लक्ष्यों को** परिभाषित करने हेतु मार्ग निर्देशन **प्रदान करती है:** व्यावसायिक नीति संगठन के उच्च प्रबन्ध का उसके व्यवसाय के प्रति एक सुविकसित दर्शन होता है कि वह व्यवसाय को किस दिशा में ले जाना चाहता हैं संगठन के विभिन्न कार्य अन्ततः व्यवसाय की संदृष्टि, ध्येय एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने मे योगदान करते हैं। व्यावसायिक नीति इसे निर्धारण करने मे मार्ग निर्देशन करती है। उच्च प्रबन्धक परिवर्तनशील प्रतियोगी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए भावी पूर्वानुमान लगाते है और व्यवसाय के मूल्यों एवं उद्देश्यों को निर्धारित करते हैं। व्यूहनीतिक क्रियान्वयन मे यह संदृष्टि एवं ध्येय तथा उद्देश्य प्रबंधकीय निर्णयन का मार्ग निर्देशन भी करते हैं।

(6) **व्यावसायिक नीति संसाधनों को गतिमान करती है:** संगठनात्मक लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की प्राप्ति संसाधनों की उपलब्धता के अभाव मे संभव नही होती है। व्यावसायिक नीति के अन्तर्गत व्यवसाय की भावी क्रियाओं हेतु वित्तीय, भौतिक एवं मानवीय संसाधनों की आवश्यकताओं का पूर्वानुमान कर उसे गतिमान करने की व्यवस्था भी सम्मिलित होती है। व्यूहनीतिक क्रियान्वयन हेतु संसाधनों का आबंटन किया जाना एक अनिवार्य पूर्व शर्त होती है।

(7) **व्यावसायिक नीति की प्रकृति दीर्घकालीन होती है :** व्यावसायिक नीति का उद्भव दीर्घकालीन नियोजन से ही हुआ है। अल्पकालीन निर्णयों के आधार पर कम्पनी के स्वरूप में महत्वपूर्ण परिवर्तन संभव नहीं होता है। व्यूहनीतिक निर्णय कम्पनी को भावी प्रगति एवं समृद्धि पर महत्वपूर्ण पभाव डालने वाले होते हैं , जो लम्बे समय के लिए चयन किये जाने वाले व्यूहनीतिक विकल्पों पर आधारित होते हैं।

(8) **व्यावसायिक नीति व्यवसाय हेतु व्यापक सीमा रेखायें प्रदान करती हैं :** व्यावसायिक नीति सम्बन्धी निर्णयों का सम्बन्ध आन्तरिक समस्याओं की अपेक्षा वाहय समस्याओं से अधिक होता है। अतः यह व्यवसाय के क्रियात्मक प्रबन्धकों को वाह्य सुअवसरों का लाभ उठाने के लिए विस्तृत सीमा रेखायें निर्धारित करती है,जिसके अन्तर्गत उनके निर्णय करने का विकल्प सीमित एवं निश्चित हो जाता है।

(9) **व्यावसायिक नीति व्यूहनीति एवं युक्ति से व्यापक होती है :** ऍन्साफ के अनुसार व्यावसायिक नीति सांयोगिक निर्णय है जबकि व्यूहनीति निर्णयन के

लिए नियम है। इस प्रकार व्यावसायिक नीति सांयोगिक घटनाओं के लिए अग्रिम में दिशा निर्देशन प्रदान करती है। व्यावसायिक नीति यह मार्ग निर्देशन करती है कि संगठन में लोगों को निश्चित परिस्थितियों में क्या करना चाहिए। यह उच्च प्रबन्ध का विषय है, जिसे प्रत्यायोजित नहीं किया जा सकता है। व्यूहनीति संचालित की जाने वाली योजनाओं एवं उन्हें संसाधनों के आबंटन के निर्धारण से सम्बन्धित है जबकि युक्तियॉ इन योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु साधनों को उपलब्ध कराने से सम्बन्ध रखती हैं।

1.6 व्यावसायिक नीति का क्षेत्र

व्यावसायिक नीति का क्षेत्र इसकी प्रकृति के अनुरूप है जिसमें व्यवसाय के उच्च प्रबन्ध के दर्शन के अनुसार एक ओर व्यावसायिक संगठन का घ्येय एवं उद्देश्य सम्मिलित होते हैं और दूसरी ओर व्यवसाय की प्रत्येक गतिविधि, व्यूहनीति, व्यूहनीति नियोजन के सम्बन्ध में दिशा निर्देश एवं मार्ग निर्देश सम्मिलित होते हैं। उच्च प्रबन्ध व्यवसाय को किस रूप मे अभिकल्पित करता है, उसके अनुसार व्यावसायिक नीति कार्यक्षेत्र की सीमाओं को रेखांकित करती है कि क्या किया जाना है और क्या नहीं किया जाना है, उच्च प्रबन्ध के द्वारा विद्यमान वाहय व्यावसायिक पर्यावरण की जॉच, आन्तरिक मूल्यांकन जिसके अन्तर्गत शक्तियों, कमजोरियों, अवसरों एवं चुनौतियों का विश्लेषण सम्मिलित होती है, आदि व्यावसायिक नीति के क्षेत्र का विषय है। साथ ही, व्यूहनीति निर्माण, व्यूहनीतिक विकल्पों की पहचान एवं चयन, व्यूहनीतिक क्रियान्वयन, संसाधनों को गतिमान करना, संसाधन आबंटन तथा व्यूहनीतिक मूल्यांकन एवं सुधार की प्रक्रियायें एवं निर्णय व्यावसायिक नीति की परिधि में सम्मिलित किये जाते हैं।

संक्षेप में, व्यावसायिक नीति के क्षेत्र में निम्नांकित को सम्मिलित किया जा सकता हैः

(i) सम्पूर्ण संगठन के व्यूहनीतिक निश्चय का निर्धारण, जिसमे संगठन की संदृष्टि, ध्येय, उद्देश्य एवं लक्ष्य निर्धारण सम्मिलित होते हैं।

(ii) व्यवसाय के वाह्य पर्यावरण की जांच, जिसमें 'पेस्टेल' विश्लेषण सम्मिलित है।

(iii) व्यवसाय के आंतरिक पर्यावरण का मूल्यांकन जिसमें संगठनात्मक शक्तियों एवं कमजोरियों, अवसरों एवं चुनौतियों की पहचान एवं 'स्वॉट' विश्लेषण सम्मिलित है,

(iv) संगठन के क्रियात्मक उद्देश्यों एवं सीमाओं के मार्ग निर्देश

(v) संगठनात्मक उद्देश्यों के अनुसार उद्देश्यपूर्ण एवं मात्रात्मक क्रियात्मक उद्देश्यों के निर्धारण हेतु क्रियात्मक क्षेत्रों की पहचान एवं दिशा निर्देश।

(vi) संगठन की समस्त गतिविधियों हेतु मार्ग निर्देश एवं दिशा निर्देश, जिससे संगठन एवं उसकी गतिविधियों को निर्धारित नीति, व्यूहनीति एवं संगठनात्मक संदृष्टि एवं ध्येय के अनुरूप गतिमान किया जा सके।

(vii) व्यूहनीति निर्माण

(viii) व्यूहनीति विकल्पों की पहचान, विश्लेषण एवं चयन।

(ix) व्यूहनीतिक क्रियान्वयन

(x) संसाधनो को गतिमान करना एवं उन्हें आबंटित किया जाना।

(xi) व्यूहनीतिक मूल्यांकन एवं सुधार।

1.7 व्यावसायिक नीति के उद्देश्य

व्यावसायिक नीति व्यूहनीतिक प्रबन्धन प्रक्रिया में सामान्य प्रबन्ध का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण दृष्टिकोंण है, व्यावसायिक नीति विभिन्न प्रकार की संगठनात्मक गतिविधियों एवं क्रियाओं को समेकित कर उन्हें एक निश्चित दिशा प्रदान करती है प्रबन्ध के प्रत्येक स्तर हेतु मार्ग निर्देशन प्रदान करती है। इसके अन्तर्गत लिए गये निर्णय व्यवसाय की भावी दिशा निर्धारित करते है। और व्यावसायिक नीति इस प्रकार संगठन की संदृष्टि, ध्येय एवं उद्देश्यों का भी मार्ग निर्देशन करती है। संगठन के उच्च प्रबन्ध के द्वारा लिए गये यह दीर्घकालीन निर्णय व्यवसाय की भावी सफलता सुनिश्चित करते हैं और उसे दूसरे संगठनों की तुलना कें विशिष्टता एवं प्रतियोगितात्मक लाभ की स्थिति प्रदान करते हैं। इस प्रकार व्यावसायिक नीति कुछ निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति मे सहायक होती हैं।

स्टॉनफोर्ड ने व्यावसायिक नीति के छः उद्देश्यों का उल्लेख किया है। यह उद्देश्य निम्नांकित हैं:

1. संगठन के विभिन्न क्रियात्मक क्षेत्रों को एक साथ लेकर, सम्पूर्ण संगठन अथवा फर्म को एक इकाई के रूप में अभिकल्पित करतन।
2. विभिन्न घटकों जैसे स्थितियॉ, सक्षमतायें, लक्ष्यों एवं साधनों को भावी क्रियाओं के विश्लेषण, निर्णयन एवं नियोजन के आधार के रूप में संम्बन्धित करना।
3. फर्म के चालू प्रबन्धन में निर्णयों एवं योजनाओं को क्रियान्वित करने के प्रावधान निर्मित करना।
4. सामान्य प्रबन्ध को इस योग्य बनाना कि वह फर्म के सदस्यों को यह बता सके कि फर्म से क्या अपेक्षायें की गयी हैं। जिससे सदस्यों को व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से लक्ष्यों के प्रति प्रदर्शन करने हेतु अभिप्रेरित किया जा सके।
5. अपेक्षित दिशाओं मे कम्पनी की प्रगति के मापन के साधनों को सम्मिलित करना।
6. निश्चित समय अन्तरालों में सार्वधिक पूर्नमूल्यांकन करना, नवीन अवसरों, चुनौतियों अथवा जोखिमों की पहचान करना तथा परिवर्तत दक्षताओं के अनुरूप लक्ष्यों एवं साधनों को समायोजित करना।

व्यावसायिक नीति व्यवसायिक संगठन के भावी विकास के प्रति उच्च प्रबन्ध के समेकित दृष्टिकोंण को व्यक्त करती है। अतः व्यावसायिक फर्म के लक्ष्य व्यावसायिक नीति के उद्देश्यों पर निर्भर करते हैं। इस कारण से सामान्य प्रबन्ध का कार्य न करने वाले क्रियात्मक प्रबन्धकों के लिए भी व्यावसायिक नीति का अध्ययन आवश्यक माना गया है। व्यावसायिक नीति की अध्ययन शाखा मे एक ओर व्यावसायिक प्रबन्धकों द्वारा पूर्व में अध्ययन किये गये पाठ्यक्रमों के द्वारा प्राप्त ज्ञान को समेकित किया जाता है और दूसरी ओर अर्न्तअनुशासनात्मक, अर्न्तविभागीय और अर्न्तक्रियात्मक क्षेत्रों मे

व्यावहारिक अध्ययन के द्वारा प्रबन्धकों मे विश्लेषणात्मक एवं निर्णयन कौशलों को विकसित किया जाता है।

एक अध्ययन शाखा के रूप में व्यावसायिक नीति के प्रमुख उद्देश्य निम्नवत हैं:

(i) व्यावसायिक नीति एवं व्यूहनीतिक प्रबन्ध का ज्ञान प्रदान करना: किसी भी अनुशासन के ज्ञान प्रदान करने के मूलभूत उद्देश्य की भॉति ही व्यावसायिक नीति की ज्ञान शाखा न केवल ज्ञान का सृजन करती है बल्कि संगठन के उच्च प्रबन्ध को नीति एवं व्यूहनीति के सम्बन्ध में विद्यमान साहित्य एवं अवघारणाओं को समझने, व्यवसाय पर वाह्य वातावरणीय कारकों के प्रभाव की जॉच कर उपर्युक्त व्यावसायिक नीति के निर्माण, क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन में सहायता करती है। व्यावसायिक नीति का ज्ञान प्रबन्धक के निम्नांकित उद्देश्यों की पूर्ति करता है:

(i) व्यावसायिक नीति की अवधारणाओं, नीतियॉ, व्यूहनीतयॉ, युक्तियॉ योजना एवं कार्यक्रमों, व्यूहनीतिक निश्चयों इत्यादि को समझने योग्य कौशल प्रदान करना।

(ii) व्यवसाय के प्रासंगिक वाह्य एवं आन्तरिक वातावरण का विश्लेषण एवं जॉच व्यावसायिक नीति के निर्माण के सन्दर्भ में करने का कौशल प्रदान करना।

(iii) संगठन के व्यूहनीतिक निश्चय– संदृष्टि, ध्येय, एवं उद्देश्यों को निर्धारण करने में सक्षम बनाना।

(iv) व्यूहनीति के निर्माण मे निहित विभिन्न प्रक्रियाओं एवं चरणों को समझने तथा संगठनात्मक शक्तियों एवं कमजोरियों तथा वाहय वातावरण में उपलब्ध अवसरों एवं चुनौतियों के विश्लेषण के आधार पर संगठनात्मक व्यूहनीति को निर्मित करने का कौशल प्रदान करना।

(v) प्रबन्धकों को व्यूहनीतिक क्रियान्वयन की प्रक्रिया को समझने मे सक्षम बनाना।

(vi) विभिन्न उद्योगों एवं क्षेत्रों में व्यावसायिक नीति की विशिष्टताओं के दृष्टिगत विभिन्न क्षेत्रों की विशिष्ट समझ प्रदान करना।

(vii) प्रबन्धकों को अपूर्ण सूचनाओं की उपलब्धता की स्थिति मे जटिल व्यावसायिक समस्याओं के समाधान में, विशेषज्ञों के द्वारा समस्याओं के तकनीकी पहलुओं पर अधिक और व्यवसाय के सम्पूर्ण हितों की उपेक्षा किये जाने के दृष्टिकोंण के विपरीत सामान्यीकृत दृष्टिकोंण पर ध्यान केन्द्रित करना, जो प्रबन्धकों को विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों मे समस्या को हल करने एवं निर्णय लेने मे सक्षम बनाता है।

(viii) व्यावसायिक नीति के क्षेत्र में उपलब्ध साहित्य एवं शोध को समेकित कर प्रयोग करने का कौशल प्रदान करना।

2. कौशल **विकासः** ज्ञान एवं कौशल परस्पर सम्बन्धित हैं। कौशल विकास के द्वारा अर्जित ज्ञान का उपयोग करने की दक्षता प्राप्त होती है। व्यावसायिक नीति के अध्ययन एवं प्रशिक्षण में प्रयुक्त विशेष अध्ययनों के विश्लेषण से व्यावसायिक घटनाओं के द्वारा अनुभूत ज्ञान के उपयोग का कौशल प्राप्त होता है। कौशल विकास के सम्बन्ध में व्यावसायिक नीति के निम्नाकित उद्देश्य हैं :

   (i) प्रबन्धकों को विश्लेषण योग्यता अर्जित करने तथा इस ज्ञान का उपयोग विशेष परिस्थितियों में करने में सक्षम बनाना।

   (ii) संगठन का आन्तरिक और वाहय वातावरणीय विश्लेषण (स्वॉट एवं पेस्टेल विश्लेषण)करने और सामान्य प्रबन्ध को निर्णय लेने में प्रासंगिक कारकों की पहचान करने में सक्षम बनाना।

   (iii) तकनीकी, प्रशासकीय एवं अवधारणात्मक कौशल में प्रबन्धकों को दक्ष करनाः राबर्ट आर0 काट्ज ने प्रबन्धकों के लिए आवश्यक तकनीकी, प्रशासकीय एवं अवधारणात्मक तीन कौशलों की पहचान की है। व्यावसायिक नीति का उद्देश्य इन कौशलों को प्रदान करना है।

3: **अभिवृत्तियों का विकास :** प्रबंधकीय निर्णयन प्रक्रिया प्रबंधको के ज्ञान एवं कौशल के साथ–साथ उनकी अभिवृत्तियों, दृष्टिकोणों एवं जीवन मूल्यों पर भी निर्भर करती है। ज्ञान एवं कौशल अर्जित करने से अभिवृत्तियों का विकास होता है, जिनसे उच्च प्रबन्ध को उपयुक्त निर्णयों को लेने में सहायता प्राप्त होती है। इस प्रकार अभिवृत्ति विकास व्यावसायिक नीति का एक प्रमुख उद्देश्य है। अभिवृत्ति विकास से उच्च प्रबन्ध के कार्य निम्नवत प्रकार से प्रभावित होते हैं :

   (i) प्रबन्धकों में किसी समस्या के प्रति विशेषज्ञतापूर्ण दृष्टिकोंण की अपेक्षा सामान्य दृष्टिकोंण उत्पन्न होता है, जो प्रबंधकों को अनिश्चितता पूर्ण परिस्थितियों में , कम उपलब्ध सूचनाओं के आधार पर निर्णय लेने के योग्य बनाता है।

   (ii) प्रबंधकों की अभिवृत्ति लचीली, उदार एवं नए विचारों को स्वीकार करने वाली बन जाती है, जिसमें कठोरता, तकनीकी आवश्यकताओं एवं पूर्ण जानकारी के स्थान पर समस्या के समाधान करने हेतु व्यावहारिक दृष्टिकोंण को अपना कर प्रबंधक अधिक पेशेवर पद्धतियों का उपयोग करने के योग्य बनते हैं।

   (iii) प्रबंधकों के निर्णयों में बिलम्ब को दूर किया जा सकता है तथा उनके निर्णय आंशिक अज्ञानता एवं अल्प सूचनाओं पर आधारित होने के करण अनुकूलतम न होते हुए भी व्यावसायिक सुअवसरों का सम्यक लाभ उठाने के लिए समस्या की प्रकृति तथा उसके समाधान पर केन्द्रित होते हैं।

(iv) प्रबंधकीय निर्णयों में सृजनात्मकता एवं नव प्रवर्तनात्मकता का समावेश होने से वह वास्तविक गतिशील विश्व की परिवर्तनशीलता एवं अनिश्चितता के विरूद्ध नए तरीकों एवं विधियों की खोज कर सकते हैं।

(v) प्रबन्धक वृहत परिदृश्य को समझने तथा 'आउट ऑफ बॉक्स' अर्थात व्यापक सोच को अपना कर प्रबन्ध के क्रियात्मक क्षेत्रों की अन्र्त निर्भरता तथा वाहय कारकों के मध्य साम्य स्थापित करके अपने प्रदर्शन को बेहतर कर सकते हैं।

4. **सामाजिक** उद्देश्य : व्यवसाय एवं समाज परस्पर आश्रित हैं। व्यवसाय समाज से ही विभिन्न आगतें प्राप्त करता है और उनमें मूल्य संवर्द्धन कर समाज के उपभोग एवं संतुष्टि हेतु उसे प्रदान कर देता है। वर्तमान वैश्विक व्यावसायिक वातावरण में व्यवसाय का सामाजिक उत्तरदायित्व महत्वपूर्ण रूप में बढ़ गया है, जिसकी पूर्ति के लिए व्यावसायिक नीति निम्नांकित सामाजिक उद्देश्यों को ध्यान में रखती है :

   1. दुर्लभ संसाघनों का अनुकूलतम उपयोग सुनिश्चित करना तथा संसाघनों के बेहतर उपयोग के वैकल्पिक तरीकों एवं विधियों का पता लगाना।
   2. पारिस्थितिकीय चुनौतियों के प्रति संवेदनशीलता के साथ उनके समाधान के उपाय करना।
   3. विभिन्न हितधारकों जैसे निवेशकों, ऋणदाताओं, उपभोक्ताओं, कार्मिकों, सरकार, जनता आदि के परस्पर विरोधी हितों में साम्य स्थापित करना।
   4. व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वहन करना।

5. **अन्य** उद्देश्य :

   1. भावी पीढ़ी के प्रबन्धकों को नये उत्तरदायित्व ग्रहण करने के लिए तैयार करना।
   2. विच्छिन्न या असतत परिवर्तनों के प्रबन्धन हेतु कारगर प्रणालियां विकसित करना।
   3. तकनीकी एवं नवाचारों के विनाशकारी परिवर्तनों जैसे विद्यमान उत्पाद के स्थान पर नए उत्पाद के आ जाने से विद्यमान उत्पाद उद्योग का विनाश हो जाने के प्रभावों के प्रति अग्रिम वैकल्पिक उपायों की पहचान करना।

1.8 व्यावसायिक नीति का महत्व

यद्यपि व्यावसायिक नीति का उद्भव हाल के वर्षो में ही हुआ है, किन्तु इसके द्वारा उच्च प्रबन्ध को एकीकृत एवं समन्वित दृष्टिकोंण को अपनाकर सम्पूर्ण संगठन को एक इकाई के रूप में लेकर प्रबंध के क्रियात्मक क्षेत्रों का समुचित मार्गदर्शन करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया गया है। वैज्ञानिक प्रबन्ध के युग से अब तक

व्यावसायिक नीति का क्षेत्र एवं भूमिका दोनों विस्तृत हुए हैं और इससे प्रबन्धकों को क्रियात्मक क्षेत्रों से आगे जाकर व्यापक संदृष्टि अपनाने मे सहायता प्राप्त हुई है। इससे पूर्व प्रबन्धन के क्रियात्मक क्षेत्रों जैसे उत्पादन, वित्त, विपणन, विक्रय, से सेविवर्ग इत्यादि को ही आधारभूत इकाई मानकर संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने की और ध्यान दिया जाता था, किन्तु इन सभी भिन्न क्रियात्मक क्षेत्रों के प्रति एकीकृत सोच का अभाव था। व्यावसायिक नीति के माध्यम से संगठन के विभिन्न उप–प्रणालियों को एकीकृत करने, वाहय वातावरण के साथ संगठन का सम्बन्ध स्थापित करने तथा विद्यमान अवसरों एंव चुनौतियों के दृष्टिगत संगठन को प्रतिस्पर्धात्मक लाभ प्राप्त करने की स्थिति में लाने तथा एक विशिष्ट स्वरूप ग्रहण करने के लिए व्यूहनीतियों का निर्माण एवं क्रियान्वयन करने तथा उसके अनुरूप संगठन के समस्त स्तरों का मार्गदर्शन करने एवं उनके प्रदर्शन का तत्काल मूल्यांकन, अनुश्रवण एवं सुधार करने की सामर्थ्य विकसित हुई है, जिससे संगठन को उच्चतर प्रदर्शन की दिशा में ले जाया जा सके।

व्यावसायिक नीति से संगठन के समस्त हितधारकों उच्च प्रबन्ध, क्रियात्मक एवं निम्न स्तरीय प्रबन्ध, समाज, सरकार एवं उपभोक्ताओं के हितों का संवर्द्धन हुआ है। व्यावसायिक नीति के महत्व को निम्न बिन्दुओं में समझाया जा सकता है :

(i) **व्यवसाय का सम्पूर्ण** दर्शन,**संस्कृति एवं वातावरण प्रदान करने में सहायक :** व्यावसायिक नीति संगठन के दीर्घकालीन संदृष्टि, ध्येय एवं लक्ष्यों को निर्धारित करने तथा यह निश्चित करने कि संगठन कहां पर है और उसे कहां जाना है, से सम्बन्धित होती है तथा निर्धारित उद्देश्यों के अनुरूप मध्यम स्तरीय एवं निम्न स्तरीय प्रबन्ध के कार्यो की सीमा रेखायें एवं मार्गदर्शन भी प्रदान करती है, जिससे व्यवसायिक संगठन को दीर्घकालीन दर्शन एवं संगठनात्मक संस्कृति एवं वातावरण उपलब्ध होता है, जिसमें प्रदत्त सीमा रेखाओं एवं मार्गदर्शन के माध्यम के प्रबन्धक अपने क्रियात्मक क्षेत्रों का विकास संगठनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति में करते हैं। फलस्वरूप सामान्य उद्देश्यों की एकता का वृहत्तर लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है।

(ii) **व्यवसायिक संगठन का सम्बन्ध वाह्य वातावरण से स्थापित करने में सहायक** : वर्तमान वैश्वीकृत व्यावसायिक वातावरण में प्रत्येक व्यावसायिक संगठन को स्वयं को एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखने की आवश्यकता होती है। संगठन वाह्य वातावरण से नियंत्रित एवं प्रभावित होता है, किन्तु वह अपने आकार एवं संचालन क्षेत्र की लघुता के कारण वाह्य वातावरण को प्रभावित नहीं कर सकता है। वाह्य वातावरण में अनिश्चितता एवं गतिशीलता पायी जाती है और संगठनों के मध्य कटु प्रतिस्पर्धा विद्यमान होती है। अतः संगठन को वाह्य वातावरण में व्याप्त चुनौतियों एवं उपलब्ध अवसरों के अनुसार इन परिवर्तनों के प्रति अनुकूलन करना होता है, कि किस प्रकार चुनौतियों को अवसरों में बदला जाय एवं अवसरों का अधिकतम लाभ उठाया जाय। व्यावसायिक नीति के निर्माण एवं क्रियान्वयन से संगठन लगातार वातावरण की जांच एवं तद्नुरूप अनुकूलन कर सकता है।

(iii) **व्यावसायिक नीति सामान्य प्रबन्ध का एक महत्वपूर्ण उपकरण है:** व्यावसायिक नीति के अन्तर्गत सामान्य प्रबन्ध संगठनात्मक उद्देश्यों का निर्धारण करता है तथा उसे प्राप्त करने के लिए कम्पनी व्यूहनीति का निर्माण करता है, जिसके अन्तर्गत निर्धारित परिसीमा में क्रियात्मक विभाग एवं उप–विभाग अपने–अपने लक्ष्य निर्धारित कर कम्पनी व्यूहनीति की प्राप्ति में योगदान करते हैं। इस प्रकार, सामान्य प्रबन्ध न केवल व्यावसायिक नीति के द्वारा सम्पूर्ण संगठन को एक समग्र दृष्टि निर्मित करता है बल्कि उस तक पहुँचने के लिए किये गये प्रयासों को समन्वित करता है। फलस्वरूप व्यावसायिक नीति व्यूहनीतिक प्रबन्ध का एक आवश्यक अंग बन जाता है, जो उच्च प्रबन्ध के हाथों मे महत्वपूर्ण औजार के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

(iv) **व्यावसायिक नीति मध्यम एवं निम्न स्तर पर प्रबन्धन गतिविधियों के** मार्गदर्शन **मे सहायक है :** व्यावसायिक नीति उच्च प्रबन्ध के लिए ही नहीं बल्कि मध्यम स्तरीय प्रबन्ध को भी एकीकृत दृष्टिकोंण अपनाने में सहायक होती है। प्रायः रेखीय एवं परिचालनात्मक प्रबन्ध अपने–अपने प्रासंगिक वातावरण में कार्य करने की प्रवृत्ति रखते हैं एवं उनका दृष्टिकोंण क्रियात्मक एवं विशिष्ट होता है। किन्तु व्यावसायिक नीति उन्हें भी अपने प्रासंगिक एवं विशिष्ट कार्यक्षेत्र की परिधि से बाहर आकर एक समग्र दृष्टि अपनाने मे सहायक होती है, जिसके द्वारा वह संगठनात्मक स्तर एवं विभागीय स्तर दोनों में प्रभावशाली ढंग से योगदान कर सकें। व्यावसायिक नीति प्रबन्धकों को उच्च प्रबन्ध तक प्रोन्नत होने के लिए आवश्यक अभिवृत्तियों के विकास मे भी सहायक होती है, जिससे वह कार्यक्षमता में वृद्धि के संकीर्ण एवं सीमित दृष्टिकोंण से आगे जाकर संगठनात्मक प्रभावशीलता मे योगदान कर सकें तथा उच्च प्रबन्ध के स्तर पर आवश्यक दृष्टिकोंण को अपना सकें। इसके लिए व्यावसायिक नीति न केवल ज्ञान एवं कौशल प्रदान करती है, बल्कि आवश्यक अभिवृत्तियों का विकास भी करती है।

1.9 व्यावसायिक नीति की सीमायें

1. हेनरी मिन्ट्जबर्ग का विचार है कि व्यावसायिक नीति सफलता के लिए आवश्यक तो है, किन्तु पर्याप्त नहीं है। यह अन्य अनेक कारकों जैसे – प्रबन्धकीय कौशल, संसाधनों की पर्याप्तता, तकनीकी, बाजार की दशाओं, क्रियात्मक प्रबन्धकों के सहयोग, प्रभावपूर्ण अनुश्रवण एवं क्रियान्वयन इत्यादि पर भी निर्भर करती है।
2. वाह्य वातावरण न केवल विभिन्न देशों व क्षेत्रों में भिन्न होता है बल्कि निरन्तर गतिशील भी होता है । वाह्य वातावरण में परिवर्तनों के अनुसार व्यावसायिक नीति में तत्काल अनुकूल परिवर्तन न होने पर नीति की सफलता संदेहपूर्ण हो जाती है।
3. व्यावसायिक नीति का निर्माण उच्च प्रबन्ध के द्वारा किया जाता है किन्तु इसका क्रियान्वयन क्रियात्मक प्रबन्धकों पर निर्भर करता है, जिनका उचित

अभिप्रेरण न होने पर नीति का प्रभावपूर्ण क्रियान्वयन नहीं हो पाता है। नीति की सफलता प्रभावपूर्ण क्रियान्वयन पर निर्भर करती है।

4. क्रियात्मक प्रबन्धकों को व्यावसायिक नीति का प्रभावपूर्ण सम्प्रेषण न हो पाने पर उनके द्वारा नीति को न समझ पाने से यह बेकार हो जाती है।

5. समयबद्ध निर्णयन के अभाव **में** व्यावसायिक नीति अपेक्षित परिणाम नही दे सकती है।

1.10 सारांश

व्यावसायिक नीति प्रबन्ध की एक आधुनिक नवीन शाखा है, जिसे दीर्घावधि नियोजन, कम्पनी नियोजन, व्यूहनीतिक नियोजन के नाम से भी जाना जाता है। हाल के वर्षों में व्यूहनीतिक प्रबन्ध ने व्यावसायिक नीति का स्थान ग्रहण कर लिया है।

व्यावसायिक नीति कम्पनी के व्यवसाय की एक सम्पूर्ण नीति है, जो कम्पनी के ध्येय एवं उद्देश्यों को दिशा प्रदान करती है और इन्हें प्राप्त करने के लिए प्रबन्धकीय क्रियाओं एवं निर्णयों का मार्ग निर्देशन करती है। व्यावसायिक नीति कम्पनी के उच्च प्रबन्ध के द्वारा व्यावसायिक क्रियाओं के प्रभावपूर्ण परिचालन के उद्देश्य से निर्मित की जाती है। अतः यह व्यवसाय के प्रति उच्च प्रबन्ध के दृष्टिकोंण को व्यक्त करती है, जिसमें उसकी व्यूहनीतिक संदृष्टि (Vision) एकीकृत होती है। अतः व्यावसायिक नीति केवल नियमों, पद्धतियों और मार्ग निर्देशों से कहीं अधिक व्यापक एवं विस्तृत होती है, जिसमें कम्पनी की संदृष्टि, ध्येय एवं उद्देश्य, वातावरणीय जॉच, परिचालन की एक व्यूहनीति तथा समय–तत्व इत्यादि सम्मिलित होते है। क्राइस्टेन्सन एवं अन्य के अनुसार व्यावसायिक नीति '' वरिष्ठ प्रबन्धन के कार्यों और उत्तरदायित्वों, जो सम्पूर्ण उपक्रम की सफलता को प्रभावित करने वाली मुख्य समस्यायें हैं और संगठन की दिशा और उसके भविष्य को निर्धारित करने वाले निर्णयों का अध्ययन है।"

ज्ञान की एक शाखा के रूप में व्यावसायिक नीति का अभ्युदय वर्ष 1911 मे माना जाता है, किन्तु व्यावसायिक नीति को एक अध्ययन विषय के रूप में मान्यता फोर्ड फाउन्डेशन एवं कार्नेगी फाउन्डेशन के द्वारा 1959 में किए गए दो शोध अध्ययनों से प्राप्त हुई, जिसमें यह संस्तुति दी गयी कि व्यावसायिक नीति पर एक पाठ्यक्रम प्रारम्भ किया जाय, जिससे विद्यार्थियों को अपने विभिन्न पृथक व्यावसायिक क्षेत्रों में अर्जित ज्ञान को एकीकृत करने तथा उसे जटिल व्यवसाय नीति के विश्लेषण में उपयोग करने का अवसर प्रदान कर सके।

व्यावसायिक नीति कम्पनी के व्यवसाय की एक सम्पूर्ण नीति है, जो कम्पनी के ध्येय एवं उद्देश्यों को दिशा प्रदान करती है और इन्हें प्राप्त करने के लिए प्रबन्धकीय क्रियाओं एवं निर्णयों का मार्ग निर्देशन करती है। व्यावसायिक नीति कम्पनी के उच्च प्रबन्ध के द्वारा व्यावसायिक क्रियाओं के प्रभावपूर्ण परिचालन के उद्देश्य से निर्मित की जाती है। अतः यह व्यवसाय के प्रति उच्च प्रबन्ध के दृष्टिकोंण को व्यक्त करती है, इसकी प्रकृति दीर्घकालीन होती है तथा यह उच्च प्रबन्ध का विषय है, जिसे प्रत्यायोजित नहीं किया जा सकता है। व्यावसायिक नीति का क्षेत्र इसकी प्रकृति के अनुरूप है जिसमें व्यवसाय के उच्च प्रबन्ध के दर्शन के अनुसार एक ओर व्यावसायिक संगठन का ध्येय एवं उद्देश्य सम्मिलित होते हैं और दूसरी ओर व्यवसाय की प्रत्येक

गतिविधि, व्यूहनीति, व्यूहनीति नियोजन के सम्बन्ध में दिशा निर्देश एवं मार्ग निर्देश सम्मिलित होते हैं। उच्च प्रबन्ध व्यवसाय को किस रूप मे अभिकल्पित करता है, उसके अनुसार व्यावसायिक नीति कार्यक्षेत्र की सीमाओं को रेखांकित करती है कि क्या किया जाना है और क्या नहीं किया जाना है, उच्च प्रबन्ध के द्वारा विद्यमान वाहय व्यावसायिक पर्यावरण की जॉच, आन्तरिक मूल्यांकन जिसके अन्तर्गत शक्तियों, कमजोरियों, अवसरों एवं चुनौतियों का विश्लेषण सम्मिलित होता है। व्यावसायिक नीति के उच्च प्रबन्ध के क्षेत्र का विषय है। साथ ही, व्यूहनीति निर्माण, व्यूहनीतिक विकल्पों की पहचान एवं चयन, व्यूहनीतिक क्रियान्वयन, संसाधनों को गतिमान करना, संसाधन आबंटन तथा व्यूहनीतिक मूल्यांकन एवं सुधार की प्रक्रियायें एवं निर्णय व्यावसायिक नीति की परिधि में सम्मिलित किये जाते हैं। व्यावसायिक नीति के प्रमुख उद्‌देश्यों में व्यूहनीतिक प्रबन्ध का ज्ञान प्रदान करना, कौशल विकास, अभिवृत्तियों का विकास, तथा सामाजिक उद्‌देश्य सम्मिलित हैं। व्यावसायिक नीति के द्वारा उच्च प्रबन्ध को एकीकृत एवं समन्वित दृष्टिकोंण को अपनाकर सम्पूर्ण संगठन को एक इकाई के रूप में लेकर प्रबंध के क्रियात्मक क्षेत्रों का समुचित मार्गदर्शन करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया गया है। इससे दीर्घकालीन दर्शन एवं संगठनात्मक संस्कृति का वातावरण उपलब्ध होता है, जिसमें प्रदत्त सीमा रेखाओं एवं मार्गदर्शन के माध्यम के प्रबन्धक अपने क्रियात्मक क्षेत्रों का विकास संगठनात्मक उद्‌देश्यों की प्राप्ति में करते हैं। सामान्य प्रबन्ध व्यावसायिक नीति के द्वारा सम्पूर्ण संगठन की एक समग्र दृष्टि निर्मित करता है और व्यावसायिक नीति प्रबन्धकों को उच्च प्रबन्ध तक प्रोन्नत होने के लिए आवश्यक अभिवृत्तियों के विकास मे भी सहायक होती है, जिससे वह कार्यक्षमता में वृद्धि के संकीर्ण एवं सीमित दृष्टिकोंण से आगे जाकर संगठनात्मक प्रभावशीलता मे योगदान कर सकें । व्यावसायिक नीति न केवल ज्ञान एवं कौशल प्रदान करती है, बल्कि आवश्यक अभिवृत्तियों का विकास भी करती है। व्यावसायिक नीति की कुछ सीमायें भी हैं, जिन्हें उच्च प्रबन्ध के पेशेवर दृष्टिकोंण , वातावरण की सतत जांच के अनुरूप नीति में परिवर्तनों, क्रियात्मक प्रबन्ध की प्रतिभागिता एवं कुशल नेतृत्व के आधार पर दूर किया जा सकता है।

1.11 शब्दावली

नीति : कम्पनी के उद्‌देश्यों की प्राप्ति के प्रयासों को प्रभावपूर्ण दिशा देने के लिए मार्ग निर्देशों की एक सामान्य संरचना उपलब्ध कराती है।

'व्यूहनीति : यह वातावरण की चुनौतियों के प्रति फर्म की एक एकीकृत, विस्तृत एवं समेकित योजना है।

एस0बी0यू0 : से अभिप्राय पृथक रूप से पहचाने जा सकने योग्य स्वतन्त्र उत्पाद/बाजार क्षेत्र से है, जो एक–दूसरे से भिन्न होता है तथा उसका अपना व्यूहनीतिक व्यावसायिक क्षेत्र (वातावरण) अथवा एस0बी0ए0 होता है।

कम्पनी स्तर की व्यूहनीति : व्यावसायिक नीति कम्पनी स्तर की व्यूहनीति होती है और सम्पूर्ण संगठन के लिए निर्मित की जाती है।

व्यवसाय स्तर की व्यूहनीति : एक ही फर्म के अन्तर्गत एक व्यक्तिगत उत्पाद अथवा सेवा या एक वस्तु या सेवा के व्यवसाय के बाजार से सम्बन्धित होती है।

संचालनात्मक स्तर की व्यूहनीति : क्रियात्मक इकाइयों जैसे प्लान्ट, विक्रय प्रभाग, विपणन क्षेत्र इत्यादि नैत्यिक संचालनात्मक क्रियाओं तक सीमित होती है, जिसका क्षेत्र व्यवसाय की व्यक्तिगत इकाइयों की अपेक्षा सम्पूर्ण व्यवसाय तक विस्तृत होता है।

एस0बी0यू0 : व्यावसायिक स्तर की व्यूहनीति

'पेस्टेल' विश्लेषण : व्यवसाय के वाह्य पर्यावरण की जांच

'स्वॉट' विश्लेषण : संगठनात्मक शक्तियों एवं कमजोरियों, अवसरों एवं चुनौतियों की पहचान ।

1.12 बोध प्रश्न

(अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(1) .... व्यक्तिगत विवेक की सीमा को संकुचित कर देती है, ताकि महत्वपूर्ण प्रकरणों पर कर्मचारी संगत क्रिया कर सकें।

(2) व्यावसायिक नीति सफलता के लिए आवश्यक तो है, किन्तु .... नहीं है।

(3) .... व्यवसाय के प्रति उच्च प्रबन्ध के दृष्टिकोंण को व्यक्त करती है ।

(4) परिचालनात्मक प्रबन्ध का दृष्टिकोंण ....होता है।

(5) व्यावसायिक नीति का निर्माण उच्च प्रबन्ध के द्वारा किया जाता है किन्तु इसका क्रियान्वयन ....प्रबन्धकों पर निर्भर करता है।

(ब) सत्य/असत्य बताइए।

(1) व्यावसायिक नीति का अभ्युदय वर्ष 1959 मे माना जाता है।

(2) व्यावसायिक नीति केवल नियमों, पद्धतियों और मार्ग निर्देशों से कहीं अधिक व यापक एवं विस्तृत होती है

(3) व्यावसायिक नीति के प्रति वर्तमान दृष्टिकोंण सतत परिवर्तनों के प्रबन्धन की आवश्यकताओं से उत्पन्न हुआ है।

(4) व्यावसायिक नीति ने बाद के वर्षों में व्यूहनीतिक नियोजन का स्वरूप ग्रहण कर लिया है।

(5) व्यावसायिक नीति न केवल ज्ञान एवं कौशल प्रदान करती है, बल्कि आवश्यक अभिवृत्तियों का विकास भी करती है।

1.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

(अ)

(1) नीतियॉ (2) पर्याप्त (3) व्यावसायिक नीति (4) क्रियात्मक एवं विशिष्ट

(5) क्रियात्मक ।

(ब)

(1) सत्य (2) सत्य (3) असत्य (4) सत्य (5) सत्य।

1.14 स्वपरख प्रश्न

1. व्यावसायिक नीति की परिभाषा दीजिए तथा व्यावसायिक नीति की विशेषताऐं बताइए।
2. व्यावसायिक नीति के उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिए।

3. व्यावसायिक नीति की प्रकृति को समझाइए और इसके क्षेत्र की व्याख्या कीजिए।
4. व्यूहनीतिक प्रबन्ध की परिभाषा एवं विशेषताऐं समझाइए।
5. ज्ञान, कौशल एवं अभिवृत्तियों के विकास के रूप में व्यावसायिक नीति के क्या उद्देश्य हैं ?
6. व्यावसायिक नीति के महत्व एवं सीमाओं की व्याख्या कीजिए।

1.15 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Ghose P.K., Strategic planning and Management, Sultan Chand and sons , New Delhi. (2011).
2. Jauch L.R. , Gupta Rajeev and William Glueck, Business policy and Strategic Management, F.Bros. & Company, (2010).
3. Kazmi , Azhar, Business policy and Strategic Management, Tata McGraw Hill Publishing Company Limited (2002)
4. Michael V.P., Business policy and Environment, S.Chand and Company, (2000).
5. Prasad , L.M. , Business policy and Strategic Management, Sultan Chand and sons , New Delhi. (2002).

इकाई 2 व्यवसाय और समाज

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा
2.3 सामाजिक उत्तरदायित्व का परंपरागत एवं आधुनिक दृष्टिकोण
2.4 सामाजिक उत्तरदायित्व की आवश्यकता
2.5 सामाजिक उत्तरदायित्व के पक्ष एवं विपक्ष में तर्क
2.6 सामाजिक उत्तरदायित्व के क्षेत्र
2.6.1 अंशधारियों के प्रति उत्तरदायित्व
2.6.2 कर्मचारियों के प्रति उत्तरदायित्व
2.6.3 उपभोक्ताओं के प्रति उत्तरदायित्व
2.6.4 समुदाय के प्रति उत्तरदायित्व
2.6.5 सरकार के प्रति उत्तरदायित्व
2.6.6 पर्यावरणीय उत्तरदायित्व
2.6.7 वैश्विक उत्तरदायित्व
2.7 सामाजिक लेखांकन एवं सामाजिक अंकेक्षण
2.8 सामाजिक उत्तरदायित्व की सीमाऐं एवं बाधाऐं
2.9 सारांश
2.10 शब्दावली
2.11 बोध प्रश्न
2.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
2.13 स्वपरख प्रश्न
2.14 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः

- सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा को समझ सकें।
- सामाजिक उत्तरदायित्व के क्षेत्र को स्पष्ट कर सकें।
- सामाजिक उत्तरदायित्व के पक्ष एवं विपक्ष में तर्क को समझ सकें।
- सामाजिक उत्तरदायित्व की सीमाओं एवं बाधाओं का विवेचन कर सकें।

2.1 प्रस्तावना

सामान्यतः व्यवसाय का अर्थ अपभोक्ताओं को वस्तुओं एवं सेवाओं की आपूर्ति करने वाले एक उपक्रम के द्वारा लाभपूर्ण लक्ष्यों पर आधारित संगठित प्रयासों से लगाया जाता है। किन्तु व्यवसाय का उद्देश्य केवल लाभ अर्जित करने से कही अधिक है। वास्तव में व्यवसायिक संगठन एक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था है, जो समाज के विभिन्न हितधारकों जैसे अंशधारी एवं कर्मचारी जो व्यवसाय के आन्तरिक हितधारक हैं और उपभोक्ता, आपूर्तिकर्ता, सरकार, प्रतिस्पर्धा, श्रम संघ एवं अन्य

सामाजिक समुदाय ज बाहय हितधारक हैं, को अपनी क्रियाओं के द्वारा प्रभावित करता हैं। व्यवसाय के सामाजिक प्रभाव भी उसके आर्थिक एवं विविध प्रभावों की तरह पर्याप्त महत्वपूर्ण होते है। समाज का प्रत्येक हितधारक यह अपेक्षा करता है कि व्यवसाय के द्वारा उनके न्यायोचित हितों का संरक्षण किया जायेगा। । उदाहरणार्थ, जहॉ अंशधारी अपने निवेश की सुरक्षा के साथ निवेश पर उचित आय की प्रत्याशा करते है, वही कर्मचारी सेवा की सुरक्षा, संतोष एवं विकास की अपेक्षा रखते है। ग्राहकों को स्वयं द्वारा किये गये व्यय के सापेक्ष गुणवत्तापूर्ण वस्तुओं व सेवाओं की अपेक्षा होती है। आपूर्तिकर्ताओं को सुनिश्चित केता (Loyal Buyer) वांछित होते है। सरकार कर सहित कानूनी आवश्यकताओं के अनुपालन की अपेक्षा करती है। प्रतिस्पर्धी पक्षपात रहित न्यायपूर्ण प्रतिस्पर्धा की अपेक्षा करते है, श्रम संघों को सदस्यों का हित वांछित होता है और सामान्य जनता सुरक्षित एवं गुणवत्तापूर्ण जीवन की अपेक्षा करती है। समाज यह भी चाहता है कि उसके सदस्यों को स्वच्छ पर्यावरण, प्राकृतिक परिवेश, प्रदूषण से मुक्ति, महिलाओं एवं बच्चों के अधिकारों की सुरक्षा, समानतामूलक समाज, मूलमानवाधिकारों की सुरक्षा इत्यादि भी प्राप्त हो, इस प्रकार व्यवसाय एवं समाज को परस्पर आश्रित समझा जाता है। यह माना जाता है कि दोनों का अस्तित्व एक दूसरे के अस्तित्व के बिना सम्भव नही। व्यावसायिक नीति, व्यवसाय को उसके सामाजिक उत्तरदायित्वों का अनुपालन सुनिश्चित करने की ओर अग्रसर करती है।

विगत ईकाई में आप यह जान चुके है कि एक फर्म द्वारा व्यवसायिक नीति के द्वारा व्यवसाय को भावी स्वरूप की ओर ले जाने के लिए अनेकानेक निर्णय लिए जाते है। इन विभिन्न निर्णयों के सामाजिक पक्ष भी होते है, क्योंकि व्यवसाय को समाज की एक अभिन्न ईकाई समझा जाता है। व्यावसायिक नीति निर्माण का एक महत्वपूर्ण अंग व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व पर आर्थिक एवं विविध कारकों की भाति पर्याप्त जोर देना है। इस ईकाई में व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व की आवश्यकता, सामाजिक उत्तरदायित्वों के विभिन्न क्षेत्रों तथा सामाजिक लेखांकन एवं अंकेक्षण का विवेचन किया जा रहा है, जो एक विस्तृत एवं संतुलित कम्पनी व्यूह नीति के निर्माण (Company strategy Making) के लिए आवश्यक है।

2.2 सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा

व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्वअथवा कार्पोरेट सोशल रिसपॉन्सबिलिटी (Corporate Social Responsibility or CSR) को भिन्न–भिन्न प्रकार से समझा गया है। कुछ लोग इसका संकुचित अर्थ लेते हुए इसे एक संगठन के द्वारा समाज को उच्चतम कार्यक्षमतापूर्वक उत्पादित वस्तुओं एवं सेवाओं की आपूर्ति करने की आर्थिक प्रक्रिया के सम्पादन तक सीमित समझते हैं। इससे कुछ आगे बढ़कर कुछ अन्य व्यवसायिक संगठनसामाजिक उत्तरदायित्व को आर्थिक क्रियाओं के सम्पादन के साथ साथ समाज के कल्याण वाले कार्यों को भी सम्पादित करने के रूप में समझते हैं। किन्तु सामाजिक उत्तरदायित्व नियमित कार्यो के सम्पादन से कहीं अधिक है। विस्तृत रूप में , एक वर्ग इसमें शिक्षा, स्वास्थ्य, पेय जल, रोजगार आदि विविध सामाजिक सरोकारों के लिए अतिरिक्त योगदान करने हेतु दान, कल्याण परियोजनाऐं हाथ में लेने , नियमित फण्ड उपलब्ध कराने आदि को भी सम्मिलित कर लेता है। वास्तव में ,

सामाजिक उत्तरदायित्व आर्थिक कियाओं को लाभपूर्ण एवं कार्यक्षमतापूर्वक सम्पादन करने के साथ साथ लोक हित का उन्नयन करने से संबंधित है। सामाजिक उत्तरदायित्वका अभिप्राय यह है कि व्यवसाय के नीति निर्धारक एवं निर्णयकर्ता अपने हितलाभों की प्राप्ति के साथ साथ सम्पूर्ण समाज के कल्याण में अभिवृद्धि के प्रति जबाबदेह हैं ।सामाजिक उत्तरदायित्वव्यवसाय के द्वारा समाज की समस्याओं का समाधान करने की जिम्मेवारी से सम्बन्धित है। यदि व्यवसाय समाज की कीमत पर अपने हित का संवर्द्धन करता है तो उसकी सफलता चिरस्थायी नहीं हो सकती है और उसका स्वयं का अस्तित्व संदिग्ध रहता है।व्यवसाय समाज के संसाधनों का एक महत्वपूर्ण भाग स्वयं भी उपयोग करता है। वह अपने लिए विभिन्न आगतें तो समाज से प्राप्त करता ही है बल्कि उसके द्वारा उत्पादित वस्तुओं एवं सेवाओं का बाजार भी समाज ही है। व्यवसाय के प्रत्येक निर्णय, जिनका सामाजिक प्रभाव होता है , सामाजिक जांच की परिधि में सम्मिलित होते हैं। अतः, व्यवसाय को सामाजिक लक्ष्यों के प्रति संवेदनशील होकर सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए अपने संसाधनों का कुछ भाग आबंटित करना उसके सामाजिक दृष्टिकोंण को परिलक्षित करता है। व्यावसायिक संगठन अपने इस संकल्प एवं संगठनात्मक मूल्यों को, अपनी संदृष्टि ,ध्येय एवं उद्देश्यों में उल्लिखित करते हैं। सामाजिक उत्तरदायित्वकी अवधारणा अब स्वैच्छिक ही नहीं नियामक जबाबदेही बन गयी है। सामाजिक लाभ की परियोजनाओं में यह जबाबदेही सार्वजनिक परीक्षण का विषय हो जाती है। वैश्वीकरण के इस युग में सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा भी सार्वभौमिक हो गयी है। वैश्विक व्यावसायिक परिवेश में व्यावसायिक संगठनों के बहुराष्ट्रीय स्तर पर संचालन के कारण उन्हें वैश्विककम्पनी नागरिकता प्राप्त हो जाने से उनका सामाजिक उत्तरदायित्व भी वैश्विक हो गया है। उन्हें स्वतन्त्र व्यापार, पर्यावरण, मानवाधिकारों , महिलाओं एवं दिव्यांगजनों के अधिकारों की सुरक्षा आदि में अपनी भूमिका का निर्वहन करना आवश्यक हो गया है। यही नहीं, अन्तर्देशीय वातावरण में संचालित संगठनों के लिए भी वैश्विक सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा प्रासंगिक है, क्योंकि उन्हें भी अपनी सफलता के लिए गुणवत्ता के वैश्विक मानकों का अनुपालन करना आवश्यक है।इस प्रकार, सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणाएक वैश्विक रूप में स्वीकृत अवधारणा बन गयी है जिससे अब प्रत्येक संगठन के लिए सामाजिक कल्याण के उद्‌देश्य को अपनी व्यावसायिक नीति में सम्मिलित करना आवश्यक हो गया है।

सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा की निम्नांकित विशेषताऐं हैं :

1. **सामाजिक उत्तरदायित्व का क्षेत्र व्यवसाय की नियमित गतिविधियों से कहीं अधिक व्यापक है** :सामाजिक उत्तरदायित्वका क्षेत्र व्यापक है और यह व्यवसाय के परिसर के बाहर प्रारम्भ होता है। इसका संबंध व्यवसाय के द्वारा समाज के व्यापक हितों एवं सामाजिक कल्याण को अपनी व्यावसायिक नीति एवं संदृष्टि में तथा नैत्यिक कार्य संचालन में सम्मिलित करने से है।
2. **सामाजिक उत्तरदायित्व का विचार दान से भिन्न है** :दान का स्वरूप व्यक्तिगत एवं आकस्मिक प्रकृति का होता है और इसके अन्तिम उपयोग का मापन कठिन है। सामाजिक उत्तरदायित्व, इसके विपरीत, संस्थानात्मक,

नियमितप्रकृति का होता है, जिसके अन्तिम उपयोग का मापन कियाजा सकता है।

3. **सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा प्राचीन है:**सामाजिक उत्तरदायित्व का प्रार्दुभाव नया नहीं है। प्राचीन काल में भी ऐसे दृष्टान्त मिलते हैं, जब प्राकृतिक आपदाओं – बाढ़, अकाल, सूखा, महामारी आदि के समय अग्रणी व्यावसायिक घरानों के द्वारा राहत कार्यो में मुक्त कण्ठ से योगदान किया गया। सामान्य काल में भी स्कूल, अस्पताल, पेय जल की व्यवस्था प्रसिद्ध व्यवसायिक प्रतिष्ठानों के द्वारा की जाती रही है।
4. **व्यवसाय का सामाजिक उत्तरदायित्व व्यवसाय की समाज के प्रति जबाबदेही तय करता है** :व्यावसायिक संगठन सामाजिक ईकाइयां हैं। उनका अस्तित्व समाज पर निर्भर है। वह समाज से ही संसाधन प्राप्त करते हैं। अतः वह समाज के प्रति जबाबदेह हैं। सामाजिक उत्तरदायित्व उनके निर्णयों के विपरीत सामाजिक प्रभावों के लिए उनकी जबाबदेही तय करता है।
5. **वैश्विक व्यावसायिक परिवेश में व्यावसायिक संगठनों का सामाजिक उत्तरदायित्व भी वैश्विक हो गया है** :सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा बहुराष्टीय कम्पनियों के लिए ही नहीं बल्कि अन्तर्देशीय संगठनों के लिए भी प्रासंगिक एवं अपरिहार्य है, क्योकि उन्हें भी प्रतियोगिता में बने रहने के लिए वैश्विक मानकों का अनुपालन करना आवश्यक होता है।

सामाजिक उत्तरदायित्व की प्रकृति :

एक सामाजिक रूप में संवेदनशील संगठन लाभ को अधिकतम करने के संकुचित उद्देश्य के विपरीत समाज के कल्याण के व्याापक उद्देश्य को ध्यान में रखता है। इसके लिए उसे आर्थिक लाभ एवं सामाजिक लाभ के परस्पर विरोधी उद्देश्यों के मध्य सामंजस्य स्थापित करना होता है। संगठन में प्रत्येक प्रबन्धकीय निर्णय के दोनों – आर्थिक एवं सामाजिक प्रभावों का विश्लेषण कर अन्तिम निर्णय लिए जाते हैं। परियोजनाओं के वित्तीय एवं तकनीकी संभाव्यता के साथ ही सामाजिक लागत– लाभ मूल्यांकन भी किया जाता है।संगठन के द्वारा उन परियोजनाओं को छोड़ा जा सकता है जिनके नकारात्मक सामाजिक प्रभाव अधिक हों चाहे वह पर्याप्त आर्थिक लाभ प्रदान करने वाली हों ।

2.3 सामाजिक उत्तरदायित्व का परंपरागत एवं आधुनिक दृष्टिकोण

सामाजिक उत्तरदायित्व का परंपरागत दृष्टिकोण अर्थशास्त्र के परंपरागतसिद्धान्त पर आधारित है। यह एडम स्मिथ के धन के विज्ञान से व्युतपादित है। इस सिद्धान्तके अनुसार व्यवसाय का मुख्य उद्देश्य कानून की सीमाओं में रहकर धन कमाना है।व्यवसाय के द्वारा अपने सामाजिक उत्तरदायित्व को उस समय पूर्ण किया हुआ माना जामा है जब वह अपने उपभोक्ताओं को उनके द्वारा वहन किए जाने योग्य कीमतों पर अधिकतम सम्भव कार्यक्षमता से वस्तुओं एवं सेवाओं को उपलब्ध कराता है। सामाजिक उत्तरदायित्व केआधुनिक दृष्टिकोण के अनुसार प्रबन्धन के एजेन्सी दृष्टिकोंण के अर्न्तगत प्रबन्धकों की भूमिका ट्रस्टी की होती है जिसमें उन्हें अपनी शक्ति का उपयोग स्वामियों के साथ साथ अन्य समस्त हितधारकों के हितों के

संरक्षण के लिए करना चाहिए। इसके अतिरिक्त उन्हें समस्त हितधारको के परस्पर विरोधी हितों के मध्य एक संतुलन स्थापित करना चाहिए। व्यवसायिक संगठनों को लभार्जन के सामान्य सिद्धान्त से आगे जाकर समाज के लाभ या सामान्य जनता के कल्याण के लिए सामाजिक कार्यक्रमों को प्रबन्धकों एवं संगठन के व्यक्तिगत स्तर पर संचालित करना चाहिए। सामाजिक उत्तरदायित्वके प्रति दृष्टिकोंण में यह परिवर्तन विगत शताब्दियों में हुई औद्योगिक प्रगति के नकारात्मक प्रभावों के कारण हुआ है।पीटर ड्रकर का मानना है कि यद्यपि कई नकारात्मक प्रभाव जैसे सम्प्रदायवाद, युद्ध, हिंसक अपराध, एड्स जैसी महामारियां आदि व्यवसाय से उत्पन्न नहीं हुई हैं किन्तु इनके उन्मूलन से व्यवसाय लाभान्वित हो सकता है क्योंकि **स्वस्थ व्यवसाय एवं बीमार समाज संगतिपूर्ण नहीं हैं।** हाल के वर्षों में अनेक अग्रणी उद्यमकर्ताओं के हस्तक्षेप एवं सामाजिक उत्तरदायित्वके प्रति आयी चेतना में वृद्धि से पेशेवर प्रबन्धक मात्र आर्थिक उत्तरदायित्वकी तुलना में व्यापक सामाजिकसामाजिक को अधिक आवश्यक, स्वीकृत एवं व्यावहारिक मानने लगे हैं।संगठनों के द्वारा संचालित कार्यक्रमों की विविधता में भी विस्तार हुआ है और वह शिक्षा एवं स्वास्थ्य के साथ साथ पर्यावरण सुरक्षण एवं संरक्षण, गृह निर्माण, स्वच्छता एवं शहरी पुनर्निर्माण, महिला एवं वृद्ध आश्रय, पशु आश्रय, शिशु देखभाल, श्रम कल्याण, मानवाधिकारों की सुरक्षा आदि अनेक नवीन क्षेत्रों में प्रवेश कर रहे हैं। कार्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व में संलग्न देश के प्रमुख औद्योगिक समूहों में टाटा, बिड़ला, सिंघानिया, हिन्दुस्तान लीवर, एल0एण्डटी0, थापर, मफतलाल, मोदी, महिन्द्रा, गोदरेज, एम0आर0एफ0, टी0वी0एस0, ए0सी0सी0, बजाज, आइ0टी0सी0, विप्रो, इन्फोसिस, ऊषा एवं सरकारी क्षेत्र के बैंक आदि अनेक समूह सम्मिलित हैं।

2.4 सामाजिक उत्तरदायित्व की आवश्यकता

सामाजिक उत्तरदायित्व की आवश्यकता निम्नांकित कारणों से अनुभव की जाती हैः

1. वैधानिक अनिवार्यताओं के अनुपालन जैसे प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड से अनापत्ति प्राप्त करना एवं अधिनियमो में प्रावधानित छूटें प्राप्त करने जैसे आय कर अधिनियम में पुण्यार्थ कार्यो हेतु दान, पिछड़े क्षेत्रों में उद्योग स्थापित करने पर छूट आदि प्राप्त करने के लिएसामाजिक उत्तरदायित्व की पूर्ति की आवश्यकता होती है ।
2. प्राकृतिक एवं अन्य आपदाओं की स्थिति में राहत कार्यों में योगदान के लिएसामाजिक उत्तरदायित्व की आवश्यकता होती है।
3. संगठनात्मक संस्कृति एवं परम्पराऐं भी सामाजिक उत्तरदायित्व की आवश्यकता उत्पन्न करती हैं। व्यावसायिक संगठनों के व्यावसायिक दर्शन एवं मूल्य , उनके द्वारा सामाजिक सरोकारों एवं प्रतिबद्धताओं के माध्यम से अपनी विशिष्ट व्यावसायिक छवि निर्मित करने की आकांक्षाऐंभी सामाजिक उत्तरदायित्व की आवश्यकता उत्पन्न करती हैं।
4. वैश्वीकृत समाज में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के अनेक देशों में क्रियाशील होने के कारण वह अपनी सामाजिक उत्तरदायित्व के प्रति संवेदनशीलता को अपने

व्यावसायिक उद्देश्यों में स्थान देती हैं, जिसका अनुसरण उनकी समस्त सहयोगी इकाइयों को भी करना पड़ता है।

5. समाज कल्याणकारी सरकारों, सामुदायिक हितों, निवेशकों, अंशधारियों के दबावों, पर्यावरणीय चिन्ताओं, प्राकृतिक आपदाओं आदि के कारण भी सामाजिक उत्तरदायित्व की आवश्यकता उत्पन्न होती हैं।

2.5 सामाजिक उत्तरदायित्व के पक्ष एवं विपक्ष में तर्क

व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्वके संबंध में विद्वानों में परस्पर मतभेद हैं। अधिकांश विद्वान सामाजिक कार्य के पक्षधर हैं। कीथ डेविस का सामाजिक उत्तरदायित्व का लौह सिद्धान्त कहता है कि जो संगठन शक्ति का उपयोग समाज के अनुसार नहीं करते हैं, वह दीर्घकाल में शक्ति को खोतेचले जाने की प्रवृति रखते हैं। यह दृष्टिकोण यह मानता है किव्यवसाय अपनी अपार शक्ति को मानव जीवन – व्यक्तिगत, सामुदायिक एवं वैश्विक –की गुणवत्ता मेंसुधार के लिए उपयोग कर सकता है। भारत में टाटा समूह, बिड़ला समूह, इन्फोसिस, विप्रो आदि अनेक कम्पनियां सामाजिक उत्तरदायित्व के क्षेत्र में अग्रणी हैं।

सामाजिक उत्तरदायित्व के पक्ष में तर्क :

सामाजिक उत्तरदायित्वकी आवश्यकता के पक्ष में निम्नलिखित तर्क दिए जा सकतें हैंः

1. **व्यावसायिक संगठन सभी हितधारको ंके प्रति उत्तरदायी है** :व्यावसायिक संगठन केवल अंशधारियों या स्वामियों के लाभों का ही ध्यान नहीं रखता है बल्कि वह अन्य सभी हितधारकों जैसे – कर्मचारियों, ग्राहकों, आपूर्तिकर्ताओं आदि के हितों के संरक्षण के प्रति भी उत्तरदायी है ।
2. **व्यवसाय सामाजिक प्रणाली की एक उप इकाई है** : व्यवसायिक संगठनों का अर्थसक्षमता समाज पर निर्भर है क्योकि वह समाज से ही आगतें प्राप्त करते हैं और उसे ही मूल्य संवर्द्धन कर इन्हें वापस कर देते हैं। वह अपनी शक्ति समाज से ही प्राप्त करते हैं, अतः उन्हें उचित सामाजिक सरोकारों के प्रति संवेदनशील होना चाहिए।
3. **व्यावसायिक निर्णय समाज को प्रभावित करते हैंः** व्यावसायिक निर्णय सामाजिक हितों एवं मूल्यों पर गहरा प्रभाव डालते हैं।व्यावसायिक संगठनों को इन निर्णयों के विपरीत प्रभावों के लिए समाज के प्रति क्षतिपूरक व्यवस्था करनी चाहिए।
4. **सामाजिक उत्तरदायित्व व्यवसाय के प्राथमिक उद्देश्य आर्थिक लाभ को औचित्य प्रदान करता है** : व्यवसाय का प्राथमिक उद्देश्य आर्थिक लाभ अर्जित करना माना जाता है किन्तु इसका सामाजिक औचित्य तब ही सिद्ध होता है जब वह सामाजिक जीवन की गुणवत्ता में अभिवृद्धि करने में अपनी भूमिका का निर्वहन करता है।
5. **व्यावसायिक संगठन एक कम्पनी नागरिक है** : कम्पनी अधिनियम कम्पनी को विधान के द्वारा निर्मित एक कृत्रिम व्यक्ति मानता है। वैश्विक व्यवसायिक समाज में सभी कम्पनी संगठन कम्पनी नागरिक हैं । अतः एक व्यक्ति की भांति उन्हें भी सामाजिक उत्तरदायित्वों का अनुपालन करना चाहिए।

6. **व्यावसायिक संगठनों की समाज में नेतृत्वकारी स्थिति होती है :** व्यवसायिक संगठन अपने आकार, संसाधनों, तकनीकी कौशल एवं प्रभाव आदि कारणों से नेतृत्वकारी स्थिति में होते हैं, जिसका उपयोग वह सामाजिक समस्याओं के निदान में कर सकते हैं।
7. **आधुनिक पेशेवर प्रबन्ध सामाजिक सरोकारों के प्रति संवेदनशील होता है :** वर्तमान प्रबन्धक न केवल प्रशिक्षित एवं पेशेवर हैं बल्कि विभिन्न सैक्टरों में गतिमान भी होते रहते हैं। उनकी ट्रस्टीशिप की भूमिका उन्हें समस्त हितधारकों के प्रति उत्तरदायी बनाती है। अतः सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा प्रबन्धकों पर सामाजिक सरोकारों के प्रति संवेदनशील होने का दायित्व डाल देती है।

सामाजिक उत्तरदायित्व के विपक्ष में तर्क :

किन्तु व्यवसाय **के** सामाजिक उत्तरदायित्वके संबंध में विद्वानों में परस्पर मतभेद है। थियाडोर लेविट, पीटर ड्रकर, मिल्टन फ्रीडमैनआदि विचारक इस अवधारणा के आलोचक हैं। लेविट का तर्क है कि व्यवसाय को सामाजिक उत्तरदायित्व प्रदान करने से व्यवसाय के मूल्य समाज पर हावी हो सकते हैं , जो समाज के लिए हितकर नहीं है। पीटर ड्रकर का मत है कि सामाजिक उत्तरदायित्व का बात करने वाले प्रबन्धक को संगठन में रखना ही अनुचित है। मिल्टन फ्रीडमैन का विचार है कि यदि प्रबन्धकों को सामाजिक उत्तरदायित्व की परियोजनाओं में संलग्न किया जाता है तो इससे लाभ अधिकतमीकरण का लक्ष्य पूर्ण नहीं होगा और संसाधनों का कुशल उपयोग भी नहीं हो पाएगा। प्रबन्धक अपने अंशधारी हितधारकों के हित का संवर्द्धन भी नहीं कर पाऐंगे। भारत में धीरूभाई अम्बानी का मानना है कि एक उद्योगपति के रूप में उनका कार्य ग्राहकों को सस्ती दरों पर गुणकारी वस्तुऐं प्रदान करना तथा अपने अंशधारियों एवं कर्मचारियों के हितो का संवर्द्धन करना है। सामाजिक कार्यों में संलिप्त हो जाने से कोई भी कार्य ठीक से नहीं हो पाएगा।

सामाजिक उत्तरदायित्वकी आवश्यकता के विपक्ष में निम्नलिखित तर्क दिए जा सकतें हैं:

1. सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा अस्पष्ट है जिसके संबंध में मतैक्य न होने के कारण इसका अंगीकरण जोखिमपूर्ण हो सकता है।
2. यह अवधारणा आर्थिक उद्देश्य को कमजोर कर देती है, जिससे व्यावसायिक संगठन की अर्थसक्षमता विपरीत रूप में प्रभावित होती है।
3. समाजिक लागत व्यवसाय को तुरन्त वहन करनी पड़ती है जबकि इसके लाभ भविष्य में ही प्राप्त हो सकते हैं। इन लागतों के कारण व्यवसायिक संगठन को तत्काल भारी हानियां उठानीपड़ती हैं।सामाजिक लागतें उपभोक्ता की लागतों को भी बढ़ा देती हैं।
4. व्यावसायिक संगठन प्रत्यक्ष रूप में नागरिकों के प्रति उत्तरदायी नही होते हैं और न ही ऐसे कार्यों में दक्ष होते हैं।सामाजिक उत्तरदायित्वसौंपने से उन्हेंउत्तरदायित्व तो मिलता है किन्तु उनकी कोई स्पष्ट जबाबदेही नहीं होती है। स्पष्ट अधिकारिता व शक्ति के अभाव में उन्हें समाज के समस्त

वर्गों का वांछित समर्थन न प्राप्त होने के कारण उनका सामाजिक प्रदर्शन भी कमजोर रहता है।

5. व्यावसायिकप्रबन्धकों के द्वारा संसाधनों के दुरूपयोग की संभावना बनी रहती है। साथ ही इससे उनके मूल कार्यों का प्रदर्शन प्रभावित हो जाता है।

6. व्यावसायिक संगठन समाज को वस्तु एवं सेवाऐं , रोजगार एवं तकनीकी तो उपलब्ध कराते ही हैं, साथ ही सरकार को करों एवं शुल्कों के रूप मे राजस्व भी प्रदान करते हैं, जिसका लाभ अन्ततः समाज को ही प्राप्त होता है।

निष्कर्ष रूप मे कहा जा सकता है कि व्यावसायिक संगठन भी संस्थानों की तरह होते हैं। समाज को उनसे अनेक अपेक्षाऐं होती हैं और सामाजिक समस्याओं के प्रति वह नैतिक रूप में उत्तरदायी भी होते हैं । व्यवसायिक संगठन समुचित संसाधनों , कौशलो एवं शक्ति से युक्त होते हैं।सामाजिक उत्तरदायित्व से उन्हें नेतृत्व प्राप्त होता है एवं उनकी लोकप्रिय छवि निर्मित होती है। वैश्विक विश्व में उनके प्रति जनता का पूर्वाग्रह भी बदला है और अब वह कम्पनी नागरिक माने जाते हैं । इन कारणों से व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्वकी वर्तमान वैश्विक व्यावसायिक जगत में अत्यधिक प्रासंगिकता है। यही कारण है कि वैश्विक स्तर पर इसे मान्यता प्राप्त हुई है । भारत में भी अनेक कम्पनियों के द्वारा सामाजिक उत्तरदायित्व पर लगातार बढ़ती धनराशि का योगदान किया जा रहा है।

भारत में व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व हेतु किए गये उपाय :

यद्यपि व्यवसाय का सामाजिक उत्तरदायित्व एक स्वैच्छिक कार्य है, किन्तु देश में इस क्षेत्र में सरकार ने हस्तक्षेप कर निम्नांकित दूरगामी प्रभाव वाले मुख्यउपाय किए हैं :

1. **सी0एस0आर0 व्यय को अनिवार्य करना** –व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व या सी0एस0आर0 को अनिवार्य कर दिया गया है। सरकार ने प्रत्येक लाभ अर्जित करने वाली कम्पनी के लिये उसके लाभों का 2 प्रतिशत सी0एस0आर0 व्यय हेतु आबण्टित करना अनिवार्य कर दिया है।

2. **कार्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व हेतु कोष की स्थापना** – सरकार ने इण्डियन इन्सटीयूट ऑफ कार्पोरेट अफेयर्स (आइ0आइ0एफ0ए0) की शाखा के रूप में नेशनल फण्ड फॉर कार्पोरेट सोशल रिसपॉन्सबिलिटी(एन0एफ0सी0एस0आर0) बनाया है, जिसका उद्देश्य सी0एस0आर0 हेतु प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष सहायता हेतु व्यवसाय, सरकार एवं अन्य हितधारकों का एक मंच उपलब्ध करना है, जो विभिन्न संस्थाओं के मध्य संपर्क, सहयोग, अनुभवों एवं संसाधनों को साझा कर सके, शोध एवं विकास के द्वारा सुझाव एवं मार्गदर्शन कर सके एवं भावी व्यूहनीतियां बना सके।

2.6 सामाजिक उत्तरदायित्व के क्षेत्र

2.6.1 अंशधारियों के प्रति उत्तरदायित्वः –

अंशधारी एवं कर्मचारी कम्पनी के आन्तरिक हितधारक होते हैं, जबकि उपभोक्ता, समुदाय एवं सरकार आदि वाह्य हितधारक हैं।आन्तरिक हितधारकों के हितों को वाह्य हितधारको के हितों की अपेक्षा वरीयता दी जाती है। व्यावसायिक प्रबन्धको का प्राथमिक उत्तरदायित्व कम्पनी के अंशधारियों के प्रति होता है जो कम्पनी के स्वामी होते हैं। एजेन्सी या ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त के अनुसार व्यावसायिक प्रबन्धको पर अंशधारियों कीपूँजी की सुरक्षा, उनके विनियोग पर उचित प्रत्याय अर्जित करने, उन्हें उचित लाभांश प्रदान करने का दायित्व होता है।अंशधारियों को उनके विनियोग में नियमित संवृद्धि अपेक्षित होती है।प्रत्येक व्यावसायिक निर्णय का मापदण्ड अंशधारियों के धन का अधिकतमीकरण होता है।सामाजिक उत्तरदायित्व पर निर्णय लेते समय उसका अंशधारियों के हितो पर पड़ने वाले प्रभाव पर विचार किया जाता है और स्वामियो एवं सामाजिक हितों में संतुलन बनाने का प्रयत्न किया जाता है।प्रबन्धको का यह उत्तरदायित्व होता है कि अंशधारियों को कम्पनी के परिचालन एवं उसकी प्रगति की प्रत्येक सूवना नियमित रूप में प्रदान की जाय।

2.6.2 कर्मचारियों के प्रति उत्तरदायित्व–

मानव संसाधन अथवा कर्मचारी कम्पनी के आन्तरिक वातावरण के प्रमुख संघटक होते हैं। यदि कम्पनी अपने मानव संसाधनों का ध्यान नहीं रख पाती है तो वह अपने वाह्य वातावरण का सामना भी सफलतापूर्वक नहीं कर पाती है। प्रत्येक कम्पनी का यह दायित्व है कि वह अपने कर्मचारियों को ऐसा वातावरण उपलब्ध कराए जिसमें वह अपने सम्मान को बनाए रख सकें, अपनी क्षमता के अनुसार स्व –विकास का अवसर प्राप्त कर सकें तथा व्यक्तिगत एवं संगठनात्मक हितों में सामंजस्य स्थापित कर सकें।अपने कर्मचारियों को उचित मजदूरी एवं वेतन के साथ–साथ कार्य की सुरक्षित एवं अनुकूल दशाऐं प्रदान करना, उन्हें कल्याणकारी सुविधाऐं जैसे –चिकित्सा, बीमा, भविष्य निधि, आवास, सेवानिवृति लाभ आदि उपलब्ध कराना, शिक्षा, प्रशिक्षण एवं विकास के अवसर प्रदान करना, श्रम संघों में प्रतिभाग की अनुमति देना, तथा कर्मचारियों को निर्णयन, प्रबन्ध एवं स्वामितव में भागीदारी प्रदान करना आदि कम्पनी का सामाजिक उत्तरदायित्व के क्षेत्र में सम्मिलित है। कर्मचारियों को न्याय प्रदान करने की दृष्टि से संगठन में उनके मूल्य, भूमिका एवं योगदान को मान्यता प्रदान करना भी आवश्यक है।मानव संसाधनों के प्रति कम्पनी के सामाजिक उत्तरदायित्व को कम्पनी की नीतियों एवं कार्यक्रमों में देखा जा सकता है।

2.6.3 उपभोक्ताओं के प्रति उत्तरदायित्व–

प्रतियोगी बाजार में उपभोक्ता की स्थिति राजा की तरह होती है क्योकि उसके बिना कम्पनी के अस्तित्व की कल्पना भी नही की जा सकती है। उपभोक्ता को येन केन प्रकारेण वस्तुऐं बेचने के परम्परागत दृष्टिकोण के विपरीत आधुनिक विपणन दृष्टिकोण में उसकी आवश्यकताओं की पहचान कर उसे संतुष्ट करने पर जोर दिया जाता है। कम्पनी के द्वारा **उपभोक्ता पहले** की नीति अपनायी जाती है। उपभोक्ता को संतुष्ट करने के लिए उचित गुणवत्ता की वस्तुऐं डिजायन कर उन्हें उचित गुणवत्ता की सामग्री, अद्यतन तकनीकी एवं प्रकियाओं से निर्मित किया जाना आवश्यक होता है। किन्तु इसमें कुशल, सक्षम, प्रतिबद्ध एवं संवेदनशील मानवीय साधनों की

आवश्यकता सर्वोपरि एवं महत्वपूर्ण होती है। उपभोक्ता के प्रति सामाजिक उत्तरदायित्व को सर्वप्रथम प्रबन्धकों एवं कर्मासरियों के द्वारा अनुभव एवं स्वीकार किए जाने की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए **उपभोक्ता पहले** की नीति तब ही सफल हो सकती है , जब कर्मचारी अपने हितों की तुलना में उपभोक्ताओ के हितों को प्राथमिकता देतें हैं। उनके हड़ताल एवं तालाबन्दी के निर्णय उपभोक्ताओ के हितों के प्रति संवेदनशील होते हैं। यही कारण है कि आज के संगठन विशेष रूप में बहुराष्ट्रीय संगठन कुशल, सक्षम, प्रतिबद्ध एवं गुणवत्ता के प्रति संवेदनशील मानव संसाधनों को विकसित करने पर जोर देते हैं तथा सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन या टी0क्यू0एम0 को अपनाते हैं।

प्रायः कम्पनियां संभावित उपभोक्ताओं को वास्तविक उपभोक्ताओं में रूपान्तरित करने के प्रयासों में उनके लिए कल्याण कार्यक्रमों का संचालन करती हैं। कम्पनी का इनके प्रति यह सामाजिक उत्तरदायित्व होता है कि उनके सन्तोष को अधिकतम करने के लिए उनकी रूचि, स्वाद एवं प्राथमिकताओं का अधिकतम ध्यान रखा जायेगा। कल्याण कार्यक्रमों का चयन करते समय कम्पनी को अपनी प्राथमिकताऐं अत्यंत सावधानी के साथ में तैयार करनी चाहिये। समस्त कार्यक्रमों पर ध्यान देने के स्थान पर अत्यावश्यक कार्यक्रमों पर ही ध्यान संकेन्द्रित करना चाहिये, जिन्हें वह सफलतापूर्वक संचालित कर सकती है।उपभोक्ताओं के प्रति संगठनों का यह भी उत्तरदायित्व है कि समाज को असत्य, भ्रामक एवं अनैतिक प्रचार एवं विज्ञापनों से बचाया जाय एवं ग्राहकों को अधिकतम सूचनाऐं उपलब्ध करायी जाय। साथ ही उनकी शिकायतों एवं परिवेदनाओं का तत्काल निवारण भी किया जाना चाहिए।

2.6.4 समुदाय के प्रति उत्तरदायित्व–

व्यावसायिक संगठनसमुदाय एवं समुदायों से निर्मित वृहत समाज के ही अंग है एवं परस्पर निर्भर भी हैं। इस कारण के समुदाय प्रति उनकासामाजिक उत्तरदायित्व समुदाय के कल्याण एवं हितों के प्रति अधिक जागरूक एवं संवेदनशील रहना है।उदाहरण के लिए, संगठन का सामाजिक उत्तरदायित्व है कि यह पर्यावरण, जिस पर स्वयं समाज एवं उसका अपना अस्तित्व भी निर्भर करता है, के सुरक्षण एवं संरक्षण के प्रति प्रतिबद्ध रहना चाहिए एवं पर्यावरण के अवनयन में उत्तरदायी कारको को दूर करना चाहिए। साथ ही संगठन को चाहिए कि वह सामाजिक उद्देश्यों एवं सरोकारों को पूर्ण करने में भागीदार बने। संगठनों को समाज के संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग करने के साथ ही रोजगार में वृद्धि के प्रयास करने चाहिए।संगठनों कोचाहिए कि वह अनैतिक एवं असामाजिक पद्धतियों में संलग्न होने से बचें।। उन्हें समाज के शैक्षणिक, स्वास्थ्य संबंधी एवं सांस्कृतिक विकास में योगदान करना चाहिए।

2.6.5 सरकार के प्रति उत्तरदायित्व–

व्यावसायिक संगठन सरकार को नियमित रूप में इमानदारी एवं समय से से करों का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है। कर आय से सरकार सामाजिक कल्याण के कार्यों का संचालन कर पाती है। व्यावसायिक संगठन देश एवं सरकार के नियमों का अनुपालन करने के लिए भी उत्तरदायी हैं। उन्हें लेखांकन एवं सूचनाओं के प्रकटीकरण मानकों एवं पद्धतियों, भ्रष्टाचार निरोधी निर्देशों एवं पद्धतियों,

प्रतियोगिता कानूनों , श्रम कानूनों एवं प्रक्रियाओं आदि का अनुपालन करना चाहिए।संगठनों को उत्तम व्यवहारपद्धतियों को प्रोत्साहित करना चाहिए। संगठनों को सरकार के सामाजिक कल्याण कार्यक्रमों में योगदान भी करना चाहिए।

2.6.6 पर्यावरणीय उत्तरदायित्व–

व्यावसायिक संगठनों को अपने पारिस्थितिकीय तन्त्र में प्रदूषकों के रिसाव को रोकने के उपाय करने चाहिए एवं इस संबंध में सरकार के संगठित कार्यक्रमों एवं उपायों में योगदान करना चाहिए। साथ ही पर्यावरण अधिनियम 1986 एवं अन्यप्रदूषण निवारककानूनो का अनुपालन सुनिश्चित करना चाहिए। राष्ट्रीय स्वच्छता अभियान जैसे फ्लैगशिप कार्यक्रमों में अपना सक्रिय योगदान प्रदान करना चाहिए। व्यावसायिक संगठनों का यह सामाजिक दायित्व है कि वह प्रदूषण नियन्त्रण हेतु अद्यतन तकनीकी का हस्तांतरण करें।

2.6.7 वैश्विक उत्तरदायित्व–

वैश्विक व्यावसायिक वातावरण में कम्पनी एक वैश्विक नागरिक है। अतः उसे वैश्विक व्यापार व्यवस्था, वैश्विक वित एवं बाजार प्रणाली, वैश्विक पर्यावरण, बौद्धिक सम्पदा अधिकारों, मानवाधिकारों, तकनीकी हस्तांतरण आदि पर वैश्विक कानूनों एवं समझौतौं का अनुपालन करना आवश्यक है।

2.7 सामाजिक लेखांकन एवं सामाजिक अंकेक्षण

संगठनों के सामाजिक प्रदर्शन के मूल्यांकन के एक उपकरण के रूप में सामाजिक अंकेक्षण का उपयोग किया जाता है। सामाजिक प्रदर्शन के मूल्यांकन का अवधारणा का प्रयोग सर्वप्रथम थियाडोर क्रेप्ट के द्वारा किया गया, किन्तु सामाजिक अंकेक्षण शब्द को सर्वप्रथम क्लार्क कैब्ट के द्वारा अपनी पुस्तक **आडिट फॉर मैनेजमैण्ट** में प्रयोग किया गया। संगठन की कोई भी गतिविधि जिसका सामाजिक प्रभाव है या संगठन के द्वारा संचालित की गयी कोई भी सामाजिक कल्याण वाली परियोजना हो, उसका मूल्यांकन सामाजिक अंकेक्षण के द्वारा किया जा सकता है। सामाजिक अंकेक्षण के लिए सामाजिक लाभ वाले कम्पनी के कार्यक्रमों के सावधानीपूर्वक सामाजिक लागत – लाभ विश्लेषण पर जोर देता है। सामाजिक अंकेक्षण के लिए मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों ही समंको का उपयोग किया जाता है। इसके लिए वित्तीय विश्लेषण की तरह के प्रारूपों का प्रयोग किया जाता है। सामाजिक प्रदर्शन की रिपोर्ट जिसे कम्पनी की वार्षिक रिपोर्ट के साथ प्रस्तुत किया जाता है, के साथ सम्बन्धों एवं प्राप्त परिणामों का विस्तृत विवरण सम्मिलित होता है, जिसमें सामाजिक विकास पर व्यय, प्रदूषण–नियन्त्रण पर व्यय,राष्ट्रीय आपदाओं पर राहत कोष का उपयोग, जन स्वास्थ्य, जनसंख्या नियन्त्रण, प्रौढ़–शिक्षापर व्यय, कमजोर वर्गों जैसे अनुसूचित जातियो/जनजातियों, पिछड़े वर्गों, विकलांगों , महिलाओं आदि को रोजगार एवं व्यय की धनराशि इत्यादि को सम्मिलित किया जा सकता है।

सामाजिक अंकेक्षण के लाभ :

1. संगठन सामाजिक कल्याण में अपने योगदान का आत्मावलोंकन कर सकता है।

2. संगठन अपनी सामाजिक कल्याण की छवि एवं पहचान का सार्वजनिक उप्योग कर सकता है।
3. विभिन्न क्रियान्वित कार्यक्रमों की तुलना की जा सकती है।
4. सामाजिक कल्याण के लिए आबंटित कोषों के उचित उपयोग का पता लगाया जा सकता है।
5. विभिन्न हितधारकों को कम्पनी के योगदान से संतुष्ट किया जा सकता है।

2.8 सामाजिक उत्तरदायित्व की सीमाऐं एवं बाधाऐं

व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्वकी सीमाऐं निम्नवत हैं :

- **लागत की सीमाऐं** – प्रत्येक सामाजिक उत्तरदायित्वमें मौद्रिक लागत निहित होती है। उसका प्रभाव कम्पनी की लाभदायकता एवं अर्थसक्षमता पर पड़ता है। यद्यनि कम्पनियों को समाज की कीमत पर लाभार्जन करना उचित नहीं है किन्तु यह भी ध्यान रखना चाहिए कि व्यावसायिक संगठन की सामाजिक उत्तरदायित्व लेने की योग्यता लाभदायकता एवं अर्थसक्षमता पर निर्भर करती है। यह आवश्यक है कि लागतएवं सामाजिक उत्तरदायित्व में संतुलन स्थापित रहे।
- **कार्यक्षमता की सीमाऐं**–व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व कार्यक्षमता को विपरीत रूप में प्रभावित करता है। अतः संगठनों को सामाजिक उत्तरदायित्व के उन क्षेत्रों में ही प्रवेश करना चाहिए जिनमें वह दक्ष होते हैं अन्यथा उनकी संगठनात्मक कार्यक्षमता विपरीत रूप में प्रभावित होगी।
- **स्वीकार्यता की सीमाऐं**–व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व इस बात पर भी निर्भर करता है कि उसके चयनित कार्य को सामाजिक स्वीकार्यता प्राप्त है एवं व्यवसाय के द्वारा उस कार्य को हाथ में लेने या प्रतिभाग से सरकार को अपने प्राधिकार में हस्तक्षेप का अनुभव नहीं हो। यदि संगठनों के द्वारा सामाजिक उत्तरदायित्व लेने से सरकार के प्राधिकार में अनावश्यक हस्तक्षेप होता है अथवा उसे समाज का समर्थन प्राप्त नहीं होता है तो ऐसी मनमानीपूर्ण सामाजिक गतिविधियां वांछित परिणम नहीं दे पाती हैं। अतः संगठनों को उन्हीं क्षेत्रों में सामाजिक उत्तरदायित्व लेना चाहिए , जहां उन्हें सामाजिक एवं सरकारी स्वीकृति प्राप्त होती है।
- **प्रासंगिकता की सीमाऐं**–संगठनों को उन्हीं क्षेत्रों में सामाजिक उत्तरदायित्व लेना चाहिए, जो उनके कार्यों के अनुसार प्रासंगिक भी हों ।
- **संगठन के क्षेत्र एवं आकार की सीमाऐं**–व्यावसायिक संगठनों एवं स्वयं व्यवसाय का आकार एवं क्षेत्र इतना सीमित होता है कि वह बहुआयामी सामाजिक समस्याओं के निदान करने में समर्थ नहीं हो सकता है। व्यवसाय की अपनी सीमायें हैं। उन्हें स्वयं को प्रतियोगिता में बनाये रखने तथा अपने आर्थिक कार्यों के सम्पादन में अनेक कठिनाइयों एवं संघर्षों का सामना करना पड़ता है। अतः संगठनों को अपने क्षेत्र एवं आकार के अनुसार ही सामाजिक उत्तरदायित्व लेना चाहिए।

इसके अतिरिक्त अनेक व्यावहारिक समस्याओं के कारण संगठनों की सामाजिक उत्तरदायित्व की क्रियाऐं बाधित होती हैं। इन बाधाओं की जानकारी इन्हें दूर करने के लिए आवश्यक होती हैं।

संरचनात्मक स्तर पर व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्वकी बाधाऐं निम्नवत हैं :

1. व्यक्तिगत प्रबन्धकों के स्तर पर उच्च प्रबन्धको के सकारात्मक अभिप्रेरण के अभाव में अपने संगठनात्मक व्यवहार में परिवर्तन करने को तैयार नहीं होते हैं क्योंकिइसमें उन्हें कैरियर एवं अन्य जोखिमों का डर बना रहता है।
2. संगठन के स्तर पर सबसे बड़ी बाधा लाभ पर संकेन्द्रण है । अंशधारियों एवं कर्मचारियों का दबाव एवं उनके परस्पर हितों का टकराव आदि कारणों से सामाजिक उत्तरदायित्व में बाधा उत्पन्न होती है।
3. उद्योग के स्तर पर प्रतियोगी कम्पनियों में सहयोग के अभाव में सामाजिक गतिविधियों की संभावना भी कम हो जाती है।
4. प्रभागीय स्तर पर विभिन्न प्रभागों को स्वयं को अर्थसक्षम सिद्ध करना पड़ता है। सामाजिक कार्यों में संलग्नता के कारण लाभदायकता का स्तर स्वाभाविक रूप में कम हो जाता है। इस कारण से प्रभागीय प्रबन्धक तब तक पहल नहीं करते हैं जब तक उन्हें उच्च प्रबन्ध से स्पष्ट निर्देश प्राप्त नहीं होते हैं।

2.9 सारांश

व्यवसायिक संगठन एक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था है, जो समाज के विभिन्न हितधारकों जैसे अंशधारी एवं कर्मचारी जो व्यवसाय के आन्तरिक हितधारक हैं और उपभोक्ता, आपूर्तिकर्ता, सरकार, प्रतिस्पर्धा, श्रम संघ एवं अन्य सामाजिक समुदाय जो बाहय हितधारक हैं, को अपनी क्रियाओं के द्वारा प्रभावित करता हैं। व्यवसाय के सामाजिक प्रभाव भी उसके आर्थिक एवं विविध प्रभावों की तरह पर्याप्त महत्वपूर्ण होते है। व्यवसायिक नीति निर्माण का एक महत्वपूर्ण अंग व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व पर आर्थिक एवं विविध कारकों की भाति पर्याप्त जोर देना है।सामाजिक उत्तरदायित्व आर्थिक क्रियाओं को लाभपूर्ण एवं कार्यक्षमतापूर्वक सम्पादन करने के साथ साथ लोक हित का उन्नयन करने से संबंधित है। सामाजिक उत्तरदायित्व का अभिप्राय यह है कि व्यवसाय के नीति निर्धारक एवं निर्णयकर्ता अपने हितलाभों की प्राप्ति के साथ साथ सम्पूर्ण समाज के कल्याण में अभिवृद्धि के प्रति जबाबदेह हैं । सामाजिक उत्तरदायित्व व्यवसाय के द्वारा समाज की समस्याओं का समाधान करने की जिम्मेवारी से सम्बन्धित है। यदि व्यवसाय समाज की कीमत पर अपने हित का संवर्द्धन करता है तो उसकी सफलता चिरस्थायी नहीं हो सकती है और उसका स्वयं का अस्तित्व संदिग्ध रहता है। एक सामाजिक रूप में संवेदनशील संगठन लाभ को अधिकतम करने के संकुचित उद्देश्य के विपरीत समाज के कल्याण के व्याापक उद्देश्य को ध्यान में रखता है। इसके लिए उसे आर्थिक लाभ एवं सामाजिक लाभ के परस्पर विरोधी उद्देश्यों के मध्य सामंजस्य स्थापित करना होता है। संगठन में प्रत्येक प्रबन्धकीय निर्णय के दोनों – आर्थिक एवं सामाजिक प्रभावों का विश्लेषण कर अन्तिम निर्णय लिए जाते हैं। परियोजनाओं के वित्तीय एवं तकनीकी संभाव्यता के साथ ही सामाजिक लागत– लाभ मूल्यांकन भी किया जाता है। संगठन के द्वारा उन

परियोजनाओं को छोड़ा जा सकता है जिनके नकारात्मक सामाजिक प्रभाव अधिक हों चाहे वह पर्याप्त आर्थिक लाभ प्रदान करने वाली हों ।

व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्वके संबंध में विद्वानों में परस्पर मतभेद हैं। अधिकांश विद्वान सामाजिक कार्य के पक्षधर हैं। व्यावसायैक संगठन सभी हितधारको के प्रति उत्तरदायी है। व्यवसायिक संगठन भी संस्थानों की तरह होते हैं। समाज को उनसे अनेक अपेक्षाऐं होती हैं और सामाजिक समस्याओं के प्रति वह नैतिक रूप में उत्तरदायी भी होते हैं । व्यवसायिक संगठन समुचित संसाधनों , कौशलो एवं शक्ति से युक्त होते हैं। सामाजिक उत्तरदायित्व से उन्हें नेतृत्व प्राप्त होता है एवं उनकी लोकप्रिय छवि निर्मित होती है। वैश्विक विश्व में उनके प्रति जनता का पूर्वाग्रह भी बदला है और अब वह कम्पनी नागरिक माने जाते हैं । इन कारणों से व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्वकी वर्तमान वैश्विक व्यवसायिक जगत में अत्यधिक प्रासंगिकता है। यही कारण है कि वैश्विक स्तर पर इसे मान्यता प्राप्त हुई है । भारत में भी अनेक कम्पनियों के द्वारा सामाजिक उत्तरदायित्व पर लगातार बढ़ती धनराशि का योगदान किया जा रहा है। : सरकार ने स्वयं सी0एस0आर0 व्यय को अनिवार्य करने के साथ ही इण्डियन इन्सटीयूट ऑफ कार्पोरेट अफेयर्स (आइ0आइ0एफ0ए0) की शाखा के रूप में नेशनल फण्ड फॉर कार्पोरेट सोशल रिसपॉन्सबिलिटी(एन0एफ0 सी0एस0आर0) भी बनाया है। सामाजिक उत्तरदायित्व का क्षेत्र व्यापक है और इसमें अंशधारियों, कर्मचारियों, उपभोक्ताओं, समुदाय, सरकार के प्रति उत्तरदायित्व तो आते ही हैं । साथ ही इसमें पर्यावरणीय एवं वैश्विक उत्तरदायित्व भी सम्मिलित हैं। सामाजिक अंकेक्षण संगठनों के सामाजिक प्रदर्शन के मूल्यांकन का एक उपकरण है। व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व की लागत, कार्यक्षमता, स्वीकार्यता, प्रासंगिकता तथा संगठन के क्षेत्र एवं आकार की सीमाऐं भी हैं। इसके अतिरिक्त, अनेक व्यावहारिक समस्याओं के कारण संगठनों की सामाजिक उत्तरदायित्वकी क्रियाऐं बाधित होती हैं, जो व्यक्तिगत प्रबन्धकों, संगठन, उद्योग एवं प्रभागीय स्तर पर आती हैं । इन सीमाओं और बाधाओं की पहचान एवं निदान आवश्यक है।

2.10 शब्दावली

सामाजिक उत्तरदायित्व : आर्थिक क्रियाओं को लाभपूर्ण एवं कार्यक्षमतापूर्वक सम्पादन करने के साथ साथ लोक हित का उन्नयन करने से संबंधित है। सामाजिक उत्तरदायित्व का अभिप्राय यह है कि व्यवसाय के नीति निर्धारक एवं निर्णयकर्ता अपने हितलाभों की प्राप्ति के साथ साथ सम्पूर्ण समाज के कल्याण में अभिवृद्धि के प्रति जबाबदेह हैं ।

सामाजिक उत्तरदायित्व का लौह सिद्धान्त : यह सिद्धान्त बताता है कि जो संगठन शक्ति का उपयोग समाज के अनुसार नहीं करते हैं, वह दीर्घकाल में शक्ति को खोते चले जाने की प्रवृति रखते हैं।

सामाजिक अंकेक्षण: संगठनों के सामाजिक प्रदर्शन के मूल्यांकन के एक उपकरण के रूप में सामाजिक अंकेक्षण का उपयोग किया जाता है।

सी0एस0आर0 : कार्पोरेट सोशल रिसपॉन्सबिलिटी

आइ0आइ0एफ0ए0 : इण्डियन इन्सटीयूट ऑफ कार्पोरेट अफेयर्स

एन0एफ0सी0एस0आर0 : नेशनल फण्ड फॉर कार्पोरेट सोशल रिसपॉन्सबिलिटी
टी0क्यू0एम0 : सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन ।

2.11 बोध प्रश्न

(अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(1) व्यवसाय का उद्देश्य केवल ....करने से कही अधिक है।

(2) व्यवसाय एवं समाज को परस्पर .... समझा जाता है।

(3) वैश्वीकरण के इस युग में सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा भी ....हो गयी है।

(4) व्यवसाय सामाजिक प्रणाली की एक ....है ।

(5) वैश्विक व्यावसायिक वातावरण में कम्पनी एक ....है।

(ब) सत्य/असत्य बताइए।

(1) सामाजिक उत्तरदायित्व नियमित कार्यो के सम्पादन से संबंधित है।

(2) सरकार ने प्रत्येक लाभ अर्जित करने वाली कम्पनी के लिये उसके लाभों का 2 प्रतिशत सी0एस0आर0 व्यय हेतु आबण्टित करना अनिवार्य कर दिया है।

(3) सामाजिक अंकेक्षण शब्द को सर्वप्रथम क्लार्क कैब्ट के द्वारा प्रयोग किया गया।

(4) प्रतियोगी बाजार में उपभोक्ता की स्थिति राजा की तरह होती है ।

(5) प्रभागीय प्रबन्धक सामाजिक उत्तरदायित्व में तब तक पहल नहीं करते हैं, जब तक उन्हें उच्च प्रबन्ध से स्पष्ट निर्देश प्राप्त नहीं होते हैं।

2.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

(अ) (1) लाभ अर्जित (2) आश्रित (3) सार्वभौमिक(4) उप इकाई (5) वैश्विक नागरिक

(ब) (1) असत्य (2) सत्य (3) सत्य (4) सत्य (5) सत्य।

2.14 स्वपरख प्रश्न

1. व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व की परिभाषा दीजिए तथा सामाजिक उत्तरदायित्वकी विशेषताओं एवं प्रकृति को समझाइए।
2. वर्तमान में व्यवसाय के लिए सामाजिक उत्तरदायित्व की क्या आवश्यकता है?
3. सामाजिक उत्तरदायित्व के पक्ष एवं विपक्ष में अपने तर्क दीजिए।
4. सामाजिक अंकेक्षण क्या है ? सामाजिक अंकेक्षण के क्या उद्देश्य हैं ?
5. व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व के महत्व एवं सीमाओं की व्याख्या कीजिए।

4.15 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Aswathaappa K., Essentials of business environment, Himalaya Publishing House, New Delhi. (2017).
2. Gupta C.B, Business environment, Sultan chand & Company, New Delhi. (2005).
3. Kazmi, Azhar, Business policy and Strategic Management, Tata McGraw Hill Publishing Company Limited (2002)
4. Michael V.P., Business policy and Environment, S.Chand and Company, (2000).
5. Prasad , L.M. , Business policy and Strategic Management, Sultan Chand and sons , New Delhi. (2002).

इकाई – 3 व्यावसायिक नीति और कम्पनी व्यूहनीति

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 व्यावसायिक नीति क्या है ?
3.3 व्यावसायिक नीति की विशेषताऐं
3.4 व्यावसायिक नीति के क्षेत्र
3.5 कम्पनी व्यूहनीति क्या है ?
3.6 कम्पनी व्यूहनीति की विशेषताऐं
3.7 व्यावसायिक नीति और कम्पनी व्यूहनीति में संबंध
3.8 व्यावसायिक नीति एवं कम्पनी व्यूहनीति में अन्तर
3.9 कम्पनी व्यूहनीति के क्षेत्र
3.10 मेकिन्से द्वारा प्रतिपादित सात एस की संरचना या सेवन एस फ्रेमवर्क
3.11 सारांश
3.12 शब्दावली
3.13 बोध प्रश्न
3.14 बोध प्रश्नों के उत्तर
3.15 स्वपरख प्रश्न
3.16 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः

- व्यावसायिक नीति एवं कम्पनी व्यूहनीति की अवधारणा को समझ सकें।
- व्यावसायिक नीति एवं कम्पनी व्यूहनीति के क्षेत्र को स्पष्ट कर सकें।
- व्यावसायिक नीति और कम्पनी व्यूहनीति में संबंध को समझ सकें।
- कम्पनी स्तरीय नियोजन एवं व्यूहनीतिक नियोजन का विवेचन कर सकें।

3.1 प्रस्तावना

विगत इकाई में आप यह पढ़ चुके हैं कि व्यावसायिक नीति व्यवसाय के भावी स्वरूप को निर्धारित करने का उच्च प्रबन्ध का एक एकीकृत दृष्टिकोंण है जो सम्पूर्ण कम्पनी को ध्यान में रखते हुए कम्पनी के सभी प्रबन्धकों को सोचने, नियोजन करने, योजनाओं को कार्य रूप में परिणित करने हेतु दिशा प्रदान करता है, कार्यों की सीमा रेखाऐं तय करता है और मार्गनिर्देश देता है । इस प्रकार नीति प्रबधको को प्रत्येक स्तर पर निर्णयन में मार्गनिर्देशन करने में सहायक होती है। छोटे संगठनों में व्यावसायिक नीति, योजनाऐं एवं व्यूहनीतियॉ मुख्य अधिशासी तय करता है और वही मुख्य कार्यकारी अधिकारी के रूप में भी कार्य करता है, किन्तु बड़े संगठनों में विशेष रूप से, विश्व स्तर में परिचालन करने वाले बहुराष्ट्रीय संगठनों में व्यावसायिक नीति कई स्तरों –कम्पनी, व्यवसायिक ईकाई एवं व्यवसाय के क्रियात्मक स्तर पर पर कार्य करती है। समस्त व्यवसाय के लिए व्यावसायिक नीति कम्पनी संगठन के स्तर पर

तैयार की जाती है। कम्पनी के समग्र उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए पूरे व्यवसाय हेतु कम्पनी नीतियां, कम्पनी व्यूहनीतियां एवं कम्पनी की योजनाऐं निर्मित की जाती हैं। कम्पनी नीतियां कम्पनी के द्वारा संचालित समस्त व्यवसायों, समस्त कार्यक्षेत्रों, विभिन्न उत्पाद रेखाओं एवं परिचालनों के लिए निर्मित की जाती है। यह प्रबन्धकों के लिए व्यापक परिसीमाऐं एवं मार्गनिर्देश तय कर देती हैं, जिनके अर्न्तगत वह अपने निर्णय ले सकते हैं।

आप यह भी अध्ययन कर चुके हैं कि व्यवसाय समाज का ही एक अंग है और समाज पर निर्भर भी करता है। संगठनों को सामाजिक परिवर्तनों के अनुरूप समायोजन करना होता है। इन परिवर्तनों को अंगीकार करके ही यह अपने अस्तित्व को बचा सकते हैं। व्यावसायिक नीति में उच्च प्रबन्ध संगठन के द्वारा अपनें आन्तरिक एवं वाह्य वातावरण से अन्तर्किया करते समय सामाजिक रूप में उत्तरदायी संगठनों की तरह व्यवहार करने से संबंधित मूल्यों एवं सि़द्धान्तों को भी सम्मिलित किया जाता ळें व्यवसाय का सामाजिक उत्तरदायित्व उसकी व्यावसायिक नीतिमें भी परिलक्षित होता है। इस अध्याय में हम व्यावसायिक नीति एवं कम्पनी व्यूहनीति के संबंधों के विविध पहलुओं, अन्तर्निहित तत्वों एवं मुददों की चर्चा करेंगे।

3.2 व्यावसायिक नीति क्या है ?

व्यावसायिक नीति मार्गनिर्देशों का एक सामान्य कथन है जो संगठन के समस्त सदस्यों को किसी भी कार्य विधि के संबंध में मार्गनिर्देशन करती है। यह सम्पूर्ण संगठन के लिए निर्मित की जाती है और पूरे संगठन को दिशा प्रदान करती है। नीतियां सामान्य प्रबन्ध एवं मुख्य अधिशासी के द्वारा निर्धारित की जाती हैं और विभागीय एवं कियात्मक प्रबन्धकों को उनके नैत्यिक कार्यों के संचालन हेतु सामान्य मार्गनिर्देशों एवं परिसीमाओं की एक व्यापक संरचना को निर्धारित कर देती है।नीतियां व्यक्तिगत विवेक की सीमाओं को संकुचित कर देती हैं ताकि महत्वपूर्ण प्रकरणों पर कर्मचारी संगत व्यवहार कर सकें। नीतियों के अभाव में प्रत्येक निर्णय उसके गुण अवगुणों के दृष्टिगत लिया जा सकता है अथवा उच्च प्रबन्धकों को सन्दर्भित किया जा सकता है।प्रायः कई बार ऐसे निर्णय लिये जा सकते हैं जो या तो पूर्व के निर्णयों से असंगत होते हैं अथवा कम्पनी के लक्ष्यों के अनुरूप नहीं होते हैं, किन्तु नीतियां उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने की विधियों एवं साधनों की सामान्य रूपरेखा तय कर देती हैं । किन्तु इसका यह आशय नहीं है कि नीतियां प्रबंधकों एवं कर्मचारियों के दैनिक कार्यों में सहयोग करें बल्कि नीतियां निर्धारित परिसीमाओं के भीतर कम्पनी के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए विभागीय एवं कियात्मक नीतियां तैयार करने की जिम्मेवारी कियात्मक प्रबन्धकों पर डाल देती है, किन्तु शर्त यह है कि उन्हें संगठन की नीतियों , उद्देश्यों एवं लक्ष्यों से संगत होना चाहिए ।

3.3 व्यावसायिक नीति की विशेषताऐं

1. **स्पष्टता** : व्यावसायिक नीति स्पष्टतया परिभाषित एवं पहचान करने योग्य होनी चाहिए।

2. **प्रासंगिकता** : व्यावसायिक नीति के उद्देश्य परस्पर संबंधित, स्पष्टतया परिभाषित एवं पहचान करने योग्य तथा वातावरण के प्रासंगिक होने चाहिए।
3. **संगतियुक्तः** व्यावसायिक नीतिकम्पनी के संसाधनों एवं दक्षता के अनुरूप संगत होनी चाहिए।
4. **स्थायित्व** :व्यावसायिक नीति दीर्घकाल के लिए निर्मित होनी चाहिए किन्तु इसमें परिवर्तनों हेतु लोच का क्षेत्र भी विद्यमान होना चाहिए।
5. **औचित्यपूर्ण** : व्यावसायिक नीति संगठनात्मक दर्शन, संदृष्टि, ध्येय एवं मूल्यों के प्रति उचित एवं इमानदार होनी चाहिए।
6. **संतुलित जोखिम** : व्यावसायिक नीति में जोखिम का स्तर आर्थिक, संगठनात्मक एवं व्यक्तिगत स्तर पर उचित होना चाहिए।
7. **स्वीकार्यता** : व्यावसायिक नीति सभी पक्षों एवं हितधारकों के द्वारा स्वीकार्य एवं उनके मूल्यों एवं आकांक्षओं के अनुरूप होनी चाहिए।
8. **व्यावहारिकता** : व्यावसायिक नीति व्यावहारिक एवं कार्य में परिणित करने में सक्षम होनी चाहिए।
9. **उद्दीपकता** : व्यावसायिक नीति संगठनात्मक प्रयासों एवं प्रतिबद्धता को उदीप्त करने में सक्षम होनी चाहिए।

3.4 व्यावसायिक नीति के क्षेत्र

प्रत्येक संगठन की अनिवार्यतः एक व्यावसायिक नीति होती है जो अधिकांशतः वह वातावरण तय करता है जिसमें वह विद्यमान होती है। व्यावसायिक नीति के अर्न्तगत ही क्रियात्मक प्रबन्धक अपनी व्यूहनीतियां निर्मित करते हैं। इस प्रकार व्यावसायिक नीति का निर्माण एवं कम्पनी व्यूहनीति का निर्माण आपस में संबंधित हैं और दोनों में अधिकांश तत्व एवं चरण समान होते हैं।इनमें अर्न्तनिहित चरणों को कम्पनी व्यूहनीति के चरणों के अर्न्तगत भी समझाया गया है।

1. **वातावरणीय जांच एवं मूल्यांकनः** वातावरणीय जांच वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा संगठन अपने से संबंधित प्रासंगिक वातावरण में विद्यमान उन अवसरों एवं चुनौतियों का अनुश्रवण करता है जिनका व्यवसाय पर प्रभाव पड़ता है। वातावरणीय जांच एवं मूल्यांकन के माध्यम से अपने वातावरण का अनुश्रवण करके एक संगठन वातावरण के विभिन्न सैक्टरों में हो रहे परिवर्तनों, घटनाओं, प्रवृत्तियों, आकांक्षाओं आदि एवं उनका संगठन पर पडने वाले प्रभाव की पहचान कर सकता है। ऐसा करके वह समय रहते अनेक प्रभावों के सापेक्ष अपनी नीति एवं व्यूहनीति में आवश्यक समायोजन कर सकता है। वातावरण के जटिल एवं निरन्तर गतिशील होने के कारण उसकी विभिन्न शक्तियों का लगातार मूल्यांकन एवं पूर्वानुमान करना उनकी अन्तर्निहित जोखिम एवं विपरीत प्रभावों को न्यूनतम करने के लिए आवश्यक हो गया है। वातावरणीय जांच के अर्न्तगत विभिन्न स्रोतों से सूचनाऐं प्राप्त कर उनका निर्वचन एव मापन किया जाता है तथा पूर्वानुमान किए जाते हैं। वातावरणीय जांच के अर्न्तगत सूचनाओं की प्राप्ति के मुख्यतः तीन दृष्टिकोंण हैं। प्रणालीगत दृष्टिकोंण के अर्न्तगत व्यवसाय एवं उद्योग पर सरकारी नीति,

नियमनकारी विधान में परिवर्तनों, बाजार, वित्त, प्रतियोगियों एवं ग्राहकों आदि की सूचनाओं को नियमित रूप में एक प्रणाली स्थापित कर प्राप्त एवं निरन्तर परिवर्द्धित किया जाता है। तदर्थ दृष्टिकोंण के अर्न्तगत विशेष सर्वेक्षण एवं अध्ययन आयोजित किए जाते हैं। विद्यमान एवं भावी व्यूहनीतियों के प्रभावों पर परियोजना अध्ययन भी किए जाते हैं। तीसरा दृष्टिकोंण विभिन्न स्रोतों की पूर्व प्रक्रियन की हुयी सूचनाओं को उपयोग में लाना है। संगठन व्यवहार में इन दृष्टिकोंणों में से अपनी आवश्यकतानुसार एक या अधिक का उपयोग कर सकते हैं। वातावरणीय परिवर्तनों का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक एवं विविधतापूर्ण है। परिवर्तन अनेक क्षेत्रों जैसे व्यवसाय एवं उद्योग, अर्थव्यवस्था, राजनीतिक व्यवस्था, सामाजिक एवं सांस्कृतिक, जनांकिकीय विशेषताओं, आदतों, प्राथमिकताओं, अभिवृतियों आदि में हो सकते हैं जिनमें से सभी का सटीक पूर्वानुमान करना कठिन होता है। व्यावसायिक नीति इनसे प्रभावित हुए बिना नही रह सकती है। वातावरणीय जांच से उच्च प्रबन्ध को संगठन के अवसरों एवं चुनौतियों को पहचानने एवं उसके अनुरूप नीतियों एवं व्यूहनीतियों का निर्माण करने में सहायता मिलती है। साथ ही संबंधित परिचालनात्मक प्रबन्धक भी अपने से संबंधित क्षेत्र की व्यूहनीतियां संगठन की निर्धारित नीति के अर्न्तगत निर्मित कर सकते हैं।

2. **आन्तरिक मूल्यांकनः** व्यावसायिक नीति एवं व्यूहनीति को आन्तरिक एवं वाहय दोनों कारक प्रभावित करते हैं। जहां वाहय कारक अवसर एवं चुनौतियां हैं वही आन्तरिक कारक शक्तियां एवं कमजोरियां हैं। **स्वॉट (SWOT) विश्लेषण** आन्तरिक एवं वाहय वातावरण के मूल्यांकन हेतु नीति निर्माताओं को एक महत्वपूर्ण उपकरण प्रदान करता है। यदि कम्पनी मूल्यांकन के वास्तविक परिणाम प्रत्याशित परिणामों से कम रहते हैं तो व्यावसायिक नीति एवं व्यूहनीति का परिमार्जन अपरिहार्य हो जाता है।

शक्तियां : संगठन की शक्तियां उसके आन्तरिक दक्षता घटक हैं जो संगठनात्मक उद्‌देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक होते हैं। कम्पनी की विद्यमान एवं भावी व्यूहनीतियों की सफलता इन्हीं सकारात्मक तत्वों जैसे दक्ष एवं प्रतिबद्ध मानव संसाधन, नवीनतम तकनीकी, आधुनिक प्लाण्ट एवं मशीनरी, कम लागत, उच्च गुणवत्ता, अच्छी वित्तीय स्थिति, उत्तम शोध एवं विकास, बाजार अंश का आकार आदि पर अवलम्बित होती है।

कमजोरियां :संगठन की कमजोरियां नकारात्मक तत्व हैं जो उसके द्वारा सफलतापूर्वक उद्‌देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति के मार्ग की बाधाऐं हैं। यद्यपि प्रत्येक संगठन में कुछ कमजोरियां होती हैं किन्तु उसके द्वारा कमजोरियों का समाधान करने की क्षमता उसकी सफलता की संभावनाओं में वृद्धि कर देती है। कौशलयुक्त एवं दक्ष कार्मिको की कमी, अप्रचलित तकनीकी, पुरानी मशीनरी, श्रम संघर्ष, बढती लागत एवं घटते लाभ एवं बाजार अंश, प्रतिबद्ध प्रबन्धन का अभाव आदि व्यावसायिक नीति एवं व्यूहनीतिके कारण व्यावसायिक नीति एवं व्यूहनीति को पुनरीक्षित करना पडता है तथा कमजोरियों को दूर करने के उपाय खोजने होते हैं।

अवसर :अवसरप्रत्येक संगठन के वातावरण में विद्यमान होते हैं जिनकी पहचान कर उनका अधिकतम लाभ उठाने पर संगठन की सफलता निर्भर करती है।सरकार की सकारात्मक नीति, प्रदत्त सुविधाऐं, छूटें एवं प्रोत्साहन, संभावनायुक्त बाजार, राजनीतिक स्थिरता, प्रतियोगितात्मक लाभ की स्थिति, ग्राहकों की वृद्धिमान आय का स्तर, अर्थव्यवस्था की अच्छी स्थिति आदि पर व्यावसायिक नीति एवं व्यूहनीतिनिर्मित करते समय ध्यान केन्द्रित करना होता है।

चुनौतियां :अवसरों का भांति चुनौतियां भी प्रत्येक संगठन के वातावरण में विद्यमान होती हैं। यह संगठन की सफलता के मार्ग की बाधाऐं हैं।कभी कभी यह संगठन के अपने अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह लगा देती हैं। कठोर नियमन, उच्च कर दरें, कटु प्रतिस्पर्धा, आर्थिक मन्दी, राजनीतिक अस्थिरता, उपभोक्तावाद आदि चुनौतियों का सामना करने के लिए नीति निर्माताओं को आवश्यक समायोजन करने होते हैं तथा व्यावसायिक नीति एवं व्यूहनीति को भी तदनुसार संशोधित एवं परिवर्द्धित करना होता है।

3. **नीति निर्माणः** वातावरणीय जांच एवं मूल्यांकन के पश्चात अगला चरण व्यावसायिक नीति एवं व्यूहनीतिनिर्माण का होता है जिसमें निम्नलिखित उप चरण सम्मिलित होते हैं :
    1. संगठन के उद्देश्यों का निर्धारण।
    2. वातावरणीय जांच एवं मूल्यांकन परिणमो के अनुसार उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का पुर्ननिर्धारण।
    3. परिवर्तित परिस्थितियों के अनुसार संगठन के समायोजन हेतु आवश्यक उपायों एवं कदमों को निश्चित करना ।
    4. उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु प्राथमिकताओं, लक्ष्यों, योजनाओं एवं कार्यक्रमों का निर्धारण।

“व्यावसायिक नीति एवं व्यूहनीति निर्माण का मुख्य कार्य योजनाओं को वांछित दिशा प्रदान करना है। दूसरे शब्दों में, वह उस दिशा को प्रभावित करते हैंजहां संगठन जाने का प्रयत्न कर रहा है। किन्तु बाहर रहकर वह यह सुनिश्चित नही करते कि क्या कम्पनी , वास्तव में, वहां जा रही है, जहां वह जाना चाहती है।”

नीति कियान्वयन, नीति अनुश्रवण एवं मूल्यांकन

व्यावसायिक नीति एवं व्यूहनीति निर्माण में कियान्वयन, नीति अनुश्रवण एवं मूल्यांकन के नीति विषयक पहलू भी सम्मिलित होते हैं, जिन्हें 2.9.6 में समझाया गया है।

3.5 कम्पनी व्यूहनीति क्या है ?

कम्पनी व्यूहनीति एक कार्य योजना है जो सम्पूर्ण संगठन पर लागू होती है । यह एक संगठनात्मक प्रक्रिया है जो संगठन के समस्त व्यवसाय के संबंध में कम्पनी स्तर पर लिए गये निर्णयों की एक श्रंखला है । कम्पनी व्यूहनीति यह निश्चित करती है कि सम्पूर्ण कम्पनी संगठन का स्वरूप क्या होगा? इसका मंतव्य, उददेश्य एवं लक्ष्य कौन से होंगे? इनहें प्राप्त करनें के लिये कम्पनी स्तर पर क्या नीतियां एवं योजनाऐं होंगी? यह कम्पनी के व्यवसाय, उसके आर्थिक एवं मानवीय संसाधनों के

स्वरूप एवं विभिन्न हितधारकों के प्रति उसके प्रत्याशित योगदान को परिभाषित करती है।

काइस्टन्सन के अनुसार कम्पनी व्यूहनीति एक कम्पनी के उच्च प्रबन्ध के उन निर्णयों की प्रवृति है जो (1) उद्देश्यों, निहितार्थ एवं लक्ष्यों को निर्धारित, स्वरूपित एवं प्रकट करती है। (2) इन उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए मुख्य नीतियों एवं योजनाओं को उत्पन्न करती है, (3) कम्पनी जिस व्यवसाय में होना चाहती है, इसे परिभाषित करती है (4) जिस प्रकार का आर्थिक एवं मानवीय संगठन वह बनना चाहती है, को परिभाषित करती है और (5) अपने अंशधारियों, कर्मचारियों, ग्राहकों एवं समुदायों को जिस प्रकृति की आर्थिक एवं गैर आर्थिक योगदान वह करना चाहती है, उसे परिभाषित करती है ।

एक संगठन की त्रिस्तरीय व्यूहनीति संरचना – 1. कम्पनी 2. एस0बी0यू0 एवं 3. कियात्मक विभाग – में शीर्ष स्तर पर कम्पनी व्यूहनीति होती है।व्यवसाय स्तर के व्यूहनीतिक निर्णयकम्पनी व्यूहनीति के द्वारा निर्धारित सामान्य दिशानिर्देशों का अनुसरण करते हैं। व्यवसाय स्तर के व्यूहनीतिक निर्णयों में नये उत्पाद का विकास, उत्पाद एवं विपणन मिश्रण, शोध एवं विकास, सेविवर्ग आदि आते हैं।कियात्मक व्यूहनीतियांकियात्मक क्षेत्रों – उत्पादन, विपणन, सेविवर्ग, वित आदि के निर्णयों से संबंधित होती हैं। व्यवसाय स्तर के व्यूहनीतिक निर्णय सही कार्य करने से संबंध रखते हैं, जबकि कियात्मक व्यूहनीतियां कार्य को सही करने से संबंध रखती हैं।व्यवसाय स्तरकी व्यूहनीतियोंकी सफलता प्रायः कियात्मक व्यूहनीतियों से संबंधित निर्णयों पर निर्भर करती है।

एकल एस0बीयू0 फर्म मेंकम्पनी एवं कियात्मक व्यूहनीतियां

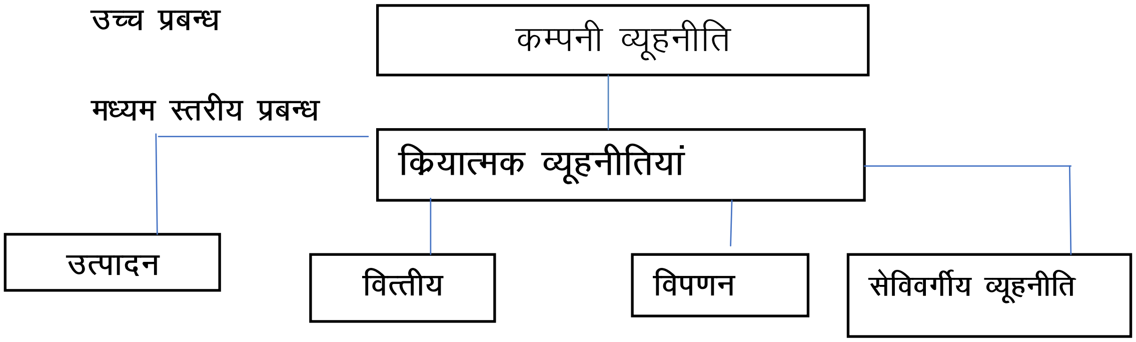

बहुल एस0बीयू0 फर्म में कम्पनी एवं कियात्मक व्यूहनीतियां

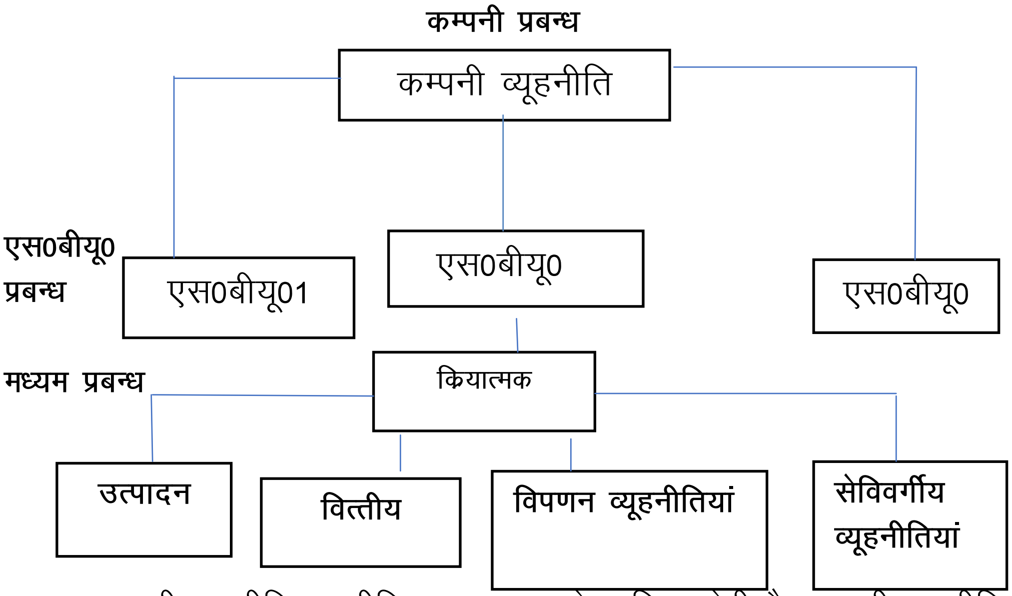

कम्पनी व्यूहनीति व्यूहनीतिक प्रबन्ध का केन्द्र बिन्दु होती है। कम्पनी व्यूहनीति कम्पनी के प्रत्येक कियात्मक क्षेत्र, व्यवसायिक गतिविधि, लाभ केन्द आदि की कार्य योजनाओं एवं कार्य विधियों के लिये दिशा निर्धारित कर देती है।बहुविभागीय कम्पनियों, जिनमें विविध व्यावसायिक हित निहित होते हैं, कम्पनी व्यूहनीति अत्यन्त उपयोगी होती है। यह उत्पाद या सेवा का चयन अथवा लक्षित बाजार का चुनाव व्यक्तिगत व्यूहनीतिक इकाइयों पर छोड़ देती है किन्तु उनकी विशिष्टीकृत दक्षता को प्रतियोगितात्मक लाभ में रूपान्तरित करने पर ध्यान केन्द्रित करती है। व्यवसाय स्तर की व्यूहनीतियों की तुलना में यह भविष्योन्मुख, नव प्रवर्तनात्मक, अवधारणात्म, लोचपूर्ण एवं मार्गनिर्देशात्मक प्रकृति की होती है।कम्पनी व्यूहनीति परिस्थिति विश्लेषण पर आधारित होती है और इस कारण से उद्देश्यों को प्राप्त करने पर जोर देती है। उदाहरण के लिये नये व्यवसायों में विविधीकरण, पुर्नगठन या कम्पनियों का अधिग्रहण आदि निर्णय कम्पनी व्यूहनीतिक स्तर के होते हैं। दूसरे शब्दों में,कम्पनी व्यूहनीति व्यावसायिक नीति को कियान्वित करने का एक विशिष्ट तरीका है।

3.6 कम्पनी व्यूहनीति की विशेषताऐं

1. कम्पनी व्यूहनीति समस्त संगठन से संबंधित है ।
2. कम्पनी व्यूहनीति का दीर्घकालीन प्रयोजन होता है ।
3. कम्पनी व्यूहनीति परिवर्तनशील वातावरणीय तत्वों पर केन्द्रित होती है ।
4. कम्पनी व्यूहनीति का निर्माण एक बौद्धिक प्रकिया है ।
5. कम्पनी व्यूहनीति का निर्माण एक सतत एवं गतिशील प्रकिया है ।

3.7 व्यावसायिक नीति और कम्पनी व्यूहनीति में संबंध

व्यावसायिक नीतिएवं कम्पनी व्यूहनीति गहन रूप में संबंधित हैं क्योकि व्यूहनीति का निर्माण उच्च प्रबन्ध ही नीति के अनुसार ही होता है। व्यावसायिक नीति कम्पनी के मूल्य, संस्कृति, दर्शन, संरचना एवं उच्च प्रबन्ध के दृष्टिकोंण को व्यक्त

करती है, अतः कम्पनी व्यूहनीति कोव्यावसायिक नीति से अलग करके नहीं देखा जा सकता है क्योकि यह स्वयं संगठन की एक प्रक्रिया है।कम्पनी व्यूहनीति के अर्न्तगत मुख्यतः तीन चरण निहित होते हैं:

- सर्वप्रथम कम्पनी प्रबन्ध उस व्यवसाय को अभिकल्पित , निर्धारित एवं परिभाषितकरता है जिसमें कि कम्पनी प्रवेश करना चाहती है।
- तत्पश्चात वह उन उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को तय करता है जिन्हें समयबद्ध रूप में प्राप्त किया जाना है।
- अन्त में, वह निर्धारित उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये ऐसी कार्य योजनाऐं निर्मित करता है, जो वर्तमान व्यावसायिक वातावरण में उद्योग में कार्यरत अन्य प्रतियोगी फर्मों के सापेक्ष प्रभावपूर्ण एवं कार्यक्षमता से सफलतापूर्वक संचालित हो सकें।

उपरोक्त चरणों में प्रथम दो चरण व्यावसायिक नीति की भी विषय वस्तु हैं और तीसरा चरण व्यावसायिक नीति के द्वारा मार्गनिर्देशन से संबंधित है। इस प्रकार व्यावसायिक नीतिएवं कम्पनी व्यूहनीति घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं।

3.8 व्यावसायिक नीति एवं कम्पनी व्यूहनीति में अन्तर

व्यावसायिक नीति एवं कम्पनी व्यूहनीति में मुख्य अन्तर यह है कि जहां नीति सभी कार्यवाहियों एवं निर्णयों हेतु मार्गनिर्देश एवं दिशानिर्देश हैं, वहीं कम्पनी व्यूहनीति स्वयं कार्य योजना है। व्यावसायिक नीति व्यवसाय के प्रति उच्च प्रबन्ध का समग्र दृष्टिकोंण है जबकि कम्पनी व्यूहनीति व्यावसायिक नीति को कार्यरूप में परिणित करती है। व्यावसायिक नीति एवं कम्पनी व्यूहनीति सम्पूर्ण संगठन पर लागू होती है जबकि व्यवसाय व्यूहनीति अपेक्षाकृत कम विस्तृत होती है और कम्पनी के अलग – अलग व्यवसायों पर लागू होती है। व्यावसायिक नीति एवं कम्पनी व्यूहनीति में अन्तर की अपेक्षा समानताऐं अधिक हैं। दोनों ही उच्च प्रबन्धकों के द्वारा तैयार की जाती हैं।दोनों सम्पूर्ण संगठन को ध्यान में रखती हैं। दोनों को निर्मित करने में वातावरणीय विश्लेषण सामान्य आधार होता है और दोनों ही व्यवसाय के परिचालन क्षेत्र पर ध्यान केन्द्रित करते हैं।

3.9 कम्पनी व्यूहनीति के क्षेत्र

1. **वातावरणीय जांच एवं मूल्यांकन :** कम्पनी जिस वातावरण में कार्य करती है, वह स्वाभाविक रूप में उसकी व्यूहनीति को भी निर्धारित करता है। वातावरणीय जांच एवं मूल्यांकन से उसे अवसरों का लाभ उठाने, चुनौतियों के सापेक्ष तैयारी करने तथा प्रतियोगियों की गतिविधियों का पता लगाने में आवश्यक सहायता प्राप्त होती है।
2. **स्व मूल्यांकन :** आन्तरिक वातावरणीय कारकों शक्तियों एवं कमजोरियों से संबंधित होता है। इससे यह ज्ञात होता है कि कम्पनी कहां खडी है। शक्तियों एवं दक्षताओं से कम्पनी को अलग पहचान मिलती है और प्रतियोगियों पर तुलनात्मक लाभ भी प्राप्त होता है।

स्वॉट (SWOT) विश्लेषण आन्तरिक एवं वाह्य वातावरण के कारकों के मिलान के माध्यम से कम्पनी को एक व्यूहनीतिक संदृष्टि प्रदान करता है।यह मजबूत अवसरों एवं संभावित दक्षताओं के द्वारा मजबूत उत्पादों की संभावनाओं को उत्पन्न करता है।कम्पनी प्रबन्ध कमजोरियोंएवं चुनौतियों के दृष्टिगत व्यूहनीतिक उपाय कर सकता है।

3. **व्यूहनीतिक नियोजन** : व्यूहनीतिक नियोजन का अभिप्राय उस विस्तृत, समन्वित, एवं एकीकृत योजना से है, जो कम्पनी का उच्च प्रबन्ध वातावरणीय अवसरों एवं चुनौतियों के सापेक्ष अपनी आन्तरिक क्षमताओं के संदर्भ में कम्पनी को व्यूहनीतिक लाभ लेने के लिये तैयार की जाती है। **राबर्ट एन्थोनी के अनुसार व्यूहनीतिक नियोजन उददेश्यों के निर्धारण करने, उददेश्यों में परिवर्तन करने, इन उददेश्यों को प्राप्त करने के लिये प्रयुक्त संसाधनों का निर्धारण करने तथा उन नीतियों को तय करने की प्रकिया है जो इन संसाधनों के अधिग्रहण, उपयोग एवं व्यवस्थापन की कियाओं को अभिशासित करती है।**

व्यूहनीतिक नियोजन को व्यूहनीति के निर्माण की प्रकिया भी कहा जा सकता है, जिसके अर्न्तगत वाह्य वातावरण की जांच के द्वारा कम्पनी को उपलब्ध अवसरों एवं चुनौतियों की पहचान की जाती है, प्रत्याशित जोखिमों का आकलन किया जाता है और इन अवसरों, चुनौतियों एवं जोखिमों के सापेक्ष कम्पनी की वास्तविक एवं संभावित दक्षताओं का वस्तुपरक परीक्षण इस अभिप्राय से किया जाता है कि कम्पनी के लिए अनुमानित एवं पूर्वावलोकित संभावनाओं को प्रतियोगितात्मक लाभ में रूपान्तरित किया जा सके। व्यूहनीतिक नियोजन के अर्न्तगत कम्पनी के दर्शन, प्राथमिकतापूर्ण मूल्यों तथा उसके सामाजिक उत्तरदायित्व को भी ध्यान में रखा जाता है ।

वस्तुतः व्यूहनीतिक नियोजन एक प्रकार से कम्पनी नियोजन की विस्तृत एवं नियमित औपचारिक प्रणाली का ही एक भाग है किन्तु क्योंकि व्यूहनीतिक नियोजन कम्पनी की भावी दिशा तय करता है एवं उसके द्वारा हाथ में ली जाने वाली भावी गतिविधियों की संरचना निर्धारित करता है, अतः यह कम्पनी नियोजन के लिए आधार भी प्रदान करता है। व्यूहनीतिक नियोजन कम्पनी और उसके वातावरण के मध्य सेतु की तरह होता है जिसमें कम्पनी के उच्च प्रबन्ध के द्वारा लिये जाने वाले मुख्य निर्णय सम्मिलित होते हैं। राबर्ट शिरले, माइकल पीटर्स एवं अदेल अल अंसारी के अनुसार पांच मूलभूत निर्णयों का उल्लेख किया गया है :

- उपभोक्ता मिश्रण संबंधी निर्णय जिसमें लक्षित बाजार, उपभोक्ता वर्ग, भौगौलिक क्षेत्र आदि के संबंध में निर्णय आते हैं।
- उत्पाद मिश्रण संबंधी निर्णय जिसमें उत्पाद एवं सेवा के अधिमान, विशिष्टीकरण, कीमत एवं गुणवत्ता, डिजायन आदि संबंधी निर्णय आते हैं।

- बाजार की भौगौलिक क्षेत्र की सीमाओं संबंधी निर्णय जिसमें कम्पनी के उत्पाद एवं सेवा हेतु सेवित भौगौलिक क्षेत्र संबंधी निर्णय आते हैं।
- प्रतियोगियों संबंधी निर्णय जिसमें कम्पनी केद्वारा अपने प्रतियोगियों से बेहतर करने से संबंधित निर्णय आते हैं।
- उद्देश्यों संबंधी निर्णय जिसमें निवेश पर प्रत्याय, लाभ मार्जिन व अन्य संवृद्धि दरों के निर्धरण आदि संबंधी निर्णय आते हैं।

4. **कम्पनी स्तरीय नियोजन या कार्पोरेट प्लानिंगः** सामान्यतः कम्पनी स्तरीय नियोजनएवं व्यूहनीतिक नियोंजन को समानार्थक रूप में प्रयुक्त किया जाता है। किन्तु प्रबन्धकीय साहित्य में इनमें अन्तर किया गया है। इस कारण से इनके क्षेत्र को स्पष्ट रूप में समझना आवश्यक है।

   कम्पनी स्तरीय नियोजन कम्पनी के उच्च्व प्रबन्ध के द्वारा संचालित की जाने वालीएक सतत एवं विस्तृत प्रक्रिया है जो संगठन के उद्देश्यों की पहचान करने, समुचित लक्ष्यों को निर्धारित करने तथा इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए व्यावहारिक योजनाऐं निर्धारित करने की एक व्यवस्थित एवं अनुशासित प्रणाली स्थापित करती है। यह प्रक्रिया नियमित रूप से निश्चित समयावधियों के लिए आयोजित की जाती है। कम्पनी स्तरीय नियोजन में अनुमानित परिणाम प्राप्त करने के लिए प्रणालीगत आधार पर जोखिम सहित निर्णय लिए जाते हैं। इन निर्णयों के द्वारा निर्धारित लक्ष्यों के सापेक्ष योजनाओं के कियान्वयन हेतु संसाधनों का आबंटनकिया जाता है।कम्पनी स्तरीय नियोजन दीर्घकालीन नियोजन से इस अर्थ में भिन्न है कि इसमें समय व्यवसाय की प्रकृति पर निर्भर करता है। यदि व्यवसाय दीर्घकालीन प्रकृति वाला है जैसे इन्फ्रास्ट्रकचर या तकनीकी अथवा भारी इन्जीनियरिंग आदि तो कम्पनी स्तरीय नियोजन दीर्घकालीन प्रकृति वाला होगा। जबकि व्यवसाय के अपेक्षाकृत कम दीर्घकालीन प्रकृति वालाजैसे रिटेल व्यवसाय होने पर कम्पनी स्तरीय नियोजन अल्पकालीन प्रकृति का होगा।

   कम्पनी स्तरीय नियोजन में व्यूहनीतिक नियोंजन, दीर्घकालीन नियोजन संचालनात्मक नियाजन एवं परियोजना नियोजन सभी सम्मिलित होते हैं।

5. **परियोजना नियोजनः** परियोजना नियोजन वाहय वातावरण में अनिश्चितताओं एवं जोखिम के होने की स्थितियों में किया जाता है। इसमें विशिष्ट कार्य हाथ में लिये जाते हैं जैसे नये उत्पाद को प्रारम्भ करना, नये बाजार में प्रवेश, विविधीकरण , विस्तारीकरण , नये व्यवसाय में प्रवेश आदि जिनमें नियोजनकर्ता से अधिक सटीक निर्णय एवं पूर्वानुमान की अपेक्षा होती है।

6. **व्यूहनीतिक कियान्वयनः** कम्पनीं व्यूहनीति में व्यूहनीतिक कियान्वयन से संबंधित निर्णय भी सम्मिलित होंते हैं। इनमें संसाधनों का आबंटन, संगठन संरचना के उचित प्रारूप का निर्धारण, परिणाम प्रदर्शन मूल्यांकन प्रकिया का निर्धारण, नियंत्रण प्रणाली की स्थापना, प्रोत्साहनों एवं अभिप्रेरको का निर्धारण

से संबंधित नीतियों को निश्चित करने की प्रक्रियाऐं सम्मिलित की जा सकती हैं।

3.10 मेकिन्से द्वारा प्रतिपादित सात एस की संरचना या सेवन एस फ्रेमवर्क

कम्पनी व्यूहनीति एक संगठनात्मक प्रक्रिया है जो व्यूहनीति, संगठनात्मक संस्कृति एवं नीति से घनिष्ठ रूप से संबंधित है। यद्यपि व्यूहनीति के क्रियान्वयन के लिए कोई विशिष्ट संरचना नहीं दी जा सकती है किन्तु अमेरिका की मेकिन्से कन्सलटेन्सी फर्म के द्वारा विकसित **सेवन एस फ्रेमवर्क** यह मानती है कि प्रभावपूर्ण संगठनात्मक परिवर्तनों को व्यूहनीति, संरचना, प्रणाली, शैली, कौशल ,स्टाफ एवं साझा मूल्यों के क्लिष्ट संबंधों के आधर पर समझा जा सकता है।यह मॉडल यह स्पष्ट करता है कि एक कम्पनी की संगठनात्मक परिवर्तन की योग्यता अनेक कारकों पर निर्भर करती है और किसी एक क्षेत्र में उन्नति तब तक प्रभावहीन होगी जब तक दूसरे क्षेत्रों में भी समान प्रगति नही होती है। यह मॉडल बताता है कि व्यहनीति के प्रभावपूर्ण क्रियान्वयन के लिए सभी सातों कारकों में सामन्जस्य होना चाहिए। इस प्रकार यह मॉ्डल परीक्षण करता है कि कम्पनी के पास व्यूहनीति के क्रियान्वयन के लिए आवश्यक दशाऐं मौजूद हैं अथवा नहीं । यदि क्रियान्वयन के दौरान प्रत्याशित परिणामों में कमी रहती है तो उसके कारणों एवं क्षेत्रों की पहचान की जा सकती है और सुधारात्मक कदम उठाए जा सकतें हैं।

1. **व्यूहनीतिः** एक समयबद्ध कार्य योजना है जो फर्म के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक संसाधनों जैसे सामग्री, मानव सम्पदा, मुद्रा, तकनीकी व प्रबन्धन कौशल आदि के आबंटन से संबंधित है।
2. **संरचना** : फर्म की संगठनात्मक संरचना से संबंधित है जो यह उल्लिखित करती है कि संगठनात्मक कार्यों को किस प्रकार एकीकृत एवं समन्वित किए गया है ? अधिकारों, दायित्वों, विशिष्टीकरण, अधिकारों के प्रत्यायोजन का स्वरूप क्या है ? क्या संरचना व्यूहनीति के अनुसार संगत है अथवा वह व्यूहनीति के क्रियान्वयन की कुशलता पर निर्भर है?
3. **प्रणालीः**के अर्न्तगत वह स्वतन्त्र संरचनाऐं एवं उप संरचनाऐं आती हैं जिनके माध्यम से सूचनाओं एवं निर्णयों का सम्प्रेषण होता है। इसमें नियम, विधियां एवं कार्यपद्धतियां, उत्पादन नियोजन एवं नियन्त्रण, विपणन, बजटिंग, भर्ती एवं प्रशिक्षण आदि उप प्रणालियां आती हैं।
4. **शैलीः** इसके अर्न्तगतवह विशिष्ट शैली आती है जिसे संगठन के मुख्य कार्मिक अपनी कार्यशैली में प्रयोग करते हैं और जिनसे संगठनात्मक संस्कृति निर्मित होती है। इससे संगठनात्मक परिवर्तन के प्रयासों की प्रभावशीलता का निर्धारण होता है।
5. **कौशल** : इसमें संगठन एवं उसके मुख्य कार्मिको की विशिष्ट दक्षताऐं जैसे उत्पाद विकास, ग्राहक सेवा, अभियांत्रिकी कौशल, विपणन दक्षता, गुणवत्ता आदिसम्मिलित होती हैं।

6. **स्टाफ** :इसके अर्न्तगत समुचित मानव संसाधनों को भर्ती करने तथा उन्हें इस प्रकार विकसित करने की विधियां सम्मिलित हैं जिनसे वह अपने कैरियर को नियोजित कर नए प्रवेशित प्रबन्धको से सफल प्रबन्धक बनकर उपक्रम एवं संगठन के परिणामो को अधिकतम कर सके और संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त कर सकें।
7. **साझा मूल्य**: इसका अभिप्राय उन मूल्यों एवं आकांक्षाओं से है जो संगठन के औपचारिक उद्देश्यों से आगे ले जाते हैं। इन मार्गदर्शक सिद्धान्तों एवं अवधारणाओं उदाहरणार्थ उत्तम ग्राहक सेवा , उत्पाद गुणवत्ता आदिं की परिधि में संगठन को निर्मित एवं विकसित किया जाता है।

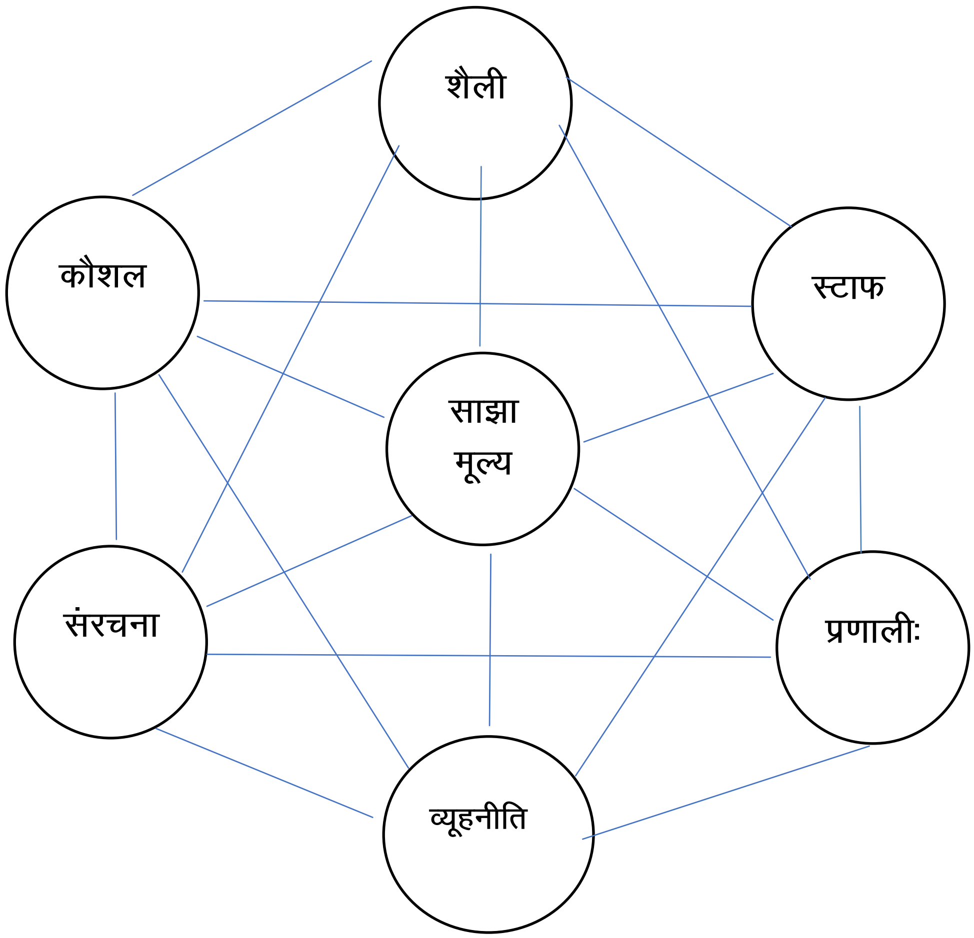

3.11 सारांश

व्यावसायिक नीति मार्गनिर्देशों का एक सामान्य कथन है जो संगठन के समस्त सदस्यों को किसी भी कार्य विधि के संबंध में मार्गनिर्देशन करती है। यह सम्पूर्ण संगठन के लिए निर्मित की जाती है और पूरे संगठन को दिशा प्रदान करती

है। नीतियां सामान्य प्रबन्ध एवं मुख्य अधिशासी के द्वारा निर्धारित की जाती हैं और विभागीय एवं क्रियात्मक प्रबन्धकों को उनके नैत्यिक कार्यों के संचालन हेतु सामान्य मार्गनिर्देशों एवं परिसीमाओं की एक व्यापक संरचना को निर्धारित कर देती है। नीतियां व्यक्तिगत विवेक की सीमाओं को संकुचित कर देती हैं ताकि महत्वपूर्ण प्रकरणों पर कर्मचारी संगत व्यवहार कर सकें। व्यावसायिक नीति में स्पष्टता, प्रासंगिकता, संगतियुक्तः स्थायित्व, औचित्यपूर्ण, संतुलित जोखिम, स्वीकार्यता, व्यावहारिकता, उद्दीपकता की विशेषताऐं होती है। प्रत्येक संगठन की अनिवार्यतः एक व्यावसायिक नीति होती है, जो अधिकांशतः वह वातावरण तय करता है, जिसमें वह विद्यमान होता है। व्यावसायिक नीति के अर्न्तगत ही क्रियात्मक प्रबन्धक अपनी व्यूहनीतियां निर्मित करते हैं। इस प्रकार व्यावसायिक नीति का निर्माण एवं कम्पनी व्यूहनीति का निर्माण आपस में संबंधित हैं और दोनों में अधिकांश तत्व एवं चरण समान होते हैं। इनमें अर्न्तनिहित चरणों में वातावरणीय जांच एवं मूल्यांकन ,आन्तरिक मूल्यांकन, नीति निर्माण, नीति क्रियान्वयन, नीति अनुश्रवण एवं मूल्यांकन सम्मिलित हैं।वातावरणीय जांच वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा संगठन अपने से संबंधित प्रासंगिक वातावरण में विद्यमान उन अवसरों एवं चुनौतियों का अनुश्रवण करता है जिनका व्यवसाय परप्रभाव पड़ता है। वातावरणीय जांच एवं मूल्यांकन के माध्यम से अपने वातावरण का अनुश्रवण करके एक संगठन वातावरण के विभिन्न सैक्टरों में हो रहे परिवर्तनों, घटनाओं, प्रवृत्तियों, आकांक्षाओं आदि एव उनका संगठन पर पडने वाले प्रभाव की पहचान कर सकता है। ऐसा करके वह समय रहते अनेक प्रभावों के सापेक्ष अपनी नीति एवं व्यूहनीति में आवश्यक समायोजन कर सकता है। व्यावसायिक नीति एवं व्यूहनीति को आन्तरिक एवं वाहय दोनों कारक प्रभावित करते हैं। जहां वाहय कारक अवसर एवं चुनौतियां हैं, वही आन्तरिक कारक शक्तियां एवं कमजोरियां हैं। **स्वॉट (SWOT) विश्लेषण** आन्तरिक एवं वाहय वातावरण के मूल्यांकन हेतु नीति निर्माताओं को एक महत्वपूर्ण उपकरण प्रदान करता है, जिसमें अवसरों एवं चुनौतियों और शक्तियों एवं कमजोरियें का विश्लेषण किया जाता है। नीति निर्माताओं को यह एक महत्वपूर्ण उपकरण प्रदान करता है। यदि कम्पनी मूल्यांकन के वास्तविक परिणाम प्रत्याशित परिणामों से कम रहते हैं तो व्यावसायिक नीति एवं व्यूहनीति का परिमार्जन अपरिहार्य हो जाता है। कम्पनी व्यूहनीति एक कार्य योजना है जो सम्पूर्ण संगठन पर लागू होती है । यह एक संगठनात्मक प्रक्रिया है जो संगठन के समस्त व्यवसाय के संबंध में कम्पनी स्तर पर लिए गये निर्णयों की एक श्रंखला है। कम्पनी व्यूहनीति यह निश्चित करती है कि सम्पूर्ण कम्पनी संगठन का स्वरूप क्या होगा? इसका मंतव्य, उददेश्य एवं लक्ष्य कौन से होंगे? इन्हें प्राप्त करनें के लिये कम्पनी स्तर पर क्या नीतियां एवं योजनाऐं होंगी? यह कम्पनी के व्यवसाय, उसके आर्थिक एवं मानवीय संसाधनों के स्वरूप एवं विभिन्न हितधारकों के प्रति उसके प्रत्याशित योगदान को परिभाषित करती है।

कम्पनी व्यूहनीति समस्त संगठन से संबंधित है, इसका दीर्घकालीन प्रयोजन होता है, यह परिवर्तनशील वातावरणीय तत्वों पर केन्द्रित होती है, कम्पनी व्यूहनीति का निर्माण एक बौद्धिक प्रक्रिया है, कम्पनी व्यूहनीति का निर्माण एक सतत एवं गतिशील प्रक्रिया है।व्यावसायिक नीति एवं कम्पनी व्यूहनीति में मुख्य अन्तर यह है कि

जहां नीति सभी कार्यवाहियों एवं निर्णयों हेतु मार्गनिर्देश एवं दिशानिर्देश हैं, वहीं कम्पनी व्यूहनीति स्वयं कार्य योजना है। व्यावसायिक नीति व्यवसाय के प्रति उच्च प्रबन्ध का समग्र दृष्टिकोंण है जबकि कम्पनी व्यूहनीति व्यावसायिक नीति को कार्यरूप में परिणित करती है। व्यावसायिक नीति एवं कम्पनी व्यूहनीति सम्पूर्ण संगठन पर लागू होती है जबकि व्यवसाय व्यूहनीति अपेक्षाकृत कम विस्तृत होती है और कम्पनी के अलग – अलग व्यवसायों पर लागू होती है। व्यावसायिक नीति एवं कम्पनी व्यूहनीति में अन्तर की अपेक्षा समानताऐं अधिक हैं। दोनों ही उच्च प्रबन्धकों के द्वारा तैयार की जाती हैं। दोनों सम्पूर्ण संगठन को ध्यान में रखती हैं।दोनों को निर्मित करने में वातावरणीय विश्लेषण सामान्य आधार होता है और दोनों ही व्यवसाय के परिचालन क्षेत्र पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। व्यूहनीतिक नियोजन को व्यूहनीति के निर्माण की प्रक्रिया भी कहा जा सकता है, जिसके अर्न्तगत वाह्य वातावरण की जांच के द्वारा कम्पनी को उपलब्ध अवसरों एवं चुनौतियों की पहचान की जाती है, प्रत्याशित जोखिमों का आकलन किया जाता है और इन अवसरों ,चुनौतियों एवं जोखिमों के सापेक्ष कम्पनी की वास्तविक एवं संभावित दक्षताओं का वस्तुपरक परीक्षण इस अभिप्राय से किया जाता है कि कम्पनी के लिए अनुमानित एवं पूर्वावलोकित संभावनाओं को प्रतियोगितात्मक लाभ में रूपान्परित किया जा सके।व्यूहनीतिक नियोजन के अर्न्तगत कम्पनी के दर्शन, प्राथमिकतापूर्ण मूल्यों तथा उसके सामाजिक उत्तरदायित्व को भी ध्यान में रखा जाता है । कम्पनी स्तरीय नियोजन कम्पनी के उच्च प्रबन्ध के द्वारा संचालित की जाने वालीएक सतत एवं विस्तृत प्रक्रिया है जो संगठन के उद्देश्यों की पहचान करने, समुचित लक्ष्यों को निर्धारित करने तथा इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए व्यावहारिक योजनाऐं निर्धारित करने की एक व्यवस्थित एवं अनुशासित प्रणाली स्थापित करती है। यह प्रक्रिया नियमित रूप से निश्चित समयावधियों के लिए आयोजित की जाती है।कम्पनी स्तरीय नियोजन में व्यूहनीतिक नियोंजन, दीर्घकालीन नियोजन संचालनात्मक नियोजन एवं परियोजना नियोजन सभी सम्मिलित होते हैं।मेकिन्से कन्सलटेन्सी फर्म के द्वारा विकसित **सेवन एस फ्रेमवर्क** यह मानती है कि प्रभावपूर्ण संगठनात्मक परिवर्तनों को व्यूहनीति, संरचना, प्रणाली, शैली, कौशल ,स्टाफ एवं साझा मूल्यों के क्लिष्ट संबंधों के आधर पर समझा जा सकता है। यह मॉडल यह स्पष्ट करता है कि एक कम्पनी की संगठनात्मक परिवर्तन की योग्यता अनेक कारकों पर निर्भर करती है और किसी एक क्षेत्र में उन्नति तब तक प्रभावहीन होगी जब तक दूसरे क्षेत्रों में भी समान प्रगति नही होती है। यह मॉडल बताता है कि व्यूहनीति के प्रभावपूर्ण क्रियान्वयन के लिए सभी सातों कारकों में सामन्जस्य होना चाहिए। इस प्रकार यह मॉ्डल परीक्षण करता है कि कम्पनी के पास व्यूहनीति के क्रियान्वयन के लिए आवश्यक दशाऐं मौजूद हैं अथवा नहीं ।

3.12 शब्दावली

प्रणालीः के अर्न्तगत वह स्वतन्त्र संरचनाऐं एवं उप संरचनाऐं आती हैं जिनके माध्यम से सूचनाओं एवं निर्णयों का सम्प्रेषण होता है।

वातावरणीय जांच : वातावरणीय जांच एवं मूल्यांकन से संगठन को अवसरों का लाभ उठाने, चुनौतियों के सापेक्ष तैयारी करने तथा प्रतियोगियों की गतिविधियों का पता लगाने में आवश्यक सहायता प्राप्त होती है।

स्व मूल्यांकन : आन्तरिक वातावरणीय कारकों शक्तियों एवं कमजोरियों से संबंधित होता है। इससे यह ज्ञात होता है कि कम्पनी कहां खडी है।

स्वॉट (SWOT) विश्लेषणः आन्तरिक एवं वाहय वातावरण के मूल्यांकन हेतु नीति निर्माताओं को एक महत्वपूर्ण उपकरण प्रदान करता है, जिसमें अवसरों एवं चुनौतियों और शक्तियों एवं कमजोरियों का विश्लेषणकियाजाता है।

3.13 बोध प्रश्न

(अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(1) व्यावसायिक नीति मार्गनिर्देशों का एक सामान्य कथन है जो ....के लिए निर्मित की जाती है और पूरे संगठन को ....प्रदान करती है।

(2) एक संगठन की त्रिस्तरीय व्यूहनीति संरचना में शीर्षस्तर पर ....होती है।

(3) .... नियोजन प्रक्रिया नियमित रूप सेनिश्चित समयावधियों के लिए आयोजित की जाती है।

(4) कम्पनी व्यूहनीति ...... से सम्बन्ध रखती है, जबकि एस0बी0यू0 व्यूहनीतियों का सम्बन्ध ....से होता है।

(5) मेकिन्से मॉडल बताता है कि व्यहनीति के प्रभावपूर्ण कियान्वयन के लिए सभी सातों कारकों में ....होना चाहिए।

(ब) सत्य/असत्य बताइए।

(1) व्यूहनीति वाह्य वातावरण की चुनौतियों से उपक्रम का सम्बन्ध स्थापित करती है।

(2) नीति सभी कार्यवाहियों एवं निर्णयों हेतु मार्गनिर्देश एवं दिशानिर्देश हैं, वहीं कम्पनी व्यूहनीति स्वयं कार्य योजना है।

(3) वातावरणीय जांच के अर्न्तगत सूचनाओं की प्राप्ति के मुख्यतः तीन दृष्टिकोंण हैं।

(4) व्यावसायिक नीति एवं कम्पनी व्यूहनीति दोनों ही मध्यम स्तरीय प्रबन्धकों के द्वारा तैयार की जाती हैं।

(5) अवसर एवं चुनौतियां आन्तरिक कारक हैं , वही शक्तियां एवं कमजोरियां वाहय कारक हैं।

3.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

(अ)

(1) सम्पूर्ण संगठन , दिशा (2) कम्पनी व्यूहनीति (3) कम्पनी स्तरीय (4) क्या, कैसे (5) सामन्जस्य।

(ब)

(1) सत्य (2) सत्य (3) सत्य (4) सत्य (5) असत्य।

3.15 स्वपरख प्रश्न

1. व्यावसायिक नीति एवं कम्पनी व्यूहनीतिको आप कैसे परिभाषित करेगे? एक संगठनकी कम्पनी व्यूहनीति उसकी व्यावसायिक नीति से किस प्रकार भिन्न है?
2. व्यावसायिक नीति एवं कम्पनी व्यूहनीति का विशेषताओं को समझाइये।
3. व्यूहनीति के विभिन्न स्तरों को समझाइये।व्यूहनीति के विभिन्न स्तरों का किस प्रकार एकीकृत किया जा सकता है?
4. वातावरणीय जांच एवं मूल्यांकन के क्या उददेश्य हैं? एसके विभिन्न चरणें को समझाइये।
5. स्वॉट विश्लेषण की व्याख्या कीजिये।
6. मेकिन्से द्वारा प्रतिपादित सात एस की संरचना या सेवन एस फ्रेमवर्क को समझाइये।
7. कम्पनी स्तरीय नियोजन या कार्पोरेट प्लानिंग से आप क्या समझते हैं?कम्पनी स्तरीय नियोजन एवं व्यूहनीतिक नियोंजन में अन्तर कीजिये।

3.16 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Ghose P.K., Strategic planning and Management, Sultan Chand and sons , New Delhi. (2011).
2. Jauch L.R. , Gupta Rajeev and William Glueck, Business policy and Strategic Management, F.Bros. & Company, (2010).
3. Kazmi , Azhar, Business policy and Strategic Management, Tata McGraw Hill Publishing Company Limited (2002)
4. Michael V.P., Business policy and Environment, S.Chand and Company, (2000).
5. Prasad, L.M. , Business policy and Strategic Management, Sultan Chand and sons , New Delhi. (2002).

इकाई – 4 व्यूहनीतिक प्रबन्ध : उद्देश्य एवं नीतियाँ

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 व्यूहनीति का अर्थ
4.3 व्यूहनीति की परिभाषा
4.4 व्यूहनीति की विशेषताऐं
4.5 व्यूहनीति के स्तर
4.7 व्यूहनीतिक प्रबन्ध की परिभाषा
4.8 व्यूहनीतिक प्रबन्ध की विशेषताऐं
4.9 व्यूहनीतिक प्रबन्ध उद्देश्य
4.10 व्यूहनीतिक प्रबन्ध का महत्व
4.11 व्यूहनीतिक प्रबन्ध की सीमायें
4.12 सारांश
4.13 शब्दावली
4.14 बोध प्रश्न
4.15 बोध प्रश्नों के उत्तर
4.16 स्वपरख प्रश्न
4.17 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः

- व्यूहनीतिक प्रबन्ध के आशय को जान सकें।
- व्यूहनीतिक प्रबन्ध को परिभाषित कर सकें।
- व्यूहनीतिक प्रबन्ध के उद्देश्यों को समझ सकें।
- व्यूहनीतिक प्रबन्ध के महत्व का विवेचन कर सकें।

4.1 प्रस्तावना

व्यूहनीतिक प्रबंध व्यूहनीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन हेतु लिये जाने वाले विभिन्न निर्णयों एवं कार्यवाहियों की एक जटिल, बहुआयामी, एकीकृत एवं सतत प्रक्रिया है, जो संगठनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति के वृहत उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सम्पादित की जाती है। व्यूहनीतिक प्रबंध में बहुआयामी क्रियाऐं सम्मिलित होती हैं किन्तु यह अत्यधिक अनिश्चित एवं जटिल प्रक्रिया है, क्योंकि यह संगठन का सम्बन्ध वाह्य वातावरण के निरन्तर परिवर्तनशील घटकों से स्थापित करती है, जिसमें संगठन की निरंतर सफलता के लिए कई निर्णय लेने पड़ते हैं एवं कार्यवाहियाँ सुनिश्चित एवं सम्पादित करनी होती हैं। इन निर्णयों एवं कार्यवाहियों का समुच्चय एक प्रभावशाली व्यूहनीति के रूप में विकसित होकर सामने आता है। दूसरे शब्दों में, जब संगठन अपने वाह्य वातावरण से अर्न्तक्रिया करता है, तो वह अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए एक सुविचारित कार्य योजना को अपनाता है। यह कार्य योजना ही व्यूह नीति

कहलाती है। उदाहरणार्थ अपने विशिष्ट प्रासंगिक उद्योग में अच्छा प्रदर्शन कर रही एक सुस्थापित कम्पनी जब उभरती हुई प्रतिस्पर्धात्मक दशाओं एवं वाह्य वातावरण की अन्य चुनौतियों के दृष्टिगत नवीन परिस्थितियों में सफलता के लिए एक भिन्न कार्य–योजना को निर्मित करती है, ताकि वह चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना कर सके एवं साथ ही उन नवीन अवसरों का लाभ उठा सकें जो नवीन वातावरण में उपलब्ध है। इसके लिए कम्पनी अपने पूर्व के दृष्टिकोणों एवं क्रियाओं का पुनरावलोकन कर उनमें समुचित परिवर्तन कर बेहतर कार्य योजनाऐं निर्मित करती है।

4.2 व्यूहनीति का अर्थ

जिन्हें व्यूहनीतियों का नाम दिया जा सकता है। इस अध्याय में व्यूहनीतियों के अर्थ, स्तरों एवं महत्व को समझाने के साथ ही व्यूहनीतिक प्रबंध के अर्थ, स्तरों, उद्देश्यों एवं महत्व का विवेचन किया जाऐगा। व्यूहनीतिक प्रबन्ध में व्यूहनीति का महत्वपूर्ण स्थान है। किन्तु प्रबन्ध में व्यूहनीति शब्द का हाल ही में प्रवेश हुआ है। मूलतः व्यूहनीति का व्युत्पादन ग्रीक शब्द 'स्ट्रेटेगोस' शब्द से किया गया है, जिसका अर्थ 'जनरलशिप' अथवा सैन्य निदशन है। ऑक्सफोर्ड शब्दकोष के अनुसार व्यूहनीति सेना को गतिमान एवं व्यवस्थापन करने की कला है। इस प्रकार यह क्रियाशीलता उन्मुख अवधारणा है जो शत्रुओं को अपने द्वारा निर्धारित समय, स्थान एवं शर्तों पर युद्ध करने पर बाध्य करती है और वास्तविक युद्ध के समय व्यूहनीति अपने और अधिक विशिष्ट अंग 'युक्ति' (Tactics) के रूप में सामने आती है।

प्रबन्धकीय क्षेत्र में 'व्यूहनीति' शब्द का प्रयोग अनेक अर्थो में किया गया है और इसके अर्थ एवं क्षेत्र के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद पाया जाता है। इस प्रकार प्रबन्ध में यह एक व्यापक एवं विस्तृत अवधारणा है।

4.3 व्यूहनीति की परिभाषा

एल्फ्रेड डी0 चॉण्डलर (1962) के अनुसार व्यूहनीति को ''एक उपक्रम के आधारभूत दीर्घकालीन लक्ष्यों एवं उद्देष्यों के निर्धारण तथा इन लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु आवश्यक कार्यविधि को अपनाने तथा संसाधनों का आबंटन करने'' के रूप में परिभाषित किया गया है।''

संगठनात्मक परिवर्तनों के विश्लेषण पर आधारित इस परिभाषा में व्यूहनीति के कार्य उन्मुख स्वरूप पर जोर देते हुए तीन प्रकार की क्रियाओं को व्यूहनीति में सम्मिलित किया गया है।

(i) दीर्घकालीन लक्ष्यों एवं उद्देश्यों का निर्धारण करना।

(ii) क्रियाओं की प्रक्रिया को अपनाना

(iii) संसाधनों को आबंटित करना

इस दृष्टिकोण में व्यूहनीति को उद्देश्यों के निर्धारण सहित व्यापक क्रिया के रूप में देखा गया है, जो यह मानती है कि उद्देश्य निर्धारण व्यूहनीति का ही एकभाग है। केनिथ एण्ड्रयूज (1965) के अनुसार ''व्यूहनीति उद्देश्यों, प्रयोजनों अथवा लक्ष्यों तथा इन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु मुख्य नीतियों एवं योजनाओं की ऐसी प्रवृत्ति है, जिससे

यह परिभाषित हो सके कि कम्पनी किस व्यवसाय में है अथवा भविष्य में किसमें होगी और यह किस प्रकार की कम्पनी है अथवा भविष्य में कैसी होगी।''

व्यूहनीति का अपेक्षाकृत अधिक प्रचलित दृष्टिकोण उपरोक्त से भिन्न मत रखता है। वह उद्देश्य निर्धारण को न व्यूहनीति से अलग रखता है। इस मत का विचार है कि व्यूहनीति वह विधि है जिसमें फर्म अपने वातावरण से अन्तर्क्रिया करते समय अपने मूल प्रयोजन की प्राप्ति की दिशा में प्रयास करते हुए अपने मुख्य संसाधनों को आबंटित करती है। एच0 इगोर ऍन्साफ (1965) ने व्यूहनीति को ''संगठन की गतिविधियों एवं उत्पाद बाजार के बीच सामान्य डोर के रूप में परिभाषित किया है। जो व्यवसाय की उस मूल प्रकृति को परिभाषित करती है जिसमें संगठन विद्यमान है अथवा भविष्य में होने के लिए नियोजित किया गया है''। इसी विचार को आगे बढ़ाते हुए माइकल ई0 पोर्टर (1996) ने व्यूहनीति को ''क्रियाओं के भिन्न समुच्चय को सम्मिलित करते हुए एक अनोखी और मूल्यवान स्थिति के सृजन'' के रूप में परिभाषित किया है। पोर्टर ने आगे कहा है कि 'वह कम्पनी जो व्यूहनीतिक रूप में स्थित की गयी है, वह अपने प्रतिद्वन्दियों से भिन्न क्रियाओं को सम्पादित करती है अथवा समान क्रियाओं को भिन्न प्रकार से सम्पादित करती है।'' इस मत के समर्थक व्यूहनीति को वातावरण की चुनौतियों के सापेक्ष फर्म के व्यूहनीतिक लाभ के सम्बन्ध में एक एकीकृत, विस्तृत एवं समेकित योजना के रूप में देखते हैं। विलियम एफ0 ग्लूक के अनुसार ''व्यूहनीति वातावरण की चुनौतियों के प्रति फर्म की एक एकीकृत, विस्तृत एवं समेकित योजना है। इसे यह सुनिश्चित करने के लिए निर्मित किया जाता है कि उपक्रम के आधारभूत उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सके।''

4.4 व्यूहनीति की विशेषताऐं

व्यूहनीति की यह परिभाषा इसके व्यापाक स्वरूप को ध्यान में रखते हुए निम्नांकित विशेषताऐं बतलाती है :–

(i) व्यूहनीति वाह्य वातावरण की चुनौतियों से उपक्रम का सम्बन्ध स्थापित करती है।

(ii) यह कार्यवाही केन्द्रित है।

(iii) यह विभिन्न कार्यवाहियों एवं निर्णयों का एकीकृत एवं समेकित विस्तृत योजना है। विभिन्न परिस्थितियों के लिए भिन्न कार्यवाहियाँ हो सकती हैं।

(iv) व्यूहनीति उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए बनायी जाती है।

(v) यह भविष्योन्मुख है और भविष्य में उभरती नवीन चुनौतियों के प्रति उपक्रम की भावी रूपरेखा एवं संकल्पों को अभिव्यक्त करती है।

(vi) व्यूहनीति एकीकृत एवं समेकित योजना होने के कारण परस्पर विरोधी क्रियाओं जैसे एक साथ क्रियाओं का संकुचन एवं विस्तार करना अथवा एक क्रिया को बन्द कर दूसरी को प्रारम्भ करना, एक बाजार को छोड़ना एवं दूसरे में प्रवेश करना इत्यादि को योजना में सम्मिलित करती है।

(vii) व्यूहनीति फर्म की वाह्य एवं आन्तरिक परिस्थितियों के विश्लेषण के आधार पर निर्मित की जाती है। इसमें वाह्य घटकों–अवसरों एवं चुनौतियों का मिलान आंतरिक घटकों– शक्तियों एवं सीमाओं से किया जाता है।

(viii) व्यूहनीति के लिए संगठन में एक अनुकूल प्रणाली, संरचना एवं मापदण्डों को अपनाये जाने की आवश्यकता होती है, जो किसी भी योजना के प्रभावी निर्माण एवं क्रियान्वयन के लिए आवश्यक होती है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि व्यूहनीति उपक्रम के ध्येय एवं उद्देश्यों के प्रकाश में प्रबंधकीय कार्यवाहियों एवं सोच को मार्गदर्शित करने की एक एकीकृत एवं विस्तृत प्रणाली है जो एक उपक्रम को वाह्य वातावरण में विद्यमान चुनौतियों के संदर्भ व्यूहनीतिक लाभ प्राप्त करने के लिए सही दिशा प्रदान करती है तथा संसाधनों का कार्यक्षमतापूर्ण आबंटन करती है। यह किसी संगठन को अन्य प्रतिस्पर्धी संगठनों से भिन्न स्वरूप ग्रहण करने के लिए उपक्रम के भावी स्वरूप को निर्धारित एवं सम्प्रेषित भी करती है तथा उसे प्राप्त करने की कार्यवाहियाँ भी सुनिश्चित करती है। व्यूहनीति को प्रायः नीति, युक्ति, कार्यक्रम, कार्यविधि एवं नियमों के समानार्थी समझा जाता है, किन्तु इनमें परस्पर अन्तर होता है। व्यूहनीति के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए इसे समझना आवश्यक है।

(i) व्यूहनीति एव नीति में अन्तर :– नीति कम्पनी के उद्देष्यों की प्राप्ति के प्रयासों में प्रभावपूर्ण दिशा देने के लिए मार्ग निर्देशों की एक सामान्य संरचना उपलब्ध कराती है। यह निर्णयकर्ताओं के सोचने एवं कार्यवाही करने के लिए मार्गनिर्देश है जबकि व्यूहनीति उद्देश्यों की प्राप्ति की संभावनाओं को बेहतर बनाने के लिए एक कार्य योजना की तरह है, जो संसाधनों को कार्य पर लगाने की दिशा प्रदान करती है। व्यूहनीतियों में तत्काल निर्णय आवश्यक होते हैं। इनकी प्रकृति परिस्थितिजन्य होने के कारण इनका नीचे की ओर प्रत्यायोजन संभव नहीं है। नीतियाँ प्रबंधकीय क्रियाओं की सीमाओं को परिभाषित करती हैं तथा उन्हें अभिशासित एवं नियंत्रित करती हैं। यह स्वयं में सामान्य अथवा विशिष्ट, स्पष्ट अथवा गर्भित एवं क्रियात्मक अथवा संगठनात्मक हो सकती है।

किन्तु दोनों ही प्रबंधकीय उद्देष्यों की प्राप्ति के लिए साधन मात्र है। नीतियाँ जहाँ सांयोगिक निर्णय हैं, वहीं व्यूहनीतियाँ निर्णयन हेतु नियम की भांति हैं। व्यूहनीतियों की सफलता सुनिष्चित करने के लिए नीतियाँ युक्ति संगत एवं स्पष्ट होनी आवश्यक होती हैं।

(ii) व्यूहनीति एवं युक्ति में अन्तर :– संगठनात्मक निर्णयन की साधन–साध्य श्रृंखला मं व्यूहनीति एक सिरा है तो युक्ति दूसरा सिरा होती है। एक सिरे पर व्यापक मास्टर व्यूहनीति होती है तो दूसरे सिरे पर छोटी–छोटी युक्तियाँ होती हैं। व्यूहनीति जहाँ संसाधनों को कार्य पर आबंटित करती है वहीं युक्तियाँ उनके कार्यक्षमता पूर्ण उपयोग से सम्बन्धित होती हैं। इस प्रकार व्यूहनीति जहाँ संचालित की जाने वाली मुख्य योजनाओं को निर्धारित करती है वहीं युक्ति उन पूर्व निर्धारित योजनाओं के क्रियान्वयन से सम्बन्धित होती है। सामरिक दृष्टि से व्यूहनीति शत्रु सेना के मनोबल को तोड़ देने, उनके संसाधनों, क्षेत्रों को नष्ट कर देने अथवा उन पर अधिकार कर लेने, उन्हें समर्पण पर विवश कर देने की व्यापक योजना से सम्बन्धित है जबकि युक्ति का सम्बन्ध इस योजना के एक भाग अथवा एक कार्यवाही में सफलता तक ही

सीमित होता है। व्यूहनीति सतत अथवा अनियमित रूप में अवसरों एवं नवीन विचारों के दृष्टिगत तदर्थ आधार पर निर्मित होती है, जबकि युक्तियों का संचालन नियमित समय–सारिणी के आधार पर होता है। व्यूहनीति अपेक्षाकृत दीर्घकालीन एवं लोचपूर्ण होती है, जबकि युक्तियाँ अल्पकाल के लिए एवं सुनिश्चित होती हैं। इस कारण व्यूहनीतियों का मूल्यांकन युक्तियों के मूल्यांकन से अधिक कठिन होता है। व्यूहनीतियों को प्रबन्ध में बहुत नीचे तक प्रत्यायोजित नहीं किया जा सकता है, किन्तु युक्तियों में निम्नस्तरीय प्रबंध तक अधिकार सत्ता का भारार्पण किया जाता है। संगठनात्मक उद्देश्यों का प्राप्त करने के लिए दोनों ही महत्वपूर्ण होती हैं। युक्तियाँ वृहतर व्यूहनीति का एक भाग होती हैं और व्यूहनीति की सफलता युक्तियों के प्रभावशाली क्रियान्वयन पर निर्भर होती हैं।

(iii) व्यूहनीति तथा कार्यक्रमों, कार्यविधियों एवं नियमों में अन्तर :– कार्यक्रम, कार्यविधियाँ एवं नियम व्यूहनीति के अन्तर्गत उसके उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सम्मिलित होते हैं। कार्यक्रम व्यूहनीति एवं संगठन के उद्देष्यों के अनुसार एक चरणबद्ध एवं समयबद्ध योजना निर्धारित करते हैं कि (i) क्या किया जाना है? (ii) किसके द्वारा किया जाना है तथा (iii) कब और कहाँ किया जाना है? इस प्रकार कार्यक्रम नीतियों एवं व्यूहनीतियों के क्रियान्वयन के साधन हैं, जिसके लिए प्रणाली, संरचना, एकीकरण एवं समन्वय अपरिहार्य होते हैं।

कार्यविधियाँ विशिष्ट कार्य अथवा कार्यवाही को सम्पादित करने के लिए क्रियाओं एवं चरणों की एक श्रृंखला एवं उनका क्रम होती हैं, जो यह तय करती हैं कि कैसे किया जाना है। इस प्रकार यह नीतियों एवं व्यूहनीतियों की व्यापक संरचना में क्रियाओं एवं कार्यवाहियों का विशिष्ट मार्गदर्शन होती हैं तथा क्रियाओं के सुचारू संचालन को सुनिश्चित करती हैं। एक बड़े संगठन में भिन्न–भिन्न कार्यों के लिए पृथक–पृथक कार्यविधियाँ पूर्व निर्धारित की जाती हैं। उदाहरण के लिए प्रभावषाली वित्तीय प्रबन्धन के लिए वित्तीय पूर्वानुमान एवं आयोजन वित्तीय संसाधनों की प्राप्ति, विनियोजन विकल्पों का चयन एवं निर्धारण, जोखिम मूल्यांकन, पूँजी की लागत इत्यादि कई कार्य विधियों को पहले से निर्धारित किया जा सकता है। यह उल्लेखनीय है कि व्यूहनीतियों के विपरीत कार्यक्रम एवं कार्यविधियाँ अधिक कठोर एवं अपरिवर्तनीय होती हैं, जिन्हें एक बार निर्धारित हो जाने के पश्चात् परिवर्तन की स्वतन्त्रता नहीं होती है।

नियम उपर्युक्त श्रृंखला मं सर्वाधिक विशिष्ट, कठोर एवं अपरिवर्तनशील सिद्धान्त हैं, जिनके अनुसार क्रियाओं एवं कार्यवाहियों का अनुपालन करना होता है। इनमें कोई समय अथवा विभिन्न चरणों का क्रम निहित नहीं होता किन्तु नियमों का विचलन स्वीकार्य नहीं होता और अनुपालन न होने की स्थिति में दण्ड का प्रावधान होता है। नियम एक विशिष्ट अनुपालन की मांग करते हैं।

4.5 व्यूहनीति के स्तर

परिचालन के स्तरों के अनुसार व्यूहनीति की त्रिस्तरीय पदसोपानिक संरचना होती है। कम्पनी व्यूहनीति इस संरचना के उच्चतम स्तर पर निर्मित की जाती है, जबकि क्रियात्मक व्यूहनीति सबसे निम्न स्तर पर एक परिचालन अथवा क्रिया के लिए

बनायी जाती है। इनके बीच में मध्यम स्तर पर प्रत्येक व्यूहनीतिक व्यवसायिक ईकाई, जिसे एस0बी0यू0 भी कहा जाता है, अपने वातावरण के अनुसार अपने लिए स्वयं व्यूहनीति का निर्माण करती है। ऐसी कम्पनियाँ जो एकल उत्पाद वाली होती हैं, का एक ही एस0बी0यू0 होता है। एस0बी0यू0 की अवधारणा को अमेरिका की जनरल इलैक्ट्रिक कम्पनी के द्वारा अपने बहु–उत्पाद व्यवसाय का प्रबंधन करने के लिए किया गया था। एस0बी0यू0 से अभिप्राय पृथक रूप से पहचाने जा सकने योग्य स्वतन्त्र उत्पाद/बाजार क्षेत्र से है, जो एक–दूसरे से भिन्न होता है तथा उसका अपना व्यूहनीतिक व्यावसायिक क्षेत्र (वातावरण) अथवा एस0बी0ए0 होता है, जिसके लिए अलग व्यूहनीति निर्मित की जाती है। बहु उत्पाद वाली कम्पनियों के लिए एकल व्यूहनीति न केवल अपर्याप्त होती है बल्कि अनुचित भी होती है। उन्हें प्रत्येक स्तर पर अनेक व्यूहनीतियों की आवश्यकता होती है। कई कम्पनियाँ विभिन्न इकाइयों अथवा क्षेत्रों को एक दूसरे से पृथक करने के लिए उन्हें परिचालन प्रभागों अथवा विभागों या इकाइयों के आधार पर संगठित कर देती है।

(i) कम्पनी स्तरीय व्यूहनीति : यह सम्पूर्ण संगठन के लिए उच्चतम स्तर पर लिए जाने वाले निर्णयों एवं निर्धारित गतिविधियों से सम्बन्धित होती है। कम्पनी स्तरीय व्यूहनीतियाँ सैद्धान्तिक अथवा अवधारणात्मक, नैतिक मूल्य आधारित तथा लोचपूर्ण होती है, जिनकी प्रकृति दीर्घकालीन, भविष्योन्मुख तथा नवाचार आधारित होती है। इनमें जहाँ अधिक लाभ की प्रत्याशा होती है, वहीं इनमें पर्याप्त लागत एवं जोखिम भी सन्निहित होता है। इस प्रकार के निर्णय सम्पूर्ण कम्पनी और उसकी समस्त क्रियाओं को समेकित रूप में ध्यान में रखकर लिए जाते हैं और इनका सम्बन्ध कम्पनी के वृहत उद्देष्यों की समस्त गतिविधियों से होता है जैसे– विलयन एवं अधिग्रहण, विविधीकरण, पुर्नगठन इत्यादि। वृहत संगठनों में इन निर्णयों को संचालक मण्डल एवं मुख्य अधिशसी अधिकारी द्वारा लिया जाता है जबकि लघुस्तरीय उपक्रमों में उद्यमी स्वयं ऐसे निर्णय लेता है। विभिन्न एस0बी0यू0 को संसाधन आबंटन तथा उनका प्रदर्शन मूल्यांकन भी इनमें सम्मिलित है।

(ii) व्यावसायिक स्तर की व्यूहनीति : व्यक्तिगत व्यावसायिक स्तर पर प्रत्येक एस0बी0यू0 अपनी व्यूहनीतियों को स्वयं तय करता है क्योंकि उसका अपना भिन्न वातावरण होता है, जिसका उसे स्वयं सामना करना होता है। एस0बी0यू0 कम्पनी स्तर से आबंटित संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग सुनिश्चित करता है। एस0बी0यू0 की व्यूहनीतियाँ कम्पनी स्तर की संगठनात्मक व्यूहनीतियों एवं उद्दश्यों के अन्तर्गत परिचालित होती हैं, किन्तु एस0बी0यू0 के द्वारा एस0बी0यू0 के उद्देष्यों, क्रियात्मक क्षेत्रों को संसाधनों का आबंटन तथा कम्पनी उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु उनकी क्रियाओं का समन्वय स्वयं अपने स्तर पर किया जाता है। यह उल्लेखनीय है कि प्रत्येक एस0बी0यू0 इकाई स्तर पर कार्य करता है और उसकी क्रियाओं का क्षेत्र कम्पनी स्तर से उसे आबंटित संसाधनों तक सीमित होता है। किन्तु इसके बावजूद, कम्पनी स्तर की व्यूहनीति, एस0बी0यू0 व्यूहनीतियों का योग मात्र नहीं होती है। एण्ड्रयूज के अनुसार कम्पनी व्यूहनीति 'क्या' से सम्बन्ध रखती है, जबकि एस0बी0यू0 व्यूहनीतियों का सम्बन्ध 'कैसे' से होता है। कम्पनी व्यूहनीति एस0बी0यू0 की व्यक्तिगत 'विशिष्ट

लाभ' को कम्पनी के 'प्रतियोगितात्मक लाभ' में बदल देती है'। कम्पनी व्यूहनीति एस0बी0यू0 को कार्यक्षेत्र की परिसीमायें एवं मार्गदर्षन दोनों प्रदान करती है।

(iii) क्रियात्मक स्तर की व्यूहनीति : निम्नतम स्तर पर परिचालन करने वाली इस व्यूहनीति का सम्बन्ध एकल क्रियात्मक परिचालन अथवा एकल गतिविधि मात्र से होता है। यहाँ पर निर्णयों का स्वरूप भी व्यूहनीतिक की अपेक्षा 'युक्ति' आधारित तथा सामान्य से विशिष्ट हो जाता है। इस स्तर पर यह देखा जाता है कि उपक्रम की विभिन्न क्रियाऐं जैसे – विपणन, निर्माण, वित्त, मानव–विकास इत्यादि अन्य स्तरों की व्यूहनीतियों के प्रति किस प्रकार योगदान कर रहे हैं। इस प्रकार इस स्तर पर क्रियात्मक स्तर पर संचालित विभिन्न परिचालनों में संसाधनों का आबंटन, लक्ष्य निर्धारण तथा क्रियाओं एवं उपलब्धियों का समन्वय किया जाता है।

4.7 व्यूहनीतिक प्रबन्ध की परिभाषा

व्यूहनीतिक प्रबन्धन एक गतिशील प्रक्रिया है। यह बहुआयामी एवं जटिल प्रक्रिया है क्योंकि इस प्रक्रिया मं अन्तर्निहित घटकों, स्तरों एवं विभिनन सूचनाओं की सरलता से पहचान करना संभव नहीं होता है। यही नहीं यह घटक एवं स्तर परस्पर आश्रित भी हैं और एक दूसरे को प्रभावित भी करते हैं। यही कारण है कि व्यूहनीतिक प्रबंध की परिभाषाओं में पर्याप्त विभिन्नता एवं मत मतान्तर पाया जाता है। यहाँ पर हम कुछ जाने–माने विद्वानों की परिभाषाओं का विष्लेषण कर रहे हैं, जिनसे व्यूहनीतिक प्रबंध के अर्थ एवं क्षेत्र को समझा जा सकता है। स्टेनर, माइनर और ग्रे के अनुसार – ''व्यूहनीतिक प्रबन्ध मुख्यतया संगठन को वातावरण से जोड़ने, वातारण के अनुकूल बनने के लिए व्यूहनीतियों के निर्माण तथा यह सुनिश्चित करने कि व्यूहनीतियाँ क्रियान्वित हों, से सम्बन्धित है।''

इस परिभाषा में व्यूहनीतिक प्रबंध को वातावरण से जोड़ने एवं उसके अनुकूल बनने हेतु व्यूहनीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन के रूप में देखा गया है।

एन्सॉफ ने भी व्यूहनीतिक प्रबंध को वाह्य वातावरण से जोड़कर परिभाषित किया है। एन्सॉफ के अनुसार ''व्यूहनीतिक प्रबन्ध फर्म को उसके वातावरण के प्रति इस प्रकार स्थित एवं सम्बन्धित करने के सामान्य प्रबन्ध के निरंतर महत्वपूर्ण होते जा रहे दायित्व से सम्बन्धित है, जिससे उसकी निरंतर सफलता सुनिश्चित हो सके और उसे आश्चर्यों से सुरक्षित बना सकें।'' यद्यपि एन्सॉफ ने अपनी परिभाषा में फर्म के वातारण से सम्बन्ध स्थापित होने पर चुनौतियों का सामना करने के लिए आवष्यक कार्यवाहियों का स्पष्ट उल्लेख नहीं किया है, किन्तु यह स्पष्ट है कि परिवर्तित वातावरण में संगठन की सफलता का दायित्व व्यूहनीतिक प्रबन्ध से सम्बन्धित है। प्रबन्ध के द्वारा इसके लिए संगठन के उद्दश्यों के अनुसार निर्णय एवं कार्यवाहियाँ करना तथा व्यूहनीतियों का निर्माण एवं क्रियान्वयन व्यूहनीतिक प्रबन्ध है। ग्लूक के अनुसार ''व्यूहनीतिक प्रबन्ध उन निर्णयों एवं कार्यवाहियों का समुच्चय है जो कम्पनी के उद्देश्यों की प्राप्ति करने में एक प्रभावशाली व्यूह नीति या व्यूहनीतियों के विकास का मार्ग प्रशस्त कर सके।''

जॉन पियर्स और रिचर्ड रॉबिन्सन ने व्यूहनीतियों के निर्माण के साथ–साथ क्रियान्वयन पर भी जोर दिया है। उनके द्वारा दी गयी परिभाषा के अनुसार

''व्यूहनीतिक प्रबन्ध को संगठनात्मक उद्देष्यों की प्राप्ति हेतु निर्धारित व्यूहनीतियों के निर्माण, चयन में निर्णयों एवं कार्यवाहियों के समुच्चय के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।''

माइकल पोर्टर के विचार में सामान्य प्रबन्ध का मुख्य आधार व्यूहनीति है, जिसमें निम्नांकित तीन तत्वों का विकास एवं सम्प्रेषण सम्मिलित है :

(i) कम्पनी के द्वारा एक अनोखी स्थिति प्राप्त करना जो प्रतियोगियों के विपरीत रूप में उसकी क्रियाओं में परिलक्षित हो।

(ii) असंगत गतिविधियों में साम्य स्थापित कर सकें, और

(iii) विभिन्न क्रियाओं में इस प्रकार संतुलन हो ताकि वे एक दूसरे से सम्बन्धित की जा सके।

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर व्यूहनीतिक प्रबन्ध की एक विस्तृत परिभाषा निम्नवत दी जा सकती है :

''व्यूहनीतिक प्रबन्ध संगठनात्मक उद्दश्यों की प्राप्ति तथा संगठन को विशिष्ट रूप में प्रतिस्थापित करने की एक सतत प्रक्रिया है, जो संगठन के वाह्य वातारण से अन्तर्क्रिया के माध्यम के द्वारा विभिन्न निर्णयों एवं कार्यवाहियों के समुच्चय से प्रतिपादित व्यूहनीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन से सम्बन्धित है।''

4.8 व्यूहनीतिक प्रबन्ध की विशेषताऐं

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर व्यूहनीतिक प्रबंध की निम्नांकित विशेषताऐं उल्लिखित की जा सकती हैं :

(i) व्यूहनीतिक प्रबन्ध संगठन का सम्बन्ध वाह्य वातावरण से सतत रूप में स्थापित करता है।

(ii) यह वाह्य वातावरण में विद्यमान चुनौतियों एवं अवसरों की लगातार पहचान करता रहता है।

(iii) यह मूलतः उच्च प्रबन्ध का कार्य है और सामान्य संचालनात्मक प्रबन्ध से भिन्न है। तेजी से बदलती वातावरणीय परिस्थितियों के दृष्टिगत उच्च प्रबन्ध के दृष्टिकोण, प्राथमिकताओं एवं नीतियों में तद्नुरूप परिवर्तन होने के कारण यह अत्यधिक जटिल एवं गतिशील प्रक्रिया बन जाती है।

(iv) व्यूहनीतिक प्रबन्ध की मुख्य विषय सामग्री व्यूहनीति अथवा व्यूहनीतियाँ हैं।

(v) व्यूहनीतिक प्रबन्ध के अन्तर्गत उच्च प्रबन्ध के द्वारा लिए जाने वाले विभिन्न निर्णयों एवं कार्यवाहियों की श्रृंखला सन्निहित होती है।

(vi) व्यूहनीतिक प्रबन्ध संगठन के पूर्णरूपेण नवीनीकरण एवं विकास हेतु उन व्यूहनीतियों, संरचनाओं एवं प्रणालियों का विकास करता है, जिन्हें व्यूहनीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन के सफलतापूर्वक प्रबन्धन के लिए आवश्यक समझा जाता है।

(vii) व्यूहनीतिक प्रबन्ध तुलनात्मक लाभ से सम्बन्धित हैं। अतः वह संगठन को उसके प्रतियोगियों से भिन्न कार्य योजना एवं स्वरूप अपनाने से सम्बन्धित है।

(viii) व्यूहनीतिक प्रबंध अपने व्यापक स्वरूप के कारण सम्पूर्ण संगठन तथा उसके सभी विभागों एवं क्रियाओं से सम्बन्धित है।

4.9 व्यूहनीतिक प्रबन्ध उद्देश्य

व्यूहनीतिक प्रबन्ध के निम्नांकित उद्देष्य हैं :

(i) वाह्य वातावरण की निरंतर जांच कर परिवर्तनों का अनुमान लगाना तथा अनिश्चितता को न्यूनतम करना।

(ii) कर्मचारियों को स्पष्ट उद्देश्य एवं दिशा प्रदान करना।

(iii) वातावरण में उपलब्ध अवसरों का पूर्ण लाभ उठाना तथा जोखिम को कम करना।

(iv) फर्म के उच्च प्रबन्ध को संगठन के लिए दिशा एवं नियंत्रण की सक्षमता प्रदान करना।

(v) संगठन को दीर्घकालीन आधार पर निर्णय लेने के योग्य बनाना तथा नवीन प्रवृत्तियों के प्रति प्रारम्भिक चरण में ही कार्यवाही करने की क्षमता प्रदान करना।

(vi) प्रक्रियाओं को लोचपूर्ण बनाना ताकि अप्रत्याशित परिवर्तनों के प्रति कार्य योजनाओं को व्यूहनीतियों में सम्मिलित किया जा सके।

(vii) संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए प्रबन्धकों एवं कर्मचारियों को प्रोत्साहित एवं अभिप्रेरित करना।

(viii) व्यूहनीतिक नियोजन की औपचारिक प्रणाली एवं संरचनाओं तथा प्रक्रियाओं को स्थापित करना।

(ix) व्यावसायिक निर्णयों को अधिक सूचना आधारित , युक्तियुक्त एवं प्रणालीगत बनाना, ताकि जोखिम को न्यूनतम किया जा सके।

(x) प्रबन्धकों को बेहतर निर्णयकर्ता बनने के लिए प्रशिक्षित करना।

(xi) संगठनात्मक सम्प्रेषण तथा संसाधनों के आबंटन तथा अल्पकालीन बजटों के मध्य समन्वय को बेहतर करना।

(xii) व्यूहनीतिक प्रबंध की नवीन पद्धतियों में शोध एवं विकास गतिविधियों का प्रवर्तन करना, प्रबन्धकों के ज्ञान आधार को निर्मित एवं विकसित करना तथा उनमें सफल व्यावसायिक सामान्य प्रबंधक एवं पेशेवर बनाने हेतु अभिवृत्तियाँ विकसित करना।

(xiii) संगठनात्मक हितधारकों के सन्तोष का अधिकतम स्तर प्राप्त करना।

(xiv) प्रबन्ध के सामाजिक उत्तरदायित्व का पूर्ण संवेदनशीलता से निर्वहन करने की प्रणाली को स्थापित एवं विकसित करना।

संक्षेप में, व्यूहनीतिक प्रबन्ध का मुख्य उद्देश्य प्रबन्ध के क्रियात्मक क्षेत्रों को एकीकृत करना, प्रबन्धन के एक विशेषज्ञ दृष्टिकोण की अपेक्षा समस्या को हल करने के सामान्य दृष्टिकोण को अपनाना तथा वाह्य वातारण की जटिलताओं एवं अनिश्चतताओं के दृष्टिगत निर्णयन प्रणाली को एक प्रणालीगत दृष्टिकोंण अपनाते हुए अधिक युक्तियुक्त एवं लोचपूर्ण बनाकर संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त करना है।

4.10 व्यूहनीतिक प्रबन्ध का महत्व

व्यूहनीतियों का निर्माण एवं क्रियान्वयन व्यूहनीतिक प्रबन्ध का एक महत्वपूर्ण भाग है। साथ ही व्यूहनीति की अवधारणा व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया में केन्द्रीय स्थान रखती है। व्यूहनीति संगठन को वाह्य वातावरण से सम्बन्धित करके दीर्घकालीन पूर्वानुमानों के आधार पर निर्णयन में सहायता करती है, जिससे संगठन नवीन प्रवृत्तियों एवं चुनौतियों तथा कटु प्रतिस्पर्धा का अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से सामना कर सकता है। प्रबंध के दृष्टिकोण में मूलभूत परिवर्तन हो जाता है और वह पूर्वानुमान न किए जा सकने वाले गैर–प्रत्याशित परिवर्तनों के प्रति अधिक लोचपूर्ण, सृजनात्मक एवं नव प्रवर्तनात्मक हो जाता है। व्यावसायिक जगत के अनुभवों से यह स्पष्ट होता है कि समय के साथ अनेक सुस्थापित बड़ी कम्पनियाँ विलुप्त कम्पनियाँ बन गयी और जिन कम्पनियों का बड़ा नाम नहीं था अथवा वे विद्यमान ही नहीं थी, को बहुत कम अवधि में 'बाजार नेतृत्वकर्ता' की भूमिका प्राप्त हो गयी। (जैसे रिलायन्स, मारूति, इन्फोसिस, टी0सी0एस0) जिसके लिए व्यावसायिक वातावरण, सरकारी नीति, कम्पनी की आंतरिक संरचना जैसे अवस्थापना, तकनीकी एवं मानवीय संबंध उतने अधिक उत्तरदायी नहीं थे, जितनी कि उच्च प्रबन्ध का व्यवसाय संचालित करने का दृष्टिकोण उत्तरदायी कहा जा सकता है। इस प्रकार व्यूहनीतिक प्रबन्ध व्यवसाय के प्रति उच्च प्रबन्ध की संदृष्टि एवं ध्येय को ही परिवर्तित कर देता है।

व्यूहनीतिक प्रबन्ध के महत्व को निम्नांकित बिन्दुओं के द्वारा उल्लिखित किया जा सकता है :

(i) वित्तीय प्रदर्षन में सुधार : व्यूहनीतिक प्रबंध को अपनाने वाली कम्पनियों के प्रदर्शन मे उन कम्पनियों की तुलना में जिन्होंने इसे नहीं अपनाया, वित्तीय परिणामों– यथा लाभ एवं संवृद्धि में सुधार अवलोकित किया गया है, जिसका मुख्य कारण प्रथम प्रकार की कम्पनियों के द्वारा परिवर्तित वातावरण की आवश्यकताओं के अनुसार अपनी व्यूहनीतियों में समुचित परिवर्तन करना था। ऐसी कम्पनियों के द्वारा एक सुदृढ़ व्यूहनीतिक प्रबंध प्रणाली विकसित की गयी थी, जिसका व्यूहनीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन दोनों पर बेहतर प्रभाव पड़ा।

(ii) संगठनात्मक प्रभावषीलता में वृद्धि : व्यूहनीतियों के प्रभावशाली क्रियान्वयन के द्वारा संगठनात्मक प्रभावशीलता में उन्नयन होता है। संगठनात्मक प्रभावशीलता का संबंध संसाधनों का बेहतर आबंटन, संसाधनों का सर्वोत्तम उपयोगों में प्रयोग तथा संसाधनों का उच्चतम कार्यक्षमता के साथ उपयोग इत्यादि से है। व्यूहनीतिक प्रबंध संसाधनों का वितरण एवं उपयोग, निर्धारित उद्देश्यों के अनुसार करता है तथा इनमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी करता है, जिससे संगठनात्मक प्रभावशीलता में वृद्धि होती है। व्यूहनीतिक प्रबन्ध से संगठनात्मक सम्प्रेषण, समन्वय एवं संसाधन आबंटन में प्रभावशीलता में वृद्धि होती है।

(iii) वाह्य वातावरण की अनिष्चितता को अधिकतम संभव सीमा तक कम करने में सहायक : व्यूहनीतिक प्रबंध वाह्य पर्यावरण की लगातार जांच की प्रणाली विकसित करता है, जिसके आधार पर पूर्वानुमान लगाने तथा व्यूहनीतिक नियोजन की संरचना के द्वारा वाह्य वातावरण की अनिश्चितताओं के सापेक्ष सटीक व्यूहनीतियों के माध्यम से

कार्य–योजनाऐं निर्मित की जाती हैं, जिससे उच्च प्रबंध की समय से निर्णय लेने, कार्यवाही करने तथा निर्देशन एवं नियंत्रण की क्षमता बढ़ती है और परिणामस्वरूप अनिश्चितताओं एवं जोखिम को अधिकतम संभव सीमाओं तक न्यूनतम किया जा सकता है।

(iv) उद्देश्यों की स्पष्टता से निर्देशन की सही दिशा की प्राप्ति : व्यूहनीतिक प्रबन्ध में वाह्य वातावरण की आवश्यकताओं एवं संगठनात्मक क्षमताओं एवं आकांक्षाओं के अनुसार सर्वप्रथम संगठनात्मक लक्ष्यों एवं भावी कार्य योजनाऐं सुनिश्चित की जाती हैं, जिसके लिए संगठनात्मक संदृष्टि, ध्येय तथा उद्देश्यों को स्पष्ट रुप में परिभाषित किया जाता है। स्पष्टतया परिभाषित उद्देश्य भ्रम को दूर कर संगठन की सही भावी दिशा तय करते हैं। फलस्वरूप क्रियाओं में रिक्तता, दोहराव तथा सततता के अभाव को दूर किया जा सकता है, उत्तरदायित्व एवं भूमिकायें अधिक स्पष्ट हो जाती हैं एवं परिणामों में सुधार होता है।

(v) मानव संसाधनों का बेहतर अभिप्रेरण : व्यूहनीतिक प्रबंध सम्पूर्ण संगठन तथा उसके सभी स्तरों एवं क्रियाओं को ध्यान में रखता है। उत्तरदायित्व, अधिकार एवं भूमिकायें अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट होती हैं। व्यूहनीति के निर्माण में अधीनस्थ प्रबन्धकों की प्रतिभागिता से प्राथमिकताओं का निर्धारण बेहतर होता है, पूर्वानुमानों कार्य योजनाओं के निर्माण एवं क्रियान्वयन तथा अनुश्रवण में कार्मिकों का सहयोग प्राप्त होता है। व्यूहनीतिक योजनाओं में कार्मिक–पारिश्रमिक प्रोत्साहन के सम्बन्धों को सुदृढ़ एवं बेहतर बनाया जाता है, जो परिणामों से सम्बन्धित होता है। इससे कर्मचारियों को अभिप्रेरणा प्राप्त होती है तथा व्यूहनीतिक प्रबन्ध के फलस्वरूप संगठनात्मक परिवर्तनों के प्रति अवरोध भी न्यूनतम किया जा सकता है। कर्मचारियों के संतोष का स्तर बढ़ता है तथा प्रबन्धकों में सोचने की प्रवृत्ति विकसित होने से वह अपने वातावरण के प्रति अपेक्षाकृत अधिक संवेदनशील, जागरूक एवं सक्रिय हो जाते हैं।

4.11 व्यूहनीतिक प्रबन्ध की सीमायें

व्यूहनीतिक प्रबन्ध के उपरोक्त लाभों एवं महत्व के बावजूद इसकी कुछ सीमाऐं भी हैं, जिनका विवरण निम्नवत हैं:

(i) जटिल एवं निरंतर गतिषील वातावरण का अनुमान लगाना कठिन है : यद्यपि व्यूहनीतिक प्रबंध वातावरणीय परिवर्तनों के पूर्वानुमान के आधार पर व्यूहनीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन से सम्बन्धित है, किन्तु व्यवहार में परिवर्तन इतनी अधिक तीव्रता से तथा इतने अधिक परिणाम में घटित होते हैं, कि उनका पूर्वानुमान अत्यधिक कठिन एवं जटिल हो जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यावसायिक वातावरण के परिवर्तनों के साथ ही अन्तर्देशीय स्तर पर सरकारी नीति, नियामक विधान तथा मौद्रिक, राजकोषीय एवं आर्थिक नीतियों में सतत परिवर्तन होते हैं। साथ ही शोध एवं विकास से अप्रत्याशित आश्चर्यजनक तकनीकी परिवर्तन सामने आते हैं। किन्तु व्यूहनीतिक प्रबंध की यह सीमा व्यूहनीतिक प्रबंध की भूमिका को सीमित करने के स्थान पर अधिक चुनौतीपूर्ण, विविध, विस्तृत एवं व्यापक बना देती है।

(ii) व्यूहनीतिक प्रबंध को अपनाया जाना महंगा एवं क्रियात्मक/परिचालनात्मक प्रबन्ध की उपेक्षा करने वाला होता है : व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रणाली का विकास

व्ययसाध्य, श्रमसाध्य एवं समय लेने वाली प्रक्रिया है। प्रायः व्यूहनीतिक प्रबंधकों के द्वारा उनके सामान्य परिचालनात्मक प्रबंध की उपेक्षा हो जाती है, क्योंकि व्यूहनीतिक प्रबंध के कार्य में पर्याप्त समय देने से स्वाभाविक रूप में सामान्य क्रियाओं में दिए जाने समय में कटौती हो जाती है, जिसकी प्रतिपूर्ति करना कठिन होता है। व्यूहनीतिक प्रबन्ध की यह सीमा प्रबंधकों को बेहतर समय सारिणी के अनुसार कार्य करने के प्रशिक्षण के माध्यम से दूर की जा सकती है।

(iii) व्यूहनीति के निर्माण में संलग्न कार्मिकों को क्रियान्वयन में प्रतिभाग प्रदान न करने की स्थिति में उत्तरदायित्व से बचने की प्रवृति उत्पन्न होती है : व्यूहनीतिक प्रबन्ध उच्च प्रबंध से सम्बन्ध रखता है, फलस्वरूप व्यूहनीति के निर्माण में मध्यम स्तरीय एवं निम्न स्तरीय प्रबंधकों को सम्मिलित करने से उनके द्वारा निर्णयन हेतु सही सूचनाऐं देने में दायित्व से बचने की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है। यदि व्यूहनीतिक प्रबंध में व्यूहनीतिक निर्णयों के परिणामों को प्रदर्शन आधारित बना दिया जाय, तो यह सीमा दूर हो सकती है।

(iv) व्यूहनीतिक प्रबंध की अवधारणा की समझ का अभाव अपेक्षित परिणामों में बाधक सिद्ध होता है : प्रायः प्रबन्धकों को व्यूहनीतिक प्रबंध की अवधारणा एवं भूमिका की अपर्याप्त समझ होने के कारण वे व्यूहनीतिक कार्यों को पृथक नहीं कर पाते और परिचालनात्मक कार्यों में स्वतन्त्र निर्णय लेने को व्यूहनीतिक मानने की भूल कर बैठते हैं। उनमें दीर्घकालीन उपलब्धियों के ऊपर अल्पकालीन उपलब्धियों को वरीयता देने की प्रवृत्ति से व्यूहनीतिक प्रबंध का मूल उद्देष्य ही असफल हो जाता है।

व्यूहनीतिक प्रबन्ध की इस सीमा को प्रबन्धकों में चेतना जागरण एवं क्षमता विकास प्रशिक्षणों के द्वारा दूर किया जा सकता है।

(v) व्यूहनीतिक प्रबन्ध की एक महत्वपूर्ण सीमा तकनीकी विकास के पूर्वानुमान करने तथा उसे तुलनात्मक लाभ हेतु प्रासंगिक बनाने की योग्यता का अभाव है : प्रायः तकनीकी परिवर्तन इतनी तीव्रता से घटित होते हैं कि प्रथम अनुसरणकर्ता के विषाल लाभ पाने की संभावना होती है किन्तु उसके सामने अपने निवेश के डूब जाने का जोखिम भी बना रहता है।

इस सीमा को तकनीकी के लाभों एवं जोखिमों में संतुलन बनाने की व्यूहनीति के द्वारा दूर किया जा सकता है।

(vi) व्यूहनीतिक प्रबंध संगठन के परंपरागत सामान्य उद्देष्य, लाभ को अधिकतम करने के स्थान पर प्रबंधकीय उपयोगिता को अधिकतम करने पर आधारित है : इसमें प्रबंधकों की पेशेवर योग्यता, प्रतिबद्धता एवं बाजार में पहुंच महत्वपूर्ण होती है, किन्तु पारदर्शिता एवं जनता के प्रति उत्तरदायित्व के मानकों के दृष्टिगत प्रबन्धकों की व्यूहनीतियों एवं प्रतिस्पर्धी उपायों के सार्वजनिक पहुंच में आ जाने से उन्हें प्रतिरूपित करने का जोखिम व्यूहनीतिक प्रबंध के द्वारा प्रतिस्पर्धियों से भिन्न स्वरूप ग्रहण करने के उद्देष्य को निष्फल कर देता है। यह सीमा व्यूहनीतिकारों की चुनौती को विस्तृत बना देती है।

इन सीमाओं के बावजूद व्यूहनीतिक प्रबंध की प्रक्रिया सीखने तथा ज्ञान आधार निर्मित करने पर आधारित की जानी चाहिए। व्यूहनीतिक प्रबंध की सफलता के लिए प्रतिभागी

संदृष्टि, सही प्रकार की नेतृत्व क्षमता तथा व्यूहनीतियों का सही क्रियान्वयन एवं मानव संसाधनों का क्षमता विकास, अभिप्रेरण एवं प्रशिक्षण अनेक सीमाओं को दूर करने में सक्षम हो सकते हैं।

4.12 सारांश

व्यूहनीतिक प्रबंध व्यूहनीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन हेतु लिये जाने वाले विभिन्न निर्णयों एवं कार्यवाहियों की एक जटिल, बहुआयामी, एकीकृत एवं सतत प्रक्रिया है । जब संगठन अपने वाह्य वातावरण से अन्तर्क्रिया करता है, तो वह अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए एक सुविचारित कार्य योजना को अपनाता है। यह कार्य योजना ही व्यूह नीति कहलाती है। केनिथ एण्ड्रयूज (1965) के अनुसार ''व्यूहनीति उद्देश्यों, प्रयोजन अथवा लक्ष्यों तथा इन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु मुख्य नीतियों एवं योजनाओं की ऐसी प्रवृत्ति है, जिससे यह परिभाषित हो सके कि कम्पनी किस व्यवसाय में है अथवा भविष्य में किसमें होगी और यह किस प्रकार की कम्पनी है अथवा भविष्य में कैसी होगी।'' माइकल ई0 पोर्टर (1996) ने व्यूहनीति को ''क्रियाओं के भिन्न समुच्चय को सम्मिलित करते हुए एक अनोखी और मूल्यवान स्थिति के सृजन'' के रूप में परिभाषित किया है। व्यूहनीति उपक्रम के ध्येय एवं उद्देष्यों के प्रकाश में प्रबंधकीय कार्यवाहियों एवं सोच को मार्गदर्शित करने की एक एकीकृत एवं विस्तृत प्रणाली है जो एक उपक्रम को वाह्य वातावरण में विद्यमान चुनौतियों के संदर्भ में व्यूहनीतिक लाभ प्राप्त करने के लिए सही दिशा प्रदान करती है तथा संसाधनों का कार्यक्षमतापूर्ण आबंटन करती है। यह किसी संगठन को अन्य प्रतिस्पर्धी संगठनों से भिन्न स्वरूप ग्रहण करने के लिए उपक्रम के भावी स्वरूप को निर्धारित एवं सम्प्रेषित भी करती है तथा उसे प्राप्त करने की कार्यवाहियाँ भी सुनिश्चित करती है।

व्यूहनीति को प्रायः नीति, युक्ति, कार्यक्रम, कार्यविधि एवं नियमों के समानार्थी समझा जाता है, किन्तु इनमें परस्पर अन्तर होता है। परिचालन के स्तरों के अनुसार व्यूहनीति की त्रिस्तरीय पदसोपानिक संरचना होती है। कम्पनी व्यूहनीति इस संरचना के उच्चतम स्तर पर निर्मित की जाती है, जबकि क्रियात्मक व्यूहनीति सबसे निम्न स्तर पर एक परिचालन अथवा क्रिया के लिए बनायी जाती है। इनके बीच में मध्यम स्तर पर प्रत्येक व्यूहनीतिक व्यवसायिक ईकाई, जिसे एस0बी0यू0 भी कहा जाता है, अपने वातावरण के अनुसार अपने लिए स्वयं व्यूहनीति का निर्माण करती है। व्यूहनीतिक प्रबन्ध को संगठनात्मक उद्देष्यों की प्राप्ति हेतु निर्धारित व्यूहनीतियों के निर्माण चयन में निर्णयों एवं कार्यवाहियों के समुच्चय के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह निर्माण एवं क्रियान्वयन हेतु लिये जाने वाले विभिन्न निर्णयों एवं कार्यवाहियों की एक जटिल, बहुआयामी, एकीकृत एवं सतत प्रक्रिया है, जो संगठनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति के वृहत उद्देष्य को प्राप्त करने के लिए सम्पादित की जाती है। यह संगठन का सम्बन्ध वाह्य वातावरण के निरन्तर परिवर्तनशील घटकों से स्थापित करती है ।

व्यूहनीतियों का निर्माण एवं क्रियान्वयन व्यूहनीतिक प्रबन्ध का एक महत्वपूर्ण भाग है। व्यूहनीतिक प्रबन्ध व्यवसाय के प्रति उच्च प्रबन्ध की संदृष्टि एवं ध्येय को ही परिवर्तित कर देता है, और वह पूर्वानुमान न किए जा सकने वाले गैर–प्रत्याशित

परिवर्तनों के प्रति अधिक लोचपूर्ण, सृजनात्मक एवं नव प्रवर्तनात्मक हो जाता है। व्यूहनीतिक प्रबन्ध से संगठनात्मक सम्प्रेषण, समन्वय एवं संसाधन आबंटन में प्रभावशीलता में वृद्धि होती है। व्यूहनीतिक प्रबंध सम्पूर्ण संगठन तथा उसके सभी स्तरों एवं क्रियाओं को ध्यान में रखता है। उत्तरदायित्व, अधिकार एवं भूमिकायें अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट होती हैं। व्यूहनीतिक प्रबंध वाह्य पर्यावरण की लगातार जांच की प्रणाली विकसित करता है, जिसके आधार पर पूर्वानुमान लगाने तथा व्यूहनीतिक नियोजन की संरचना के द्वारा वाह्य वातावरण की अनिश्चितताओं को न्यूनतम किया जा सकता है। इसकी कुछ सीमाऐं भी हैं किन्तु , इन सीमाओं के बावजूद व्यूहनीतिक प्रबंध की प्रक्रिया निरन्तर सीखने तथा ज्ञान का आधार निर्मित करती है जिससे चुनौतियों को अधिक प्रभावशाली ढंग से सामना किया जा सकता है तथा उन्हें अवसरों में बदला जा सकता है।

4.13 शब्दावली

नीति : कम्पनी के उद्देश्यों की प्राप्ति के प्रयासों को प्रभावपूर्ण दिशा देने के लिए मार्ग निर्देशों की एक सामान्य संरचना उपलब्ध कराती है।

'व्यूहनीति : यह वातावरण की चुनौतियों के प्रति फर्म की एक एकीकृत, विस्तृत एवं समेकित योजना है।

एस0बी0यू0 : से अभिप्राय पृथक रूप से पहचाने जा सकने योग्य स्वतन्त्र उत्पाद/बाजार क्षेत्र से है, जो एक–दूसरे से भिन्न होता है तथा उसका अपना व्यूहनीतिक व्यावसायिक क्षेत्र (वातावरण) अथवा एस0बी0ए0 होता है।

युक्ति : योजना का एक भाग है जो उनके कार्यक्षमता पूर्ण उपयोग से सम्बन्धित होती है और इसका क्षेत्र एक कार्यवाही में सफलता तक ही सीमित होता है।

व्यूहनीतिक प्रबंध : व्यूहनीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन हेतु लिये जाने वाले विभिन्न निर्णयों एवं कार्यवाहियों की एक जटिल, बहुआयामी, एकीकृत एवं सतत प्रक्रिया है, जो संगठनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति के वृहत उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सम्पादित की जाती है। यह संगठन का सम्बन्ध वाह्य वातावरण के निरन्तर परिवर्तनशील घटकों से स्थापित करती है ।

एस0बी0यू0 : व्यावसायिक स्तर की व्यूहनीति ,

'स्ट्रेटेगोस' : ग्रीक शब्द जिससे व्यूहनीति का व्युत्पादन हुआ है ,

टेक्टिक्स : 'युक्ति' (Tactics)

एस0बी0ए0 :व्यूहनीतिक व्यावसायिक क्षेत्र (वातावरण)

4.14 बोध प्रश्न

(अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(1) .... के लिए अलग व्यूहनीति निर्मित की जाती है।

(2) अधिग्रहण, विविधीकरण, पुर्नगठन इत्यादि .... स्तरीय व्यूहनीति है।

(3) .... वातावरणीय परिवर्तनों के पूर्वानुमान के आधार पर व्यूहनीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन से सम्बन्धित है,।

(4) कम्पनी व्यूहनीति ...... से सम्बन्ध रखती है, जबकि एस0बी0यू0 व्यूहनीतियों का सम्बन्ध ....से होता है।

(5) व्यूहनीतिक प्रबन्ध वाह्य वातावरण में विद्यमान .... की लगातार पहचान करता रहता है।

(ब) सत्य/असत्य बताइए।

(1) व्यूहनीति वाह्य वातावरण की चुनौतियों से उपक्रम का सम्बन्ध स्थापित करती है।

(2) व्यूहनीतिक प्रबन्ध व्ययसाध्य, श्रमसाध्य एवं समय लेने वाली प्रक्रिया है।

(3) युक्ति संचालित की जाने वाली मुख्य योजनाओं को निर्धारित करती है ।

(4) व्यूहनीति पूर्व निर्धारित योजनाओं के क्रियान्वयन से सम्बन्धित होती है।

(5) व्यूहनीतिक प्रबंध में बहुआयामी क्रियाऐं सम्मिलित होती हैं

4.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

(अ)

(1) एस0बी0यू0 (2) कम्पनी (3) व्यूहनीतिक प्रबंध (4) क्या , कैसे (5) चुनौतियों एवं अवसरों ।

(ब)

(1) सत्य (2) सत्य (3) असत्य (4) सत्य (5) सत्य।

4.17 सत्रान्त एवं मॉडल प्रश्न

6. व्यूहनीति की परिभाषा दीजिए तथा व्यूहनीति की विषेषताऐं बताइए।
7. व्यूहनीति एव नीति के मध्य अन्तर स्पष्ट कीजिए।
8. व्यूहनीति की त्रिस्तरीय पदसोपानिक संरचना को समझाइए।
9. व्यूहनीतिक प्रबन्ध की परिभाषा एवं विशेषताऐं समझाइए।
10. व्यूहनीतिक प्रबन्ध के क्या उद्देश्य हैं ?
11. व्यूहनीतिक प्रबन्ध के महत्व एवं सीमाओं की व्याख्या कीजिए।

4.18 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Ghose P.K., Strategic planning and Management, Sultan Chand and sons , New Delhi. (2011).
2. Jauch L.R. , Gupta Rajeev and William Glueck, Business policy and Strategic Management, F.Bros. & Company, (2010).
3. Kazmi, Azhar, Business policy and Strategic Management, Tata McGraw Hill Publishing Company Limited (2002)
4. Michael V.P., Business policy and Environment, S.Chand and Company, (2000).
5. Prasad , L.M. , Business policy and Strategic Management, Sultan Chand and sons , New Delhi. (2002).

इकाई 5 व्यूहनीतिक प्रबन्ध के आधारभूत मॉडल एवं व्यूहनीतिक निर्णयन

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 व्यूहनीति प्रबन्ध के मॉडल
5.3 व्यूहनीतिक निर्णयन
- 5.3.1 व्यूहनीतिक निर्णयन का अर्थ एवं प्रकृति
- 5.3.2 व्यूहनीतिक निर्णयों की विशेषताऐं
- 5.3.3 व्यूहनीतिक एवं परिचालनात्मक निर्णयों में अन्तर
- 5.3.4 व्यूहनीतिक निर्णयन में मुख्य मुद्दे

5.4 व्यूहनीतिक प्रबन्ध में प्रबन्धकों की भूमिका
- 5.4.1 संचालक मण्डल की भूमिका
- 5.4.2 मुख्य अधिशासी अधिकारी की भूमिका
- 5.4.3 उच्च एवंमध्यम स्तरीय प्रबन्धकों की भूमिका
- 5.4.4 कम्पनी नियोजन स्टाफ की भूमिका
- 5.4.5 विशेषज्ञों **एवं** परामर्शदाताओं की भूमिका
- 5.4.6 उद्यमकर्ता की भूमिका

5.5 सारांश
5.6 शब्दावली
5.7 बोध प्रश्न
5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
5.9 स्वपरख प्रश्न
5.10 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः

- व्यूहनीति प्रबन्ध के मॉडलों को जान सकें।
- व्यूहनीतिक निर्णयन का अर्थ एवं प्रकृति को समझ सकें।
- व्यूहनीतिक एवं परिचालनात्मक निर्णयों में अन्तर को समझ सकें।
- व्यूहनीतिक प्रबन्ध में प्रबन्धकों की भूमिका का विवेचन कर सकें।

5.1 प्रस्तावना

विगत इकाई में आप व्यूहनीति के अर्थ, विशेष्ताओं एवं महत्व को समझ चुके हैं। व्यूहनीतिक प्रबन्ध एक नव विकसित अध्ययन शाखा है जो अब भी विकसित हो रही है। व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया के कई मॉडल दिए गये हैं। व्यूहनीतिक प्रबन्ध उच्च प्रबन्ध द्वारा लिए जाने वाले अनेकानेक निर्णयों की एक श्रंखला है जिनसे व्यवसाय की भावी दिशा तय होती है। किन्तु व्यूहनीतिक एवं परिचालनात्मक निर्णयों में मूलभूत अन्तर होता है। व्यूहनीतिक निर्णयों की प्रक्रिया में संचालक मण्डल एवं मुख्य

अधिशासी से लेकर प्रबन्ध के विभिन्न स्तरों, उद्यमकर्ता तथा आन्तरिक एवं वाहय विशेषज्ञों की भूमिका होती है। इस इकाई में व्यहनीतिक प्रबन्ध के इन विभिन्न पहलुओं का विवेचन किया जाएगा।

5.2 व्यूहनीति प्रबन्ध के मॉडल

व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया अनेंक चरणों से होकर गुजरती है। प्रत्येक चरण में कई तत्व सम्मिलित होते हैं। यह प्रक्रिया एक निरन्तर परिवर्तनशील व्यावसायिक वातावरण में सतत जारी रहती है। इस कारण इस प्रक्रिया में निहित चरणों एवं तत्वों के कम एवं संरचना में मतैक्य नहीं है। यह स्पष्टतया निर्धारित करना कठिन है कि यह प्रक्रिया कहॉ से प्रारम्भ होकर किस क्रम में किन तत्वों को समाविष्ट कर अन्ततः कहॉ पर समाप्त होगी अर्थात इसके प्रारम्भिक एवं अन्तिम बिन्दु कौन से होगे और इनके मध्य किन पहलुओं को कहॉ पर समाविष्ट किया जाएगा। उदाहरणार्थ व्यूहनीतिक संकल्प का निर्धारण वातावरणीय जांच एवं विश्लेषण पर निर्भर करता है, किन्तु वातावरणीय जांच एवं विश्लेषण के लिए संदृष्टि एवं ध्येय, उददेश्यो एवं लक्ष्यों तथा व्यवसाय को परिभाषित किया जाना होगा। इनमें किसे प्रारम्भिक बिन्दु माना जाय, यह एक कठिन प्रश्न है , जो व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया को अत्यन्त जटिल बना देता है।

किन्तु इसके बावजूद अध्ययन की सरलता के लिये व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया का एक साधारण एवं कामचलाऊ मॉडल दिया जा सकता है। यह मॉडल व्यावसायिक संगठन की प्रकृति पर निर्भर करता है। एक छोटे संगठन जिसमें एक ही व्यूहनीतिक व्यावसायिक इकाईहो ,समस्त व्यावसायिक निर्णय कम्पनी स्तर पर लिये जा सकते है। किन्तु एक से अधिक व्यूहनीतिक व्यावसायिक इकाइयों वाले संगठनों में समस्त व्यावसायिक निर्णय कम्पनी स्तर पर नहीं लिये जा सकते है। ऐसे संगठनों में कम्पनी स्तर एवंक्रियात्मक व्यूहनीतिक स्तर के मध्यव्यूहनीतिक व्यावसायिक इकाईयों के स्तर के निर्णयों हेतु एक पृथक स्तर की निर्णयन संरचना – एस0बी0यू0 अथवा निर्मित करनी होती है। इस कारण से मॉडल को भी तदनुसार समायोजित करना होता है। इन दोनों मॉडलों एवं इनमें सन्निहित चरणों एवं तत्वों को निम्नवत दिया गया है :

एकल एस0बी0यू0 की दशा में व्यूहनीतिकप्रक्रिया का मॉडल

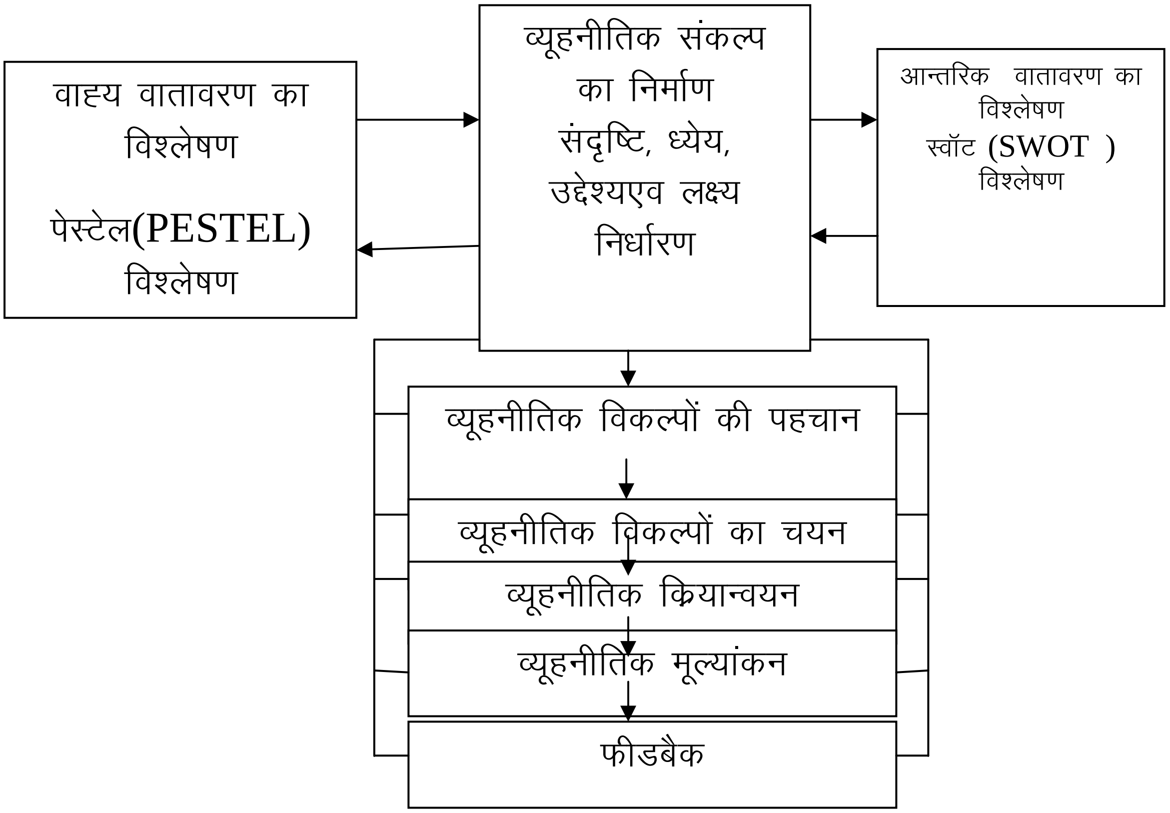

बहुल एस0बीयू0 फर्म में कम्पनी एवं कियात्मक व्यूहनीतिक प्रकिया का मॉडल

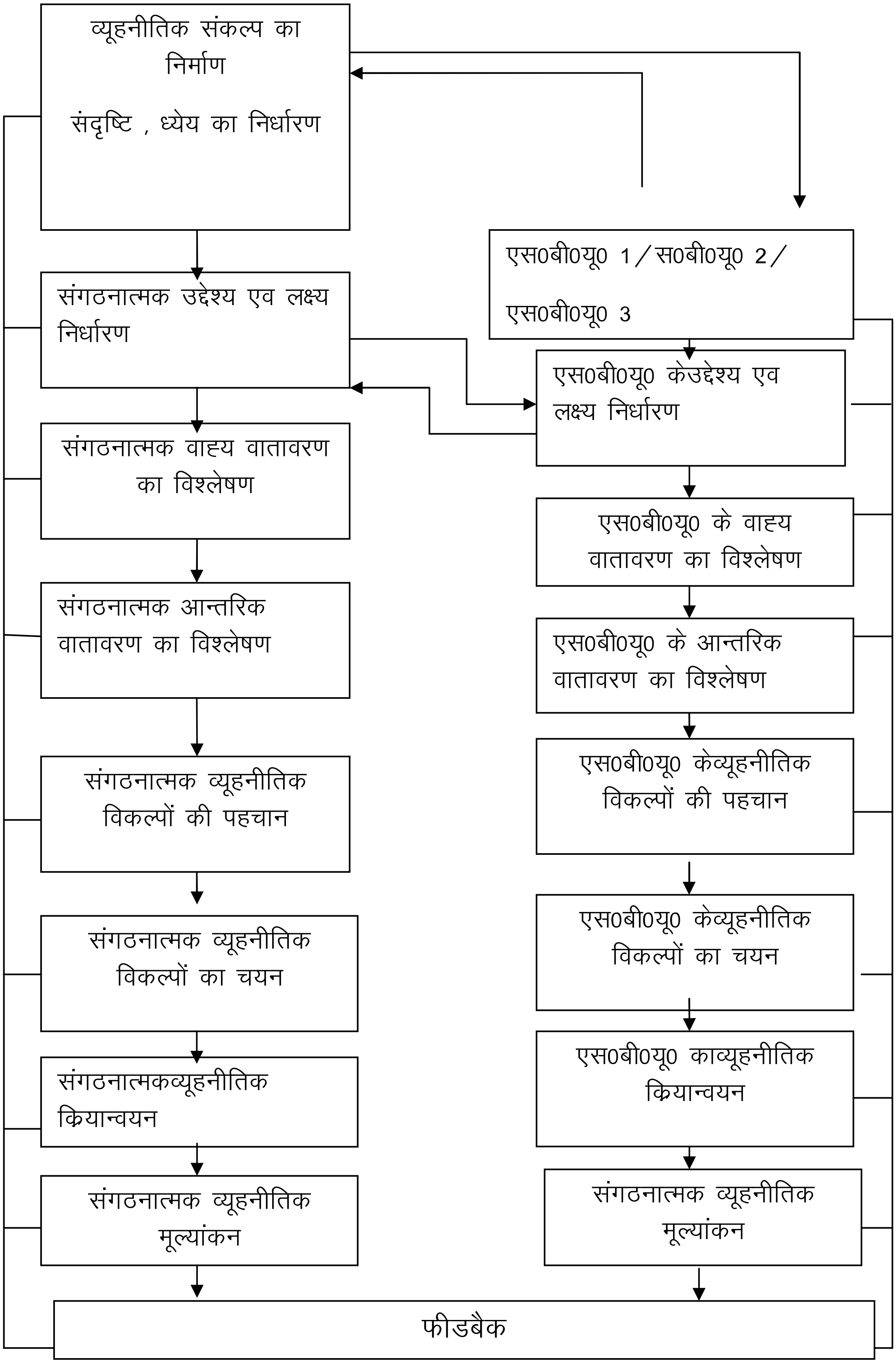

यह उल्लेखनीय है कि व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया में निहित चरण एवं तत्व परस्पर निर्भर हैं। यह एक दूसरे के परिणामों को प्रभावित करते हैं एवं इनसे स्वयं भी प्रभावित होते हैं, अतः इनका कोई भी स्पष्ट क्रम निर्धारण नहीं दिया जा सकता है। इनमें निरन्तर गतिशील वातावरण की परिवर्तित परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन एवं परिमार्जन करना होता है। विभिन्न चरणों के मध्य फीडबैक एवं समायोजन की प्रक्रिया लगातार चलती रहती है। इन दोनों मॉडलों में सन्निहित चरण एवं तत्व निम्नवत हैं :

1. **व्यूहनीतिक संकल्प का निर्माणः** यह व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया का प्रथम मूलचरण है। व्यूहनीतिक संकल्प का निर्माण व्यूहनीतिकारों जैसेसंचालक मण्डल, मुख्य अधिशासी अधिकारी, मध्यम स्तरीय प्रबन्धकों, कम्पनी नियोजन स्टाफ, विशेषज्ञों, परामर्शदाताओं, उद्यमकर्ता आदि की भूमिकाओं की सफलता पर आधारित होता है। व्यूहनीतिकार संगठनात्मक उच्च नेतृत्व के अंग होते हैं जो सूचनाओं के आदान प्रदान करने, अर्न्तवैयक्तिक संबंध निर्मित करने तथा निर्णयन की भूमिकाओं का निर्वहन करते हैं, जिन्हें आगे विस्तार से समझाया गया है। इन कार्यो में पर्याप्त समय लगता है। अतः व्यूहनीतिक संकल्प के निर्माण के पूर्व व्यूहनीतिकारों का निश्चय करना होता है, जिन पर संगठन सफलता अथवा असफलता का दारोमदार होता है। इन्हीं पर व्यूहनीतिक संकल्प के निर्माण का दायित्व भी होता है। व्यूहनीतिक संकल्प, जिसका आशय, संगठन के द्वारा दीर्घकालीन उद्देश्यों को बताता है प्राप्त करने के इरादे से है, के निर्माणमें संदृष्टि, ध्येय, उद्देश्य एव लक्ष्य निर्धारणके तत्व सम्मिलित होते हैं। संदृष्टि संगठन की भावी छवि को चित्रित करने वाला वह काल्पनिक, दार्शनिक एवं मूल्य वाक्य होता है जो समस्त संगठन को अभिप्रेरित करता है, उनके साथ संगठन के मूल्यों को बांटता है और संगठन के विभिन्न अंगों को भिन्न–भिन्न व्यूहनीतियों के अनुसरण करने पर भी समान एकीकृत दिशा अपनाने पर जोर देता है। संदृष्टि जहॉ यह बताती है कि संगठन कहॉ जा रहा है ? वहीं ध्येय वाक्य यह व्यक्त करता है कि संगठन क्या है और वह क्या करता है ? ध्येय वाक्य संगठन की विद्यमानता के पीछे मूल कारणों को परिभाषित करता है और समाज में उसके कार्यों के औचित्य को तथा उसके व्यवसाय को परिभाषित करते हुए यह स्पष्ट करता है, कि संगठन के द्वारा निर्मित या सेवित वर्तमान उत्पाद अथवा सेवा, उत्पाद या सेवा श्रंखला, बाजार एवं प्रकार्यं क्या हैं? ध्येय वाक्य का निर्धारण फर्म की वांछित एवं प्रत्याशित उपलब्धियों के मध्य विद्यमान अन्तराल के विश्लेषण (गैप एनॉलिसिस) पर आधारित होता है। ध्येय वाक्य को तदुपरान्त उद्देश्यों एव लक्ष्यों में रूपान्तरित किया जाता है।उद्देश्यवह साध्य हैं जिन्हें संगठन अपने अस्तित्व एवं कार्यों से प्राप्त करता है। यही वह मापदण्ड हैं जिनसे उसकी प्रभावशीलता का निश्चय होता है। उद्देश्यों से संगठन का संबंध उसके वातावरण से स्थापित होता है, प्रबंधकीय निर्णयों का समन्वय होता है एव संगठनात्मक प्रदर्शन के मूल्यांकन का मापदण्ड प्राप्त होता है। उद्देश्य ध्येय की तुलना में अधिक स्पष्ट, विशिष्ट एवं सटीक होते हैं। लक्ष्य उद्देश्यों को अपने मात्रात्मक स्वरूप के कारण अधिक स्पष्ट, मापनीय एवं मूल्यांकनयोग्य बना देते हैं।यह उल्लेखनीय है कि लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की विशिष्टता लोचशीलता को कम कर देती

है, इस कारण ध्येय वाक्य को प्रायः अपेक्षाकृत सामान्य बनाया जाता है, ताकि बदलती स्थितियों में भी यह प्रासंगिक बनारहे।

2. **वाह्य वातावरण का विश्लेषणः** यद्यपि व्यूहनीतिक संकल्प के निर्माण के पश्चात मॉडल में अगला चरण वातावरणीय विश्लेषण है, किन्तु यह दोनों साथ–साथ चलते हैं और वातावरणीय विश्लेषण के अनुसार समायोजन प्रक्रिया सम्पादित की जाती रहती है। वाह्य वातावरण में आर्थिक, सामाजिक, तकनीकी, नियामक, राजनीतिक, पारिस्थितिकीय आदि कारक सम्मिलित होते हैं। प्रत्येक संगठन को अपने वाह्य वातावरण के इन कारकों के साथ लगातार व्यवहार एवं स्वयं को उनके साथ संबंधित कर सामंजस्य स्थापित करना होता है।यह कारक संगठन को प्रभावित करते हैं और कुछ सीमा तक इनसे स्वयं भी प्रभावित होते है, किन्तुसंगठन का इन पर कोई नियन्त्रण नहीं होता है।इस प्रक्रिया से संगठन को अवसरों एवं चुनौतियों की पहचान करने में सहायता मिलती है।

3. **आन्तरिक वातावरण का विश्लेषण** :वाह्य वातावरण की भांति आन्तरिक वातावरण का विश्लेषणसंगठन की अवसरों एवं चुनौतियों का निर्धारण करने में व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया का प्रमुख तत्व है। आन्तरिक वातावरण के विश्लेषण से संगठन को अपनी शक्तियों एवं कमजोरियों की पहचान करने, इनसे संबंधित वातावरणीय कारको का गहन विश्लेषण करने तथा अवसरों एवं चुनौतियों का अधिकतम लाभ उठाने में सहायता प्राप्त होती है। इस विश्लेषण के द्वारा संगठन अपने लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को परिमार्जित कर सकता है।

4. **व्यूहनीतिक विकल्पों की पहचान करना** :वातावरणीय विश्लेषण से विभिन्नव्यूहनीतिक विकल्पों का पता चलता है, किन्तु यह सभी विकल्प समान परिणाम देने वाले नहीं होते हैं। संगठन अपना संबंध वातावरण से स्थापित कर संगठन को उपलब्ध अवसरों एवं चुनौतियों तथा अपनी शक्तियों एवं कमजोरियों के दृष्टिगत इन विकल्पों में से सर्वाधिक उपयुक्त विकल्पों पर विचार कर सकता है, ताकि प्रयासों के अनावश्यक दोहराव से बचा जा सके। इस चरण में विचार विमर्श से पूर्व वर्णित चरणों में निर्धारित तत्वों में पुनःपरिमार्जन हो सकता है।

5. **व्यूहनीतियों का चयन** :व्यूहनीतियों विकल्पों का चयन करते समय यह देखा जाता है कि चयनित व्यूहनीतियां संगठन के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को प्राप्त करने तथा संगठन की दशा एवं दिशा में वांछित प्रभाव उत्पन्न करने में सक्षम हैं अथवा नहीं। यह उल्लेखनीय है कि व्यूहनीतियों विकल्पों का चयन अनेक कारको पर निर्भर करता है, जिनमें व्यूहनीतिकार के व्यक्तिगत नैतिक मूल्य एवं अभिवृत्तियां भी महत्वपूर्ण होतीं हैं।

6. **संगठनात्मक व्यूहनीतिक कियान्वयनः**व्यूहनीतिक निर्माण के पश्चात इसे कार्य रूप में परिणित करना व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया का अगला आधारभूत चरण है।व्यूहनीतिक कियान्वयन के अर्न्तगत उपयुक्त संगठन संरचना का निर्माण, प्रभावपूर्ण प्रबन्ध एवं नेतृत्व की व्यवस्था, संसाधनों की व्यवस्था एवं अनुकूलतम आबंटन, परिचालनात्मक नीतियों का निर्धारण, तकनीकी एवं मानव संसाधनों की व्यवस्था आदि तत्व सम्मिलित होते हैं।

7. **संगठनात्मक व्यूहनीतिक मूल्यांकन** :यह व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया का अन्तिम आधारभूत चरण है। मूल्यांकन एवं नियन्त्रण निरन्तर गतिशील प्रक्रियाऐं हैं।प्रभावपूर्ण व्यूहनीतिक क्रियान्वयन के लिये क्रियान्वयन के दौरान निर्धारित प्रमापों के सापेक्ष विचलनों का पता लगाना एवं त्रुटियों के तात्कालिक सुधार की व्यवस्था आवश्यक होती है।सुधारात्मक कार्यवाहियां व्यूहनीतिक क्रियान्वयन को ठीक करने के साथ–साथ संगठनात्मक ध्येय ,लक्ष्यों एवं उद्देश्यों के संशोधन, व्यूहनीतिक विकल्पों के चयन पर पुर्नविचार एवं परिवर्तन तथा व्यूहनीतियों के नए सिरे से पहचान के क्षेत्रों तक विस्तृत हो सकती हैं।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया के मॉडल के विभिन्न चरणों एवंतत्वों मेंपरस्पर घनिष्ठ संबंध हैं। इस कारण से यह एक क्रमिक संरचना न होकर एक सतत गतिशील प्रक्रिया है। जैसे ही एक या अधिक कारकों में परिवर्तन होता है, स्वाभाविक रूप में दूसरे अन्य चरणों के अर्न्तनिहित तत्वों में परिवर्तन भी अपरिहार्य हो जाता है।

5.3 व्यूहनीतिक निर्णयन

व्यूहनीतिक निर्णयन, व्यूहनीतिक प्रबन्ध का महत्वपूर्ण अंग है। किन्तु यह परिचालनात्मक निर्णय से भिन्न है। सामान्यतः यह विभिन्न वैकल्पिक कार्यविधियों में से सर्वोपयुक्त विकल्प का चयन करने की प्रक्रिया है। निर्णयन में मुख्यतः (i) चयनित विकल्प के द्वारा निर्धारित क्रियाविधि (ii) संसाधनों का आबंटन तथा (iii) निर्णय के क्रियान्वयन का परिणाम सम्मिलित होते हैं। किन्तु व्यूहनीतिक निर्णयों में यह तीनों तत्व परंपरागत निर्णयों से भिन्न होते हैं। यहाँ पर हम व्यूहनीतिका निर्णयन का विवेचन करेंगे।

5.3.1 व्यूहनीतिक निर्णयन का अर्थ एवं प्रकृति :

जिस प्रकार निर्णयन प्रत्येक स्तर के प्रबंधक का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य है, उसी प्रकार व्यूहनीतिक निर्णयन उच्च प्रबंध का मुख्य कार्य होता है। जब प्रबंधकीय निर्णय संगठन के समस्त कार्यों के सम्बन्ध में समस्त संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति तथा उनके लिए संसाधनों के आबंटन तथा क्रियान्वयन से संबंधित होते हैं, तो इन्हें व्यूहनीतिक निर्णय कहा जा सकता है। व्यूहनीतिक निर्णय संगठन के लिए दीर्घकाल में अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं। किन्तु व्यूहनीतिक निर्णयन अत्यधिक कठिन होता है, क्योंकि इनका सम्बन्ध उन व्यूहनीतिक गतिविधियों से होता है, जो अपने आप में जटिल एवं विविधीकृत होती है। व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया में व्यूहनीतियों का निर्माण व्यूहनीतिक निर्णयों पर ही निर्भर करता है। जब व्यूहनीतिकार कम्पनी के ध्येय को निर्धारित करते हैं, तब व्यूहनीतिक निर्णयन का संबंध उन मूलभूत प्रश्नों के उत्तर खोजना होता है कि (i) हम किस प्रकार के व्यवसाय में हैं? (ii) भविष्य में हम किस प्रकार के व्यवसाय में होंगे? और हमें किस प्रकार के व्यवहार में होना चाहिए? इसी प्रकार उद्दश्यों को निर्धारित करते समय व्यूहनीतिकारों को कम्पनी के विभिन्न स्तरों पर प्रदर्शन मूल्यांकन के मापदण्डों पर निर्णय लेना होता है। इन उद्दश्यों की प्राप्ति हेतु उपलब्ध व्यूहनीतिक विकल्पों में से एक सर्वोपयुक्त व्यूहनीति का चुनाव भी

व्यूहनीतिक निर्णयों से संबंधित होता है। इन निर्णयों को लेते समय व्यूहनीतिकारों का सामना वाह्य वातावरण में विद्यमान विभिन्न अवसरों एवं चुनौतियों से होता है। उच्च प्रबंध को संगठन की शक्तियों एवं सीमाओं पर विचार करते हुए अपने निर्णयों को अनुकूलतम करना होता है। इस प्रकार व्यूहनीतिक निर्णय अत्यन्त चुनौतीपूर्ण, जोखिमयुक्त होने के साथ–साथ विस्तृत व्यूहनीतिक प्रबंधन का मुख्य हिस्सा होते हैं।

5.3.2 व्यूहनीतिक निर्णयों की विशेषताऐं :

(i) **व्यूहनीतिक निर्णयों का सम्बन्ध सम्पूर्ण संगठन से होता है :** व्यूहनीतिक निर्णय सम्पूर्ण संगठन की गतिविधियों को ध्यान में रखकर लिए जाते हैं, जिनका मुख्य उद्देश्य संगठन की भावी पहचान एवं चरित्र को ही रूपान्तरित करना होता है कि संगठन नए व्यवसाय में, विद्यमान व्यवसाय के साथ जाएगा अथवा इसके बिना ? क्या वह नए बाजारों में प्रवेश करेगा अथवा वर्तमान व्यवसाय में बाजार नेतृत्व की भूमिका का निर्वहन करेगा? इस प्रकार यह निर्णय समस्त संगठन को प्रभावित करते हैं।

(ii) **व्यूहनीतिक निर्णय उच्च प्रबंध द्वारा लिए जाते हैं :** व्यूहनीतिक निर्णयन में उच्च प्रबंध की संलग्नता इसलिए होती है, क्योंकि संगठन की विभिन्न गतिविधियों को प्रभावित करने वाले इन निर्णयों के लिए निर्णयकर्ताओं के पास आवश्यक अधिकार सत्ता एवं संसाधनों के आबंटन के अधिकार होने चाहिए, तब ही इन निर्णयों को क्रियान्वित किया जा सकता है।

(iii) **व्यूहनीतिक निर्णय दीर्घकाल के लिए किए जाते हैं :** व्यूहनीतिक निर्णय संगठन की दीर्घकालीन समृद्धि के लिए किए जाते हैं जिनमें लम्बी अवधि में अत्यधिक मात्रा में संसाधन आबंटित किए जाते हैं। अल्पावधि में संगठन के भावी स्वरूप में कोई महत्वपूर्ण रूपान्तरण संभव नहीं हो पाता है।

(iv) **व्यूहनीतिक निर्णय बड़ी मात्रा में संसाधनों के आबंटन से सम्बन्धित होते हैं :** व्यूहनीतिक निर्णयों के अन्तर्गत संसाधनों के आबंटन में भारी लागत सन्निहित होती है, जिसमें भौतिक, वित्तीय, तकनीकी एवं मानवीय संसाधनों को सम्मिलित किया जाता है। एक बार निर्णय हो जाने पर इनसे पीछे लौटना संभव नहीं होता है।

(v) **व्यूहनीतिक निर्णय भविष्योन्मुख होते हैं :** व्यूहनीतिक निर्णय वाह्य वातावरण के पूर्वानुमानों के आधार पर भावी व्यूहनीति तय करते हैं, जिससे प्रत्याशित सांयोगिक घटनाओं के प्रति पहलपूर्ण कार्यवाही की जा सके। फलस्वरूप इन निर्णयों का केन्द्रीय बिन्दु वर्तमान की तुलना में भविष्य पर लक्षित होता है।

(vi) **व्यूहनीतिक निर्णय बहु–स्तरीय, बहु–प्रकार्यात्मक एवं बहु–व्यवसाय आधारित होते हैं :** व्यूहनीतिक निर्णयों का क्षेत्र समस्त संगठन तक विस्तृत होने के कारण इसमें कंपनी स्तर से क्रियात्मक स्तर तक व्यूहनतिक के सभी स्तर, समस्त ए0बी0यू0 इत्यादि सम्मिलित हो जाते हैं।

(vii) **व्यूहनीतिक निर्णय तुलनात्मक प्रतियोगितात्मक लाभ की स्थिति प्राप्त करने पर केन्द्रित होते हैं :** अपने संगठनात्मक व्यवसाय को प्रतिस्पर्धियों से भिन्न एवं

अनोखे रूप में प्रतिस्थापित करने की संदृष्टि के कारण व्यूहनीतिक निर्णय प्रतियोगितात्मक लाभ के उद्दश्यों को प्राप्त करने की ओर उन्मुख होते हैं।

(viii) **व्यूहनीतिक निर्णय अनिश्चितता से संबंधित होते हैं :** वाह्य पर्यावरण के अनिष्चित होने के दृष्टिगत व्यूहनीतिक निर्णय वातावरणीय तत्वों की जांच एवं पूर्वानुमान, अवसरों एवं चुनौतियों का आकलन कर उनका अपने पक्ष में उपयोग करने तथा संसाधनों का अधिकतम संभव उपयोग सुनिश्चित करने पर लक्षित होते हैं।

(ix) **व्यूहनीतिक निर्णय संगठन के समेकित, एकीकृत एवं विस्तृत स्वरूप को ध्यान में रखकर लिए जाते हैं :** यह संगठन के सभी पक्षों के प्रदर्शन को प्रभावित करते हैं।

(x) व्यूहनीतिक निर्णयों से संगठन के प्रदर्शन में चतुर्दिक सुधार एवं उन्नयन होता है।

5.3.3 व्यूहनीतिक एवं परिचालनात्मक निर्णयों में अन्तर :

(i) परिचालनात्मक निर्णय : परंपरागत निर्णयन प्रक्रिया सरल है। यह उद्दश्यों को निर्धारित करने, उद्दश्यों के सापेक्ष वैकल्पिक कार्यविधियों का विश्लेषण एवं सर्वोत्तम विकल्प को चयनित करने की प्रक्रिया का अनुसरण करती है, किन्तु व्यवहार में निर्णयन प्रक्रिया अत्यधिक जटिल होती है, क्योंकि उद्दश्यों का निर्धारण इतना सरल नहीं होता। साथ ही विकल्पों की पहचान और उन विकल्पों के द्वारा उद्देश्यों को प्राप्त करने की योग्यता का परीक्षण करना एक कठिन कार्य है, जिससे सर्वोत्तम विकल्प का चयन जटिल हो जाता है। परिचालनात्मक निर्णयन की संरचना पूर्व निर्धारित होती है, जिसे उसके अल्पकालिक प्रकृति के अनुसार दोहराया जाता है। साथ ही परिचालनात्मक निर्णयन प्रक्रिया निचले स्तरों को प्रत्यायोजित भी की जा सकती है।

(ii) व्यूहनीतिक निर्णयन : यद्यपि व्यूहनीतिक निर्णयन और परिचालनात्मक निर्णयन में विभेद करना कठिन है किन्तु व्यूहनीतिक निर्णयन की प्रकृति दीर्घकालीन होती है। व्यूहनीतिक निर्णयन की संरचना पूर्व निर्धारित न होकर परिस्थितिजन्य होती है और व्यूहनीतिक निर्णय उच्च प्रबंध के द्वारा लिए जाते हैं, जिसके कारण उनका निचले स्तरों को भारार्पण करना संभव नहीं होता है।

5.3.4 व्यूहनीतिक निर्णयन में मुख्य मुद्दे :

व्यूहनीतिक निर्णयन की प्रक्रिया के जटिल एवं अनिश्चित होने के कारण इसके लिये कोईपूर्व संरचना नहीं दीजा सकती है और न ही कोईनिश्चित मॉडल ही दिया जा समता है। यह प्रायः सांयोगिक तौर पर लिये जाने वाले निर्णय होते हैं, जिनका कोईक्रम या प्रवृति नही बतायी जा सकती है क्योकि उपलब्ध सूचनाऐं अस्पष्ट एवं अपर्याप्त होती हैं।फिर भी इन निर्णयों की प्रकृति को कुछ मुद्दों के आधार पर समझकर मनमाने, अविवेकपूर्ण एवं असंगत निर्णयों से बचा जा सकता है। **प्रोफेसर अज़हर काजमी** ने व्यूहनीतिक निर्णयन की प्रक्रिया का प्रतिनिधित्व करने वाले छः मुद्दों की व्याख्या की है, जिनसे व्यूहनीतिक निर्णयन को समझन में सहायता प्राप्त होती है। यह मुद्दे निम्नवत वर्णित किये जाते हैं :

1. **मापदण्ड**–निर्णयन के लिए मापदण्ड आवश्यक हैं। यह मापदण्ड उद्दश्यों का निर्धारण हो सकता है , जिससे कार्यक्षमता एवं प्रभावशीलता को ज्ञात किया जा सकता है। इस प्रकार उद्देश्य निर्धारण को निर्णयन के मापदण्ड के रूप में उपयोग किया जाता है जिसके लिये (1) प्रत्याय को अधिकतम करने (2) अनुकूलतमीकरण के द्वारा यथार्थ रूप में उद्देश्यों की प्राप्ति करने एवं (3) उद्देश्यों को छोटे–छोटे, युक्तिसंगत एवं वृद्धिमान कदमों में प्राप्त करने के दृष्टिकोंण अपनाये जा सकते हैं ।
2. **विवेकशीलता या साम्यता**–निर्णयन में विवेकशीलता या साम्यता होनी चाहिये। इसका अर्थ है कि क्रियाओं के वैकल्पिक तरीकों में इस प्रकार चयन हो , जिससे उद्दश्यों की प्राप्ति सर्वोत्तम ढंग से हो सके। विवेकशील निर्णयन प्रक्रिया उपरोक्त वर्णित तीनों दृष्टिकोणों के हितों को ध्यान में रखती है।
3. **सृजनात्मकता**–निर्णयन में मौलिकता, नयापन एवं नव प्रवर्तनों के समावेश से सृजनात्मकता आ सकती है। इसके लिए संगठन में प्रत्येक स्तर पर नये विचारों को प्रोत्साहित किये जाने की व्यवस्था की जानी चाहिये। एतदर्थ आउट ऑफ बॉक्स सोच एवं चिन्तन को प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।
4. **परिवर्तनशीलता**–समान परिस्थितियों में अलग अलग निर्णयकर्ताओं के निर्णयन में विविधता परिवर्तनशीलता है। इसे दूर करने का कोई निश्चित सूत्र नहीं दिया जा सकता है क्योंकि प्रत्येक स्थिति दूसरी से भिन्न होती है। परिवर्तनशीलता का विश्लेषण कर उसके प्रति समझ विकसित की जा सकती है ।
5. **गुणात्मकता** –गुणात्मकताका आशय निर्णयन में व्यक्तिगत गुणों की भूमिका से है। निर्णयकर्ता की शिक्षा, अधिगम, कौशल, अनुभव, अभिवृति, शैली, नैतिक मूल्य, साहसिक एवं जोखिम लेने की प्रवृति आदि व्यक्तिगत गुणों की व्यूहनीतिक निर्णयन में महत्वपूर्ण भूमिका होती है।
6. **सामूहिकता** –का आशयव्यक्तिगत निर्णयन की अपेक्षा सामूहिकनिर्णयन को वरीयता देना है ताकि निर्णयन में परिवर्तनशीलता को कम किया जा सके। संगठन के द्वारा वृहत आकार ग्रहण करने के साथ निर्णयन मेंसामूहिकता वांछित एवं लाभप्रद होती है।

5.4 व्यूहनीतिक प्रबन्ध में प्रबन्धकों की भूमिका

व्यावसायिक नीति मुख्यतया उच्च प्रबन्ध के द्वारा निर्मित की जाती है, किन्तु व्यूहनीतिक प्रबन्ध में उच्च, मध्यम एवं निम्न तीनों स्तरों के प्रबन्धकों की प्रतिभागिता होती है। उन्हें व्यूहनीतियों के निर्माण के साथ–साथ व्यूहनीतियों के क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन में संलग्न किया जाता है। उद्यमी एवं प्रवर्तक भी मुख्य व्यूहनीतिकार की भूमिका में होते हैं। साथ ही कम्पनी वाहय व्यक्तियों जैसे अर्थशास्त्र, वित्त, प्रबन्ध, अभियांत्रिकी के विशेषज्ञों, पेशेवरों, शिक्षाशास्त्रियों, अन्य कम्पनियों के वरिष्ठ अधिशासी अधिकारियों, राजनीतिज्ञों जैसे सांसद एवं विधायकों तथा श्रम संघों के प्रतिनिधियों को भी अपने संचालक मंडलों में नामित करती है। इस सभी की भूमिकायें व्यूहनीतिकार

की होती हैं, जो व्यूहनीतिक प्रबन्ध में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। इन व्यक्तियों अथवा समूहों की भूमिकाओं को निम्नवत वर्गीकृत किया जा सकता हैः

5.4.1 संचालक मण्डल की भूमिका

कम्पनी संगठन में सर्वोच्च सत्ता संचालक मण्डल में निहित होती है, जो अपनी शक्तियॉ कम्पनी के पार्षद सीमा नियम एवं अर्न्तनियमों से प्राप्त करते हैं। कम्पनी अधिनियम की व्यवस्थाओं के अनुसार कम्पनी के अंशधारी, ऋणदाता, वित्तीय संस्थायें, सरकार एवं अन्य हितधारक संचालकों की नियुक्ति करते हैं। संचालक कम्पनी के स्वामियों के द्वारा नियुक्त किए जाते हैं, एवं उन्हीं के प्रति उत्तरदायीहोते हैं। उनकी भूमिका स्वामियों के एजेन्ट की भॉति होती है। व्यूहनीतिक प्रबन्ध की दृष्टि से संचालक मण्डल कम्पनी के प्रबन्धकों का मार्गदर्शन एवं दिशानिर्देशन करने के लिए उत्तरदायी होता है। उनका प्रमुख उत्तरदायित्व कम्पनी की दीर्घकालीन नीतियों का निर्धारण करना होता है। वह यह तय करते हैं कि कम्पनी वर्तमान मे क्या है ? और भविष्य में क्या होगी ? वैधानिक रूप में वह कम्पनी के संगठन के नियंत्रण तथा उसकी क्रियाओं के संचालन एवं उसे प्रभावशाली बनाने के लिए उत्तरदायी होते हैं । कम्पनी के मुख्य अधिशासी अधिकारी (सी0ई0ओ0) तथा अन्य संचालकों, प्रबन्धको, अंकेक्षकों की नियुक्ति एवं उन्हें कार्यमुक्त करने की शक्तियॉ संचालक मण्डल में निहित होती है। इस प्रकार कम्पनी अभिशासन संचालक मण्डल के द्वारा किया जाता है। इसके लिए उनके द्वारा कम्पनी अधिनियम एवं अन्य नियामक अधिनियमों तथा कम्पनी के द्वारा पूर्व निर्धारित नीतियों, कार्य पद्धतियों, नियमों एवं सिद्धान्तों के द्वारा प्रदत्त व्यवस्थाओं का अनुपालन करना होता है।

5.4.2 मुख्य अधिशासी अधिकारी की भूमिका

व्यूहनीतिक प्रबन्ध के पिरामिड में मुख्य अधिशासी अधिकारी शीर्ष पर होता है, इस कारण से मुख्य अधिशासी अधिकारी अथवा सी0ई0 ओ0 की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। वह कम्पनी का मुख्य व्यूहनीतिकर्ता होने के कारण व्यूहनीति के निर्माण से उसके कियान्वयन, मूल्यांकन एवं नियन्त्रण तक समस्त क्षेत्रों में सकिय भूमिका का निर्वहन करता है। संगठनात्मक उद्देश्यों, व्यूहनीतियों, योजनाओं के मुख्य वास्तुकार, संगठन निर्माता, नेतृत्वकर्ता, मुख्य प्रशासक, समन्वयकर्ता, संगठनात्मक ध्येय के प्रधान सम्प्रेषक, अभिप्रेरक, कियान्वयनकर्ता आदि के रूप में प्रमुख निर्णय सी0ई0 ओ0 के द्वारा ही लिये जाते हैं।व्यूहनीतिक महत्व के समस्त कार्यों के कियान्वयन के लिये वही उत्तरदायी होता है। वह संगठन की दिशा को तय करने के निर्णय तो लेता ही है, साथ ही यह भी सुनिश्चित करना भी उसका दायित्व है कि संगठन अपनी पूर्वनिर्धारित दिशा एवं पथ से विचलित तो नहीं हो रहा है। सीइ0ओं के व्यूहनीतिक कार्यों को निम्नवत दिया जा सकता है :

1. व्यूहनीतिक संकल्प का निर्माण एवं संदृष्टि, ध्येय, उद्देश्य एव लक्ष्य निर्धारण।
2. व्यूहनीतिक, दार्घकालीन एवं परियोजना नियोजन करना।
3. एस0बी0यू0 एवं कियात्मक प्रबन्धकों को दिशानिर्देश एवं मार्गनिर्देश प्रदान करना ।

4. विभिन्न व्यवसायों प्रभागों,विभागों एवं परिचालनात्मक प्रबन्ध के मध्य समन्वय एवं एकीकरण करना ।
5. संगठन संरचना निर्धारित करना एवं उपयुक्त मानव संसाधन प्रदान करना ।
6. संसाधनों का विकास एवं आबंटन करना ।
7. व्यूहनीतिक कियान्वयन के अनुकूल वातावरण सृजित करना ।
8. अनुश्रवण, सुधारात्मक कार्यवाही करना तथा नियन्त्रण एवं पुनरावलोकन करना।

यह उल्लेखनीय है कि सी0ई0ओ0 के कार्यों की प्रकृति व्यूहनीतिक होती है। नैत्यिक एवं सामान्य प्रकृति के कियात्मक कार्यो का सम्पादन सामान्य, कियात्मक एवं मध्यम प्रबन्ध के द्वारा सम्पादित किया जाता है।

5.4.3 उच्च एवं मध्यम स्तरीय प्रबन्धकों की भूमिका

ऐसे प्रबन्धक जो संचालक मण्डल एवं सी0ई0ओ0 को उनके कार्यों में सहायता करते हैं, वरिष्ठ प्रबन्धक अथवा उच्च प्रबन्धक कहा जाता है। यह शीर्षस्तरीयप्रबन्धकप्रायः कियात्मक विभागों, लाभ केन्द्रों, प्रभागीय प्रमुख या संचालक मण्डल में चकानुकम में नामित प्रबन्धक होते हैं और कई उच्चस्तरीय समितियों, प्रबन्धकीय दलों, अध्ययन, शोध एवं कार्य दलों में नामित होकरकार्य करते हैं, जिन्हें व्यूहनीतियों के नियोजन से लेकर कियान्वयन , मूल्यांकन एवं नियन्त्रणतथा विशिष्ट एवं नवीन परियोजनाओं का स्वतन्त्र प्रभार आदि विभिन्न दायित्व प्रदान किए जा सकते हैं। एस0बी0यू0 प्रबन्धक भी अपने विशिष्ट व्यवसाय क्षेत्र में व्यूहनीतिकार की भूमिका का निर्वहन करतें हैं, जिनमें एस0बी0यू0 व्यवसाय को परिभाषित करने से लेकर अपने उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का निर्धारण एवं व्यूहनीतियों के कियान्वयन का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व सम्मिलित होता है।मध्यम स्तरीय प्रबन्धकों की भूमिका अपने क्षेत्रों में नियोजन , कियान्वयन , मूल्यांकन एवं नियन्त्रण के द्वारा व्यूहनीतिक उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने की होती है।उनका कार्य मुख्यतया परिचालनात्मक प्रकृति का होता है और वह उच्च प्रबन्ध के द्वारा लिए गये निर्णयों को कियान्वित करतेंहैं।व्यूहनीतिक प्रबन्ध में उनका महत्व केवल इस बात में निहित होता है कि वह व्यूहनीतियों के निर्माण का औचित्य एवं क्षेत्र उपलब्ध कराते हैं और प्रभावी कियान्वयन में योगदान करतें हैं।

5.4.4 कम्पनी नियोजन स्टाफ की भूमिका

वृहत एवं मध्यमस्तरीय संगठनों में कम्पनी नियोजन की कियाओं के सम्पादन हेतु एक पृथक औपचारिक कम्पनी नियोजन विभाग होता है, जो कार्पोरेट नियोजन के साथ–साथ व्यूहनीतिक नियोजन के कार्यों को भी सम्पादित करता हैं। कम्पनी नियोजन विभाग स्टाफ कार्यों का एक भाग होता है। यह प्रबन्ध को व्यूहनीतियों के निर्माण से लेकर उसके कियान्वयन एवं मूल्यांकन में सहयोग करते हैं। कम्पनी नियोजन स्टाफ की विशेषज्ञता के कारण उसे व्यूहनीतिक प्रबन्ध से संबंधित अध्ययन एवं शोध आदि में भी लगाया जाता है। नियोजन स्टाफ व्यूहनीतियों के सम्प्रेषण में भी सहयोग करता है।कम्पनी नियोजन स्टाफ संगठन की विभिन्न इकाइयों की पृथक योजनाओं को समेकित कर सम्पूर्ण संगठन की एकीकृत योजना निर्मित करने के लिये

सी0ई 0ओ0 एवं उच्च प्रबन्ध के समक्ष नियमित रूप से सूचनायें प्रस्तुत करता है। परिचालनात्मक इकाइयों के सुधार एवं रूपान्तरण हेतु व्यूहनीतियों के निरूपण, संसाधनों के आबंटन, कियान्वयन, अनुश्रवण एवं परिणामों के मूल्यांकन तथा व्यूहनीतियों के पुनरावलोकन में वह सी0ई0ओ0 एवं उच्च प्रबन्ध की तकनीकी सहायता करता है। वृहत संगठनों में व्यूहनीतिक नियोजन के लिये कम्पनी नियोजन के अर्न्तगत प्रकोष्ठ या पृथक औपचारिक विभाग कार्य करता है, जिसमें विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों को सम्मिलित किया जाता है ।

5.4.5 विशेषज्ञों एवं परामर्शदाताओं की भूमिका

जिन संगठनों में कम्पनी नियोजन का पृथक विभाग नहीं होता है , उनके द्वारा व्यूहनीतिक नियोजन के लिये वाह्य विशेषज्ञों एवं परामर्शदाताओं को आमन्त्रित किया जाता है, जो व्यक्ति, विशेषज्ञ या इस क्षेत्र में स्थापित कम्पनियां हो सकती हैं। व्यूहनीतिक नियोजन की पृथक व्ययसाध्य संरचना स्थापित करने की अपेक्षा यह विकल्प मितव्ययी, पूर्वाग्रहरहित एवं विश्वसनीय होता है, क्योंकि यह इस कार्य में दक्ष, अनुभवी और जाने माने विशेषज्ञों के द्वारा किया जाता है। साथ ही यह विकल्प प्रत्येक संगठन, चाहे वह छोटा या बड़ा हो, के द्वारा उपयोग किया जा सकता है। परामर्शदाता कम्पनियों में बी0सी0जी0 समूह, मैकिन्से एण्ड कम्पनी, एण्डरसन कन्सलटिंग, के0पी0एम0जी0, टाटा कन्सलटैन्सी आदि के उदाहरण दिए जा सकते हैं। यह कम्पनियां अलग अलग क्षेत्रों जैसे प्रतियोगितात्मक लाभ, पुर्ननिर्माण, परिवर्तनों का प्रबन्ध, वित्तीय प्रबन्ध, सूचना प्रबन्ध आदि में सेवायें प्रदान करती हैं।

5.4.6 उद्यमकर्ता की भूमिका

उद्यमकर्ता वह व्यक्ति होता है जो नये व्यवसाय को उसके विचार के प्रस्फुटन से आरम्भ करता है। उद्यमी सकिय, नव प्रवर्तनात्मक, वर्तमान से संतुष्ट न रहने वाला तथा आन्तरिक विसंगतियों एव संबाधाओं पर विजय पाने वाला, स्वतन्त्र सोच रखने वाला, आदर्शोन्मुख व्यक्ति होता है। किन्तु इन सभी गुणों का एक ही व्यक्ति में होना आवश्यक नहीं है। **पीटर ड्रकर** ने ठीक ही कहा है कि **एक उद्यमी सदैव परिवर्तन की तलाश में रहता है, उसके प्रति कियाशील होता है और उसका अवसर के रूप में लाभ उठाता है।**

व्यूहनीतिक प्रबन्ध की दृष्टि से एक प्रवर्तक के रूप में वह संगठन को वांछित दिशा प्रदान करते हैं और इसे प्राप्त करने के लिए उद्देश्य एवं व्यूहनीतियां निर्धारित करते हैं। किन्तु उद्यमकर्ता व्यूहनीतियों का निर्माण, कियान्वयन एवं मूल्यांकन किसी औपचारिक प्रणाली के अर्न्तगत नहीं करते हैं। वह व्यूहनीतिक निर्णयन तत्काल, एक साथ और व्यक्तिगत जोखिम लेकर करते हैं, जिनसे अधीनस्थ प्रेरित होते हैं। उद्यमकर्ता अथवा व्यावसायिक परिवार संचालित संगठनों में वह मुख्य और कभी कभी एकमात्र व्यूहनीतिकार होते हैं, किन्तु एक समूह के रूप में उन्हें परिवार के सदस्यों की राय पर विचार करना होता है। इन संगठनों के सफल होने एवं विकसित होकर वृहत रूप धारण कर लेने पर उद्यमकर्ता को बदलती स्थितियों में नवीन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है और किसी नए व्यूहनीतिकार को लानापड़ता है।

5.5 सारांश

व्यूहनीतिक प्रबन्ध उच्च प्रबन्ध द्वारा लिए जाने वाले अनेकानेक निर्णयों की एक श्रंखला है जिनसे व्यवसाय की भावी दिशा तय होती है।व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया के कई मॉडल दिए गये हैं। व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया अनेंक चरणों से होकर गुजरती है। प्रत्येक चरण में कई तत्व सम्मिलित होते हैं। यह प्रक्रिया एक निरन्तर परिवर्तनशील व्यावसायिक वातावरण में सतत जारी रहती है। इस कारण इस प्रक्रिया में निहित चरणों एवं तत्वों के क्रम एवं संरचना में मतैक्य नहीं है।यह स्पष्टतया निर्धारित करना कठिन है कि यह प्रक्रिया कहॉ से प्रारम्भ होकर किस क्रम में किन तत्वों को समाविष्ट कर अन्ततः कहॉ पर समाप्त होगी । उदाहरणार्थ व्यूहनीतिक संकल्प का निर्धारण वातावरणीय जांच एवं विश्लेषण पर निर्भर करता है, किन्तु वातावरणीय जांच एवं विश्लेषण के लिए संदृष्टि एवं ध्येय, उददेश्यो एवं लक्ष्यों तथा व्यवसाय को परिभाषित किया जाना होगा। इनमें किसे प्रारम्भिक बिन्दु माना जाय, यह एक कठिन प्रश्न है, जो व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया को अत्यन्त जटिल बना देता है। किन्तु इसके बावजूद अध्ययन की सरलता के लिये व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया का एक साधारण एवं कामचलाऊ मॉडल दिया जा सकता है। यह मॉडल व्यावसायिक संगठन की प्रकृति पर निर्भर करता है। एक छोटे संगठन जिसमें एक ही व्यूहनीतिक व्यावसायिक इकाई हो ,समस्त व्यावसायिक निर्णय कम्पनी स्तर पर लिये जा सकते है। किन्तु एक से अधिक व्यूहनीतिक व्यावसायिक इकाइयों वाले संगठनों में समस्त व्यावसायिक निर्णय कम्पनी स्तर पर नहीं लिये जा सकते है। ऐसे संगठनों में कम्पनी स्तर एवंक्रियात्मक व्यूहनीतिक स्तर के मध्यव्यूहनीतिक व्यावसायिक इकाईयों के स्तर के निर्णयों हेतु एक पृथक स्तर की निर्णयन संरचना – एस0बी0यू0 अथवा निर्मित करनी होती है। इस कारण से मॉडल को भी तदनुसार समायोजित करना होता है।

व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया के मॉडल के विभिन्न चरणों एवंतत्वों मेंपरस्पर घनिष्ठ संबंध हैं। इस कारण से यह एक क्रमिक संरचना न होकर एक सतत गतिशील प्रक्रिया है। जैसे ही एक या अधिक कारकों में परिवर्तन होता है, स्वाभाविक रूप में दूसरे अन्य चरणों के अर्न्तनिहित तत्वों में परिवर्तन भी अपरिहार्य हो जाता है।व्यावसायिक नीति मुख्यतया उच्च प्रबन्ध के द्वारा निर्मित की जाती है, किन्तु व्यूहनीतिक प्रबन्ध में उच्च, मध्यम एवं निम्न तीनों स्तरों के प्रबन्धकों की प्रतिभागिता होती है। उन्हें व्यूहनीतियों के निर्माण के साथ–साथ व्यूहनीतियों के क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन में संलग्न किया जाता है। उद्यमी एवं प्रवर्तक भी मुख्य व्यूहनीतिकार की भूमिका में होते हैं। साथ ही कम्पनी वाहय व्यक्तियों जैसे अर्थशास्त्र, वित्त, प्रबन्ध, अभियांत्रिकी के विशेषज्ञों, पेशेवरों, शिक्षाशास्त्रियों, अन्य कम्पनियों के वरिष्ठ अधिशासी अधिकारियों, राजनीतिज्ञों जैसे सांसद एवं विधायकों तथा श्रम संघों के प्रतिनिधियों को भी अपने संचालक मंडलों में नामित करती है। इस सभी की भूमिकायें व्यूहनीतिकार की होती हैं, जो व्यूहनीतिक प्रबन्ध में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं।व्यूहनीतिक प्रबन्ध के पिरामिड में मुख्य अधिशासी अधिकारी शीर्ष पर होता है, इस कारण से मुख्य अधिशासी अधिकारी अथवा सी0ई0 ओ0 की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। वह कम्पनी का मुख्य व्यूहनीतिकार होने के कारण व्यूहनीति के निर्माण से उसके क्रियान्वयन, मूल्यांकन एवं नियन्त्रण तक समस्त क्षेत्रों में सक्रिय भूमिका का निर्वहन

करता है। शीर्ष स्तरीय प्रबन्धक प्रायः क्रियात्मक विभागों, लाभ केन्द्रों, प्रभागीय प्रमुख या संचालक मण्डल में चक्रानुक्रम में नामित प्रबन्धक होते हैं और कई उच्चस्तरीय समितियों , प्रबन्धकीय दलों, अध्ययन, शोध एवं कार्य दलों में नामित होकर कार्य करते हैं जिन्हें व्यूहनीतियों के नियोजन से लेकर क्रियान्वयन, मूल्यांकन एवं नियन्त्रण तथा विशिष्ट एवं नवीन परियोजनाओं का स्वतन्त्र प्रभार आदि विभिन्न दायित्व प्रदान किए जा सकते हैं। एस0बी0यू0 प्रबन्धक भी अपने विशिष्ट व्यवसाय क्षेत्र में व्यूहनीतिकार की भूमिका का निर्वहन करतें हैं, जिनमें एस0बी0यू0 व्यवसाय को परिभाषित करने से लेकर अपने उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का निर्धारण एवं व्यूहनीतियों के क्रियान्वयन का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व सम्मिलित होता है।मध्यम स्तरीय प्रबन्धकों की भूमिका अपने क्षेत्रों में नियोजन, क्रियान्वयन, मूल्यांकन एवं नियन्त्रण के द्वारा व्यूहनीतिक उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने की होती है।कम्पनी नियोजन विभाग स्टाफ कार्यों का एक भाग होता है। यह प्रबन्ध को व्यूहनीतियों के निर्माण से लेकर उसके क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन में सहयोग करते हैं। कम्पनी नियोजन स्टाफ की विशेषज्ञता के कारण उसे व्यूहनीतिक प्रबन्ध से संबंधित अध्ययन एवं शोध आदि में भी लगाया जाता है।वृहत संगठनों में व्यूहनीतिक नियोजन के लिये कम्पनी नियोजन के अर्न्तगत प्रकोष्ठ या पृथक औपचारिक विभाग कार्य करता है, जिसमें विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों को सम्मिलित किया जाता है ।जिन संगठनों में कम्पनी नियोजन का पृथक विभाग नहीं होता है, उनके द्वारा व्यूहनीतिकनियोजन के लियेवाह्य विशेषज्ञों एवं परामर्शदाताओं को आमन्त्रित किया जाता है, जो व्यक्ति, विशेषज्ञ या इस क्षेत्र में स्थापित कम्पनियां हो सकती हैं। व्यूहनीतिक नियोजन की पृथक व्ययसाध्य संरचना स्थापित करने की अपेक्षा यह विकल्प मितव्ययी, पूर्वाग्रहरहित एवं विश्वसनीय होता है, क्योंकि यह इस कार्य में दक्ष, अनुभवी और जाने माने विशेषज्ञों के द्वारा किया जाता है। उद्यमकर्ता व्यूहनीतियों का निर्माण, क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन किसी औपचारिक प्रणाली के अर्न्तगत नहीं करते हैं। वह व्यूहनीतिक निर्णयन तत्काल, एक साथ और व्यक्तिगत जोखिम लेकर करते हैं, जिनसे अधीनस्थ प्रेरित होते हैं। उद्यमकर्ता अथवा व्यावसायिक परिवार संचालित संगठनों में वह मुख्य और कभी कभी एकमात्र व्यूहनीतिकार होते हैं, किन्तु एक समूह के रूप में उन्हें परिवार के सदस्यों की राय पर विचार करना होता है।

5.6 शब्दावली

व्यूहनीतिक संकल्प :व्यूहनीतिक संकल्प संगठन के द्वारा दीर्घकालीन उद्देश्यों को प्राप्त करने के इरादे से है, जिसमें संदृष्टि , ध्येय , उद्देश्य एव लक्ष्य निर्धारण के तत्व सम्मिलित होते हैं।

संदृष्टिः संगठन की भावी छवि को चित्रित करने वाला वह काल्पनिक, दार्शनिक एवं मूल्य वाक्य होता है, जो समस्त संगठन को अभिप्रेरित करता है, उनके साथ संगठन के मूल्यों को बांटता है और संगठन के विभिन्न अंगों को भिन्न– भिन्न व्यूहनीतियों के अनुसरण करने पर भी समान एकीकृत दिशा अपनाने पर जोर देता है।

ध्येय वाक्य : यह व्यक्त करता है कि संगठन क्या है और वह क्या करता है ? ध्येय वाक्य संगठन की विद्यमानता के पीछे मूल कारणों को परिभाषित करता है और समाज

में उसके कार्यों के औचित्य को तथा उसके व्यवसाय को परिभाषित करते हुए यह स्पष्ट करता है, कि संगठन के द्वारा निर्मित या सेवित वर्तमान उत्पाद अथवा सेवा, उत्पाद या सेवा श्रंखला, बाजार एवं प्रकार्य क्या हैं ?

एस0बी0यू0 : से अभिप्राय पृथक रूप से पहचाने जा सकने योग्य स्वतन्त्र उत्पाद/बाजार क्षेत्र से है, जो एक–दूसरे से भिन्न होते हैं तथा उनका अपना व्यूहनीतिक व्यावसायिक क्षेत्र (वातावरण) अथवा एस0बी0ए0 होता है।

व्यूहनीतिक प्रबंध : व्यूहनीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन हेतु लिये जाने वाले विभिन्न निर्णयों एवं कार्यवाहियों की एक जटिल, बहुआयामी, एकीकृत एवं सतत प्रक्रिया है, जो संगठनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति के वृहत उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सम्पादित की जाती है। यह संगठन का सम्बन्ध वाह्य वातावरण के निरन्तर परिवर्तनशील घटकों से स्थापित करती है ।

एस0बी0यू0 : व्यावसायिक स्तर की व्यूहनीति,

गैप एनॉलिसिस : फर्म की वांछित एवं प्रत्याशित उपलब्धियों के मध्य विद्यमान अन्तराल का विश्लेषण ,

सी0ई0 ओ0 : मुख्य अधिशासी अधिकारी ।

5.7 बोध प्रश्न

(अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(1) व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रकिया का ....व्यावसायिक संगठन की प्रकृति पर निर्भर करता है।

(2) ....ध्येय की तुलना में अधिक स्पष्ट, विशिष्ट एवं सटीक होते हैं।

(3) व्यूहनीतिक निर्णय .... के लिए किए जाते हैं ।

(4) ....की संरचना पूर्व निर्धारित होती है, जिसे उसके अल्पकालिक प्रकृति के अनुसार दोहराया जाता है।

(5) ....का सम्पादन सामान्य, कियात्मक एवं मध्यम प्रबन्ध के द्वारा सम्पादित किया जाता है।

(ब) सत्य/असत्य बताइए।

(1) व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रकिया में निहित चरण एवं तत्व परस्पर निर्भर हैं।

(2) लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की विशिष्टता लोचशीलता को कम कर देती है।

(3) व्यूहनीतिक नियोजन की पृथक से स्थापितसंरचना व्ययसाध्य होती है ।

(4) व्यूहनीतिक प्रबन्ध के पिरामिड में मुख्य अधिशासी अधिकारी शीर्ष पर होता है।

(5) उद्यमकर्ता व्यूहनीतियों का निर्माण, क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन एक औपचारिक प्रणाली के अर्न्तगत करते हैं।

5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

(अ)

(1) मॉडल(2) उद्देश्य (3) दीर्घकाल (4) परिचालनात्मक निर्णयन (5) नैत्यिक एवं कियात्मक कार्यो ।

(ब)

(1) सत्य (2) सत्य (3) सत्य (4) सत्य (5) असत्य।

5.9 स्वपरख प्रश्न

1. व्यूहनीति प्रबन्ध के आधरभूत मॉडल एवं इसमें निहित चरणें एवं तत्वों को समझाइए।
2. व्यूहनीतिक निर्णयन का अर्थ एवं प्रकृति को समझाइए।
3. व्यूहनीतिक एवं परिचालनात्मक निर्णयों में अन्तर कीजिए।
4. व्यूहनीतिक प्रबन्ध में प्रबन्धकों की भूमिका का विवेचन कीजिए।

5.10 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Ghose P.K., Strategic planning and Management, Sultan Chand and sons , New Delhi. (2011).
2. Jauch L.R. , Gupta Rajeev and William Glueck, Business policy and Strategic Management, F.Bros. & Company, (2010).
3. Kazmi , Azhar, Business policy and Strategic Management, Tata McGraw Hill Publishing Company Limited (2002)
4. Michael V.P., Business policy and Environment, S.Chand and Company, (2000).
5. Prasad , L.M. , Business policy and Strategic Management, Sultan Chand and sons , New Delhi. (2002).

इकाई 6 व्यूहनीतिक प्रकिया

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
6.2 व्यूहनीतिक प्रबन्ध प्रक्रिया
6.3 व्यूहनीति का निर्माण
6.3.1 व्यूहनीतिक संकल्प का निर्माण
6.3.2 वातावरणीय विश्लेषण
6.3.3 संगठनात्मक विश्लेषण
6.3.4 व्यूहनीतिक विकल्पों की पहचान
6.3.5 व्यूहनीतिक विकल्पों का चयन
6.4 व्यूहनीतिक क्रियान्वयन
6.5 व्यूहनीतिक मूल्यांकन
6.6 सारांश
6.7 शब्दावली
6.8 बोध प्रश्न
6.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
6.10 स्वपरख प्रश्न
6.11 सन्दर्भ पुस्तकें

6.12 संदर्भ ग्रंथ

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः

- व्यूहनीतिक प्रक्रिया के विभिन्न चरणों को जान सकेंगे।
- व्यूहनीति के निर्माण के विभिन्न को चरणों को परिभाषित कर सकेंगे।
- व्यूहनीतिक क्रियान्वयन को समझ सकेंगे।
- व्यूहनीतिक मूल्यांकन का विवेचन कर सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

व्यूहनीतिक प्रबन्ध एक क्रियाशीलता उन्मुख अवधारणा है, जिससे कार्यवाही पर जोर दिया जाता है। किसी भी कार्यवाही के दो महत्वपूर्ण फलक होते हैं अर्थात 'क्या' किया जाना है और 'कैसे' किया जाना है? प्रथम प्रश्न का सम्बन्ध व्यूहनीति अथवा व्यूहनीतियों के निर्माण से है, जो किसी भी संगठन के व्यूहनीतिक संकल्प पर निर्भर करती है। संगठन की संदृष्टि, ध्येय एवं उद्देश्यों के दृष्टिगत ही व्यूहनीतियॉ निर्मित की जाती हैं, और इस पर वातावरणीय कारकों का निरन्तर प्रभाव पड़ता है। इस कारण से व्यूहनीतियों का निर्माण एक सत्त एवं गतिशील प्रक्रिया है, जिसमें अनेकों चरण सन्निहित होते हैं और वह परस्पर निर्भर होने के कारण निरन्तर परिमार्जित भी किए जाते हैं। द्वितीय प्रश्न का सम्बन्ध व्यूहनीतियों के क्रियान्वयन से है, जिसके अन्तर्गत व्यूहनीति को कार्य में परिणित करने की प्रक्रिया में निहित विभिन्न चरणों का समावेश होता है। एक सतत प्रक्रिया होने के कारण इन दोनों ही फलकों में निहित

कार्य पद्धतियों में प्रभावशाली कार्य परिणामों को प्राप्त करने की दृष्टि से निरन्तर परिवर्द्धन एवं परिमार्जन अवश्यंभावी होता है। इस कार्य को व्यूहनीतियों का मूल्यांकन एवं नियंत्रण कहा जाता है। इस अध्याय में व्यूहनीति के निर्माण, क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन में निहित विभिन्न चरणों एवं क्षेत्रों का संक्षिप्त विहंगमन किया जाएगा।

6.2 व्यूहनीतिक प्रबन्ध प्रक्रिया

व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया से आश्य अनेक प्रबन्धकीय निर्णयों एवं क्रियाओं के सम्मुचय से है, जिनसे संगठन एवं उसके भावी प्रदर्शन की दीर्घकालीन दिशा निर्धारित होती है। व्यूहनीतिक प्रबन्ध को एक प्रक्रिया माना जाता है, जिसमें अनेक तत्व एवं चरण सम्मिलित होते है। इन चरणों एवं तत्वों को समय के अनुसार निर्धारित एक निश्चित अनुक्रम में परिचालित किया जाता है। किन्तु यह एक गतिशील प्रक्रिया है। क्योंकि व्यूहनीतिक प्रबन्ध विनिर्माणी अथवा तकनीकी प्रबन्ध की यंत्रचालित प्रक्रिया के विपरीत, एक निरंतर परिवर्तनशील प्रक्रिया है, जिसके विभिन्न चरण परस्पर सम्बन्धित, परस्पर आश्रित एवं परस्पर मिश्रित होते है, अतः प्रक्रिया के अन्तर्निहित तत्वों तथा इनके अनुक्रम के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद पाया जाता है। कई चरणों को प्रायः एक साथ सम्पादित करना होता है। उदाहरणार्थ एक संगठन की संदृष्टि एवं ध्येय तथा उद्देश्यों को संगठन के प्रासंगिक वाह्य वातावरण की जॉच के साथ–साथ परिवर्द्धित एवं परिमार्जित किया जाना होता है। प्रत्येक चरण के फीड बैक से इसमें तथा अन्य चरणों में परिमार्जन व्यूहनीतिक प्रबन्ध की सफलता की दृष्टि से आवश्यक हो जाता है। वातावरणीय चुनौतियों के दृष्टिगत न केवल ध्येय वाक्य एवं उद्देश्यों मे परिवर्तन अवश्यंभावी हो जाता है। अतः व्यूहनीतिक विकल्पों की पहचान एं उनका चुनाव भी प्रभावित हो जाता है। अतः व्यूहनीतिक प्रबन्ध प्रक्रिया एक जटिल प्रक्रिया हो जाती है। व्यूहनीतिक प्रक्रिया के अनुक्रम को व्यापक रूप में निम्नांकित तीन भागों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः

व्यूहनीतिक प्रकिया –

1. व्यूहनीति का निर्माण
2. व्यूहनीतिक कियान्वयन
3. व्यूहनीतिक मूल्यांकन

(1) <u>व्यूहनीतिक निर्माणः</u>

व्यूहनीतिक निर्माण के अन्तर्गत संगठन के व्यूहनीतिक संकल्प, जिसमें संगठनात्मक संदृष्टि, ध्येय, उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का निर्धारण सम्मिलित है, का निर्धारण, संगठन के वाहय एवं आन्तरिक वातावरण का विश्लेषण तथा इसके अनुसार व्यूहनीतिक विकल्पों की पहचान एवं उनका चयन इत्यादि तत्व निहित होते हैं। व्यूहनीति निर्माण के समस्त तत्व निरंतर गतिशील एवं परस्पर आश्रित होते हैं, जिसके फलस्वरूप निरंतर फीड बैक की प्रणाली से व्यूहनीतियों के निर्माण के अर्न्तनिहित तत्वों को परिमार्जित, पुर्ननिर्मित एवं पुर्नपरिभाषित करने की आवश्यकता होती है, तथा इनके अनुक्रम में वांछित परिवर्तन आवश्यक होते हैं।

(2) **<u>व्यूहनीतिक क्रियान्वयनः</u>**

व्यूहनीतियों के निर्माण के पश्चात उन्हें कार्य रूप में परिणित करना दूसरा महत्वपूर्ण चरण है। व्यूहनीतिक निर्माण में जहॉ संगठनात्मक संदृष्टि एवं ध्येय आवश्यक है, वहीं व्यूहनीतिक क्रियान्वयन के अन्तर्गत संसाधनों का आबंटन कार्य पद्धतियों एवं संरचनाओं का निर्धारण, संरचनात्मक, क्रियात्मक एवं व्यवहारवादी क्रियान्वयन सम्मिलित होता है। व्यूहनीतिक क्रियान्वयन के अन्तर्गत क्रियात्मक एवं परिचालनात्मक बाधाओं को दूर किया जाता है, तथा इस प्रक्रिया के अर्न्तनिहित तत्वों एवं अनुक्रम मे फीड बैक की प्रणाली के आधार पर लगातार परिमार्जन एवं पुनर्निर्धारण किया जाता है।

(3) **व्यूहनीतिक मूल्यांकन एवं नियंत्रणः**

यह व्यूहनीतिक प्रबन्ध प्रक्रिया का अन्तिम चरण है, जिसके अन्तर्गत संगठनात्मक उद्‌देश्यों की प्राप्ति तथा उनके सापेक्ष प्रभावपूर्ण परिणाम प्राप्त करने के लिए व्यूहनीतियों के क्रियान्वयन का सतत पर्यवेक्षण एवं अनुश्रवण किया जाता है तथा तद्‌नुसार सुधारात्मक कदम उठाए जाते हैं। व्यूहनीतियों का मूल्यांकन एवं नियंत्रण एक सतत प्रक्रिया है और इस प्रक्रिया मे प्राप्त फीड बैक के अनुसार पूर्व के चरणों में निहित तत्वों जिनमें व्यूहनीतिक निर्माण प्रक्रिया मे सन्निहित ध्येय वाक्य एवं उद्‌देश्य भी सम्मिलित है। का परिवर्द्धन एवं परिमार्जन किया जाता है। व्यूहनीतिक मूल्यांकन एवं नियंत्रण वांछित परिणामों तथा वास्तविक प्रत्याशित परिणामों के मध्य के अन्तराल को समाप्त करने हेतु व्यूहनीतिक कार्यवाहियों में सुधारात्मक उपाय करने से सम्बन्धित है।

एकल एस0बी0यू0 की दशा में व्यूहनीतिक प्रकिया

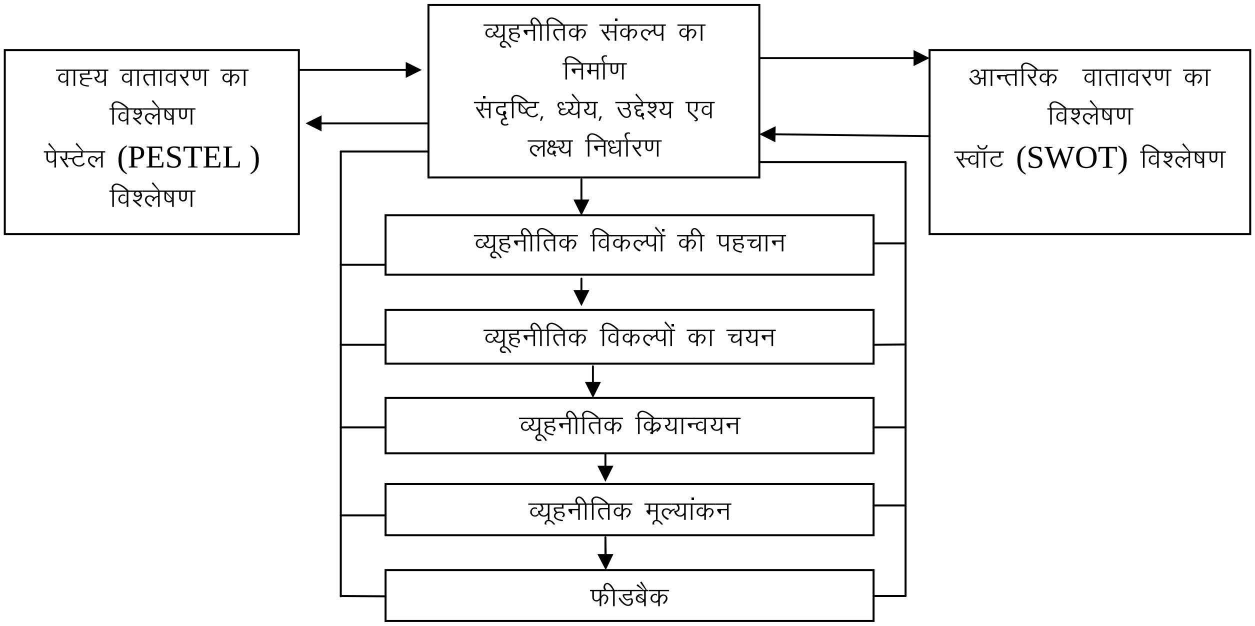

बहुल एस0बी0यू0 की दशा में व्यूहनीतिक प्रकि प्रक्रिया

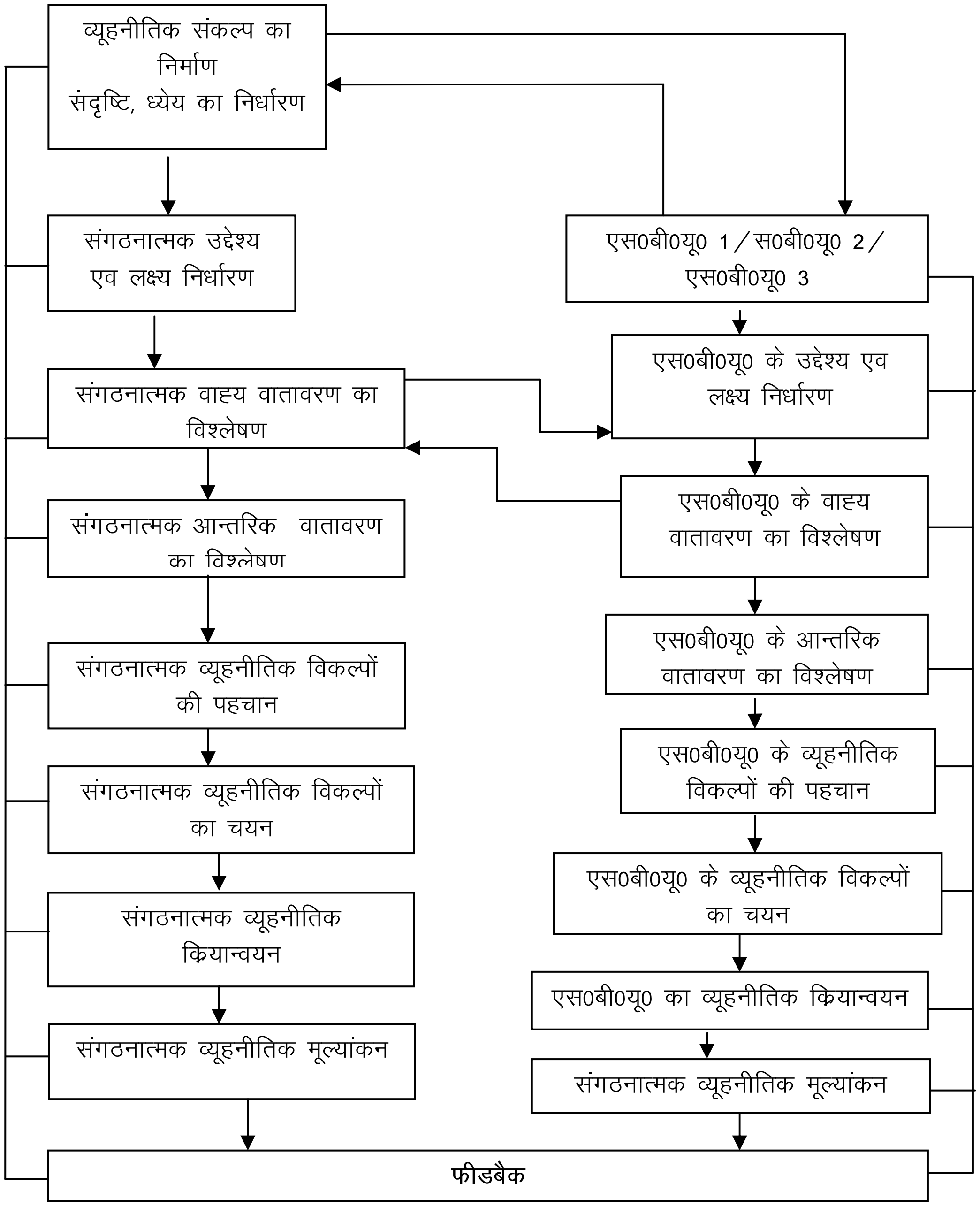

6.3 व्यूहनीति का निर्माण

व्यूहनीतिक निर्माण को निम्नांकित 5 उप–चरणों में विभाजित कर समझाया जा सकता है:

1. व्यूहनीतिक संकल्प का निर्माण
2. वातावरणीय विश्लेषण

3. संगठनात्मक विश्लेषण
4. व्यूहनीतिक विकल्पों की पहचान
5. व्यूहनीतिक विकल्पों का चयन

6.3.1 व्यूहनीतिक संकल्प का निर्माण:

व्यूहनीतिक प्रबन्ध व्यूहनीतिक संकल्प के निर्माण से प्रारम्भ होता है, जिससे यह परिलक्षित होता है कि संगठन उद्योग में क्यों आया है और वह क्या हासिल करना चाहता है ? व्यूहनीतिक संकल्प यह स्पष्ट करता है कि संगठन की विद्यमानता का क्या औचित्य है और संगठन दीर्घकाल में क्या उपलब्धि प्राप्त करना चाहता है। किसी भी संगठन के व्यूहनीतिक प्रबन्ध में व्यूहनीतिक संकल्प की पदसोपान संरचना मूलाधार है। व्यूहनीतिक संकल्प की पदसोपानिक श्रंखला में (1) संदृष्टि (2) ध्येय (3) उद्देश्य एवं (4) लक्ष्य निर्धारण सम्मिलित होते हैं।

(1) **संदृष्टि** : संदृष्टि वाक्य संगठन के दर्शन, मूल्यों एवं दीर्धकालीन उद्देश्य या मन्तव्य को अभिव्यक्त करता है जिससे यह स्पष्ट होता है कि संगठन की भावी आकांक्षाऐं एवं उसका दीर्धकालीन गन्तव्य क्या है। उदाहरणार्थ संदृष्टि – संगठन क्या है? एवं क्या होना चाहता है ?और वह कहां जाना चाहता है ? के समाधान के लिए दीर्धकालीन नीति है । संदृष्टि मौलिक, सृजनात्मक, प्रेरक, तथा एकीकृत एवं सहभागी उद्देश्य की ओर ले जाने वाली होती है। किन्तु यह असतत परिवर्तनों अर्थात वर्तमान से काफी आगे की क्रान्तिकारी सोच एवं परिवर्तनों का प्रतिनिधित्व करती है। इस कारण यह अनोखी, काल्पनिक एवं जोखिमपूर्ण होती है।

(2) **ध्येयः** संदृष्टि एवं ध्येय को पायः समानार्थी रूप में प्रयोग किया जाता है, किन्तु इन दोनों शब्दों में अन्तर है। संदृष्टि जहां संगठन के दीर्धकालीन उद्देश्य को परिलक्षित करती है , वहीं ध्येय संगठन की वर्तमान क्रियाओं को स्पष्ट करता है। ध्येय यह बताता है कि संदृष्टि को प्राप्त करने के लिए वर्तमान में क्या किया जा रहा है ? ध्येय का संबंध संगठन के द्वारा समाज की विशिष्ट आवश्यकताओं को संतुष्ट करने से होता है। ध्येय वाक्य संगठन के अस्तित्व के औचित्य को स्पष्ट करता है। इस प्रकार ध्येय की अवधारणा संदृष्टि की अपेक्षा अधिक स्पष्ट एवं कम काल्पनिक है। यह उल्लेखनीय है कि ध्येय वाक्य स्पष्ट, वास्तविक, भिन्न एवं विशिष्ट एवं अभिप्रेरणात्मक होता है। ध्येय की अवधारणा संदृष्टि की अपेक्षा अधिक स्पष्ट एवं कम काल्पनिक है। पीटर ड्रकर के द्वारा उठाये गये मूल प्रश्न – हमारा व्यवसाय क्या है ? यह क्या होगा ? और इसे क्या होना चाहिए ? ध्येय वाक्य को निरूपित करने एवं इसे समझने में सहायक हैं।

व्यवसाय को परिभाषित करना –

संगठन अपने व्यवसाय के औचित्य को स्पष्ट करने के लिए व्यवसाय को परिभाषित करता है। यह व्यवसाय के क्षेत्र, तथा उन क्रियाओं, जिनमें वह मुख्यत संलग्न होना चाहता है, को अभिव्यक्त करता है। व्यवसाय को प्रायः तीन आयामों – उत्पाद श्रंखला, उपभोक्ता समूह एवं वैकल्पिक तकनीकी में परिभाषित किया जाता है। उत्पाद श्रंखला के अर्न्तगत उपभोक्ता कार्य अर्थात उपभोक्ताओं को प्रदान की जाने वाली वस्तुऐं एवं सेवाऐं आतीं हैं। उपभोक्ता समूह उनकी विभिन्न विशेषताओं के

आधार पर सेवित बाजार के भाग एवं उप विभाग हैं। वैकल्पिक तकनीकी में विद्यमान तकनीकी एवं नवाचार आते हैं। व्यवसाय को इस प्रकार परिभाषित करने से उसके क्षेत्र में स्पष्टता आती है। व्यूहनीतिक दृष्टि सें कोई भी संगठन संबंधित उद्योग की समस्त क्रियाओं में संलग्न नहीं होता है। बल्कि उसे कुछ चुनी हुई क्रियाओं पर संकेन्द्रण करके उनमें स्वयं को अपने प्रतिस्पर्धियों से भिन्न रूप में स्थापित करना होता है। संगठन उत्पाद के प्रकार, गुणवत्ता, कीमत, उपभोंक्ता समूह इत्यादि आधारों पर स्वयं को अपने प्रतिस्पर्धियों से भिन्न रूप में स्थापित कर सकता है। इस प्रकार, संगठन को चयनित क्रियाओं में संकेन्द्रण करने एवं विशिष्टीकृत रूप में स्थापित होने, दोनों की आवश्यकता होती है।

(3) **उद्देश्य** : संदृष्टि एवं ध्येय की प्राप्ति इन्हें उद्देश्यों में अनुवादित करने से ही सम्भव है। अतः संदृष्टि एवं ध्येय का निर्धारण होने के बाद उद्देश्यों की पदसोपान श्रंखला निर्मित की जाती है। उद्देश्य संगठन के वांछित परिणामों को प्राप्त करने के लिए खुले सिरे वाले साधन हैं जिन्हें लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु विशिष्ट रूप में उल्लिखित किया जाता है। उद्देश्यों को लक्ष्यों, गतिविधियों , उपलब्धियों आदि के रूप में होतें हैं। यह सामान्यतया गुणात्मक प्रकृति के होतें हैं और इन्हें लाभदायकता, उत्पादकता कार्यक्षमता आदि के रूप में भी उल्लिखित किया जा सकता है।

(4) **लक्ष्यः** उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्रायः एक दूसरे के स्थान पर एवं समानार्थी की तरह भी प्रयुक्त किया जाता है। किन्तु इनमें सीमित अन्तर भी है। उद्देश्यों के विपरीत लक्ष्य बन्द सिरे वाले साधन हैं जिन्हें मात्रात्मक रूप में उल्लिखित किया जाता है। उद्देश्यों के विपरीत यह अधिक विशिष्ट एवं स्पष्ट होते हैं। उदाहरणार्थ वित्तीय एवं भौतिक परिणमों को संख्या, प्रतिशत एवं अनुपातों आदि के रूप में प्रदर्शित किया जाता है। अतः यह मापनीय एवं तुलनात्मक होतें हैं और परिणाम प्रदर्शन ज्ञात करने तथा नियन्त्रण में सहायक होते हैं।

उद्देश्य एवं लक्ष्य परिणाम प्रदर्शन के प्रमाप होने के कारण व्यूहनीतिक प्रबन्ध एवं निर्णयन तथा मूल्यांकन के आधार हैं। यह संगठन को उसकी संदृष्टि एवं ध्येय की प्राप्ति में सहायक होते हैं।

6.3.2 वातावरणीय विश्लेषण

व्यूहनीतिक प्रबन्ध संगठन के वाह्य वातावरण से उसका संबंध स्थपित करता है। वाह्य वातावरण एक जटिल, गतिशील, बहुआयामी एवं दूरगामी प्रभावों वाली परिघटना है जिसमें वह समस्त पदार्थ, प्रभाव, परिस्थितियां आदि सम्मिलित होतीं हैं जो फर्म के वातावरण का भाग होती हैं। फर्म के विद्यमान वातावरण को दो भागों – वाह्य एवं आन्तरिक में विभाजित किया जा सकता है। वाह्य वातावरण में संगठन के समक्ष उपलब्ध अवसर एवं चुनौतियां आती हैं जबकि आन्तरिक वातावरण में संगठन की शक्तियां एवं सीमाऐं आती हैं। किन्तु संगठन का संबंध मुख्यतः उसके प्रासंगिक वातावरण तक ही सीमित होता है, जो व्यूहनीतिक दृष्टि से संगठन के सर्वाधिक पास, संगठन से संबंधित एवं प्रासंगिक होता है। प्रासंगिक वातावरण विभिन्न सैक्टरों एवं उप–सैक्टरों, संघटकों से निर्मित होता है। वाह्य वातावरण हेतु पेस्टेल (PESTEL) और आन्तरिक वातावरण हेतु स्वॉट(SWOT) विश्लेषण किया जाता है।

पेस्टेल (PESTEL) संरचना सामान्य वातावरण को अनेक भागों में विभाजित कर विश्लेषण करने का एक वर्गीकरण है जो फर्म को वाह्य वातावरण से संबंध स्थापित कर उसकी जटिलताओं को समझने , फर्म पर उनके प्रभावों के अनुरूप अपनी व्यूहनीतियों में परिवर्तन करने में सहायता करतें हैं। पेस्टेल (PESTEL) संरचना के विभिन्न संघटक निम्नवत हैं :

पी– राजनीतिक वातावरण – राजनीतिक वातावरण के अर्न्तगत सरकार के द्वारा नियमन एवं विधान आते हैं जो राजनीतिक शक्तियों से प्रभावित होंते हैं। यह नियमन एवं विधान सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों को परिलक्षित करतें हैं। जैसे – स्त्री एवं बाल श्रम पर प्रतिबन्ध, ग्राहकों एवं निवेशकों, ऋणदाताओं की सुरक्षा, पर्यावरण की सुरक्षा, व्यवसाय को महत्वपूर्ण रूप में प्रभावित करते हैं। इनसे व्यावसायिक अवसर तो उत्पन्न ही होते हैं एवं चुनौतियां भी खड़ी होती हैं। राज्य पर व्यवसाय की निर्भरता से व्यवसाय की व्यूहनीतियां भी स्वाभविक तौर पर प्रभावित होती हैं।

ई– आर्थिक वातावरण – आर्थिक वातावरण के अन्तर्गत मुख्यतः बाजार का समष्टि आर्थिक परिदृश्य आता है, जिसमें जी0डी0पी0, जी0एन0पी0 की प्रवृत्तियां, व्यय योग्य आय उपभोग, व्यय, एवं बचत प्रवृत्तियां, ब्याज एवं स्फीति दरें, सरकार की मौद्रिक, राजकोषीय एवं कर नीतियां आदि आती हैं। व्यावसायिक संगठनों को इनमें होने वाले सतत परिवर्तनों पर लगातार नजर रखनी होती है और उसके अनुसार अपनी व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रकिया को भी समायोजित करना होता है।

एस–सामाजिक वातावरण – सामाजिक वातावरण सामाजिक विश्वासों, मूल्यों, अभिवृत्तियों, जीवन पद्धतियों एवं परम्पराओं आदि से निर्मित होता है। जनांकिकीय एवं सांस्कृतिक विशेषताओं, धर्म एवं सम्प्रदायों, शिक्षा आदि में परिवर्तनों से सामाजिक वातावरण भी प्रभावित होता है और व्यावसायिक संगठनों हेतु नवीन अवसर एवं चुनौतियां भी उत्पन्न होंती हैं। इसका प्रभाव व्यूहनीतिक प्रबन्ध पर भी होता है।

टी– तकनीकी वातावरण – तकनीकी वातावरण में मुख्यतः उत्पादन प्रकिया आती है किन्तु तकनीकी परिवर्तनों का संबंध प्रबन्ध के समस्त कियात्मक क्षेत्रों से भी होता है। उदाहरण के लिए सूचना एवं संचार तकनीकी ने विपणन प्रक्रिया में आमूल चूल परिवर्तन कर दिए हैं। व्यूहनीतिक प्रबन्ध को विनाशकारी तकनीकी परिवर्तनों की लगातार जांच करनी हीती है और उसके अनुसार नवाचारों तथा शोध एवं विकास के माध्यम से नयी तकनीकी को अपनाने के संबंध में निर्णय लेने पड़तें हैं, जिससे बाजार में संगठन के द्वारा प्रतियोगिता करने की क्षमता एवं संकल्प का निश्चय होता है।

ई– पारिस्थितिकीय वातावरण –भौगौलिक पर्यावरण में हो रहे परिवर्तनों – वैश्विक तापमान में वृद्दि, जलवायु परिवर्तनों, हानिकारक गैसों के रिसाव, जैव विविधता का क्षरण आदि की जांच कर पारिस्थितिकीय संरक्षण में योगदान करना प्रबन्ध के सामाजिक उत्तरदायित्व का महत्वपूर्ण भाग है। वैश्वीकरण के फलस्वरूप डब्ल्यू0टी0ओ0 एवं अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं एवं समझौतों के द्वारा व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व में अभिवृद्धि हुई है। व्यूहनीतिक प्रबन्ध को इस बदलते नियामक वातावरण एवं सामाजिक उत्तरदायित्व के दृष्टिगत अपनी व्यूहनीतियों को निर्धारित करना होता है।

एल– नियामक वातावरण –सरकार आर्थिक क्रियाओं को नियन्त्रित करने के लिए नियामक विधानों का निर्माण करती है। व्यवसाय एवं उद्योंग इस नियामक वातावरण के अन्तर्गत संचालित होते हैं और उन्हें सरकार द्वारा निर्मित नीतियों, कार्यविधियों एवं नियमों का अनुपालन करना होता है। नियामक वातावरण में संवैधानिक व्यवस्थाऐं, आर्थिक, व्यावसायिक, औद्योगिक, श्रम, आयात निर्यात, कर, प्रतियोगिता कानून, उपभोक्ता संरक्षण, पर्यावरण, बौद्धिक सम्पदा आदि से संबंधित अधिनियम, अध्यादेश न्यायपालिका के निर्णय आदि आते हैं। नियामक वातावरण एवं इसमें होने वाले परिवर्तनों का व्यूहनीतियों को निर्धारित करने पर महत्वपूर्ण प्रभाव होता है ।

6.3.3 संगठनात्मक विश्लेषण

संगठनात्मक विश्लेषण के द्वारा संगठन के आन्तरिक वातावरण के तत्वों की पहचान कर उन्हें वाह्य वातावरण के तत्वों से समायोजित किया जाता है।

स्वॉट (SWOT) विश्लेषण : यह संगठन से संबंधित शक्तियों, कमजोरियों, का संबंध वातावरण में उपलब्ध अवसरों एवं चुनौतियों से स्थापित करने के लिए एक व्यवस्थित संरचना प्रदान करता है। स्वॉट (SWOT) विश्लेषण संगठनात्मक सामर्थ्य प्रोफाइल (ओ0सी0पी0) तथा वातावरणीय चुनौती–अवसर प्रोफाइल (ई0टी0ओ0पी0) का संयुक्त एवं एकीकृत रूप है, जिनमें प्रथम आन्तरिक एवं द्वितीय वाह्य कारकों को ध्यान में रखता है। स्वॉट (SWOT) विश्लेषण का प्रयोजन वातावरण में उपलब्ध अवसरों एवं चुनौतियों का सामना करने के लिए एक संरचना प्रदान करना है जिसके फलस्वरूप निरन्तर गतिशील परिस्थितियों में सटीक व्यूहनीतियों का चुनाव किया जा सके। स्वॉट संरचना के विभिन्न संघटक निम्नवत हैं :

एस0– शक्तियां : संगठन की सामर्थ्य या सक्षमताऐं हैं जो उसे प्रतियोगितात्मक लाभ की स्थिति प्रदान करती हैं। व्यापक वितरण एवं ग्राहक सेवा नैटवर्क, उच्च मनोबल वाले मानव संसाधन , सुदृढ़ शोध एवं विकास एवं नवाचार का ढांचा आदि संगठनात्मक शक्तियों के उदाहरण हैं।

डब्ल्यू0–कमजोरियां या सीमाऐं : संगठन के समक्ष वह बाधाऐं हैं जो प्रतियोगितात्मक हानियां प्रदान करने वाली दशाऐं बनातीं हैं। एकल उत्पाद पर निर्भरता, कमजोर तकनीकी एवं संगठनात्मक संस्कृति आदि कमजोरियां या सीमाऐं हैं।

ओ0– अवसर : संगठन के वाह्य वातावरण में वह अनुकूल स्थितियां हैं जो संगठन को अपनी स्थिति को मजबूत करने में सक्षम बनाती है। फर्म की वस्तु या सेवा की बढ़ती मांग संगठन के लिए अवसर उपलब्ध कराते हैं।

टी0– चुनौतियां : इसके विपरीत चुनौतियां प्रतिकूल स्थितियां हैं जो संगठन के समक्ष बाधाऐं हैं जो उसके लिए हानिकारक या जोखिमपूर्ण हैं। नयी फर्मों के प्रवेश से संभावित चुनौतियां उत्पन्न हो सकती हैं।

6.3.4 व्यूहनीतिक विकल्पों की पहचान

वातावरणीय विश्लेषण एवं संगठनात्मक विश्लेषण के पश्चात उन संभावित व्यूहनीतिक विकल्पों की पहचान की जा सकती है, जिन्हें संगठन अपनाने हेतु विचार कर सकता है। व्यूहनीतिक विकल्प कम्पनी, व्यवसाय एव क्रियात्मक तीन स्तरों पर उपलब्ध होते हैं।

कम्पनी स्तर की व्यूहनीतियां : कम्पनी स्तर की व्यूहनीतियां संगठन को वांछित दिशा प्रदान करने तथा कार्यवाहियों का भावी परिपथ निर्धारित करने के लिए निर्मित की जातीं हैं। इनका संबंध संगठन के विभिन्न व्यवसायों क बीच संसाधनों का आबंटन करने, संसाधनों को एक व्यवसाय से हटाकर दूसरे पर लगाने, व्यवसायों का एक अनुकूलतम संयोग प्राप्त करने आदि से होता है। विलियम ग्लूक के द्वारा विशाल (ग्रैंड) व्यूहनीतियों के अन्तर्गत चार व्यूहनीतिक विकल्प –(अ) स्थायित्व (ब) विस्तार (स) संकुचन (द) मिश्रित व्यूहनीतियां प्रदान किए गए हैं। इन्हें निम्नवत समझाया गया है :

(अ) स्थायित्व व्यूहनीतियां : इस व्यूहनीति में कम्पनी अपनी वर्तमान क्रियाओं पर ही बनी रहती है और उसके उत्पाद, ग्राहक समूह एवं निर्माण तकनीक पूर्ववत रहते है। इस व्यूहनीतिक विकल्प में आधुनिकीकरण , उत्पाद एवं ग्राहक सेवाओं में सुधार आदि को अपनाया जा सकता है।

(ब) विस्तार व्यूहनीतियां : स्थायित्व का अपेक्षा विस्तार में व्यवसाय के तीनों आयामों – उत्पाद, ग्राहक समूह एवं तकनीकी तीनों में नयी क्रियाऐं, गतिविधियां अथवा परियोजनाऐं हाथ में ली जाती हैं।

विस्तार व्यूहनीतियां निम्नवत हो सकतीं हैं–

(1) संकेन्द्रण – इस साधारण व्यूहनीति में संगठन के संसाधनों को किसी एक या अधिक व्यवसायों में गहनीकृत या सघनीकृत करने के लिए इस प्रकार उपलब्ध कराया जाता है, जिससे ग्राहक आवश्यकताओं, क्रियाओं या वैकल्पिक तकनीकी विकल्पों आदि का विस्तार हो जाता है और संसाधनों का कार्यक्षमतापूर्वक एवं बेहतर उपयोग होता है।

(2) समेकन – संगठन की वर्तमान क्रियाओं में समानान्तर या रेखीय रूप में नयी क्रियाओं को अपनाना समेकन कहलाता है, जिससे ग्राहक कार्यों या ग्राहक समूहों का विद्यमान समुच्चय परिवर्तित हो जाता है। फलस्वरूप व्यवसाय की परिभाषा भी विस्तृत हो जाती है। समेकन अग्रेत्तर या पृष्ठेत्तर दोनों ओर को हो सकता है। इससे ग्राहक सेवाओं का विस्तार होता है और नए ग्राहक जुड़तें हैं, किन्तु यह जोखिम में भी वृद्धि करता है।

(3) विविधीकरण – विविधीकरण व्यूहनीतियां विस्तार की महत्वपूर्ण विधियों में से एक है। विविधीकरण के अन्तर्गत विद्यमान व्यवसाय की परिभाषा में परिवर्तन करके नए व्यवसायों में प्रवेश किया जाता है, जिससे जोखिम अनेक व्यवसायों में फैल जाता है। वर्तमान व्यवसाय में संवृद्धि की वातावरणीय बाधाओं की स्थिति में यह कारगर है किन्तु इन्हें विद्यमान शक्तियों के बल पर ही हाथ में लिया जाता है। इससे कमजोरियां कम करने में भी सहायता मिलती है।

(4) वैश्विक व्यूहनीतियां –संगठन के व्यवसाय एवं बाजारों को वैश्विक स्तर पर ले जाने, लागतों में कमी करने एवं समान उत्पाद से संबंधित होती हैं।

(5) सहयोगात्मक व्यूहनीतियां – वैश्विक स्तर पर सहयोग, संयुक्त उपक्रमों की स्थापना विलयन एवं अधिग्रहण आदि के माध्यम से की जाती हैं।

(स) **संकुचन व्यूहनीतियां** : विद्यमान क्रियाओं, व्यवसायों में से कुछ को छोड़ने या त्यागने से संबंधित होती हैं।

(द) **मिश्रित व्यूहनीतिया**ं : व्यवहार में संगठन एक ही व्यूहनीति का प्रयोग नहीं करते बल्कि उनके द्वारा उपरोंक्त वर्णित व्यूहनीतियों में एक या अधिक का मिश्रित प्रयोग किया जाता है।

इसके अतिरिक्त निम्नांकित व्यूहनीतियों को भी प्रायः उपयोग किया जाता हैः

(1) **आधुनिकीकरण** –उत्पादन लागत को कम करने एवं उत्पादन में कार्यक्षमता लाने के लिए तकनीकी को एक व्यूहनीतिक उपकरण की तरह प्रयोग करना आधुनिकीकरण है, जिसका प्रयोजन प्रतियोगितात्मक लाभ प्राप्त करना होता है।

(2) **एकीकरण** –विलयन की इस विधि में दो या अधिक फर्में नयी फर्म का निर्माण वृहत आकार, समेकन आदि के प्रतियोगितात्मक लाभ प्राप्त करने हेतु करती हैं।

(3) **संविलयन** – विलयन की इस विधि में प्रतियोगितात्मक लाभ प्राप्त करने हेतु एक फर्म दो या अधिक फर्मों को स्वयं में विलयित कर देती है।

(4) **अविनियोग**– सम्पूर्ण इकाई या उसके एक भाग को विक्रय करना अविनियोग कहलाता है। यह व्यूहनीतिक पुर्नगठन की एक विधि है।

(5) **कायापलट** –बीमार एवं निरन्तर हानि पर चल रही फर्मों को पुनर्जीवित करने के उपाय करना टर्नएराउण्ड या कायापलट कहलाता है।

व्यवसाय स्तर की व्यूहनीतियां : कम्पनी व्यवसायों के माध्यम से ही परिचालन करती हैं। अतः संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए व्यवसाय स्तर की व्यूहनीतियां व्यक्तिगत व्यवसाय के स्तर पर संगठन में कम्पनी स्तर की व्यूहनीतियों के नीचे निर्मित की जाती हैं। इनमें माइकल पोर्टर द्वारा प्रतिपादित लागत नेतृत्व , विभिन्नीकरण एवं संकेन्द्रण की व्यूहनीतियां तीन सर्वप्रचलित प्रतियोगितात्मक व्यूहनीतियां हैं जो फर्म को उधोग में अपने प्रतिद्वदियों से बेहतर प्रदर्शन के योग्य बनाती हैं।

1. **लागत नेतृत्व की व्यूहनीति** : लागत नेतृत्व की व्यूहनीति उधोग में अन्य फर्मों की अपेक्षा तुलनात्मक रूप में कम लागत वाली स्थिति प्राप्त करने पर आधारित होती है। फर्म की समूची मूल्य संवर्द्धन श्रंखला में निहित विभिन्न क्रियाओं – विक्रय सेवाओं, विज्ञापन, शोध एवं विकास आदि में लागत को कम करना होता है। फर्म वृहत पैमाने की मितव्ययिताओं , लागत एवं उपरिव्यय न्यूनीकरण , सीमान्त ग्राहको की अवहेलना आदि के द्वारा लागतों को कम करती हैं।

अनुभव वक्र – लागत नेतृत्व की व्यूहनीति की एक महत्वपूर्ण अवधारणा है, जो यह बताती है कि फर्म लागत को कम करने में अपनी उत्पादन प्रक्रियाओं में वर्षों से अर्जित अनुभव का किस प्रकार उपयोग करती है।

2. **विभिन्नीकरण की व्यूहनीतिः** विभिन्नीकरण का आशय कम्पनी के उत्पाद एवं सेवाओं को इस प्रकार प्रस्तुत करना कि वह अन्य फर्मो से भिन्न एवं उद्योग में अनोखी लगें जिन्हें ग्राहक उचित महत्व दे सकें। ऐसा वह तकनीकी, नवाचार, ब्राडिंग, विशेषताओं, ग्राहक एवं डीलर सेवाओं के माध्यम से कर सकती है। लागत नेतृत्व की

भांति यह व्यूहनीति उद्याोग पर ध्यान देती है। विभिन्नीकरण से लाभ मार्जिन बढ़ता है, ग्राहक विश्वसनीयता से उनकी संवेदनशीलता कम होती है और प्रतिद्वन्दियों से सुरक्षा प्राप्त होती है।

3. **संकेन्द्रण की व्यूहनीति :** किसी विशिष्ट ग्राहक समूह, बाजार क्षेत्र या उप क्षेत्र अथवा उत्पाद श्रंखला पर ध्यान केन्द्रित करना संकेन्द्रण की व्यूहनीति है। यह उधोग की अपेक्षा लक्षित बाजार पर ध्यान देती है, जिसमें फर्म स्थनापन्न वस्तुओं एवं अन्य फर्मों से मजबूत स्थिति में होती है। इसमें इन अनुकूलताओं के विलुप्त होने या बाजार के आगे और उपविभाजन का जोखिम भी प्रत्याशित होता है।

6.3.5 व्यूहनीतिक विकल्पों का चयन

व्यूहनीतिक विकल्पों का चयन मूलतः एक निर्णयन प्रक्रिया है जिसमें विभिन्न व्यूहनीतिक विकल्पों की पहचान करके उनका मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यांकन उद्देश्यपरक एवं वस्तुपरक दोनों आधारों पर होता हैं जिसमें प्रथम में मात्रात्मक कारकों एवं द्वितीय में गुणात्मक कारकों – जिन्हें अनुभव एवं व्यक्तिगत मतों के आधार पर ज्ञात किया जा सकता है, को सम्मिलित किया जाता है। अन्ततः, श्रेष्ठ व्यूहनीतिक विकल्पों का चयन किया जाता है। यह प्रक्रिया तीनों स्तरों– कम्पनी, व्यवसाय एवं क्रियात्मक पर सम्पादित की जाती है ।

अ– कम्पनी स्तरीय पोर्टफोलियो विश्लेषण तकनीकें :

1– **बी0सी0जी0 मैट्रिक्स :** मैट्रिक्स बोस्टन कन्सलटैन्सी ग्रुप के द्वारा विकसित इस मैट्रिक्स उत्पादों का आन्तरिक एवं वाह्यकारकों के आधार पर स्थिति निर्धारण किया गया है। इसमें बाजार अंश एवं उद्योग वृद्धि दर के संबंध के आधार पर 04 विकल्प– दुधारू गायें, सितारे, श्वान, प्रश्न चिन्ह दिए गए हैं।

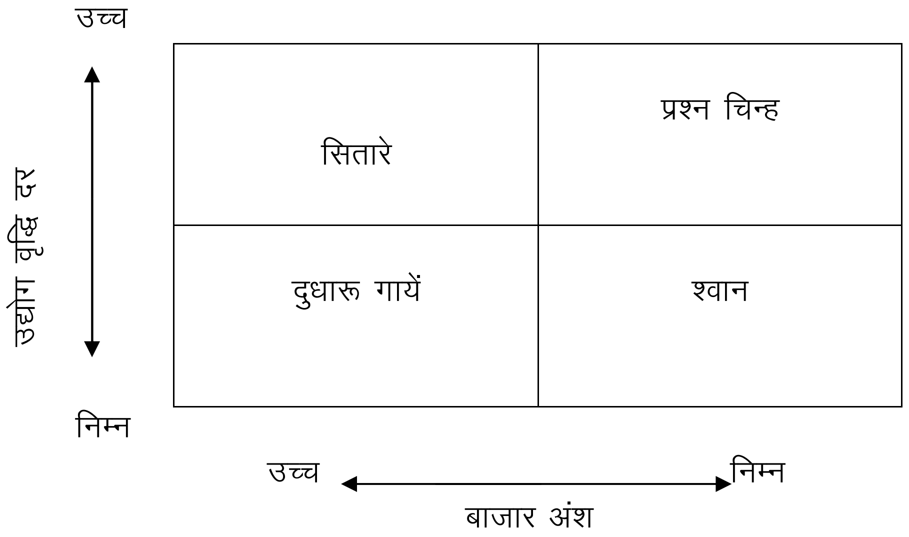

- **दुधारू गाय–** वह व्यावसायिक इकाइयां हैं जिनका बाजार अंश एक धीमी गति से बढ़ते उद्योग में काफी अधिक होता है। फलतः इन पर अपेक्षाकृत कम विनियोग से अधिक प्रत्याय होती है, जिसे संगठन के द्वारा अन्य ईकाइयों में लगाया जा सकता है।

- **सितारे** – वह व्यावसायिक इकाइयां हैं जिनका बाजार अंश एक तीव्र गति से बढ़ते उद्योग में काफी अधिक होता है। इनकी अच्छी संभावनाओं के दृष्टिगत इन पर अधिक विनियोग करना होता है। प्रारम्भ में विनियोग पर प्रत्याय की अपेक्षा विनियोग आवश्यकताऐं अधिक होती हैं, किन्तु उद्योग की संवृद्धि के साथ यह आय के मुख्य स्रोत बन जाते हैं।
- **प्रश्न चिन्ह–** वह व्यावसायिक इकाइयां हैं जिनका बाजार अंश एक तीव्र गति से बढ़ते उद्योग में काफी कम होता है। इनकी अधिक नकदी की मांग के कारण इन पर पर अधिक विनियोग करना पड़ता है , और उद्योग की संवृद्धि के साथ इनकी अच्छी संभावना भी होती है, किन्तु अनिश्चितताओं के चलते इन पर प्रश्न चिन्ह लगाया जाता है।
- **श्वान–** वह व्यावसायिक इकाइयां हैं जिनका बाजार अंश एक परिपक्व एवं प्रतियोगी उद्योग में काफी कम होता है। इनकी प्रत्याय कम एवं विनियोग आवश्यकताऐं भी कम होती हैं, किन्तु इनमें फॅसी पूॅजी ही एक समस्या होती है, जिसे अन्यत्र निवेश किया जा सकता है। अतः देर सवेर इन्हें अविनियोग किया जाता है।

2– जी0ई0 मैट्रिक्स : नौ प्रकोष्ठों की इस मैट्रिक्स में व्यावसायिक सुदृढ़ता के घटकों एवं उद्योग आकर्षण के शब्दों में नौ स्थितियां दी गयी हैं। व्यावसायिक सुदृढ़ता के घटकों में बाजार अंश, लाभ मार्जिन, प्रतियोगिता की योग्यताऐं, बाजार का ज्ञान, प्रतिस्पर्धी स्थिति, प्रबन्धकीय सक्षमता सम्मिलित है। उद्योग आकर्षण में बाजार का आकार, संवृद्धि दर, लाभ, प्रतियोगिता, पैमाने की बचतें, तकनीकी और वातावरणीय कारक सम्मिलित है। नौ प्रकोष्ठों को तीन प्रभागों एवं तीन रंगों में प्रदर्शित किया जाता है, जो विशिष्ट व्यूहनीतियों– 1. निवेश एवं संवृद्धि 2. चयनित निवेश एवं आय का प्रबन्धन तथा 3. संसाधनों का विनियोग/अविनियोग आदि का प्रतिनिधित्व करतें हैं। बी0सी0जी0 मैट्रिक्स के शब्दों में प्रथम वर्ग सितारे, द्वितीय वर्ग दुधारू गाय या सितारे एवं तृतीय वर्ग श्वान के प्रकोष्ठ में माना जा सकता है।

ब–व्यवसाय स्तरीय पोर्टफोलियो विश्लेषण तकनीकें :

व्यवसाय स्तरीय पोर्टफोलियो विश्लेषण तकनीकें निम्नांकित हैं:

अनुभव वक्र विश्लेषण : संगठन किस व्यवसाय में प्रवेश करे और किसे छोड़े ? यह निर्धारित करने में व्यूहनीतिकार का अनुभव एक महत्वपूर्ण कारक होता है। अनुभव वक्र यह बताता है कि फर्म को उत्पादन प्रक्रिया में प्राप्त अनुभव से उत्पादन की इकाई लागत को कम करने की कार्यक्षमता प्राप्त हुई है। अनुभव वक्र सीखने के प्रभावों, पैमाने की मितव्ययिताओं, तकनीकी सुधारों आदि से सृजित होता है।

जीवन चक्र विश्लेषण : प्रबन्ध में जीवन चक्र की अवधारणा यह बताती है कि कोई उत्पाद, बाजार या व्यवसाय अपने जीवन काल में प्रवेश, संवृद्धि, परिपक्वता एवं पतन की चार क्रमिक अवस्थाओं से होकर गुजरता है। व्यूहनीतिक दृष्टि से उत्पाद जीवन चक्र(पी0एल0सी0) की प्रत्येक अवस्था संबंधित परिवर्तनों का विश्लेषण करने हेतु एक उपयोगी संरचना प्रदान करती है।

उद्योग विश्लेषण : एक उद्योग समान या निकट प्रतिस्थानापन्न उत्पादों की निर्माता या सेवा प्रदान करने वाली फर्मों का समूह है। उद्योग विश्लेषण के अर्न्तगत उद्योग में केवल मुख्य प्रतियोगियों को ही ध्यान में नहीं रखा जाता है, बल्कि सभी विद्यमान फर्मों को सम्मिलित किया जाता है। उद्योग में प्रतिस्पर्धा के माइकल पोर्टर द्वारा प्रतिपादित पांच शक्तियों का मॉडल यह तर्क देता है कि उद्योग विश्लेषण उद्योग में विद्यमान प्रतियोगिता एवं लाभदायकता की तीव्रता के निर्धारण में सहायक होता है। जहां नयी फर्में प्रवेश की बाधाओं को दूर करने की व्यूहनीति अपनाती है वहीं विद्यमान फर्मे प्रवेश की बाधाओं को खड़ा करती हैं ।

उद्योग में प्रतिस्पर्धा का माइकल पोर्टर का पांच शक्तियों का मॉडल

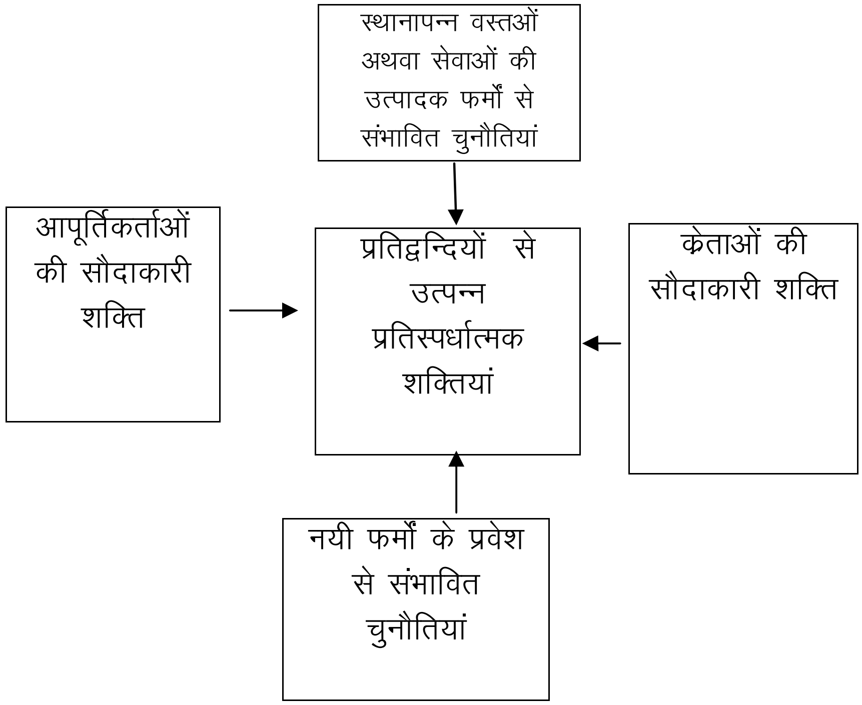

प्रतिस्पर्धियों का विश्लेषण : प्रतिस्पर्धी वाह्य वातावरण का एक महत्वपूर्ण तत्व हैं। इस आधार पर प्रतिस्पर्धियों का विश्लेषण केवल प्रतिस्पर्धियों पर ही ध्यान केन्द्रित करता है। प्रतिस्पर्धियों की जांच इस आधार पर की जाती है कि उनके पास क्या है और क्या नही ? किन्तु यह विश्लेषण स्वॉट की तुलना में इस अर्थ में संकुचित है कि यह केवल एक कारक पर ही ध्यान देता है।

6.4 व्यूहनीतिक क्रियान्वयन

व्यूहनीतिक विकल्पों की पहचान, मूल्यांकन एवं चयन के उपरान्त आगामी चरण व्यूहनीतिक क्रियान्वयन का होता है। इस चरण में व्यूहनीतिक को कार्य रूप में परिणित किया जाता है। यह किसी नए कार्य को प्रारम्भ करने की भांति होता है। इसके अन्तर्गत समस्याओं एवं बाधाओं को दूर किया जाता है। व्यूहनीतिक क्रियान्वयन के विभिन्न चरण निम्नवत हैं:

1. **कार्यविधिक कियान्वयन** : इसके अन्तर्गत कानूनी औपचारिकताओं ,नियामक आवश्यकताओं को चरणबद्ध एवं समयबद्ध रूप में एक पूर्व निर्धारित अनुक्रम में पूर्ण किया जाता है। उदाहरणार्थ लाइसेन्सिंग एवं विनिमय अनिवार्यताऐं, पूॅजी के निर्गमन, विदेशी सहयोग, आयात निर्यात, कर प्रोत्साहन, रियायतों आदि से संबंधित नियमनों को पूर्ण करने की औपचारिकताऐं इसमें सम्मिलित हैं।

2. **संसाधन आबंटन** : संगठन के पास सीमित संसाधनों के दृष्टिगत उनका कार्यक्षमतापूर्ण एवं अनुकूलतम आबंटन व्यूहनीतिक प्रबन्ध का मुख्य निर्णयन कार्य है, क्योकि संगठन के विभिन्न प्रभागों, व्यवसायों एवं इकाइयों में संसाधन आबंटन के संबंध में प्रतियोगिता होती है।

3. **संरचनात्मक कियान्वयन** : इसके अन्तर्गत संगठन की एक उचित संरचना जैसे रेखीय, स्टाफ, कियात्मक, मैट्रिक्स का निर्धारण तथा संगठन के विभिन्न संघटको के मध्य सम्बन्धों की स्थापना तथा उनमें समन्वय सम्मिलित है।

4. **कियात्मक कियान्वयन** : इसके अन्तर्गत संगठन के विभिन्न क्रियात्मक विभागों– उत्पादन, विपणन, वित्त, सेविवर्ग आदि की नीतियों, कार्यक्रमों, योजनाओं एवं कियाओं को संगठनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु कियान्वित करना सम्मिलित है।

5. **व्यवहारात्मक कियान्वयन** : इसके अन्तर्गत संगठन के मानव संसाधनों की कियाओं एवं व्यवहारों को व्यूहनीति के अनुसार दिशा प्रदान करने से है। इसमें संगठनात्मक संस्कृति, जीवन एवं नैतिक मूल्यों की स्थापना, नेतृत्व प्रदान करना आदि आते हैं।

6.5 व्यूहनीतिक मूल्यांकन

मूल्यांकन व्यूहनीतिक प्रबन्ध प्रक्रिया का अन्तिम चरण है । यह एक सतत प्रक्रिया है जिसका प्रयोजन प्रभावी क्रियान्वयन को सुनिश्चित कर वांछित परिणाम प्राप्त करना है । प्रभावी कियान्वयन सतत अनुश्रवण पर निर्भर करता है। इस प्रक्रिया में प्राप्त फीडबैक से सुधारात्मक कार्यवाहियां करनी होती हैं, जिससे संगठन के व्यूहनीतिक संकल्प एवं व्यूहनीतिक निर्माण को परिमार्जित करना आवश्यक हो जाता है। इस प्रकार यह एक निरन्तर एवं गतिशील प्रक्रिया है। व्यूहनीतिक प्रबन्धकों के द्वारा नियंत्रण की प्रक्रिया के चार चरण हैं :

1. परिणाम प्रदर्शन प्रमापों या मानकों का निर्धारण
2. परिणाम प्रदर्शन का मापन
3. विचरणांश विश्लेषण
4. सुधारात्मक कार्यवाहियां करना।

6.6 सारांश

व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया से आशय अनेक प्रबन्धकीय निर्णयों एवं क्रियाओं के सम्मुचय से है, जिनसे संगठन एवं उसके भावी प्रदर्शन की दीर्घकालीन दिशा निर्धारित होती है। व्यूहनीतिक प्रबन्ध को एक प्रक्रिया माना जाता है, जिसमें अनेक तत्व एवं चरण सम्मिलित होते है। इन चरणों एवं तत्वों को समय के अनुसार निर्धारित एक निश्चित अनुक्रम में परिचालित किया जाता है। किन्तु यह एक गतिशील प्रक्रिया

है। व्यूहनीतिक प्रक्रिया के अनुक्रम को व्यापक रूप में निम्नांकित तीन भागों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः 1. व्यूहनीति का निर्माण 2. व्यूहनीतिक क्रियान्वयन एवं 3. व्यूहनीतिक मूल्यांकन । व्यूहनीतिक निर्माण के अन्तर्गत संगठन के व्यूहनीतिक संकल्प, जिसमें संगठनात्मक संदृष्टि, ध्येय, उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का निर्धारण सम्मिलित है, का निर्धारण, संगठन के वाह्य एवं आन्तरिक वातावरण का विश्लेषण तथा इसके अनुसार व्यूहनीतिक विकल्पों की पहचान एवं उनका चयन इत्यादि तत्व निहित होते हैं। व्यूहनीतिक संकल्प की पदसोपानिक श्रंखला में (1) संदृष्टि (2) ध्येय (3) उद्देश्य एवं (4) लक्ष्य निर्धारण सम्मिलित होते हैं। संदृष्टि वाक्य संगठन के दर्शन, मूल्यों एवं दीर्धकालीन उद्देश्य या मन्तव्य को यह अभिव्यक्त करता है जिससे यह स्पष्ट होता है कि संगठन की भावी आकांक्षाऐं एवं उसका दीर्धकालीन गन्तव्य क्या है। ध्येय वाक्य संगठन के अस्तित्व के औचित्य को स्पष्ट करता है और यह बताता है कि संदृष्टि को प्राप्त करने के लिए वर्तमान में क्या किया जा रहा है। ध्येय का संबंध संगठन के द्वारा समाज की विशिष्ट आवश्यकताओं को संतुष्ट करने से होता है। संदृष्टि एवं ध्येय का निर्धारण होने के बाद उद्देश्यों की पदसोपान श्रंखला निर्मित की जाती है। उद्देश्य संगठन के वांछित परिणामों को प्राप्त करने के लिए खुले सिरे वाले साधन हैं जिन्हें लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु विशिष्ट रूप में उल्लिखित किया जाता है। व्यूहनीतिक प्रबन्ध संगठन के वाह्य वातावरण से उसका संबंध स्थपित करता है। वाह्य वातावरण में संगठन के समक्ष उपलब्ध अवसर एवं चुनौतियां आती हैं जबकि आन्तरिक वातावरण में संगठन की शक्तियां एवं सीमाऐं आती हैं। किन्तु संगठन का संबंध मुख्यतः उसके प्रासंगिक वातावरण तक ही सीमित होता है, जो व्यूहनीतिक दृष्टि से संगठन के सर्वाधिक पास, संगठन से संबंधित एवं प्रासंगिक होता है। प्रासंगिक वातावरण विभिन्न सैक्टरों एवं उप–सैक्टरों, संघटकों से निर्मित होता है। वाह्य वातावरण हेतु पेस्टेल (PESTEL) और आन्तरिक वातावरण हेतु स्वॉट (SWOT) विश्लेषण किया जाता है। वातावरणीय विश्लेषण एवं संगठनात्मक विश्लेषण के पश्चात उन संभावित व्यूहनीतिक विकल्पों की पहचान की जा सकती है, जिन्हें संगठन अपनाने हेतु विचार कर सकता है। व्यूहनीतिक विकल्प कम्पनी, व्यवसाय एव ंक्रियात्मक तीन स्तरों पर उपलब्ध होते हैं। विलियम ग्लूक के द्वारा विशाल (ग्रेंड) व्यूहनीतियों के अन्तर्गत चार व्यूहनीतिक विकल्प –(अ) स्थायित्व (ब) विस्तार (स) संकुचन (द) मिश्रित व्यूहनीतियां प्रदान किए गए हैं। इसके अतिरिक्त आधुनिकीकरण, एकीकरण, संविलयन, अविनियोग, कायापलट, व्यूहनीतियों को भी प्रायः उपयोग किया जाता है। व्यवसाय स्तर की व्यूहनीतियों में माइकल पोर्टर द्वारा प्रतिपादित लागत नेतृत्व, विभिन्नीकरण एवं संकेन्द्रण की व्यूहनीतियां तीन सर्वप्रचलित प्रतियोगितात्मक व्यूहनीतियां हैं जो फर्म को उधोग में अपने प्रतिद्वदियों से बेहतर प्रदर्शन के योग्य बनाती हैं। व्यवसाय स्तरीय पोर्टफोलियो विश्लेषण तकनीकों में अनुभव वक्र विश्लेषण, जीवन चक्र विश्लेषण, उद्योग विश्लेषण एवं प्रतिस्पर्धियों का विश्लेषण प्रमुख हैं। व्यूहनीतिक क्रियान्वयन एक सतत प्रक्रिया है जिसका प्रयोजन प्रभावी क्रियान्वयन को सुनिश्चित कर वांछित परिणाम प्राप्त करना है। व्यूहनीतियों के निर्माण के पश्चात उन्हें कार्य रूप में परिणित करना दूसरा महत्वपूर्ण चरण है। व्यूहनीतिक निर्माण में जहॉ संगठनात्मक संदृष्टि एवं ध्येय

आवश्यक है, वहीं व्यूहनीतिक क्रियान्वयन के अन्तर्गत संसाधनों का आबंटन कार्य पद्धतियों एवं संरचनाओं का निर्धारण, संरचनात्मक, क्रियात्मक एवं व्यवहारवादी क्रियान्वयन सम्मिलित होता है। व्यूहनीतिक क्रियान्वयन के अन्तर्गत क्रियात्मक एवं परिचालनात्मक बाधाओं को दूर किया जाता है, तथा इस प्रक्रिया के अर्न्तनिहित तत्वों एवं अनुक्रम मे फीड बैक की प्रणाली के आधार पर लगातार परिमार्जन एवं पुनर्निर्धारण किया जाता है। व्यूहनीतिक कियान्वयन के विभिन्न चरण कार्यविधिक कियान्वयन ,संसाधन आबंटन ,संरचनात्मक कियान्वयन , कियात्मक कियान्वयन एवं व्यवहारात्मक कियान्वयन हैं। मूल्यांकन व्यूहनीतिक प्रबन्ध प्रक्रिया का अन्तिम चरण है । व्यूहनीतिक प्रबन्धकों के द्वारा नियंत्रण की प्रकिया के चार चरण 1. परिणाम प्रदर्शन प्रमापों या मानकों का निर्धारण 2. परिणाम प्रदर्शन का मापन 3. विचरणांश विश्लेषण एवं 4. सुधारात्मक कार्यवाहियां करना है।

6.7 शब्दावली

पेस्टेल (PESTEL) संरचना : सामान्य वातावरण को अनेक भागों में विभाजित कर विश्लेषण करने का एक वर्गीकरण है।

स्वॉट (SWOT) विश्लेषण : संगठन से संबंधित शक्तियों, कमजोरियों, का संबंध वातावरण में उपलब्ध अवसरों एवं चुनौतियों से स्थापित करने के लिए एक व्यवस्थित संरचना प्रदान करता है।

बी0सी0जी0 : मैट्रिक्स बोस्टन कन्सलटैन्सी ग्रुप

ओ0सी0पी0 : संगठनात्मक सामर्थ्य प्रोफाइल

ई0टी0ओ0पी0 : वातावरणीय चुनौती–अवसर प्रोफाइल

पी0एल0सी0 : उत्पाद जीवन चक

6.8 बोध प्रश्न

(अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(1) .... को एक प्रक्रिया माना जाता है।

(2) विभिन्नीकरण से .... बढ़ता है ।

(3) बी0सी0जी0 मैट्रिक्स में बाजार अंश एवं उद्योग वृद्धि दर के संबंध के आधार पर .....विकल्प दिए गए हैं।

(4) ....की व्यूहनीति जोखिम में भी वृद्धि करती है।

(5) उद्योग में प्रतिस्पर्धा का पांच शक्तियों का मॉडल ....के द्वारा प्रतिपादित किया गया है।

(ब) सत्य/असत्य बताइए।

(1) समेकन अग्रेत्तर या पृष्ठेत्तर दोनों ओर को हो सकता है।

(2) प्रतिस्पर्धियों का विश्लेषण स्वॉट की तुलना में संकुचित है।

(3) प्रभावी कियान्वयन सतत अनुश्रवण पर निर्भर करता है।

(4) लागत नेतृत्व की व्यूहनीति कम्पनी स्तर की व्यूहनीतियों से सम्बन्धित होती है।

(5) जी0ई0 मैट्रिक्स में व्यावसायिक सुदृढ़ता के घटकों एवं उद्योग आकर्षण के शब्दों में तीन स्थितियां दी गयी हैं।

6.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

(अ)

(1) व्यूहनीतिक प्रबन्ध (2) लाभ मार्जिन (3) चार (4) समेकन (5) माइकल पोर्टर ।

(ब)

(1) सत्य (2) सत्य (3) सत्य (4) असत्य (5) असत्य।

6.10 स्वपरख प्रश्न

12. व्यूहनीतिक प्रबन्ध की प्रक्रिया के विभिन्न चरणों को विस्तार से समझाइए।
13. व्यूहनीतिक संकल्प क्या है ? संदृष्टि एव ध्येय तथा उद्देश्यों एवं लक्ष्यों के मध्य अन्तर स्पष्ट कीजिए।
14. वातावरणीय विश्लेषण क्या है ? पेस्टेल (PESTEL) संरचना को समझाइए।
15. संगठनात्मक विश्लेषण विश्लेषण क्या है ? स्वॉट (SWOT) विश्लेषण को समझाइए।
16. कम्पनी एवं व्यवसाय स्तर पर उपलब्ध विभिन्न व्यूहनीतिक विकल्पों को समझाइए।
17. उद्योग विश्लेषण क्या है ? उद्योग में प्रतिस्पर्धा के माइकल पोर्टर के पांच शक्तियों के मॉडल को समझाइए।
18. बी0सी0जी0 मैट्रिक्स पर एक टिप्पणी लिखिए।
19. व्यूहनीतिक विकल्पों के चयन के क्या उद्देश्य हैं ? कम्पनी एवं व्यवसाय स्तर पर उपलब्ध व्यूहनीतिक विकल्पों को समझाइए।
20. व्यूहनीतिक क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन को समझाइए।

6.11 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Ghose P.K., Strategic planning and Management, Sultan Chand and sons, New Delhi. (2011).
2. Jauch L.R., Gupta Rajeev and William Glueck, Business policy and Strategic Management, F.Bros. & Company, (2010).
3. Kazmi, Azhar, Business policy and Strategic Management, Tata McGraw Hill Publishing Company Limited (2002)
4. Michael V.P., Business policy and Environment, S.Chand and Company, (2000).
5. Prasad, L.M., Business policy and Strategic Management, Sultan Chand and sons, New Delhi. (2002).

इकाई 7 पर्यावरण परीक्षण

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना
7.2 पर्यावरण की विशेषताएं
7.2.1 आन्तरिक एवं वाह्य पर्यावरण के विविध पक्षकार
7.3 व्यावसायिक पर्यावरण के विभिन्न प्रकार
7.3.1 आन्तरिक पर्यावरण
7.3.2 वाह्य पर्यावरण
7.4 पर्यावरण स्कैनिंग
7.4.1 पर्यावरण स्कैनिंग की आवश्यकता
7.4.2 पर्यावरण स्कैनिंग की तकनीक
7.5 स्वॉट (SWOT) विश्लेषण
7.5.1 स्वॉट मेट्रिक्स
7.5.2 स्वॉट विश्लेषण का महत्व
7.6 सारांश
7.7 शब्दावली
7.8 बोध प्रश्न
7.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
7.10 स्वपरख प्रश्न
7.11 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- व्यावसायिक पर्यावरण का का विवेचन कर सकें।
- आन्तरिक एवं वाह्य पर्यावरण के विविध पक्षकारों का वर्णन कर सकें।
- आन्तरिक एवं वाह्य पर्यावरण का वर्णन कर सकें।
- पर्यावरण स्कैनिंग की आवश्यकता एवं तकनीक को स्पष्ट कर सकें।
- पर्यावरण का SWOT विश्लेषण के महत्व को जान सकें।

7.1 प्रस्तावना

पर्यावरण शब्द परि (चारों ओर) तथा आवरण (पर्दा करना या ढक देना) शब्दों की सन्धि से बना है। इस प्रकार पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ है परिवृत्त अर्थात् सब ओर से ढका होना। व्यावहारिक रुप में हमारे आसपास की सभी वस्तुएं जो हमें प्रभावित करती हैं पर्यावरण की परिधि में सम्मिलित की जाती हैं। के0 डेविस के अनुसार– (किसी संगठन का पर्यावरण) सभी स्थितियों, घटनाओं तथा प्रभावों का समेकन है जो कि इसके चारों ओर विद्यमान हो तथा इसे प्रभावित करती हो। व्यवसाय जगत में भी अनेक ऐसे कारक होते हैं जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रुप से व्यापार को प्रभावित करते हैं। सम्मिलित रुप से इन्हें व्यावसायिक पर्यावरण कहा जाता

है। व्यावसायिक पर्यावरण के अन्तर्गत कच्चे माल के आपूर्तिदाता, तैयार माल के ग्राहक, आयातक, निर्यातक, सेवा क्षेत्र की संस्थाएं, नियामक संस्थाएं, सरकार, न्यायपालिका आदि को सम्मिलित किया जाता है।

7.2 पर्यावरण की विशेषताएं

पर्यावरण अथवा व्यावसायिक पर्यावरण की निम्नलिखित मुख्य विशेषताएं हैं–

1. **पर्यावरण मिश्रित प्रक्रिया है–** पर्यावरण एक सम्मिलित प्रक्रिया है। अनेक तत्व इसमें सहयोगी होते हैं। किसी भी तत्व में होने वाला परिवर्तन सम्पूर्ण पर्यावरण को प्रभावित करता है। यह तय करना कठिन है कि कौन सा तत्व कितना प्रभाव डालता है क्योंकि इनका प्रभाव मिश्रित प्रकृति का होता है। व्यावसायिक पर्यावरण के अन्तर्गत सामाजिक, राजनीतिक, विधिक, तकनीकी अथवा अन्तर्राष्ट्रीय कारक हो सकते हैं। ये सभी अलग–अलग परिस्थियों में कार्य करते हुए एक दूसरे को प्रभावित करते हैं और सम्मिलित रुप से इनका असर व्यवसाय पर भी प्रत्यक्ष या परोक्ष रुप में पडता है। शिक्षा के स्तर मे परिवर्तन, सरकार बदलने या नये कानून लागू होने से व्यवसाय का पर्यावरण प्रभावित हो जाता है।
2. **पर्यावरण गतिशील होता है–** पर्यावरण परिवर्तनशील होता है। जिस प्रकार पृथ्वी का पर्यावरण प्राकृतिक तत्वों की क्रिया से निर्धारित होता है उसी प्रकार समाज में होने वाले निरन्तर परिवर्तन व्यावसायिक वातावरण को प्रभावित करते हैं। समाज एक खुली प्रयोगाशाला के समान होता है। अनेक तत्व इसे संचालित करते हैं जिन पर नियंत्रण करना कठिन होता है। समाज की शैक्षिक व आर्थिक दशाएं तथा कानून व्यवस्था की स्थिति में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। गतिशील परिस्थितियों के साथ सामंजस्य बनाते हुए व्यवसाय का संचालन किया जाता है।
3. **पर्यावरण बहुआयामी होता है–** किसी स्थान का पर्यावरण निर्धारित करने में कुछ विशिष्ट अवयवों को सम्मिलित किया जाता है। जल, तापमान, वन आदि तत्वों की तरह ही व्यवसाय के पर्यावरण के लिए भी वस्तुओं की मॉग, पूर्ति तथा आर्थिक विकास जैसे कारक महत्वपूर्ण होते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि एक नीति एक स्थान पर सफल है तो वह अन्य स्थानों पर भी सफल होगी। एक ही व्यवहार की अलग–अलग परिस्थिति में अलग–अलग प्रतिक्रिया देखने को मिल जाती है।
4. **पर्यावरण के प्रभाव दूरगामी होते हैं–** पर्यावरण अनेक तत्वों से प्रभावित होता है किन्तु साथ ही यह अनेक तत्वों को प्रभावित भी करता है। व्यावसायिक पर्यावरण का प्रभाव नये उद्यमियों पर सर्वाधिक होता है। ग्राहक भी पर्यावरण के अनुरुप ही अपना व्यवहार प्रदर्शित करते हैं। पर्यावरणीय परिवर्तनों का दीर्घकालिक प्रभाव सम्बन्धित पक्षकारों पर होता है। उदाहरण के लिए भारत में उदारीकरण एवं वैश्वीकरण की नीति अपनाए जाने के बाद उद्योगों में विलय एवं अधिग्रहण के द्वार खुल गये जिससे कुछ देशी उद्योगों को संकट का सामना करना पड गया।

7.2.1 आन्तरिक एवं वाह्य पर्यावरण के विविध पक्षकार–

व्यावसायिक पर्यावरण का निर्धारण विभिन्न पक्षकारों के आधार पर होता है। इनमें से कुछ पक्षकार संगठन के अन्दर तथा कुछ संगठन से बाहर रहते हुए पर्यावरण को प्रभावित करते हैं।

व्यावसायिक पर्यावरण के पक्षकार

(अ) आन्तरिक पक्षकार
1. व्यापार स्वामी
2. प्रबन्धन
3. कर्मचारी

(ब) वाह्य पक्षकार
1. ग्राहक
2. आपूर्तिदाता
3. सरकार
4. समाज
5. अन्य पक्षकार

(अ) आन्तरिक पक्षकार–

व्यावसायिक पर्यावरण के निर्माण में सहयोगी आन्तरिक पक्षकार निम्नलिखित हैं–

1. **व्यापार स्वामीः** इस वर्ग में उद्यमी, उद्योगपति, साहसी, व्यापार स्वामी, साझेदार, प्रवर्तक, अंशधारक या अन्य किसी नाम से सम्बोधित किये जाने वाले उस व्यक्ति या समुदाय को सम्मिलित किया जाता है जो व्यापार को स्थापित, संचालित व नियन्त्रित करता है तथा व्यापार के परिणामों के लिए उत्तदायी होता है। इनकी प्रवृत्ति के आधार पर व्यापार जगत का पर्यावरण निर्मित तथा नियंत्रित होता है। यह वर्ग यदि समाज के प्रति अधिक उत्तरदायी है तो सामान्य लाभ, उच्च गुणवत्ता तथा समाज कल्याण के प्रति जागरुकता का वातावरण बनता है जबकि इस वर्ग के लोभी होने की दशा में अधिकतम लाभ वसूली, सम्पत्ति निर्माण और अनैतिक कारोबार का चलन दिखाई देता है। प्रथम परिस्थिति में समाज के विकास द्वारा दीर्घकालीन विकास का लक्ष्य प्राप्त होता है जबकि द्वितीय परिस्थिति में व्यापारिक विकास द्वारा अल्पकालिक लाभ प्राप्त होता है। इस वर्ग की प्रवृत्ति किसी स्थान अथवा समय में व्यवसाय के पर्यावरण का निर्माण व विकास करती है।

2. **प्रबन्धनः** यह वर्ग व्यापार संचालन में निपुण होता है तथा अपने स्वामी की ओर से व्यापार का संचालन करता है। इसका कार्य स्वामी की इच्छानुरुप व्यापार का संचालन करते हुए सकारात्मक व्यापारिक परिणाम देना होता है। यह वर्ग व्यापार और स्वामी के मध्य सेतु का कार्य करता है और अपनी योग्यता से सभी वर्गों को लाभ पहुॅचाते हुए सन्तुलित विकास का मार्ग प्रशस्त करता है। किसी अन्य परिस्थिति में यह वर्ग पेशेवर कुटिलता के द्वारा व्यापार और स्वामी के मध्य खाई बना देता है और निजी लाभ प्राप्त करते की कोशिश करता है जिसके कारण कर्मचारी व स्वामी वर्ग के मध्य अन्तोष, संदेह तथा असुरक्षा का भाव बनता है । इसके दूरगामी परिणाम व्यवसाय के पतन के रुप में प्राप्त होते हैं।

3. **कर्मचारीः** कर्मचारी वर्ग ही धरातल स्तर पर व्यापार के वास्तविक परिणाम प्रदान करता है। इसके अन्तर्गत निम्न प्रबन्ध के कार्मिक, श्रमिक, विक्रय प्रतिनिधि तथा

अन्य प्रशासनिक वर्ग के कर्मचारी सम्मिलित होते हैं। उच्च मनोबल वाले कर्मचारी व्यापार को आगे ले जाते हैं जबकि अकर्मण्य कर्मचारी इसे रसातल तक पहुॅचा देते हैं। इस वर्ग की ईमानदारी, कर्तव्य परायणता तथा आत्मानुशासन का भाव व्यापार की उन्नति का आधार होता है। यद्यपि इन्हें प्रेरित करना स्वामी व प्रबन्धन वर्ग का कार्य है तथापि व्यक्तिगत, पारिवारिक तथा सामाजिक परिस्थितियॉ भी इन्हें प्रभावित करती हैं।

(ब) वाह्य पक्षकार–

वाह्य पक्षकारों में निम्नलिखित को सम्मिलित किया जाता है–

1. **ग्राहकः** ग्राहक किसी भी व्यावसायिक संस्था का केन्द्र होता है। उसी को लक्ष्य करके व्यवसाय की समस्त नीतियॉ तैयार की जाती हैं। किसी बाजार विशेष में किसी विशेष समय में ग्राहकों की क्रय करने की एक विशेष प्रवृत्ति होती है जो कि परिस्थिति के बदलने पर बदल सकती है। अनेक आर्थिक, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक कारक इसे प्रभावित करते हैं। आय, सुरक्षा, फैशन आदि की स्थिति में परिवर्तन का प्रत्यक्ष प्रभाव ग्राहक की क्रय प्रवृत्ति पर पडता है। जब यह परिवर्तन दीर्घकालिक होते हैं तो व्यावसायिक पर्यावरण को प्रभावित करते हैं। व्यावसायिक पर्यावरण का अध्ययन करने के लिए उपभोक्ता व्यवहार का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक होता है।

2. **आपूर्तिदाताः** व्यापारियों को वस्तुओं की आपूर्ति उद्योगों से होती है तथा उद्योग अपना कच्चा माल विभिन्न व्यापारियों से क्रय करते हैं। इसप्रकार आपूर्तिदाता व्यवसाय जगत में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। सामान्यतः प्रत्येक उद्योग की आपूर्ति की विशिष्ट दशाएं होती हैं किन्तु समय–समय पर इनमें परिवर्तन भी होता है। मौसमी प्रभाव, वैज्ञानिक व तकनीकी विकास, बाजार का उच्चावचन तथा राजनीतिक दशाएं इन्हें प्रभावित करती हैं। भारत विभाजन के समय जूट उत्पादक क्षेत्र पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) में चला गया था जिससे भारत की जूट मिलों की आपूर्ति दुष्प्रभावित हो गयी थी।

3. **सरकारः** व्यवसायिक पर्यावरण में सरकारी नीतियों का विशेष प्रभाव होता है। सरकार द्वारा किसी व्यवसाय विशेष को प्रोत्साहित या हतोत्साहित करने की नीतियॉ अपनाये जाने का सीधा प्रभाव व्यापार पर पडता है। सरकार की कर नीति, व्यापार व उद्योग नीति, निवेश नीति, विदेश नीति आदि से व्यापार प्रभावित होते हैं। भारत में सन् 1991 से अपनाई गई उदारता, निजीकरण तथा वैश्वीकरण की नीति ने भारत के व्यावसायिक पर्यावरण में परिवर्तन स्पष्ट रुप से प्रदर्शित हुआ।

4. **समाजः** समाज के अन्तर्गत वे सभी तत्व आते हैं जो व्यवसाय से सीधे जुडे न होने पर भी उसे प्रभावित करते हैं। इसमें ग्राहक व अन्य तत्व भी सम्मिलित हो सकते हैं। किसी भी समाज के अपने कुछ तौर तरीके तथा परम्पराएं होती हैं। इसके आधार पर ही इसकी क्रय प्रवृत्तियॉ निर्धारित होती हैं और व्यापार की दिशा भी निर्धारित होती है। सामाजिक प्रवृत्तियों में शीघ्र परिवर्तन नहीं होते किन्तु इसके परिवर्तन व्यापार को नई दिशा अवश्य देते हैं। भारत में शैक्षिक विकास तथा कुछ सामाजिक संस्थाओं द्वारा कोक पदार्थो की हानियों का प्रचार किये जाने के कारण गत दशक में इनकी

बिक्री में अचानक गिरावट आ गई थी। फलस्वरुप, बोतलबन्द पेयजल, जूस, मट्ठा आदि की बिक्री में निरन्तर वृद्धि हो रही है।

5. **अन्य पक्षकार:** कुछ अन्य पक्षकार भी व्यापारिक पर्यावरण के निर्धारण में अपनी विशिष्ट भूमिका का निर्वाह करते हैं। अन्य देशों की सरकारों, अन्तर्राष्ट्रीय संगठन तथा विभिन्न न्यायालयों के हस्तक्षेप से अनेक दीर्घकालिक वृहद परिवर्तन देश के व्यापार को प्रभावित करते हैं। विश्व व्यापार संगठन के अभ्युदय के बाद भारत सहित अन्य सभी देशों को विदेशी कम्पनियों को अपने देश में कार्य करने की स्वतंत्रता देनी पडी। इससे राष्ट्रीय कम्पनियों का व्यापार प्रभावित हुआ और उन्हें व्यापारिक परिवर्तन करने पडे। इससे पर्यावरणीय परिवर्तन दृष्टिगोचर हुए। तकनीकी विकास के फलस्वरुप कम्प्यूटर व इन्टरनेट के विकास के बाद ई–बैंकिंग, ई–बिजनेस, ई–गवर्नेन्स आदि का अभ्युदय हुआ और अनेक व्यापारिक व प्रशासनिक परिवर्तनों का मार्ग प्रशस्त हुआ।

7.3 व्यावसायिक पर्यावरण के विभिन्न प्रकार

व्यवसाय एक वृहद शब्द है। इसके अन्तर्गत विभिन्न क्रियाओं और उनकी सहक्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है। इनमें कुछ संगठन की आन्तरिक तो कुछ अन्य वाह्य वातावरण पर आधारित होती हैं। ये क्रियाएं परस्पर निर्भर होती हैं तथा किसी एक में होने वाले परिवर्तन का प्रभाव सम्पूर्ण व्यवसाय पर पडता है। व्यावसायिक पर्यावरण के अन्तर्गत उपरोक्त तत्वों पर आधारित पर्यावरण के विभिन्न घटकों का अध्ययन किया जाता है।

व्यावसायिक पर्यावरण के अन्तर्गत निम्न पर्यावरण सम्मिलित किये जाते हैं–

व्यावसायिक पर्यावरण

आन्तरिक पर्यावरण	वाह्य पर्यावरण
1. प्रबन्ध दर्शन	1. बाजार पर्यावरण
2. मानव संसाधन	2. तकनीकी पर्यावरण
3. भौतिक संसाधन	3. आर्थिक पर्यावरण
4. वित्तीय संसाधन	4. नियामक पर्यावरण
5. छवि एवं प्रतिष्ठा	5. राजनीतिक पर्यावरण
6. शोध एवं विकास सुविधाएं	6. सामाजिक सांस्कृतिक पर्यावरण
7. आन्तरिक सम्बन्ध	7. अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण

7.3.1 आन्तरिक पर्यावरण

आन्तरिक पर्यावरण के प्रमुख तत्व निम्नलिखित हैं–

1. **प्रबन्ध दर्शन–** व्यवसाय पर्यावरण का बीज व्यावसायिक संस्था द्वारा अपनाये गये दर्शन में निहित होता है। संस्था द्वारा परम्परागत अथवा पेशेवर दर्शन को अपनाया जा सकता है। संस्था की नीतियॉ और संस्थापकों द्वारा अपनाये जाने वाले नैतिक मूल्य उसके दर्शन को प्रतिबिम्बित करते हैं। आधुनिक युग में तीव्र प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण में संस्थाओं द्वारा पेशेवर दृष्टिकोण अपनाया जाने लगा है। संस्था अपनी संदृष्टि (Vision) तथा ध्येय (Mission) निर्धारित कर दीर्घकालीन

नीतियों के लिए आधार तैयार करती हैं। संदृष्टि संगठन के मुखिया के विचारों, नैतिक मूल्यों तथा भविष्य की कल्पना का प्रतिबिम्ब होती है। यह संस्था की सब नीतियों का आधार होती है जबकि ध्येय संदृष्टि पर आधारित वे लक्ष्य हैं जिन्हें संगठन निकट भविष्य में पाना चाहता है। अल्पकालीन नीतियों का निर्धारण तत्कालीन परिस्थितियों के आधार पर किया जाता है।

2. **मानव संसाधन–** रोजगार बाजार में उपलब्ध मानव संसाधन ही संस्था को प्राप्त होता है अतः बाजार का पर्यावरण संस्था के पर्यावरण को प्रभावित करता है। संस्था द्वारा अपनाई जाने वाली मानव संसाधन नीतियॉ भी इसका निर्धारण करती है। कुछ संस्थाएं उच्च वेतन पर श्रेष्ठ व अनुभवी कार्मिकों का चयन करती हैं तो कुछ अन्य नये कार्मिकों का कम वेतन पर चयन कर उन्हें प्रशिक्षण प्रदान कर अपनी नीतियों के अनुरुप ढालते हैं। उच्च प्रबन्धन द्वारा अपनाई जाने वाली प्रेरणा व मनोबल की नीतियॉ भी संस्था का वातावरण निर्धारित करती हैं।

3. **भौतिक संसाधन–** संगठन के पास उपलब्ध स्थान (भूमि व भवन), मशीन व यंत्र, फर्नीचर, उपकरण, वाहन आदि भौतिक संसाधन उसके कार्य के वातावरण को निर्धारित करते हैं। सुदृढ भौतिक संसाधन वाली फर्म में कर्मचारियों की कार्यक्षमता अधिक होती है और वाह्य जगत में उसकी प्रतिष्ठा भी बढती है।

4. **वित्तीय संसाधन–** वित्तीय संसाधनों की पर्याप्तता संस्था के अस्तित्व और प्रगति के लिए अनिवार्य है। वित्तीय संसाधनों की उपलब्धता, उन्हें प्राप्त करने की लागत तथा संसाधनों का उपयोग संस्था के वातावरण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं। कुशल वित्तीय प्रबन्धन के द्वारा ही संस्था अधिक लाभ कमा सकती है जिससे कर्मचारी कल्याण तथा सामाजिक दायित्वों का निर्वहन संभव हो पाता है।

5. **छवि एवं प्रतिष्ठा–** संस्था द्वारा अपनी नीतियों तथा उनके सफल क्रियान्वयन द्वारा जो छवि और प्रतिष्ठा अर्जित की जाती है वह उसकी ख्याति बनती है जिसके प्रभाव से ग्राहक संस्था से जुड़ने का प्रयास करते हैं, अच्छे कर्मचारी भी प्रतिष्ठित संगठन से जुड़ना चाहते हैं। निष्ठावान कर्मचारी अपने कार्य व व्यवहार से व्यापार को ऊॅचाइयों तक ले जाते हैं।

6. **शोध एवं विकास सुविधाएं–** व्यापार में श्रेष्ठता प्राप्त करने लिए निरन्तर प्रयास करना होता है जिसके लिए शोध सबसे प्रभावी अस्त्र होता है। जिन प्रतिष्ठानों में उत्पाद निर्माण, विक्रय प्रबन्धन, वित्तीय प्रबन्धन आदि के क्षेत्र में अनुसंधान किये जाते हैं, वहॉ व्यापार का विकास होता है तथा सब ओर प्रगति दिखाई देती है।

7. **आन्तरिक सम्बन्ध–** संस्था के अन्दर प्रबन्ध एवं कर्मचारियों के मध्य पारस्परिक सम्बन्ध मधुर होना उसकी सफलता का परिचायक है। लम्बवत सम्बन्धों के अन्तर्गत उच्चाधिकारियों के अधीनस्थों के साथ तथा क्षैतिज सम्बन्धों के अन्तर्गत समान स्तरीय कर्मचारियों के मध्य सम्बन्धों की व्याख्या की जाती है। ये सम्बन्ध जितने मजबूत होते हैं, संस्था का विकास उतना ही तीव्र व दीर्घकालिक होता है।

7.3.2 वाह्य पर्यावरण

वाह्य पर्यावरण के अन्तर्गत निम्नलिखित अंगों को सम्मिलित किया जाता है–

1. **बाजार पर्यावरण–** विपणन व्यापार की सबसे महत्वपूर्ण प्रक्रिया तथा अन्य प्रक्रियाओं का आधार होती है। किसी व्यापार की सफलता या असफलता की कहानी उसकी विक्रय क्षमता पर ही आधारित होती है जो कि बाजार की दशाओं (यथा– एकाधिकार, अल्पाधिकार, अपूर्ण प्रतियोगिता, पूर्ण प्रतियोगिता आदि) का परिणाम होती है। बाजार की दशाओं के निर्धारण में उत्पाद, ग्राहक, प्रतियोगी फर्मों तथा विपणन एवं वित्तीय मध्यस्थों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। उपरोक्त के बाजार दशाओं पर प्रभाव को निम्न प्रकार देखा जा सकता है–

अ. **उत्पाद–**प्रत्येक उत्पाद की कुछ अपनी विशिष्टताएं होती हैं जो उनके बाजार का निर्धारण करती हैं। इसमें उस वस्तु की उपलब्धता, उपयोगिता, विशिष्टता, मॉग, पूर्ति, जीवन चक्र, डिजायन, स्थानापन्न वस्तुओं की उपलब्धता आदि का बाजार के पर्यावरण पर प्रत्यक्ष प्रभाव होता है। वस्तु की लागत, बाजार मूल्य तथा लाभ की वस्तु को बाजार में स्थापित करने में विशिष्ट भूमिका होती है। वस्तु के मौलिक गुणों के साथ ही बाजार में प्रस्तुतीकरण (विज्ञापन, विक्रय सम्वर्द्धन तकनीक आदि) का भी इसमें योगदान होता है।

ब. **ग्राहक–** ग्राहक व्यापार की आत्मा होता है। सम्पूर्ण व्यवसाय उसी को केन्द्र में रखकर संचालित किया जाता है। उसकी आवश्यकता, पसन्द, प्राथमिकता, क्रय प्रेरणा तथा क्रय व्यवहार का भलीभॉति अध्ययन कर उत्पाद को बाजार में उतारा जाता है। ग्राहक की आय, क्रय शक्ति तथा सौदेबाजी की शक्ति के आधार पर भी बाजार की स्थिति निर्भर करती है। सामान्य घरेलू वस्तुएं उपभोग के लिए खरीदी जाती हैं, विलासिता की वस्तुएं शौक या प्रदर्शन के लिए खरीदी जाती हैं, स्वर्णाभूषण, भूखण्ड आदि सुरक्षा व निवेश की दृष्टि से खरीदे जाते हैं तो अनेक व्यय परिस्थितिवश करने पडते हैं जैसे– चिकित्सा व्यय, कानूनी व्यय आदि। ग्राहक की आर्थिक स्थिति तथा वस्तु की विशिष्टता के आधार पर बाजार विभक्तीकरण किया जाता है। ग्राहकों का लैंगिक अथवा आयु के आधार पर विभाजन भी बाजार की मॉग को प्रभावित करता है।

स. प्रतिस्पर्धी– यदि बाजार एकाधिकारी नहीं है तो प्रतिस्पर्धी विक्रेताओं की स्थिति के आधार पर बाजार की नीतियॉ निर्धारित की जाती हैं। प्रतिस्पर्धी फर्मों की उपस्थिति तथा उनके आगमन–प्रस्थान की शर्तों तथा प्रतिस्पर्धा के प्रकार का बाजार पर स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। द्वयाधिकार, अल्पाधिकार, अपूर्ण प्रतियोगिता तथा पूर्ण प्रतियोगिता की दशा में प्रतिस्पर्धा की भिन्नता के कारण बाजार का पर्यावरण भिन्न होता है।

द. **मध्यस्थ–** बाजार के विकास में मध्यस्थ संस्थाओं की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती है। वस्तु को उत्पादक से उपभोक्ता तक पहुॅचाने में थोक व्यापारी, फुटकर व्यापारी, कमीशन एजेन्ट आदि अपनी सेवाएं देते हैं। ये अपनी सेवाओं के बदले लाभ में अंश भी प्राप्त करते हैं। जिससे उत्पादक का लाभ बॅटता है अथवा वस्तु का मूल्य बढ जाता है। उत्पादक ग्राहकों को सीधे सामान बेचने का भी प्रयास करते हैं। आजकल इसके लिए ई–कामर्स का भी सहारा लिया जा रहा है। ट्रांसपोर्ट के विविध माध्यमों की भी बाजार के विस्तार में भूमिका होती है। इसके अतिरिक्त बैंकिंग व बीमा कम्पनी का सहयोग भी किसी व्यापार के विकास में सहायक होता है। बैंकों द्वारा गृह

निर्माण ऋण की सुविधा प्रदान करने के बाद से निर्माण उद्योग तथा सीमेंट, लोहा, पेन्ट आदि सभी उद्योगों को लाभ हुआ। विज्ञापन फर्मों के प्रयास से मॉग सृजित करने तथा व्यापार को नई दिशा देने से बाजार प्रभावित होता है।

बाजार के पर्यावरण पर सम्बन्धित पक्षकारों द्वारा निरन्तर गहन दृष्टि रखी जाती है तथा इसमें होने वाले प्रत्येक परिवर्तन का अनुमान लगाते हुए आवश्यक उपाय अपनाये जाते हैं। इसके कुछ उदाहरण दर्शनीय हैं–

तीन दशक पूर्व भारत में दोपहिया वाहनों में स्कूटर निर्माण के क्षेत्र में बजाज कम्पनी का लगभग एकाधिकार था। स्कूटर बुकिंग करने पर भी दो–तीन साल में मिलते थे। रंग या भुगतान का माध्यम चुनने की स्वतन्त्रता भी नहीं थी। आज स्थिति पूर्णतः भिन्न है। आज रंग, माडल आदि चुनाव के साथ ही वाहन ऋण की सुविधा उपलब्ध है। साथ ही अनेक आकर्षक योजनाएं भी लागू हैं।

अस्सी के दशक में धूम मचाने वाले टेलीविजन ब्राण्ड टैक्सला, अपट्रान, जौली, वेस्टन आदि बाजार से गायब हो गये और उनके स्थान पर विदेशी ब्राण्ड एलजी, सैमसंग, सोनी आदि स्थापित हो गये।

विज्ञापन की चकाचौंध ने पेप्सी और कोक जैसे पेय पदार्थों के व्यापार को असीमित आकार प्रदान कर दिया। बोतलबन्द पानी और जूस का बाजार भी तेजी से बढा है।

मोबाइल फोन के आगमन के साथ पेजर समाप्त हो गया। घडी, कैमरे, कैमरे की रील, कैलकुलेटर आदि अनेक वस्तुओं का बाजार घट गया। साथ ही उपभोक्ताओं को नया बाजार प्राप्त हुआ। इन्टरनेट के प्रयोग के साथ ही उपभोक्ताओं को बाजार के नए विकल्प प्राप्त हो गये। व्यवसाय तो बढा किन्तु साथ ही उपभोक्ता पर आर्थिक बोझ में भी वृद्धि हो गई।

2. **तकनीकी पर्यावरण–** तकनीकी पर्यावरण के अन्तर्गत किसी काल विशेष में होने वाले वैज्ञानिक अनुसंधानों के बाजार पर प्रभाव का आकलन किया जाता है। तकनीक के प्रभाव से वस्तुओं के उत्पादन में बचत प्राप्त होती है। कार्यालय प्रशासन, सूचना संवहन, यातायात, पैकेजिंग, विक्रय तकनीक आदि में निरन्तर नई तकनीक के प्रयोग से बाजार में क्रांति आ गई है। परम्परागत तौर तरीकों के स्थान पर आधुनिक तकनीक के प्रयोग ने बाजार को तीव्रगामी बना दिया है। तकनीक ने जहॉ व्यापार को आसान बनाया हैं वहीं उसने नई चुनौतियॉ भी प्रस्तुत कर दी हैं। उदाहरणार्थ–

कोर बैकिंग सोल्यूशन (सी0बी0एस0) तकनीक के आने के बाद भारतीय बैंकों में लेनदेन की गति व सुविधा बढ गई है किन्तु जिन बैंकों ने यह सुविधा प्रारम्भ नहीं की उन्हें व्यापार में पिछडना पड गया। ए0टी0एम0, फोन बैंकिंग, ई–बैंकिंग के प्रयोग के बाद बैंकिंग व्यापार की दिशा में अनेक परिवर्तन हुए हैं।

ई–कामर्स की वेबसाइट्स के प्रचलित होने के ग्राहकों के क्रय व्यवहार में तीव्र परिवर्तन आया है। अब वे परम्परागत दुकानों तथा स्टोर्स के स्थान पर आनलाइन शापिंग की ओर आकर्षित हो गये हैं। फ्लिप कार्ट, अमेजन, बुक अड्डा, ईबे, स्नैप डील आदि आनलाइन शापिंग वेबसाइट्स का व्यापार निरन्तर बढ रहा है।

मोबाइल फोन के क्षेत्र में निरन्तर तकनीकी विकास हो रहा है। मोबाइल फोन में फोन के साथ इन्टरनेट, म्यूजिक सिस्टम व कैलकुलेटर, कम्प्यूटर के सभी कार्य सम्पादित होने लगे हैं। टेबलेट के विकास के साथ लैपटाप की मॉग में कमी आ रही है।

आटोमोबाइल के क्षेत्र में ईधन की बचत करने वाली मोटर साइकिलों की मॉग बढने से इस दिशा में निरन्तर आविष्कार हुए हैं। एयरोडायनामिक डिजायन की कारों से अधिक माइलेज मिलने लगा है। प्रदूषण से बचाने वाले वाहनों की मॉग तेजी से बढ रही है।

स्वास्थ्य के प्रति जागरुकता में वृद्धि हुई है। हानिकारक रसायनों की पुष्टि होने के बाद कोक वाले पेय पदार्थों की मॉग कम हुई है तथा दूध, मट्ठा, फलों का रस, बोतलबन्द पानी आदि की मॉग बढ गई है। आयुर्वेद एक बार फिर अपनी प्रतिष्ठा प्राप्त कर रहा है।

3. **आर्थिक पर्यावरण–** देश का आर्थिक पर्यावरण बाजार की दिशा व दशा के निर्धारण में सहायक होता है। देश की आर्थिक नीति, औद्योगिक नीति, व्यापार नीति, राजकोषीय नीति के साथ ही विदेश नीति भी बाजार को प्रभावित करती है। देश में लागू अर्थव्यवस्था के प्रकार (पूॅजीवाद, समाजवाद आदि) के आधार पर बाजार का पर्यावरण निर्धारित होता है। देश की प्रतिव्यक्ति आय, राष्ट्रीय आय, सकल घरेलू उत्पाद आदि की स्थिति भी बाजार का निर्धारण करती है। भारत में मिश्रित अर्थव्यवस्था लागू है जिसमें सार्वजनिक और निजी क्षेत्र की भागीदारी है।

भारत में सन् 1991 में आर्थिक उदारीकरण की नीति को अपनाया गया। जिसके अन्तर्गत निम्न महत्वपूर्ण निर्णय लिये गये–

1. **उदारीकरण–** इसके अन्तर्गत व्यापार के विकास में बाधक नियमों को शिथिल किया गया। अनेक उद्योगों से लाइसेंस की अनिवार्यता समाप्त कर दी गई। लाइसेंस राज समाप्त करके व्यापार को मुक्त वातावरण प्रदान किया गया।
2. **निजीकरण–** व्यापार को सरकारी क्षेत्र से हटाकर निजी क्षेत्र में विकसित करने के लिए नीतियॉ तय की गईं। यह माना गया कि केवल रक्षा क्षेत्र या इसी तरह के गोपनीय उद्योगों को छोडकर शेष उद्योग निजी क्षेत्र में चलाये जाने चाहिए। विनिवेश की नीति लागू करके सरकारी उद्यमों को निजी क्षेत्र को बेच दिया गया।
3. **वैश्वीकरण–** देश की अर्थव्यवस्था को विश्व अर्थव्यवस्था के समस्तरीय बनाये जाने के लिए देश की आर्थिक नीतियों में परिवर्तन किये गये। विदेशी कम्पनियों को भारत में इकाई स्थापित करने और व्यापार करने की स्वतन्त्रता प्रदान की गई। इस व्यवस्था के लागू होने से भारतीय फर्मों को विदेशी फर्मों से प्रतियोगिता में खडा होना पडा। कुछ भारतीय फर्मों ने अपने आकार व व्यापार में आवश्यक परिवर्तन कर सफलता प्राप्त की तो अनेक फर्मों का अस्तित्व ही समाप्त हो गया।

पिछले लोकसभा चुनाव (2014) से पूर्व दो मुख्य दलों द्वारा अपनी भावी आर्थिक नीति को उद्योगपतियों व आम जनता के समक्ष रखा गया जिसे सम्पूर्ण देश ने गम्भीरता से सुना क्योंकि भविष्य का बाजार इन्हीं नीतियों पर निर्भर था।

4. **नियामक पर्यावरण–** देश का संविधान, न्यायिक प्रणाली, न्याय व्यवस्था आदि का बाजार के पर्यावरण पर प्रत्यक्ष प्रभाव होता है। चुस्त–दुरुस्त नियामक संस्थाएं

नियमों को लागू करने तथा बाजार को एक सुरक्षित तथा अनुशासित वातावरण देने में समर्थ होती हैं। इसका देशी तथा विदेशी निवेशकों पर प्रभाव पडता है। नियामक पर्यावरण के सम्बन्ध में निम्न तथ्य महत्वपूर्ण हैं–

अ. देश का राजनीतिक ढॉचा, कानून निर्मात्री संस्थाओं की मजबूती, नियमों में संशोधन की प्रक्रिया, मौलिक अधिकार, केन्द्र–राज्य सम्बंध तथा संसाधनो के वितरण की स्थिति आदि।

आ. न्यायालयों तथा न्याय प्रक्रिया में निष्पक्षता तथा पारदर्शिता का स्तर। अपीलीय ढॉचा तथा न्याय प्रक्रिया में समयबद्धता या विलम्ब की स्थिति।

इ. बाजार सम्बन्धी न्यायिक प्रावधानों, नियमों तथा कानूनों की स्थिति। लाइसेंस प्रणाली, कम्पनी कानून, मूल्य नीति, वितरण प्रणाली, उद्योग नीति, आयात–निर्यात नीति, प्रशुल्क नीति, प्रतिस्पर्धा व एकाधिकार सम्बन्धी कानून आदि।

ई. विदेश व्यापार नीति, घरेलू उद्योग संरक्षण नीति, निवेश और विनिवेश नीति।

उ. कर्मचारी व श्रमिकों के कल्याण सम्बन्धी कानून, भूमि अधिग्रहण कानून, पर्यावरण संरक्षण तथा अन्य सम्बन्धित कानून।

ऊ. न्यायिक संस्थाओं की स्वायत्तता, सरकार का न्यायिक संस्थाओं को सहयोग, जनता की न्याय संस्थाओं के प्रति आस्था।

अलग–अलग कालखण्डों में किसी देश के नियामक पर्यावरण में भी परिवर्तन आता है। कभी न्याय संस्थाएं श्रमिकों और कर्मचारियों की हितैषी नजर आती हैं तथा उद्योगों की शोषक के रुप में छवि स्थापित हो जाती है तो कभी कर्मचारियों को अराजक और स्वार्थी मानने का कालखण्ड भी सामने आया है। कभी भूमि अधिग्रहण को देश के औद्योगिक विकास के लिए आवश्यक माना गया तो कभी न्यायालयों के आदेशों में इसे किसानों के शोषण के रुप में चित्रित किया गया। पर्यावरण के प्रति न्यायालयों की सजगता, गम्भीर विषयों पर न्यायाधीशों की स्वतः संज्ञान लेने की प्रवृत्ति भी राष्ट्र के नियामक पर्यावरण की बदलती प्रवृत्ति का प्रतीक माना जा सकता है।

यह सत्य है कि न्याय व्यवस्था का सम्बन्ध देश के संविधान का निर्माण करना नहीं है वरन् यह कानून की व्याख्या करने वाली संस्था है। नियमों, अधिनियमों आदि का निर्माण करना देश की संसद या राज्य की विधान सभाओं का कार्य है। अनेक बार यह देखा गया है कि न्यायालयों द्वारा तत्कालीन परिस्थियों तथा लागू कानूनों के परिप्रेक्ष्य में जो निर्णय लिए जाते हैं उन्हें सरकार द्वारा अध्यादेश या नया कानून लाकर शिथिल अथवा निष्प्रभावी कर दिया जाता है। सरकार नियमों एवं कानूनों का निर्माण करती है, उद्योग उन्हें अपनाते हैं और पालन करते हैं और प्रशासन उन नियमों के पालन को सुनिश्चित करता है। किसी प्रकार की अनिश्चितता, अवरोध या गतिरोध होने की दशा में न्यायालय नियम की भावना के अनुरुप संदर्भित परिस्थिति में व्याख्या प्रस्तुत करते हैं जिसे सरकार सहित सभी पक्षकारों को मानना होता है। सरकार उद्योगों पर नियंत्रण चाहती है तथा उसे जनहित में कार्य न करने का दोष लगाती है। उद्योग सरकार से स्वायत्तता का मॉग करते हैं और सरकारी हस्तक्षेप का

विरोध करते हैं। समाज उद्योग और सरकार की सॉठगॉठ का आरोप लगाकर उन पर सामाजिक नियंत्रण की मॉग करता है। सरकार, उद्योग और समाज के त्रिकोणीय संघर्ष को सुलझाने में न्याय प्रणाली का योगदान महत्वपूर्ण है। न्याय प्रणाली की भूमिका के आधार पर बाजार का पर्यावरण निर्धारित होता है।

5. **राजनीतिक पर्यावरण–** किसी भी देश का राजनीतिक पर्यावरण सम्पूर्ण बाजार को प्रभावित करता है। राजनीतिक पर्यावरण में अन्तर्गत वहॉ की शासन प्रणाली, दलीय व्यवस्था, राजनीतिक दलों के नैतिक मूल्य तथा कार्य प्रणाली को सम्मिलित किया जाता है। राजनीतिक दलों की आन्तरिक व्यवस्था, अनुशासन, सत्ता संकेन्द्रण आदि भी राजनीतिक पर्यावरण के महत्वपूर्ण घटक होते हैं।

लोकतंत्र में राजनीतिक दल अपने मतदाताओं की ललचाने के लिए चुनाव पूर्व लोक लुभावन वादे करते हैं तथा चुनाव जीतने के बाद चुनी गई सरकार पर उन वादों को पूरा करने का दबाव आ जाता है। अनेक बार वोट के लालच या दूसरे दल को सफलता का श्रेय न देने के प्रयास में राजनेता ऐसे निर्णय ले लेते हैं जो कि राष्ट्र के समग्र हित में नहीं होते। पिछली सरकार के निर्णयों को पलट देना, संशोधित करना, महत्व न देना या उनमें कमियॉ निकालना इस प्रकार की प्रवृत्ति की परिचायक है।
भारत में कांग्रेस, भारतीय जनता पार्टी, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी आदि दल अपनी भिन्न नीतियों के लिए जाने जाते हैं और जब भी इन दलों की सरकार बनती है, बाजार पर इसका प्रभाव परिलक्षित होने लगता है। सभी सरकारें अपने पूर्व निर्धारित ऐजेन्डे पर कार्य करती हैं। सम्पूर्ण बाजार को इनके राजनीतिक निर्णयों के कारण उतार चढाव का सामना करना पडता है। इनमें से कुछ निर्णय बाजार के लिए अत्यन्त उत्साहवर्द्धक तो कुछ निराशाजनक होते हैं।

- भारत में सन् 1991 में प्रधानमंत्री पी0वी0 नरसिम्हाराव तथा वित्तमंत्री डॉ0 मनमोहन सिंह के प्रयासों से आर्थिक सुधार नीति लागू की गई जिसके अन्तर्गत उदारीकरण, निजीकरण तथा वैश्वीकरण को अपनाया गया। उदारीकरण के अन्तर्गत लाइसेन्स सम्बन्धी नियमों को शिथिल कर औद्योगिक विकास को द्रुत गति प्रदान की गई। निजीकरण में निजी क्षेत्र को व्यापार में अधिक अवसर प्रदान किये गये तथा विनिवेश नीति के द्वारा सरकारी उपक्रमों को निजी हाथों में बेच दिया गया। वैश्वीकरण के अन्तर्गत विदेशी फर्मों की भारत में व्यापार करने सम्बन्धी अडचनों को दूर किया गया। इन प्रयासों से सम्पूर्ण देश के बाजार पर्यावरण पर प्रभाव पडा।
- आन्ध्र प्रदेश को तत्कालीन मुख्यमंत्री चन्द्र बाबू नायडू के नेतृत्व में सूचना प्रौद्योगिकी की क्षेत्र में आगे बढने का अवसर मिला। उनकी पहल तथा प्रोत्साहन के कारण सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र के उद्यमियों ने हैदराबाद में अपने संस्थान स्थापित किये।
- पश्चिम बंगाल में तृणमूल कांग्रेस की सरकार के भूमि अधिग्रहण सम्बन्धी विरोध के कारण टाटा मोटर्स को सिंगूर (पश्चिम बंगाल) के विशेष आर्थिक क्षेत्र (एस0ई0जेड0) से अपना नैनो कार निर्माण कारखाना हटाना पड गया था

जिसे पन्तनगर (उत्तराखण्ड) में स्थानांतरित कर दिया गया था किन्तु बाद में गुजरात सरकार के राजनीतिक प्रयासों के कारण इसे सानन्द (गुजरात) में स्थापित कर दिया गया।

- उत्तराखण्ड में मुख्यमंत्री नारायण दत्त तिवारी के कार्यकाल में उत्तराखण्ड राज्य औद्योगिक एवं अवस्थापना विकास निगम लिमिटेड (सिडकुल) की स्थापना की गई तथा उद्योगों को अनेक रियायतें (यथा– सस्ती भूमि, करों में छूट, सुनिश्चित विद्युत आपूर्ति का आश्वासन आदि) प्रदान की गईं। इस पहल के कारण राज्य में सैकडों औद्योगिक इकाइयॉ स्थापित हुईं जिससे उत्पादन, अवस्थापन, व्यापार, सेवा क्षेत्र, रोजगार आदि का बाजार विकसित हुआ।

6. **सामाजिक–सांस्कृतिक पर्यावरण–** किसी स्थान का सामाजिक व सांस्कृतिक पर्यावरण वहॉ के बाजार का निर्धारण करता है। समाज की आवश्यकताओं के अनुरुप ही बाजार को मॉग प्राप्त होती है तथा मॉग के अनुरुप ही उत्पादक वस्तुओं को निर्माण करता है और व्यापारी उसे ग्राहकों के सम्मुख प्रस्तुत करता है। समाज के आचार–विचार, व्यवहार, पारिवारिक आकार, जीवन शैली से सम्पूर्ण बाजार प्रभावित होता है। पूर्व में प्रचलित संयुक्त परिवार अब टूटने लगे हैं और उनका स्थान मूल परिवार (पति, पत्नी, बच्चे) लेने लगा है। इसका एक कारण नौकरी के लिए मूल स्थान से पलायन भी है।

भारत में सामान्यतः बचत की आदत पायी जाती है तथा यहॉ क्रय की विचारशील प्रवृत्ति दिखाई देती है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी आय का एक भाग भविष्य के लिये बचाकर रखता है। क्रय में उपयोगिता को अधिक तथा दिखावे को कम स्थान दिया जाता है जबकि पश्चिमी देशों में 'खाओ, पियो और मौज करो' की जीवन शैली अधिक प्रचलित है। यद्यपि समय के साथ भारतीय उपभोक्ताओं की क्रय प्रवृत्ति में परिवर्तन आया है और पाश्चात्य प्रभाव में भारत में भी दिखावा और भोग–विलासपूर्ण जीवन का चलन बढ गया है तथापि मूल प्रवृत्ति 'सादा जीवन उच्च विचार' की ही है।

विदेशों में गौ मॉस सामान्य आहार में सम्मिलित है किन्तु धार्मिक श्रद्धा के कारण भारत में गौ मॉस का चलन नहीं है। यहॉ एक बड़ा वर्ग शाकाहारी है। भारत के धार्मिक नगरों में निरामिष भोजन की मॉग अधिक होने कारण अधिकांशतः वैष्णव या जैन भोजनालय प्रचलित हैं।

भारतीय समाज उत्सव प्रिय समाज है। यहॉ विवाह, त्यौहार, मेले, प्रदर्शनी आदि में उत्साहपूर्वक भाग लेने की परम्परा है। सामान्य आय वाले लोग भी इन अवसरों पर दिल खोलकर खर्च करते हैं। इसका लाभ उठाने के लिए व्यापारी कोई कसर नहीं छोड़ते। आधुनिक समाज में अब विवाह को एक व्यापारिक अवसर के रुप में देखा जाने लगा है। समारोह स्थल का किराया, सजावट, भोजन व्यवस्था, संगीत व मनोरंजन आदि के लिए पैकेज ऑफर का प्रचलन बढ़ रहा है।

कृषि प्रधान देश होने के कारण भारत में सभी त्यौहार फसलों के तैयार होने पर ही आते हैं क्योंकि उस समय क्रेता के पास पर्याप्त धन होता है। अक्टूबर–दिसम्बर का त्रैमास दशहरा, दीपावली आदि त्यौहारों के कारण सर्वाधिक

बिक्री का समय माना जाता है। यह खरीफ की फसल बाजार में आने का समय है। क्रेता के पास पर्याप्त धन होता है। धार्मिक आधार पर भी धनतेरस जैसे त्यौहार क्रेताओं के लिये विशिष्ट अवसर हैं। अक्टूबर–दिसम्बर त्रैमास में भारतीय बाजार विक्रय सम्वर्द्धन योजनाओं से पटे रहते हैं। विक्रेता काफी समय पहले से इस अवधि में होने वाली बिक्री का अनुमान लगाते हुए स्टॉक तैयार करते हैं तथा क्रेता अच्छी संवर्द्धन योजनाओं की प्रतीक्षा करते हैं। इसी प्रकार अक्षय तृतीया स्वर्णाभूषणों के क्रय के लिए प्रचलित शुभ तिथि है। वैवाहिक तिथियों से आसपास वाले महीनों में भी बाजार में रौनक रहती है। वाहन क्रय के सम्बन्ध में क्रेता नये वर्ष में वाहन लेना पसन्द करते हैं। वाहन निर्माता अपने वाहनों के बचे हुए स्टॉक को दिसम्बर में बेचने के लिए नई–नई योजनाएं लाते हैं तथा जनवरी में नए स्टॉक की बिक्री के लिए भी आकर्षक योजनाओं के द्वारा ग्राहकों को लुभाने का प्रयास करते हैं।

7. **अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण–** जब व्यापार देश की सीमाओं के बाहर किया जाता है अर्थात् व्यापार का एक पक्षकार विदेशी हो तो उस व्यापार को अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार कहा जाता है। जब विदेशी पक्षकार को माल बेचा जाता है तो उसे निर्यात तथा जब विदेशी पक्षकार से माल खरीदा जाता है तो उसे आयात कहा जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार किसी भी राष्ट्र के लिए अति आवश्यक है क्योंकि निर्यात व्यापार के द्वारा राष्ट्र को विदेशी मुद्रा की प्राप्ति होती है। आयात व्यापार इसलिए आवश्यक है क्योंकि इसी के द्वारा देश को विदेशों से वह सामग्री प्राप्त होती है जिसका देश में अभाव होता है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में अनेक राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं की भूमिका का भी अपना महत्वपूर्ण योगदान होता है। आयात एवं निर्यात व्यापार में सभी राष्ट्र अपने स्थानीय उद्योग धन्धों को संरक्षित करने का प्रयास करते हैं तथा दूसरी ओर उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं तथा अन्य राष्ट्रों के साथ द्विपक्षीय अथवा बहुपक्षीय करारों का भी पालन करना पडता है। किसी देश के व्यावसायिक पर्यावरण पर अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण का सीधा प्रभाव पड़ता है जिसे निम्न बिन्दुओं के माध्यम से समझाया जा सकता है–

- विश्व स्तर पर शान्ति, तनाव या युद्ध का वातावरण अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यापार दिशा को निर्धारित करता है।
- राष्ट्रों के समुदाय आपस में तथा समुदाय से बाहर व्यापार के सम्बन्ध में पारस्परिक सहमति से कुछ नियम निर्धारित करते हैं जो सदस्य राष्ट्रों को समुदाय के साथी राष्ट्रों के साथ व्यापार के लिए प्रोत्साहित करते हैं या समुदाय से बाहर किसी राष्ट्र से व्यापार को हतोत्साहित या प्रतिबन्धित करते हैं।
- वैश्विक आर्थिक वातावरण जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियों के प्रभाव को सम्मिलित किया जाता है।
- वैश्विक संस्थाओं जैसे– विश्व व्यापार संगठन द्वारा नियमन व निर्देशन का प्रभाव सम्पूर्ण विश्व के बाजारों पर पड़ता है।
- क्षेत्रीय अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं (दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन –सार्क, जी–15, आशियान आदि) का व्यापारिक गतिविधियों पर प्रभाव पड़ता है।

- अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों के कारण पारस्परिक हित को ध्यान में रखते हुए आयात–निर्यात किया जाता है। ये समझौते व्यापारिक लाभ से अधिक राजनीतिक लाभ या क्षेत्रीय सुरक्षा व विकास को ध्यान में रखते हुए किये जाते हैं।
- विश्व स्तर पर तकनीकी विकास तथा अनुसंधान का व्यापार पर प्रभाव पड़ता है। नई तकनीक के आगमन से पुरानी तकनीक की मॉग अचानक कम हो जाती है। इसलिए अनेक व्यापारिक समझौते तथा गठजोड़ करने पड़ते हैं। नई तकनीक के साथ नये व्यापारिक अवसरों का उदय होता है।
- अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगी वातावरण के फलस्वरुप बाजार में अनेक प्रकार की नैतिक–अनैतिक व्यापार व्यवहार व क्रियाएं जन्म लेती हैं। चीन जैसे देशों की डम्पिंग नीति से भी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के स्वरुप में परिवर्तन आता है। डम्पिंग नीति के द्वारा कोई देश अपने उत्पादन को दूसरे देश में लागत पर या उससे भी कम कीमत पर बेचकर वहॉ के स्थानीय उद्योग धन्धों को चौपट कर देता है तथा बाद में अपने उत्पाद की कीमतें बढाकर भरपाई कर लेता है। यह कार्य वही देश करते हैं जो अनेक देशों में अपना कारोबार करते हैं।

7.4 पर्यावरण स्कैनिंग

पर्यावरण स्कैनिंग का अर्थ व्यावसायिक पर्यावरण के उस गहन परीक्षण से है जिसके द्वारा व्यवसाय के सभी आन्तरिक व वाह्य पर्यावरणीय तथ्यों की परख की जाती है। व्यवसाय की विभिन्न सम्भावित चुनौतियों का सामना करने के साथ ही भावी अवसरों की खोज का भी एक सशक्त माध्यम पर्यावरण स्कैनिंग होता है। इसके आधार पर प्रबन्धन को व्यावसायिक निर्णय लेने में सहायता मिलती है। व्यवसाय के पर्यावरण में निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं। इनमें से कुछ धीमे तथा कुछ तीव्र गति से होते हैं। अतः पर्यावरण स्कैनिंग के लिए गतिमान व्यवस्था को अपनाना आवश्यक होता है। वाह्य पर्यावरण की जॉच के लिए सुदूरदर्शी यंत्रों (उपायों) का प्रयोग किया जाता है तो आन्तरिक पर्यावरण के लिए सूक्ष्मदर्शी यंत्र की आवश्यकता होती है। इसप्रकार, पर्यावरण स्कैनिंग के अन्तर्गत उन सभी उपायों को अपनाया जाता है जो कि संस्था के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हों।

एम0 कुब्र ने पर्यावरण स्कैनिंग के तीन मार्ग बताए हैं–1. व्यवस्थित मार्ग, 2. तदर्थ मार्ग, तथा 3. परिष्कृत–रूप मार्ग।[2] व्यवस्थित मार्ग में सूचनाओं को नियमित तथा निर्धारित रूप से प्राप्त किया जाता है। तदर्थ मार्ग में आवश्यकता होने पर तत्कालीन आवश्यकता के अनुरुप सूचनाओं का संकलन किया जाता है तथा परिष्कृत–रूप मार्ग में आन्तरिक तथा वाह्य श्रोतों द्वारा प्राप्त सूचनाओं के संकलन का उपयोग द्वितीयक समंक के रूप में संगठन के लिए कर लिया जाता है।

7.4.1 पर्यावरण स्कैनिंग की आवश्यकता–

निम्नलिखित कारणों से किसी संस्था को पर्यावरण स्कैनिंग करने की आवश्यकता होती है–

1. स्थिति का मूल्यांकन–

व्यापारिक पर्यावरण किसी भी संगठन के लिए अपरिहार्य है। इसके प्रभाव से कोई भी व्यापार या संगठन अछूता नहीं रह सकता। अतः व्यापार के क्षेत्र में होने वाले परिवर्तनों पर पैनी नज़र रखना आवश्यक है। आन्तरिक पर्यावरण के अध्ययन के द्वारा संगठन के अन्दर प्रबन्धन व कर्मचारी वर्ग के अन्तर्विरोध को समझने तथा उसे दूर करने और वाह्य पर्यावरण के ज्ञान से भावी चुनौतियों तथा अवसरों को परखने का अवसर प्राप्त होता है।

2. परिवर्तन का पूर्वानुमान–

बाजार के परिवर्तन व्यापार को प्रभावित करते हैं जो संगठन इन परिवर्तनों को अपनी दूरदृष्टि से पहचान जाते हैं वे विपरीत परिस्थितियों में भी सफलता प्राप्त कर लेते हैं। व्यापारिक पर्यावरण का अध्ययन इन पूर्वानुमानों को करने में सहायक होता है।

3. **समायोजन का अवसर–**

यह कहा जाता है कि हम अपने भाग्य को बदल नहीं सकते किन्तु भविष्य के अनुमान के द्वारा हानियों से बच सकते हैं। यदि हम भविष्य में होने वाले आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक परिवर्तनों का सूक्ष्म अध्ययन करें तो वर्तमान की हानियों को भविष्य में समायोजित किया जा सकता है।

4. **पूर्व चेतावनी–**

व्यावसायिक पर्यावरण के गहन अध्ययन से बाजार में चल रही हलचलों का आभाष हो जाता है। अस्थिर बाजार की चुनौतियो की अग्रिम चेतावनी मिलने से व्यापारी को सुधारात्मक कदम उठाने के लिए समय मिल जाता है।

7.4.2 पर्यावरण स्कैनिंग की तकनीक

पर्यावरण स्कैनिंग के लिए विभिन्न विद्वानों ने अलग–अलग तकनीकों को अपनाने का मत प्रकट किया है। लेबैल एवं क्रासनर ने नौ तकनीकी समूहों को रेखांकित किया है– एकल चर वाह्यगणन, सैद्धान्तिक सीमा आवरण, गतिशील प्रणाली, प्रतिचित्रण, बहुचर पारस्परिक विश्लेषण, अव्यवस्थित विद्वत सलाह, व्यवस्थित विद्वत सलाह, व्यवस्थित अविद्वत सलाह तथा अव्यवस्थित अविद्वत सलाह।[3]

इसीप्रकार फाहे, किंग तथा नारायणन आदि ने भी दस तकनीकों को अपनाने की सलाह दी है।

पर्यावरण स्कैनिंग के लिए सामान्यतः निम्नलिखित तकनीकों का प्रयोग किया जाता है–

<u>सलाह लेना (Seeking Opinion)</u>– पर्यावरण स्कैनिंग के लिए यह सबसे पुरानी और सरल तकनीक है। इसमें अपने व्यवसाय से सम्बन्धित पक्षकारों से उनके अनुभवों की जानकारी ली जाती है तथा तदनुसार अपनी रणनीति तैयार की जाती है। सम्बन्धित पक्षकारों से आशय उन व्यक्तियों या संस्थाओं से है जो व्यवसाय की गतिविधियों से किसी भी प्रकार जुड़े हों। इसमें ग्राहक, आपूर्तिदाता या विशेषज्ञ सलाहकार सम्मिलित हो सकते हैं।

<u>वाह्यगणन (Extrapolation)</u>– वाह्यगणन सांख्यकीय अनुमान की वह विधि है जिसमें पिछले परिणामों के आधार पर भावी परिणामों का गणितीय अनुमान लगाया

जाता है। इस विधि में अनुमानों का आधार विगत अनुभव होता है अतः यह मान लिया जाता है कि निकट भविष्य में बाजार की प्रवृत्तियों में कोई बड़ा परिवर्तन नहीं होगा। अचानक होने वाले परिवर्तन इस विधि में आवृत्त नहीं होते।

अनुमान लगाना (Estimating)– यह भी पूर्व विधि की ही भॉति अनुमान लगाने का कार्य है। पूर्व के अनुभव ही इसमें भी अनुमान का आधार होते हैं किन्तु इसमें किसी सुनिश्चित गणितीय सूत्र के स्थान पर तार्किक विचार विमर्श को आधार बनाया जाता है। इसमें एकाधिक प्रणालियों का संयोजन करके पर्यावरणीय परिवर्तनों का अनुमान लगाया जाता है।

प्रतिचित्रण (Mapping)– इस तकनीक में पर्यावरण में होने वाले परिवर्तनों का विश्लेषण कर भविष्य का चित्र तैयार किया जाता है। पर्यावरण में परिवर्तन धीमी गति से होते हैं। अनेक कारकों से मिलकर व्यवसाय का वातावरण बनता है। उसमें कुछ तत्व अपेक्षाकृत तीव्र तो कुछ धीमी गति से परिवर्तित होते हैं। उनके संयुक्त प्रभाव का आकलन करने के लिए प्रतिचित्रण विधि का प्रयोग उपयोगी माना गया है।

प्रतिरुपण (Modelling) – व्यावसायिक पर्यावरण के परीक्षण की इस तकनीक में संभाव्यता, प्रतिगमन अथवा अन्य किसी सिद्धान्त की सहायता से परिवर्तनों का अनुमान लगाया जाता है। गणितीय सिद्धान्तों में जहॉ सटीक परिणाम प्राप्त होते हैं, वहीं इनकी कुछ सीमाएं भी हैं। ये स्पष्ट परिणाम तो प्रदान करते हैं किन्तु इन्हें तार्किक आधार पर जॉचना भी आवश्यक होता है।

जासूसी (Espionage)– व्यावसायिक पर्यावरण के अनुमान के लिए जासूसी का उपयोग होता आया है, यद्यपि यह एक नैतिक विधि नहीं मानी जाती है। इस विधि में सरकारी कार्यालयों अथवा प्रतियोगी फर्मों से सूचना चुराकर उनकी नीतियों का अनुमान लगाया जाता है तथा रणनीतिक लाभ के लिए उनका उपयोग किया जाता है। इस कार्य के लिए अनेक बार प्रतियोगी फर्म अथवा सरकारी विभाग के किसी अधिकारी या कर्मचारी को प्रलोभन देकर गोपनीय जानकारी प्राप्त की जाती है।

7.5 स्वॉट (SWOT) विश्लेषण

SWOT शब्द अंग्रेजी के चार अक्षर S,W,O तथा T के मेल से बना शब्द है जिसे Strength (शक्ति), Weakness (क्षीर्णता), Opportunity (अवसर) तथा Threat (चुनौती) शब्दों के प्रथम अक्षरों के संयोजन से बनाया गया है। व्यावसायिक पर्यावरण की दृष्टि से स्वॉट विश्लेषण का विशेष महत्व है। भविष्य की खोज के लिए यह आवश्यक है कि व्यावसायिक संस्था अपने सम्बन्ध में सटीक आकलन करे। उसे अपनी क्षमताएं पता होनी चाहिए तथा उनका विकास करना चाहिए। साथ ही अपनी कमजोरियों को पहचान कर उन्हें दूर करने का प्रयास करना चाहिए। पर्यावरणीय चुनौतियों से निबटने तथा अवसरों का लाभ उठाने की क्षमता ही किसी व्यापार के भविष्य को सुरक्षित तथा सुनिश्चित कर सकती है।

शक्तियॉ– प्रत्येक संगठन की अपनी कुछ विशेषताएं होती हैं। ये विशेषताएं प्रबन्धन, भौतिक संसाधन, मानव संसाधन अथवा स्थान, समय, सम्पर्क आदि से सम्बन्धित हो सकती हैं। पुश्तैनी कारोबार के साथ उसकी परम्परागत ख्याति तथा सुनिश्चित ग्राहकवर्ग बड़ी शक्ति हो सकता है तो किसी अन्य के लिए उसके राजनीतिक सम्बन्ध,

विशिष्ट तकनीकी क्षमता, कच्चे माल की उपलब्धता आदि शक्ति प्रदायक तत्व हो सकते हैं। व्यापारी को अपनी शक्ति की पहचान कर उसे बढाने तथा उसका लाभ उठाने का प्रयास करना चाहिए।

क्षीर्णताएं– सभी संगठनों की कुछ स्वभाविक कमजोरियॉ भी अवश्य होती हैं। इन्हें खोजना किसी भी संगठन के लिए अत्यन्त कठिन है क्योंकि प्रायः सम्बन्धित पक्षकार कमजोरियों के सम्बन्ध में अपनी स्पष्ट राय देने से बचते हैं। संस्था को अपनी दुर्बलताओं को पहचान कर उन्हें दूर अथवा कम करने का प्रयास करना चाहिए। उदाहरण के लिए किसी संगठन की मानव संसाधन नीति दोषपूर्ण है जिसके कारण वहॉ के कर्मचारियों में असन्तोष है किन्तु प्रबन्धनवर्ग से यह सत्य छुपाकर इसे कर्मचारियों की अनुशासनहीनता के रुप में प्रस्तुत किया जाता है। यदि संगठन की यह दुर्बलता प्रबन्धन को ज्ञात हो जाय तो वह नीति में आवश्यक सुधार कर सकता है।

अवसर– बाजार में अवसर की कभी कमी नहीं होती। कुशल प्रशासक अत्यन्त कठिन परिस्थिति में भी लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल होते हैं जबकि अन्य लोग सामान्य परिस्थिति में भी लक्ष्य से चूक जाते हैं। स्वॉट विश्लेषण के द्वारा संगठन अपने अवसरों की पहचान करते हुए भविष्य की रणनीति तैयार करता है। व्यापार का विस्तार करते समय भी यह ध्यान रखा जाता है कि जोखिम वाले क्षेत्रों को छोड़कर अवसर वाले क्षेत्रों में धन का निवेश किया जाय। वर्तमान काल में कोक पेय पदार्थों के विरुद्ध बढ़ती जनजागरुकता को देखते हुए अनेक कम्पनियों ने बोतलबन्द शुद्ध जल या फलों के रस के क्षेत्र में व्यापार विस्तार किया है। आयुर्वेद के प्रति बढते आकर्षण को देखते हुए अनेक कम्पनियों ने इस क्षेत्र को भी भावी विस्तार की दृष्टि से चुना है।

चुनौतियॉ – व्यावसायिक पर्यावरण में समय–समय पर स्थितियॉ परिवर्तित होती रहती हैं। इन परिस्थितियों के अनुसार ही व्यापारिक चुनौतियॉ भी बदलती हैं। कभी बढती हुई प्रतिस्पर्धा तो कभी सरकारी नियमों में परिवर्तन के कारण व्यापार को संकट का सामना करना पड़ जाता है। तकनीकी विकास के साथ भी इस प्रकार की समस्या आती हैं। यथा– कोर बैंकिंग सोल्यूशन (सी0बी0एस0), ओटोमेटेड टेलर मशीन (ए0टी0एम0) आदि तकनीक के आगमन से छोटे बैंकों को चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। लाभ के अवसर देखकर अनेक औद्योगिक घराने प्राथमिक शिक्षा तथा पेशेवर शिक्षा के क्षेत्र में सुविधाजनक अथवा विलासितापूर्ण स्कूलों के साथ प्रवेश कर गये हैं। इस कारण परम्परागत सामान्य स्कूलों के अस्तित्व को चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। कुशल व्यवसायी पर्यावरण के अध्ययन द्वारा पूर्व में ही इन चुनौतियों को जान जाते हैं और क्रमबद्ध रुप से नीति परिवर्तन द्वारा व्यापार का विकास करते हैं।

7.5.1 स्वॉट मेट्रिक्स–

स्वॉट विश्लेषण को 2X2 मेट्रिक्स तालिका के माध्यम से प्रस्तुत करने पर यह प्रदर्शित होता है कि शक्तियॉ और क्षीर्णताएं किसी संगठन के आन्तरिक पर्यावरण पर निर्भर होती हैं। संगठन का भौतिक संसाधन, वित्तीय संसाधन तथा मानव संसाधन उसकी शक्ति होती है किन्तु नियंत्रण के अभाव में यही तत्व संगठन की कमजोरी भी

बन जाते हैं। अवसर और चुनौतियॉ वाह्य वातावरण पर निर्भर होती हैं। राजनीतिक, आर्थिक, नियामक या अन्य कोई वातावरण पक्ष में होना एक अवसर है जिसका प्रत्येक संगठन लाभ उठाता है किन्तु इसके विपक्ष में होने पर संगठन के समक्ष चुनौती उपस्थित हो जाती हैं।

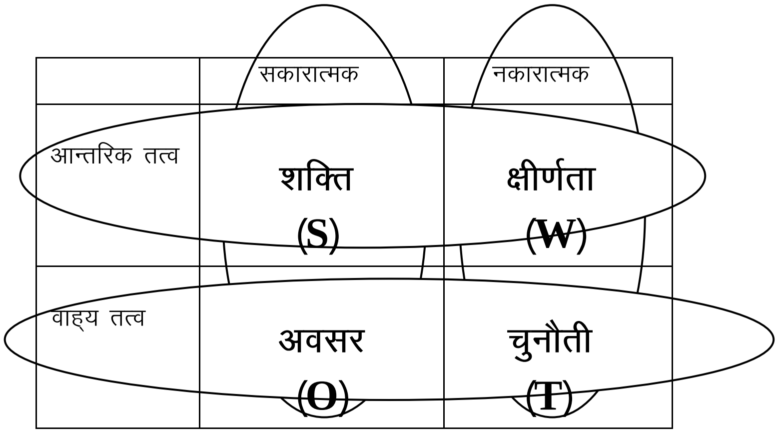

लम्बवत अध्ययन में यह प्रकट होता है कि शक्ति तथा अवसर संगठन के लिए सकारात्मक पहलू हैं तथा संगठन को लाभ प्रदान करते हैं जबकि क्षीर्णता तथा चुनौती संगठन के लिए नकारात्मक पहलू हैं जो कि संगठन को हानि पहुॅचा सकते हैं।

7.5.2 स्वॉट विश्लेषण का महत्व

स्वॉट विश्लेषण आत्म–मूल्यांकन की तकनीक है जो संगठन की स्वयं उससे पहचान कराती है। अनेक ऐसे क्षेत्र होते हैं जिनके बारे में पहले ध्यान न दिया गया हो। सामान्य सी दिखाई देने वाली बातों का प्रभाव अत्यन्त प्रभावपूर्ण हो सकता है। स्वॉट विश्लेषण निम्न कारणों से महत्वपूर्ण है–

प्रभावशाली नियोजन– प्रभावशाली नियोजन के लिए यह आवश्यक है कि संगठन को अपने सम्बन्ध में सही जानकारी हो। वित्तीय नियंत्रण, मानव संसाधन प्रबन्धन, विक्रय सम्वर्द्धन आदि के लिए नीति का निर्माण करते समय बाहरी तथा आन्तरिक शक्तियों और शिथिलताओं की जानकारी होनी आवश्यक है। स्वॉट विश्लेषण के द्वारा शक्तियों व शिथिलताओं के साथ ही अवसरों व चुनौतियों का भी अध्ययन किया जाता है। इस विश्लेषण से संगठन को अपनी योजनाएं बनाने में आसानी होती है।

संसाधनों का समुचित दोहन– किसी मशीन में अनेक छोटे–छोटे पुर्जे होते हैं तथा सभी पुर्जे उपयोगी होते हैं। संगठन में भी अनेक मानव रुपी पुर्जे कार्य करते हैं जो अन्य भौतिक संसाधनों को भी नियन्त्रित करते हैं। इन संसाधनों का अनुकूलतम प्रयोग करने के लिए मानव संसाधन का पूर्ण मनोयोग से कार्य करना तथा उच्च मनोबल का होना आवश्यक है। स्वॉट विश्लेषण संसाधनों का पूर्ण परीक्षण करके संस्था के लिए उपयुक्ततम नीति का निर्माण करने में सहायक होता है। इससे संस्था अपने भौतिक और मानव संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग करने में सफल होती है।

प्रतिस्पर्धा का सामना–

व्यापार जोखिम का ही दूसरा नाम है। कभी भी कोई छोटा का गलत निर्णय व्यापार को हानि के दलदल में धकेल सकता है। प्रतियोगिता के इस युग में व्यापारी की किसी भी त्रुटि का लाभ प्रतिस्पर्धी फर्म द्वारा इसप्रकार उठाया जाता है कि त्रुटिकर्ता फर्म का अस्तित्व ही संकट में आ जाता है। प्रतियोगिता के इस युग में स्वॉट विश्लेषण व्यवसायी को अपने बारे में गहराई से जानने तथा अपनी क्षमताओं का भरपूर उपयोग करने का अवसर प्रदान करता है। अपनी कमजोरियों को जानने से उनको दूर करने का अवसर मिलता है तथा प्रतिस्पर्धा का सामना करने में मदद मिलती है।

कार्य संपादन में लोच– स्वॉट विश्लेषण के द्वारा व्यापारिक संस्था अपने संसाधनों तथा नीतियों की परख करती है तथा जहॉ आवश्यक हो उनमें परिवर्तन करती है। अपने निर्णयों में संस्था के शक्तिशाली बिन्दुओं का लाभ उठाने का प्रयास किया जाता है तथा कमियों को न्यूनतम किया जाता है। इस प्रकार स्वॉट विश्लेषण में सदैव नीति व निर्णयों में संशोधन, सम्वर्द्धन तथा परिवर्तन की संभावना बनी रहती है। यह संस्था की निरन्तर प्रगति में सहायक होता है।

7.6 सारांश

पर्यावरण शब्द परि (चारों ओर) तथा आवरण (पर्दा करना या ढक देना) शब्दों की सन्धि से बना है। इस प्रकार पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ है परिवृत्त अर्थात् सब ओर से ढका होना। व्यावहारिक रुप में हमारे आसपास की सभी वस्तुएं जो हमें प्रभावित करती हैं पर्यावरण की परिधि में सम्मिलित की जाती हैं। व्यवसाय जगत में भी अनेक ऐसे कारक होते हैं जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रुप से व्यापार को प्रभावित करते हैं। सम्मिलित रुप से इन्हें व्यावसायिक पर्यावरण कहा जाता है। व्यावसायिक पर्यावरण का निर्धारण विभिन्न पक्षकारों के आधार पर होता है। इनमें से कुछ पक्षकार संगठन के अन्दर तथा कुछ संगठन से बाहर रहते हुए पर्यावरण को प्रभावित करते हैं। आन्तरिक पर्यावरण में पक्षकारों में व्यापार स्वामी, प्रबन्धन तथा कर्मचारीवर्ग को तथा वाह्य पर्यावरण में ग्राहक, आपूर्तिदाता, सरकार, समाज आदि को सम्मिलित किया जाता है।

व्यावसायिक पर्यावरण के प्रकारों में आन्तरिक पर्यावरण तथा वाह्य पर्यावरण अपने विभिन्न रुपों में प्रदर्शित होता है। आन्तरिक पर्यावरण के अन्तर्गत प्रबन्ध दर्शन, संस्था के मानव, भौतिक एवं वित्तीय संसाधन के अतिरिक्त संस्था की छवि एवं प्रतिष्ठा, शोध एवं विकास सुविधाएं और आन्तरिक सम्बन्धों को सम्मिलित किया जाता है। वाह्य पर्यावरण में बाजार पर्यावरण, तकनीकी पर्यावरण, आर्थिक पर्यावरण, नियामक पर्यावरण, राजनीतिक पर्यावरण, अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण तथा सामाजिक सांस्कृतिक पर्यावरण का अध्ययन किया जाता है।

व्यवसाय के सभी आन्तरिक व वाह्य पर्यावरणीय तथ्यों की परख करने के लिए पर्यावरण स्कैनिंग की जाती है। संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग तथा भविष्य का अनुमान लगाने की दृष्टि से पर्यावरण स्कैनिंग महत्वपूर्ण है। इसके लिए सम्बन्धित पक्षकारों से सलाह लेना, सांख्यकीय तथा तार्किक आधार पर अनुमान लगाना तथा पर्यावरणीय परिस्थितियों का प्रतिचित्रण एवं प्रतिरुपण किया जाता है। प्रतियोगी फर्मों

की जासूसी तथा गोपनीय सूचनाओं को जुटाने का कार्य भी स्कैनिंग में किया जाता है।

संगठन द्वारा आत्म मंथन की दृष्टि से SWOT विश्लेषण किया जाता है। इसमें संगठन की शक्तियों, क्षीर्णताओं, अवसरों तथा चुनौतियों का अध्ययन करके व्यापार की सफलता हेतु नीतियों का निर्माण किया जाता है। स्वॉट विश्लेषण से भावी रणनीति को तय करने तथा व्यापार में वांछित सफलता प्राप्त करने में सहायता मिलती है।

7.7 शब्दावली

व्यावसायिक पर्यावरण	व्यवसाय से सम्बन्धित सभी पक्षकार व प्रक्रियाएं जो कि व्यापार को प्रभावित करती हैं और उसकी दिशा निर्धारित करती हैं।
संदृष्टि	दृष्टिपत्र जो दीर्घकालीन विकास की नीतियों का आधार बनता है।
ध्येय	संदृष्टि आधारित लक्ष्य जिन्हें व्यावसायिक संस्था प्राप्त करने का प्रयास करती है।
आर्थिक सुधार नीति	आर्थिक उदारीकरण, निजीकरण तथा वैश्वीकरण नीतियों का पैकेज
विनिवेश	सरकारी भागीदारी घटाने के उद्देश्य से सरकारी सम्पत्तियों को निजी हाथों में बेचने की प्रक्रिया
स्कैनिंग	व्यावसायिक पर्यावरण के गहन परीक्षण की तकनीक जिसके द्वारा व्यवसाय के आन्तरिक व वाह्य पर्यावरणीय तथ्यों की परख की जाती है।
प्रतिचित्रण	परिवर्तनों का विश्लेषण कर भविष्य के पर्यावरण का चित्र तैयार करने की तकनीक
प्रतिरुपण	पर्यावरण स्कैनिंग की इस तकनीक में गणितीय विधि के माध्यम से पर्यावरण सम्बन्धी अनुमान लगाये जाते हैं
स्वॉट	आन्तरिक मूल्यांकन की एक तकनीक जिसमें संगठन द्वारा अपनी शक्तियों, क्षीर्णताओं, अवसरों तथा चुनौतियों का आकलन किया जाता है।
सिडकुल	स्टेट इण्डस्ट्रियल एण्ड इन्फ्रास्ट्रक्चर कार्पोरेशन ऑफ उत्तराखण्ड लिमिटेड (उत्तराखण्ड राज्य औद्योगिक एवं अवस्थापना विकास निगम लिमिटेड)
एस0ई0जेड़0	स्पेशल इकोनोमिक जोन (विशेष आर्थिक क्षेत्र)
ए0टी0एम0	ऑटोमेटेड टेलर मशीन
सी0बी0एस0	कोर बैंकिंग सोल्यूशन
स्वॉट	स्ट्रेन्थ(शक्ति), वीकनैस(क्षीर्णता), अपार्चुनिटी(अवसर), थ्रेट(चुनौती) शब्दों के प्रथमाक्षर

7.8 बोध प्रश्न

(क) अपनी प्रगति जॉचें

बताएं निम्न कथन सत्य हैं अथवा असत्य–

(अ) व्यावसायिक पर्यावरण स्थैतिक प्रकृति का होता है। (सत्य/असत्य)

(आ) ग्राहक व्यावसायिक पर्यावरण के वाह्य पक्षकार होते हैं। (सत्य/असत्य)

(इ) विनिवेश प्रक्रिया निजीकरण की नीति का एक अंग है। (सत्य/असत्य)

(ई) नियामक पर्यावरण तथा राजनीतिक पर्यावरण एक ही होते हैं। (सत्य/असत्य)

(उ) डम्पिंग नीति अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा लागू की जाती है। (सत्य/असत्य)

(ऊ) विश्व व्यापार संगठन द्वारा लिए गये निर्णयों से व्यापारिक पर्यावरण प्रभावित होता है। (सत्य/असत्य)

(ख) अपनी प्रगति जॉचें

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए–

1. .... (वाह्यगणन/प्रतिचित्रण) में पिछले परिणामों के आधार पर गणितीय विधि से संगणना द्वारा आगामी वर्षों के परिणामों का अनुमान लगाया जाता है।
2. व्यावसायिक जासूसी को पर्यावरण स्कैनिंग की .... (नैतिक/अनैतिक) तकनीक माना जाता है।
3. किसी व्यावसायिक संगठन की समयबद्ध व अच्छा कार्य करने वाली फर्म के रुप में ख्याति उसकी .... (शक्ति/चुनौती) है।
4. अवसर तथा चुनौती .... (वाह्य/ आन्तरिक) वातावरण द्वारा निर्धारित होते हैं।
5. क्षीर्णता तथा चुनौती संगठन के .... (सकारात्मक /नकारात्मक) पक्ष हैं।

7.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

(क) अपनी प्रगति जॉचें

अ) असत्य (आ) सत्य (इ) सत्य (ई) असत्य (उ) असत्य
(ऊ) सत्य

(ख) अपनी प्रगति जॉचें

(1) वाह्यगणन, (2) अनैतिक, (3) शक्ति, (4) वाह्य, (5) नकारात्मक

7.10 स्वपरख प्रश्न

लधु उत्तरीय प्रश्न–

(अ) व्यावसायिक पर्यावरण के निर्धारण में प्रबन्ध दर्शन की भूमिका को समझाइए।

(आ) राजनीतिक परिवर्तन किस प्रकार व्यावसायिक पर्यावरण को प्रभावित करते हैं?

(इ) तकनीकी विकास के व्यावसायिक पर्यावरण पर प्रभाव को उदाहरण सहित समझाइए।

(ई) पर्यावरण स्कैनिंग किसी संगठन के लिए क्यों महत्वपूर्ण है?

(उ) स्वॉट मेट्रिक्स को संक्षेप में समझाइए।

निबन्धात्मक प्रश्न–

1. व्यावसायिक पर्यावरण से क्या आशय है? इसके विविध पक्षकार कौन से हैं? व्यावसायिक पर्यावरण के निर्धारण में सरकार की भूमिका को समझाइए।
2. व्यावसायिक पर्यावरण के आन्तरिक पक्षकार कौन से हैं? क्या आप इस कथन से सहमत हैं कि आन्तरिक पक्षकार किसी भी कठिन परिस्थिति में संगठन को वाह्य संकटों से बचाते हैं।
3. राजनीति, समाज तथा नियमन व्यवस्था व्यावसायिक पर्यावरण को किस प्रकार प्रभावित करते हैं? अपने देश के संदर्भ में विगत दो दशकों में हुए इन परिवर्तनों को उदाहरण सहित समझाइए।
4. पर्यावरण स्कैनिंग से क्या आशय है? इसका क्या महत्व है? पर्यावरण स्कैनिंग की विभिन्न तकनीकों को समझाइए।
5. स्वॉट विश्लेषण क्या है? आत्म मूल्यांकन की विधि के रुप में स्वॉट विश्लेषण की उपयोगिता का वर्णन कीजिए।
6. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–
   (अ) व्यापार पर्यावरण के आन्तरिक घटक
   (ब) अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण के प्रभाव
   (स) पर्यावरण स्केनिंग में जासूसी का उपयोग
   (द) स्वॉट मेट्रिक्स की उपयोगिता

7.11 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Davis K., The challenge of Business, (New York,Mc Graw Hill, 1975), p.430
2. Kubr,M. (Ed), Managing a management development institution (Geneva: International Labour Organisation, 1982), p. 88-89
3. LeBell, D and OJ Krasner, Selecting environmental forecasting techniques for business planning requirements, Academy of Management Review, (July 1977), p. 373
4. Business Policy and Strategic Management, Azhar Kazmi, Tata McGraw-Hill Publishing Company Limited, New Delhi.
5. Strategic Management, David F, Macmillan Publishing Company, NY
6. Business Policy and Strategic Management, P. Subba Rao, Himalaya Publishing House, Mumbai.
7. Business Policy and Strategic Management, GV Satya Sekhar, I K International Publishing House, New Delhi.

इकाई–8 संगठनात्मक परीक्षण

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना
8.2 संसाधनों का परीक्षण
8.3 दोहन क्षमता का परीक्षण
8.4 मूल्य श्रृंखला परीक्षण
8.5 शक्ति एवं दुर्बलताओं का परीक्षण
8.6 संख्यात्मक परीक्षण
8.7 गुणात्मक परीक्षण
8.8 समग्र विश्लेषण
8.9 तुलनात्मक शक्ति परीक्षण
8.10 निगम स्तरीय क्षमताएं एवं निदान
8.11 सारांश
8.12 शब्दावली
8.13 बोध प्रश्न
8.14 बोध प्रश्नों के उत्तर
8.15 स्वपरख प्रश्न
8.16 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः

- आन्तरिक पर्यावरण को समझ सकें।
- संगठनात्मक क्षमता के तत्वों का वर्णन कर सकें।
- संगठन के संसाधन, व्यवहार, दुर्बलता, प्रभाव आदि का वर्णन कर सकें।
- संगठनात्मक परीक्षण की तकनीक का विवेचन कर सकें।
- संगठनात्मक परीक्षण की प्रक्रिया का वर्णन कर सकें।

8.1 प्रस्तावना

व्यवसाय की रणनीति के प्रतिपादन में आन्तरिक व वाह्य तत्वों का योगदान होता है। आन्तरिक तत्वों में संगठन के स्वामी, प्रबन्धक तथा कर्मचारी सम्मिलित होते हैं जबकि वाह्य तत्वों में ग्राहक, आपूर्तिदाता, सरकार, समाज आदि तत्वों को सम्मिलित किया जाता है। (इनके सम्बन्ध में पूर्व अध्याय में वर्णन किया गया है।) आन्तरिक तत्व संगठन के नियंत्रण में होते हैं जबकि वाह्य तत्व संगठन को बाहर से प्रभावित करते हैं। संगठन आन्तरिक तत्वों को नियंत्रित करने तथा वाह्य तत्वों के अनुरुप स्वयं को व्यवस्थित करने का निरन्तर प्रयास करता है। आन्तरिक तत्वों में मानवीय तत्वों के साथ ही संगठन के भौतिक संसाधनों (यथा– वित्त, सामग्री, मशीन व भवन आदि) की भी यथेष्ट भूमिका होती है। रणनीतिक प्रतिपादन की दृष्टि से संगठनात्मक परीक्षण

किया जाना महत्वपूर्ण माना जाता है। संगठनात्मक परीक्षण के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं का परीक्षण किया जाता है–

1. संसाधनों का परीक्षण
2. दोहन क्षमता का परीक्षण
3. मूल्य श्रृंखला परीक्षण
4. शक्ति एवं दुर्बलताओं का परीक्षण
5. संख्यात्मक परीक्षण
6. गुणात्मक परीक्षण
7. समग्र विश्लेषण
8. तुलनात्मक शक्ति परीक्षण
9. निगम स्तरीय क्षमताएं एवं निदान

8.2 संसाधनों का परीक्षण

किसी संगठन को बनाने, चलाने और उसे सफल बनाने में उसके संसाधनों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। संसाधन वे भौतिक अथवा मानवीय कारक होते हैं जो संगठन को उसके उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता प्रदान करते हैं। मानव संसाधन (अनुभवी उच्च प्रबन्धकों, प्रशिक्षित व योग्य कार्मिकों तथा कुशल श्रमिकों) को संगठन के भौतिक संसाधनों (सम्पत्तियों) के रखरखाव तथा संचालन द्वारा अनुकूलतम परिणाम प्रदान करने होते हैं। उपरोक्त के अतिरिक्त कुछ अभौतिक कारक भी इसमें योगदान देते हैं। ये हैं– कर्मचारियों की निष्ठा, विश्वास, ज्ञान, विचारशीलता तथा संगठन की ख्याति आदि। चूंकि ये गुण प्रत्यक्ष नहीं होते हैं और मनुष्य के साथ जुडे होते हैं अतः प्रायः इन्हें मानवीय कारकों में ही सम्मिलित कर लिया जाता है।

संसाधनों की पहचान करना, उन्हें विकसित करना, उन्हें बनाये रखना तथा प्रतिस्पर्धियों से मुकाबला करने में उनका कौशलपूर्ण उपयोग करना संगठन को श्रेष्ठता प्रदान करता है।

संसाधनों का वर्गीकरण

मानव संसाधन	भौतिक संसाधन	अन्य संसाधन
प्रबन्धक	भूमि व भवन	तकनीक, पेटेन्ट आदि
तकनीशियन	मशीनरी	कार्य की दशाएं, मनोबल
विशेषज्ञ अधिकारी	वित्त	नीतियॉ एवं समझौते
कर्मचारी	कच्चा माल	औद्योगिक सम्बन्ध व अनुशासन
श्रमिक आदि	स्टोर, परिवहन आदि	ख्याति आदि

मानव संसाधन– प्रबन्धन के विभिन्न तत्वों में मानव एक महत्वपूर्ण तत्व है तथा साथ ही यह अन्य तत्वों (माल, मशीन, वित्त, बाजार व तकनीक) का नियंत्रक भी है। अतः मानव संसाधन का नियंत्रण व उपयोग किसी संगठन की सबसे बड़ी शक्ति

होता है। प्रबन्धक, अधिकारी, तकनीकी विशेषज्ञ, कर्मचारी, श्रमिक आदि मिलकर संगठन को शक्तिशाली बनाते हैं। ये ही भौतिक संसाधनों के प्रयोग के द्वारा अधिकतम उपयोगिता का सृजन करते हैं तथा नीतियों का निर्माण व क्रियान्वयन भी करते हैं।

भौतिक संसाधन– संगठन का निर्माण उसके भौतिक संसाधनों की आधारशिला पर होता है। संरचनात्मक संसाधनों (भूमि व भवन आदि) के स्तर से ही व्यापार का स्तर निर्धारित होता है। वित्त की उपलब्धता से ही समस्त उत्पादन व विपणन योजनाओं को आकार दिया जाता है। मशीनों का स्तर उत्पादन तकनीक के निर्धारण व गुणवत्ता सुनिश्चयन का कार्य करता है।

अन्य संसाधन– भौतिक तथा मानव संसाधन के अतिरिक्त अन्य अनेक अभौतिक कारक होते हैं जो संगठन की दशा व दिशा निर्धारित करते हैं। इसमें संगठन में कार्य तकनीक, पेटेन्ट, कार्य का वातावरण, कर्मचारियों का मनोबल, कार्य की दशाएं, श्रम समस्याएं, व्यापार नीति व ख्याति आदि का महत्वपूर्ण योगदान होता है। इसमें से अधिकांश कारक मानव संचालित हैं किन्तु भौतिक व मानव संसाधनों के तालमेल से ही यह संसाधन प्रभावी कार्य कर पाते हैं। एक बार ये कारक सक्रिय हो जाये ंतो अन्य साधनों के परिवर्तन का प्रभाव नियंत्रित कर सकते हैं। उदाहरण के लिए यदि किसी संगठन में कार्य की दशाएं अच्छी हैं तथा औद्योगिक सम्बन्ध सौहार्दपूर्ण हैं तो स्टाफ का परिवर्तन होने पर भी पूर्ववत कार्य होता रहता है।

संसाधन का महत्व– संगठन के पास कुछ संसाधन स्वतः उपलब्ध होते हैं, कुछ को प्राप्त किया जाता है तथा कुछ का विकास संगठन के अन्दर ही किया जाता है। संगठन के संसाधन ही उसकी असली शक्ति होती है। रणनीति की दृष्टि से संगठन अपने संसाधनों को व्यापार हित में प्रयोग करता है तथा संसाधनों की कमी का अनुमान लगाकर अन्तराल को पाटने तथा दुर्बलताओं का सामना करने का प्रयत्न करता है। किसी संगठन में संसाधनों का महत्व निम्नलिखित है–

अ) **प्रतिस्पर्धात्मक श्रेष्ठता**– प्रत्येक संगठन के पास उसके अपने संसाधन होते हैं चाहे इन्हें विरासतन प्राप्त किया जाय अथवा विकसित किया जाये। ये संसाधन उस संगठन के विशेषता होते हैं तथा अन्य संगठनों के साथ प्रतिस्पर्धा के समय ये संगठन की शक्ति बनकर उभरते हैं। आसाम की चाय, मैसूर का सिल्क, काश्मीर का पश्मीना आदि स्थान के आधार पर श्रेष्ठता प्राप्त करते हैं। कोकाकोला, मैगी आदि के पास विशिष्ट स्वाद के कारण प्रतिस्पर्धात्मक बढ़त है। डोमिनोज तीस मिनट में पिज्जा की होम डिलीवरी की अपनी विशिष्ट सेवाओं तथा स्टेट बैंक अपनी अधिकतम शाखाओं तथा तकनीकी श्रेष्ठता (ई–बैंकिंग, फोन बैंकिग, ई–कार्नर आदि) के कारण अन्य से आगे रहते हैं। कुछ संस्थाओं की सेविवर्गीय नीति अथवा विपणन नीति उन्हें प्रतिस्पर्धी संस्थाओं की तुलना में श्रेष्ठता प्रदान करते हैं।

आ) **संसाधन की न्यूनता तथा अनुकरणीयता**– संसाधनों की पर्याप्तता तथा अनूठापन भी महत्वपूर्ण होता है। यदि फर्म के पास किसी ऐसे संसाधन की पर्याप्तता हो जिसका अन्य प्रतिस्पर्धी फर्मों के पास अभाव हो तो फर्म का महत्व बढ़ जाता है। इसी प्रकार संस्था के पास उपलब्ध संसाधन यदि इस प्रकार के हैं जिनकी नकल नहीं की जा सकती है तो यह महत्वपूर्ण होता है। कोका कोला द्वारा अपना फार्मूला न देने

पर उसे 1977 में भारत से जाने को विवश होना पड़ा तथापि उसने भारत की सरकार को अपना फार्मूला नहीं दिया।

इ) वैकल्पिकता– संसाधनों के वैकल्पिक प्रयोग संभव हैं अतः उपलब्ध संसाधन का उपयुक्ततम उपयोग किया जाना संगठन की प्राथमिकता होती है। उपयोग के परिवर्तन द्वारा भी नई वस्तु अथवा प्रणाली का सृजन किया जा सकता है। सूती वस्त्र के स्थान पर टेरीन मिश्रित वस्त्र तथा जूट के बोरे के स्थान पर प्लास्टिक के बोरे का चलन विकल्पों की खोज के कारण ही संभव हो सका। नई खोज होने पर पुरानी वस्तुओं का अप्रचलित होना भी स्वभाविक है। कम्प्यूटर के चलन के बाद टाइपराइटर के युग का अन्त हो गया। इसीप्रकार मोबाइल फोन के आविष्कार के बाद लैण्डलाइन फोन, पेजर, घड़ी, कैलकुलेटर आदि की मॉग में कमी आ गई है।

ई) लाभप्रदता– कम्पनी द्वारा तैयार किया गया उत्पाद विभिन्न व्यक्तियों व फर्मों के प्रयास सफलता प्राप्त करता है। इसमें उत्पादक, कच्चे माल के आपूर्तिदाता, विक्रय मध्यस्थ (थोक विक्रेता, फुटकर विक्रेता आदि), सेवाप्रदाता आदि का योगदान रहता है तथा वे सभी लाभ में भी अपनी भूमिका के अनुसार लाभ चाहते हैं। संगठन के संसाधन केवल अपने लिए नहीं वरन् समस्त हितधारकों को लाभ प्रदान करते हैं। राबर्ट एम0 ग्रान्ट ने विविध संसाधनों के द्वारा प्रतिस्पर्धात्मक स्तर पर लाभ की दर प्राप्त करने को चित्रमय ढंग से प्रदर्शित किया है–

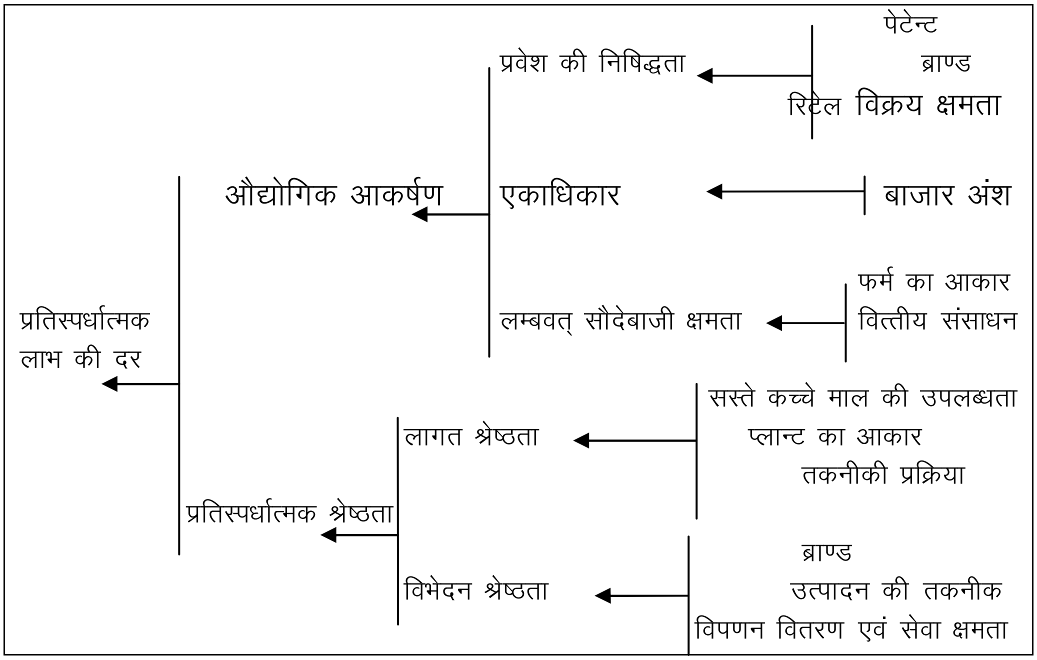

रणनीतिक लाभ के लिए संसाधनों की उपलब्धता तथा उनकी विशिष्टता के आधार पर श्रेष्ठता प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। इसके लिए ग्राण्ट ने औद्योगिक आकर्षण तथा प्रतिस्पर्धात्मक श्रेष्ठता को सम्मिलित किया है। यदि संगठन को पेटेन्ट या ब्राण्ड के उपयोग का अधिकार प्राप्त है अथवा उसकी खुदरा विक्रय क्षमता अच्छी है तो यह अन्य फर्मों के बाजार में प्रवेश को हतोत्साहित करती है।

बाजार में एकाधिकार अथवा नेतृत्वकारी स्थिति होने पर या फिर फर्म के वृहदाकार तथा वित्तीय रुप में सुदृढ़ होने पर फर्म लाभकारी स्थिति में होती है तथा यह औद्योगिक आकर्षण लाभ दर में वृद्धिकारक होता है।

लाभ की दूसरी स्थिति प्रतिस्पर्धात्मक श्रेष्ठता है। जब एक फर्म अन्य की तुलना में लागत अथवा विक्रय की दृष्टि से लाभ की स्थिति में होती है तब भी लाभ की दर पक्ष में होती है। फर्म को सस्ता व अच्छा कच्चा माल प्राप्त हो या उन्नत तकनीक से उत्पादन हो या फिर बड़ी मात्रा में उत्पादन से पैमाने की बचत प्राप्त होती हो तो लागत लाभ होता है। यदि फर्म विशिष्ट प्रकार के उत्पादन तकनीक या विशिष्ट सेवा द्वारा अपने को अन्य फर्मों से श्रेष्ठ सिद्ध कर सकती है तो भी लाभ में वृद्धि प्राप्त होती है।

संगठनात्मक संसाधन तथा संगठनात्मक व्यवहार–

संगठन के अस्तित्व में उसके संसाधनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसका विश्लेषण दो प्रकार से किया जा सकता है– संसाधनों की उपलब्धता तथा संसाधनों का उपयोग। उपलब्धता परम्परागत भी हो सकती है और अर्जित भी किन्तु उसका उपयोग ही यह निर्धारित करेगा कि संसाधन का प्रयोग कितना प्रभावशाली है। संगठनात्मक व्यवहार संसाधनों के उचित उपयोग को सुनिश्चित करता है। यह संगठन के अस्तित्व व चरित्र का विकास करता है। नेतृत्व की गुणवत्ता, प्रबन्धकीय दर्शन, मूल्य एवं सांस्कृतिक सहयोग, कार्य की दशाएं व कार्य वातावरण, शक्तियों के प्रयोग आदि अनेक ऐसे कारक हैं जो संगठनात्मक व्यवहार को नियमित एवं नियंत्रित करते हैं।

संगठन में संसाधन की उपलब्धता तथा उसका उपयोग दोनों ही समान रुप से महत्वपूर्ण हैं। बिना संसाधन के उपयोग क्षमता अर्थहीन है तथा उपयोग क्षमता के अभाव में संसाधनों का उचित लाभ संगठन को नहीं मिल पाता है। कभी–कभी तो कुशल उपयोग क्षमता के अभाव में संसाधन अपने संगठन पर भार हो जाते हैं।

8.3 दोहन क्षमता का परीक्षण

क्षमता के दोहन का अर्थ है संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग करना जिससे कि संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति सुनिश्चित की जा सके। संसाधनों की मात्रा के आधार पर किसी संगठन की स्थिति का आकलन किया जाता है। वस्तुतः संसाधन संगठन की सम्पन्नता का प्रतीक होते हैं किन्तु महत्वपूर्ण यह है कि उपलब्ध संसाधनों का दोहन संगठन द्वारा किस प्रकार किया जा रहा है। यदि किसी परिवार में सम्पत्तियों का बॅटवारा दो पुत्रों के बीच बराबर किया जाये तो भी कुछ वर्षों के अन्तराल में उनकी आर्थिक सम्पन्नता में पर्याप्त अन्तर आ जाता है। इसका सामान्य सा कारण है संसाधनों का उपयोग करने की व्यक्तिगत योग्यता। जिस संगठन में मानव संसाधन का मनोबल उच्च होता है वहॉ भौतिक संसाधनों का उपयोग अनुकूलतम स्तर पर होता है। ऐसे संगठनों में नीतियों का निर्माण तथा उनका क्रियान्वयन इस प्रकार किया जाता है कि वित्त से अधिकतम प्रत्याय दर प्राप्त होती है, उत्पादन दोषरहित होता है, कार्मिकों की उत्पादकता अधिक होती है तथा हड़ताल आदि में समय व धन की बर्बादी नहीं होती है।

दोहन क्षमता का परीक्षण करने के लिए संगठन अनेक उपायों को अपनाता है–

- मानव संसाधन की बौद्धिक क्षमता का विकास किया जाता है। यह माना जाता है कि किसी संगठन की क्षमताओं का विकास उसकी सम्पत्तियों व अन्य भौतिक सामग्री से नहीं होता वरन् इसमें मानव संसाधन के ज्ञान, योग्यता, बौद्धिक क्षमता, नवोन्मेष, रचनात्मकता, समर्पण आदि गुणों का विशेष योगदान होता है। अतः आधुनिक संगठनों में इस आशय से विशेष ज्ञानार्जन सत्र आयोजित किये जाते हैं। संगठन में प्रथम प्रवेशी कर्मियों को अभिविन्यास कार्यक्रम (ओरिएन्टेशन प्रोग्राम) का आयोजन किया जाता है। निरन्तर प्रशिक्षण के द्वारा ज्ञान व नवीनतम सूचनाओं का सम्प्रेषण किया जाता है। इसके लिए पुनश्चर्या (रिफ्रेशर) कार्यक्रमों का नियमित आयोजन किया जाता है। संगठन का मानव संसाधन विकास विभाग इन कार्यक्रमों का आयोजन स्वयं अथवा वाह्य संगठनों के माध्यम से करता है।
- अन्य संसाधनों के विकास के लिए संगठनों में शोध व विकास विभाग स्थापित किये जाते हैं। इनमें उत्पादन की नवीन तकनीकों का विकास किया जाता है तथा कार्यशालाओं व प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से उन्हें क्रियान्वित किया जाता है। विपणन तथा कार्यालय प्रबन्धन में भी नवोन्मेषी योजनाओं को प्रारम्भ किया जाता है जिससे समय व धन की बचत हो सके, कार्य की दशाओं में सुधार हो तथा संगठन की छवि आन्तरिक व वाह्य जगत में बेहतर हो सके। ग्राहकों के साथ सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध विकसित करना, सामान की आपूर्ति ससमय करना, विक्रयोपरान्त सेवा की सुनिश्चितता आदि के द्वारा संसाधनों के सर्वोत्तम उपयोग को सुनिश्चित किया जाता है।
- अपने ग्राहकों को संतुष्ट रखने के उद्‌देश्य से सातों दिन चौबीस घण्टे सेवा प्रदान करने के लिए अनेक पालियों में कार्य किया जाता है, कम्प्यूटरीकरण तथा अन्य मशीनों का प्रयोग किया जाता है। ऐसा करने से संगठन के पास उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम उपयोग सुनिश्चित किया जाता है। न्यूनतम लागत व अधिकतम लाभ का भी प्रयास भी इस दृष्टि से महत्वपूर्ण होता है। बैंकों द्वारा ए0टी0एम0 के प्रयोग के द्वारा बैंक परिसर में आने वाले ग्राहकों का दबाव कम किया गया है तथा ग्राहक सेवा को 24X7 प्रदान किया है।

विभिन्न व्यापारिक संस्थाओं द्वारा अपने उत्पाद को प्रतिष्ठित करने के लिए विशिष्ट क्षमता का प्रदर्शन किया जाता है। यह क्षमता उत्पाद की पहल, गुणवत्ता, उपलब्धता, पैकिंग, परिवहन, विपणन, सेवा आदि से सम्बन्धित हो सकती है। किसी क्षेत्र में सबसे पहले अपना उत्पाद लाना एक स्वभाविक बढ़त प्रदान करता है। कुछ वस्तुएं अपने विशिष्ट स्वाद (मैगी, कोका कोला) से तो कुछ अपने आकार से (स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया) लाभ प्राप्त करते हैं। मोटोरोला मोबाइल फोन ने अपनी बिक्री फ्लिपकार्ट के माध्यम से सीधे ग्राहक को करके विपणन में श्रेष्ठता साबित की। इसी प्रकार एक्वागार्ड वाटर प्योरीफायर तथा यूरोक्लीन वैक्यूम क्लीनर की बिक्री वैयक्तिक विक्रय के माध्यम से करके कम्पनी ने बाजार में नेतृत्वकारी स्थान बनाया। हिन्दुस्तान

यूनीलीवर अपनी विक्रय इकाइयों के नेटवर्क के कारण किसी भी प्रोडक्ट को जन–जन तक पहुॅचाने की क्षमता रखता है।

8.4 मूल्य श्रृंखला विश्लेषण

व्यापार जगत में सफलता के लिए सबसे महत्वपूर्ण कारक है मूल्य निर्धारण। मूल्य निर्धारण के लिए लागत तथा लाभ का इस प्रकार समन्वय किया जाता है कि स्पर्धात्मक मूल्य निर्धारित किया जा सके। बाजार दशाओं के अनुरुप मूल्य निर्धारण की अलग–अलग नीतियॉ फर्म द्वारा तय की जा सकती हैं किन्तु सभी का उद्देश्य अधिकाधिक बिक्री द्वारा बाजार पर कब्जा जमाना ही होता है। इसके लिए संगठन द्वारा मूल्य श्रृंखला विश्लेषण की तकनीक अपनाई जाती है। पी0सुब्बाराव के अनुसार– मूल्य श्रृंखला विश्लेषण में न्यून लागत के लाभ तथा अधिक लागत की हानियों वाले क्षेत्रों का परीक्षण किया जाता है।

मूल्य श्रृंखला विश्लेषण का विचार एम0ई0पोर्टर द्वारा सन् 1985 में दिया गया। मूल्य श्रंखला में आपस में जुड़ी हुई अनेक मूल्याधारित कड़ियों के द्वारा संगठन अपने उद्देश्यों को प्राप्त करता है। इस प्रणाली के द्वारा वस्तु की लागत में सम्मिलित विभिन्न तत्वों का विवेचन किया जाता है तथा जिन क्षेत्रों में लागत में कटौती की संभावना होती है उन्हें चिन्हित किया जाता है। न्यूनतम लागत के द्वारा अधिकतम बिक्री तथा अधिकतम लाभ की प्राप्ति प्रत्येक फर्म का प्रयास होता है। किसी प्रतिस्पर्धात्मक बाजार में फर्म को वही मूल्य स्वीकार करना होता है जो कि मॉग व पूर्ति की शक्तियॉ तय करती हैं अतः लाभ बढाने के लिए लागत का नियन्त्रण ही एकमात्र उपाय होता है। लागत नियंत्रण के लिए किसी फर्म को प्राथमिक एवं सहायक गतिविधियों का परीक्षण करना होता हैं–

<u>प्राथमिक गतिविधियॉ–</u>

प्राथमिक गतिविधियों के अन्तर्गत उन क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है जिनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध उत्पाद के निर्माण अथवा बिक्री से होता है अर्थात् कच्चे माल की प्राप्ति से लेकर उत्पादन, भंडारण, यातायात, विक्रय व विक्रयोपरान्त सेवाओं से सम्बन्धित सभी कार्यों की श्रंखला का परीक्षण द्वारा लागत को नियंत्रित करके मूल्यवर्द्धन करने का प्रयास किया जाता है–

आन्तरिक परिवहन– आन्तरिक परिवहन से आशय उत्पादन के लिए उपयोग किये जाने वाले कच्चे माल का क्रय करके यातायात के साधनों के माध्यम से व्यापार के भंडारों तक सुरक्षित पहुॅचाना है। इस श्रंखला में आने वाली सभी क्रियाओं का परीक्षण करके उन्हें मितव्ययी बनाने के प्रयास किये जाते हैं–

- कच्चे माल का क्रय कब, कितना, कैसे तथा तथा कहॉ से किया जाय? मितव्ययी आदेश की मात्रा (इकॅानोमिक आर्डर क्वान्टिटी– ई0ओ0क्यू0) का निर्धारण किया जाता है तथा उतनी सामग्री के प्रयोग की तकनीक का परीक्षण किया जाता है। क्रय का समय तथा श्रोत का परीक्षण किया जाता है। उदाहरण के लिए.– बिस्कुट निर्माता कम्पनी को यह निर्धारित करना होता है कि उसे गेहूॅ बाजार से खरीदने हैं या सीधे किसान से। सालभर का स्टॉक

एक साथ किस प्रकार किया जाएगा? गोदाम में रखा माल किस प्रणाली (फीफो, लीफो आदि) से उत्पादन हेतु निर्गत किया जाएगा? आदि।

- उत्पादन में मितव्ययिता की दृष्टि से अनेक प्रबन्धकीय परीक्षण किये जाते हैं। सीमान्त लागत विधि के द्वारा उत्पादन का स्तर, मात्रा आदि की गणना की जाती है। किसी उत्पादन लाइन को बन्द करना अथवा उत्पादन के स्थान पर क्रय करना आदि का निर्णय लेना होता है।
- माल स्थानीय बाजार से खरीदने अथवा बाहर से मंगाने का निर्णय लेते समय परिवहन लागत का परीक्षण किया जाता है।

संचालन– संचालन के अन्तर्गत वे सभी क्रियाएं आती हैं जो कच्चे माल को तैयार माल में परिवर्तित करने की क्रिया में सम्मिलित होती हैं। इसका परीक्षण निम्न आधार पर किया जाता है–

- मशीनीकरण का स्तर निर्धारण करना अर्थात् यह तय करना कि उत्पादन प्रक्रिया में किस स्तर तक कार्य स्वचालित मशीनों द्वारा किया जाय तथा कितना परम्परागत मानवीय श्रम से।
- वस्तुओं का निरीक्षण परीक्षण आदि करना अर्थात् गुणवत्ता सुनिश्चित करना।
- वस्तुओं का निर्माण एवं संयोजन का प्रवाह सुनिश्चित करना। यह सुनिश्चित करना कि कार्य बिना किसी बाधा के न्यूनतम श्रम तथा उपयुक्ततम संयोजन व सम्मिश्रण के द्वारा पूर्ण किया जा सके।
- पैकेजिंग के स्तर का निर्धारण इस आधार पर किया जाता है कि उत्पाद की गुणवत्ता तथा ग्राहक की संतुष्टि बनी रहे। साथ ही वस्तु की लागत में वृद्धि न हो।

वाह्य परिवहन– वाह्य परिवहन में निर्मित माल को उपभोक्ता तक पहुॅचाने सम्बन्धी क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है। इसमें उत्पादक और उपभोक्ता के मध्य के सभी मध्यस्थों के व्यवहारों का भी परीक्षण किया जाता है।

- उत्पाद की बिक्री के लिए वितरक– थोक व्यापारी–फुटकर व्यापारी–उपभोक्ता की श्रंखला बनाई जाय अथवा सीधे अपने फ्रेंचाइजी या रिटेल स्टोर के माध्यम से वितरण किया जाय।
- उपभोक्ता तक सामान किस प्रकार पहुॅचाया जाय कि आपूर्ति निरन्तर और ससमय बनी रहे।
- सामान को उपभोक्ता तक सही गुणवत्ता के साथ पहुॅचाया जा सके।
- मध्यस्थों की भूमिका के कारण वस्तु का मूल्य बढ़ न जाये।

विपणन एवं अन्य गतिविधियॉ– वे समस्त गतिविधियॉ जो कि व्यापार के विस्तार तथा लाभ वृद्धि के लिए सहायक होती हैं, का परीक्षण करके यह ज्ञात किया जाता है कि लागत के नियंत्रण के लिए विपणन, विज्ञापन, विक्रयोपरान्त सेवा आदि की क्या भूमिका हो सकती है?–

- विक्रय के लिए विज्ञापन, विक्रय सम्वर्द्धन आदि में व्यय होने वाले धन की उपयोगिता तथा प्रभावशीलता का आकलन
- विक्रय प्रतिनिधि अथवा वैयक्तिक विक्रय तकनीक द्वारा विक्रय की सम्भावना पर विचार
- विक्रयोपरान्त सेवा प्रदान करने में होने वाले व्यय तथा उसके प्रभाव की समीक्षा आदि
- विक्रय प्रबन्धन के उपायों का उत्पाद के विकास एवं मूल्य सम्वर्द्धन में भूमिका का परीक्षण।

सहायक गतिविधियॉ– सहायक गतिविधियों के अन्तर्गत वे समस्त क्रियाएं सम्मिलित की जाती हैं जिनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध उत्पादन से तो नहीं होता किन्तु व्यवसाय को सफल बनाने में इनका योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। इसमें मानव संसाधन प्रबन्धन, तकनीकी ज्ञान, सामान्य प्रशासन तथा अवस्थापन आदि से सम्बन्धी गतिविधियों का परीक्षण किया जाता है।

मानव संसाधन विकास– मनुष्य किसी संगठन का सबसे महत्वपूर्ण घटक होता है। वह संगठन के समस्त विभागों की सभी गतिविधियों में सम्मिलित होता है तथा उसे नियंत्रित करता है। उत्पादन, वित्त, विपणन आदि सभी क्षेत्रों में कार्यरत अधिकारी व कर्मचारी संगठन की सफलता अथवा असफलता का आधार होते हैं। स्टाफ का मनोबल उच्च हो तथा अनुशासन का वातावरण हो तो कर्मचारियों की उत्पादकता में वृद्धि होती है तथा संगठन उत्तरोत्तर प्रगति करता है।

भौतिक अवस्थापन सुविधाएं– इसके अन्तर्गत भूमि, भवन, मशीन, प्लान्ट, फर्नीचर व फिक्चर्स तथा वाहन आदि को सम्मिलित किया जाता है। संगठन के क्रमिक विकास में इसकी परिसम्पत्तियों का विशेष योगदान होता है। बिना संसाधन के कुशल कर्मचारी भी असहाय हो जाते हैं। कुछ व्यापारों में तो अवस्थापन सुविधाओं की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। यथा– अस्पताल में यदि सुसज्जित आपरेशन थियेटर व आवश्यक मशीन व औजार उपलब्ध नहीं हैं तो शल्य–चिकित्सक का लाभ नहीं मिल पाता है। विद्यालयों में कक्षा कक्षों व खेल के मैदान की भी अनिवार्यता होती है। व्यापार में प्रतिस्पर्धी प्रतिष्ठानों से भौतिक सुविधाओं की दृष्टि से आगे होना एक मनोवैज्ञानिक बढ़त प्रदान करता है।

तकनीकी सुविधाएं– आधुनिक तकनीक के अभाव में व्यापारिक संस्थाएं प्रतिस्पर्धा में पिछड़ जाती हैं। आधुनिक युग में जिस बैंक के पास कोर बैंकिंग सॉल्यूशन (सी0बी0एस0) की सुविधा नहीं है, ए0टी0एम0 नहीं है उनका व्यापारिक विकास बाधित हो जाता है। एन0ई0एफ0टी0, आर0टी0जी0एस0, कम्प्यूटराइज्ड एकाउन्टस्, बिलिंग सिस्टम, डाटा मैनेजमेंट आदि आधुनिक युग में बैंकिंग की अनिवार्यता बन गई हैं।

सामान्य प्रशासन– सब कुछ उपलब्ध होते हुए भी जब परिणाम यथाश्रम प्राप्त न हों तो इसका कारण सामान्य प्रशासन का प्रभावी न होना ही सिद्ध होता है। सही व्यक्ति को सही कार्य मिलना, कार्य के लिए उचित वातावरण मिलना तथा कार्य की उचित

समीक्षा होने से व्यापार की उत्पादकता बढती है तथा लागत नियंत्रित होने से लाभ में वृद्धि होती है।

8.5 शक्ति एवं दुर्बलताओं का परीक्षण

संगठन की आन्तरिक संरचना का विश्लेषण करने के लिए इसकी शक्तियों व क्षीर्णताओं (दुर्बलताओं) का विवेचन करना आवश्यक है। प्रत्येक संगठन अपने आप में विशिष्ट होता है तथा इसकी कुछ जन्मगत शक्तियॉ या कमजोरियॉ हो सकती हैं। यदि संगठन इनका अध्ययन करके शक्तियों का लाभ उठा सके तथा कमजोरियों को दूर करने के प्रयास कर सके तो संगठन उत्तरोत्तर विकास कर सकता है।

पिछले अध्याय में स्वॉट विश्लेषण पर विस्तार से चर्चा की गई है। स्वॉट शब्द अंग्रेजी के चार अक्षरों एस, डब्ल्यू, ओ तथा टी के योग से बना है जो कि चार शब्दों स्ट्रेन्थ (शक्ति), वीकनैस (क्षीर्णता), अपॉर्चुनिटी (अवसर) तथा थ्रेट (चुनौती) के प्रथमाक्षरों से बना है। यह पूर्व अध्याय में बताया गया है कि शक्ति तथा क्षीर्णता संगठन के आन्तरिक पक्ष होते हैं जबकि अवसर तथा चुनौती वाह्य पक्ष हैं। अतः संगठनात्मक परीक्षण करने के लिए संगठन के आन्तरिक पक्षों अर्थात् शक्ति तथा क्षीर्णता का ही विवेचन व विश्लेषण किया गया है।

शक्ति– शक्ति से आशय संगठन के उन मजबूत पक्षों से है जिनके आधार पर संगठन को एक विशिष्ट पहचान प्राप्त होती है। यह प्रत्येक संगठन के लिए अलग हो सकते हैं। उदाहरण के लिए– 110 साल की बुढ़िया की घुट्टी के निर्माता अपने संगठन की दीर्घकालीन विश्वसनीयता, अनुभव तथा गुणवत्ता को आधार बनाकर बाजार का बड़ा हिस्सा अपने पास कब्जा करना चाहता है तो कार, मोटर साइकिल तथा कम्प्यूटर आदि के निर्माता अपने उत्पाद को आधुनिकतम तकनीक से युक्त बताते हुए भरोसा प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। अलीगढ़ के ताले, आसाम की चाय, अल्मोड़ा की बाल मिठाई आदि अपने स्थान का लाभ प्राप्त करते हैं।

किसी संगठन की प्रमुख शक्तियों के उदाहरण निम्न हो सकते हैं–

- कम्पनी की वित्तीय स्थिति सुदृढ हो।
- कार्य का लम्बा अनुभव हो तथा बाजार में साख अच्छी हो।
- वैज्ञानिक शोध के द्वारा निरन्तर उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार किया जाता हो।
- आयात का लाइसेंस सरकार से प्राप्त हो गया हो।
- सुनिश्चित बाजार उपलब्ध हो अथवा किसी विशेष कम्पनी या सरकार को सम्पूर्ण उत्पादन बेचने का विकल्प प्राप्त हो।
- उच्च गुणवत्ता वाले कच्चे माल की आपूर्ति सुनिश्चित हो।
- विपणन की नीतियॉ प्रभावशाली हों तथा उपभोक्ताओं तक पहॅुच अच्छी हो।
- सरकार की नीतियॉ व्यापार के अनुकूल हों।
- औद्योगिक सम्बन्ध मधुर हों।

- कर्मचारी वर्ग अनुशासित, समर्पित तथा उत्साही हो जिसकी उत्पादकता का स्तर उच्च हो। आदि

प्रत्येक फर्म अपनी शक्ति का स्वयं आकलन करती है तथा उसी क्षेत्र में अपने प्रयासों का केन्द्रित करती है जहॉ उसे अपनी सफलता की अधिकतम सम्भावना होती है।

क्षीर्णता– क्षीर्णता अथवा दुर्बलता से आशय उन क्षेत्रों से है जहॉ संगठन अपने को कमजोर स्थिति में पाता है। इन क्षेत्रों की पहचान किया जाना संगठन के विकास के लिए आवश्यक है। अनेक बार संगठन अपने संगठनात्मक ढॉचे अथवा परम्परागत मान्यताओं के कारण किसी क्षेत्र में असफल हो जाते हैं। बाजार की बदलती हुई परिस्थितियॉ भी इसमें अपनी भूमिका निभाती हैं। क्षीर्णताओं के कुछ उदाहरण निम्न हो सकते हैं–

- संगठन की प्राथमिकताओं में परिवर्तन हो जाना। किसी अन्य क्षेत्र में अधिक ध्यान दिये जाने के कारण पूर्व क्षेत्रों के प्रति अरुचि हो जाना।
- सरकारी नीतियों में परिवर्तन के कारण व्यापार के विकास की दिशा में परिवर्तन हो जाना। वैश्वीकरण नीतियों के कारण विदेशी फर्मों के लिए बाजार खुल गये हैं जिससे प्रतिस्पर्धा का स्तर बढ़ गया है।
- बाजार की दशाओं तथा प्रतियोगिता के स्तर में परिवर्तन हो जाने के कारण किसी क्षेत्र विशेष को हानि हो जाना।
- औद्योगिक सम्बन्धों में खटास आने के कारण उत्पादकता में गिरावट आना। हड़ताल आदि के कारण हानि होना।
- फर्म का वित्तीय संकट कुछ उत्पादों को बन्द करने के लिए विवश कर सकता है।
- प्रशासनिक व्ययों में वृद्धि के कारण लागतों में वृद्धि होना।
- उपभोक्ताओं की मॉग में परिवर्तन आ जाना। स्वास्थ्य के प्रति जागरुकता बढने के कारण जहॉ व्यायामशालाओं (जिम) का व्यापार बढा है, वहीं कोक पदार्थों का चलन कम होकर फलों के जूस, मट्ठा व शुद्ध पानी के कारोबार में वृद्धि हो गई है।
- बाजार में फर्म अथवा उत्पाद की छवि खराब हो जाना। आदि

संगठन के रणनीतिकार निरन्तर प्रयास से यह जानने का प्रयास करते हैं कि संगठन की वास्तविक समस्या क्या है? अनेक बार समस्या का सही आकलन न होने के कारण उसके उपचारात्मक उपाय असफल हो जाते हैं। उदाहरण के लिए संगठन की मानव संसाधन नीति दोषपूर्ण होने के कारण कर्मचारी असंतुष्ट हो जाते हैं अथवा संगठन छोड़ देते हैं जबकि उच्च प्रबन्धन को यह बताया जाता है कि कर्मचारी अनुशासनहीन हो गये हैं।

8.6 संख्यात्मक परीक्षण

संगठन की शक्तियों व क्षमताओं को गणितीय आधार पर मूल्यांकित करने के प्रयास को संख्यात्मक परीक्षण कहा जाता है। इसके अन्तर्गत वित्तीय तथा गैर वित्तीय

मामलों का संख्यात्मक विश्लेषण किया जाता है। वित्तीय विषयों में अनुपात विश्लेषण के द्वारा संगठन की तरलता, लाभप्रदता, शोधनक्षमता आदि की स्थिति ज्ञात की जाती है। इसके अतिरिक्त आर्थिक मूल्यवर्द्धित विश्लेषण (ई0वी0ए0) के द्वारा संगठन की सम्पत्तियों का मूल्यांकन किया जाता है। संख्यात्मक परीक्षण में गतिविधि आधारित लागत (ए0बी0सी0) के द्वारा परम्परागत लागत विधि पर सुधारात्मक परिणाम भी प्राप्त किये जाते हैं। गैर वित्तीय विश्लेषण में कर्मचारियों का मनोबल, गैर हाजिरी, प्रतिकर्मचारी व्यापार, बाजार में स्थिति, उत्पादन चक्र, उत्पाद जीवन चक्र में अवस्था आदि अनेकों बिन्दुओं की स्थिति के आधार पर आवश्यक निर्णय लिये जाते हैं।

8.7 गुणात्मक परीक्षण

संगठन की कार्यक्षमता का मूल्यांकन करने के लिए प्रायः संख्यात्मक तथ्यों के परीक्षण के द्वारा परिणाम प्राप्त किये जाते हैं। संख्यात्मक परिणाम ज्ञात करना तथा तुलना करना सरल होता है तथा तकनीकी रुप से भरोसेमन्द भी। किन्तु संख्यात्मक जॉच की अपनी कुछ सीमाएं होती हैं। इन्हें क्रत्रिम रुप से व्यवस्थित करके परिणामों को प्रभावित किया जा सकता है अतः गुणात्मक परीक्षण की आवश्यकता होती है। इसमें साक्षात्कार, विचार, सलाह आदि के द्वारा सूचनाओं का संग्रहण करके उससे गुणात्मक परिणाम प्राप्त किये जाते हैं। गुणात्मक परीक्षण को संख्यात्मक परीक्षण की तुलना में कोमल माना जाता है क्योंकि इसमें संख्या के आधार पर प्राप्त परिणामों से प्रकट असफलता के आधार पर ही निर्णय न लेकर उन मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों का भी विवेचन किया जाता है जिनके कारण यह परिणाम प्राप्त हुआ। प्रायः संगठन संख्यात्मक व गुणात्मक दोनों ही रीतियों से संगठन की क्षमताओं का परीक्षण करते हैं तथा दोनों के प्रयोग से समन्वित परिणाम प्राप्त करते हैं।

<u>संख्यात्मक व गुणात्मक परीक्षण में अन्तर</u>–

संगठन की गतिविधियों के संख्यात्मक व गुणात्मक परीक्षण के अपने–अपने गुण व दोष हैं। दोनों व्यापार के स्वास्थ्य का विश्लेषण करते हैं और परिणाम ज्ञात करते हैं किन्तु दोनों ही विधियों की कार्यशैली में पर्याप्त अन्तर है। इसे निम्नप्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है–

क्रमांक	अन्तर का आधार	संख्यात्मक परीक्षण	गुणात्मक परीक्षण
1	सूचना का प्रकार	इसमें गणितीय सूचनाओं का प्रयोग किया जाता है।	इसमें गैर गणितीय सूचनाओं का प्रयोग किया जाता है।
2	निश्चितता	गणितीय परिणाम सुनिश्चित तथा मापनीय होते हैं।	गुणात्मक परिणामों का मापन सम्भव नहीं है। इसका अनुमान लगाया जाता है।
3	विश्वसनीयता	इसके परिणाम वास्तविक लेखों पर	इसके परिणाम भावनाओं पर आधारित

		आधारित होते हैं, अतः विश्वसनीय होते हैं।	होते हैं अतः उच्चावचन सम्भव है।
4	यन्त्र	इसमें अनुपात विश्लेषण, लागत विश्लेषण आदि यन्त्रों के प्रयोग द्वारा परिणाम ज्ञात किये जाते हैं।	इसमें सूचनाओं की प्राप्ति के लिए व्यक्तिगत विवरणों, साक्षात्कार, विचार, सलाह आदि का प्रयोग किया जाता है।
5	सरलता	यह प्रणाली सूत्रों पर आधारित है अतः सरल है।	यह प्रणाली मनोविज्ञान पर आधारित है अतः कठिन है।
6	भावुकता	इसमें भावुकता को कोई स्थान नहीं दिया जाता। वित्तीय परिणामों को ही आधार बनाया जाता है।	यह पूर्णतः मनोविज्ञान पर आधारित है तथा भावुकता के साथ परिणामों का विवेचन करता है।

8.8 समग्र विश्लेषण

रणनीतिक दृष्टि से विभिन्न संगठन अपने सांगठनिक परीक्षण के लिए अनेक विश्लेषण विधियों का प्रयोग करते हैं। समग्र विश्लेषण के अन्तर्गत संगठन विभिन्न कोणों से अपनी क्षमताओं और सीमाओं की जॉच करते हैं। इसके लिए निम्न दो विधियों का प्रयोग प्रचलित है–

अ) **सन्तुलित स्कोरकार्ड–** इस विधि का प्रयोग राबर्ट एस0 काप्लान एवं डेविड पी0 नॉर्टन द्वारा सुझाई गई है। इस विधि के अन्तर्गत उन मापकों को सम्मिलित किया जाता है जिनका प्रयोग एक प्रबन्धक अपने व्यापार के समग्र अध्ययन के लिए कर सकता है। यह उन वित्तीय मापकों को सम्मिलित करता है जिससे संगठन के व्यापारिक निर्णयों के परिणामों को ज्ञात किया जाता है तथा वह उन वित्तीय परिणामों के ग्राहक सन्तोष, आन्तरिक प्रक्रियाओं तथा संगठन के नवोन्मेष आदि पर प्रभाव का भी आकलन करता है। इसप्रकार सन्तुलित स्कोरकार्ड संगठन को ग्राहक, वित्त, नवोन्मेष तथा आन्तरिक मूल्यों की दृष्टि से मापने का प्रयास करता है।

ब) **प्रमुख बिन्दुओं का मूल्यांकन–** वित्तीय परिणामों के साथ ही अन्य अनेक ऐसे क्षेत्र भी हैं जहॉ किसी प्रबन्धक को अपना ध्यान केन्द्रित करना होता है। इन क्षेत्रों में से प्रत्येक का पृथक से मूल्यांकन करके उन्हें क्रमिक अंक प्रदान किये जाते हैं जिसे रेटिंग कहा जाता है। इस रेटिंग के लिए सम्बन्धित क्षेत्र के निष्पादन मूल्यांकन सम्बन्धी विभिन्न प्रश्न तैयार किये जाते हैं जिनके आधार पर प्रबन्धक संगठन के लिए अपनी नीति का निर्धारण करता है। इनमें मौद्रिक क्षमता, विपणन क्षमता, संचालन

क्षमता, कार्मिक क्षमता, सूचना प्रबन्धन क्षमता, सामान्य प्रबन्धन क्षमता आदि को सम्मिलित किया जाता है।

संगठन की क्षमता का परीक्षण करने के लिए एक संगठन क्षमता प्रोफाइल (ओ0सी0पी0) तैयार की जाती है जिसमें उक्त सभी क्षमता बिन्दुओं को अंक प्रदान किये जाते हैं। दुर्बलता के लिए ऋणात्मक अंक दिये जाते हैं तथा शक्ति के लिए धनात्मक अंक दिये जाते हैं। सामान्य स्तर के लिए शून्य अंक दिये जाते हैं। इस तालिका में प्रदत्त अंकों के आधार पर प्रबन्धक यह निर्धारित करते हैं कि किस प्रकार अपने ऋणात्मक अंकों को शून्य में तथा फिर धनात्मक अंकों में परिवर्तित किया जाय।

8.9 तुलनात्मक शक्ति परीक्षण

रणनीतिक प्रबन्धन में समस्त नीतियॉ इस बिन्दु पर आधारित होती हैं कि प्रतिस्पर्धी संगठन की तुलना में वह किस प्रकार से श्रेष्ठता प्राप्त कर सकता है? शक्ति व क्षीर्णता का अध्ययन संगठन का अपना मूल्यांकन होता है तथा अपने मजबूत तथा कमजोर बिन्दुओं को ढूॅढने का प्रयास होता है किन्तु तुलनात्मक शक्ति परीक्षण में प्रतिस्पर्धी संगठन की तुलना में अपनी शक्ति का आकलन किया जाता है। उदाहरण के लिए–किसी विशेष परिस्थिति में बाजार में मॉग कम होना सम्पूर्ण उद्योग के लिए क्षीर्णता (कमजोरी) हो सकता है किन्तु फिर भी यदि एक फर्म को किसी विशेष कारण से अन्य फर्मों की तुलना में कम हानि हुई हो तो यह उसकी शक्ति सिद्ध हो सकता है। इसी प्रकार यदि हानि को अन्य फर्मों की तुलना में कम किया जा सकता है तो यह भी उसकी शक्ति हो सकती है। तुलनात्मक शक्ति परीक्षण के प्रमुख बिन्दु निम्न हैं–

- निकटतम प्रतिद्वन्दी की तुलना में बाजार में संगठन की स्थिति क्या है?
- संगठन का बाजार में अंश बढ़ रहा है, स्थिर है अथवा घट रहा है?
- बाजार के विभिन्न गुणवत्ता मानकों की दृष्टि से संगठन की तुलनात्मक स्थिति क्या है?
- संगठन की परिसम्पत्तियों में वृद्धि हुई है अथवा नहीं?
- दायित्वों का भुगतान करने की दृष्टि से सम्पत्ति पर्याप्त हैं अथवा नहीं?
- उद्योग जगत में कार्यरत अन्य संगठनों की तुलना में संगठन का विभिन्न प्रबन्धकीय मानकों पर मूल्यांकन क्या है तथा वह अपने संगठन की तुलना में कैसा है?

तुलनात्मक शक्ति परीक्षण के अन्तर्गत संगठन अपनी विभिन्न क्रियाओं का इस प्रकार तालमेल करता है कि वर्तमान एवं भविष्य के वातावरण सम्बन्धी सभी सूचनाएं जान सकें। इसके लिए वह अपने वित्त विभाग, मानव संसाधन विभाग, विपणन विभाग, उत्पादन विभाग आदि से प्राप्त सूचनाओं का विश्लेषण व समन्वय करता है तथा तदनुरुप अपने आन्तरिक वातावरण का परीक्षण करता है।

तुलनात्मक शक्ति परीक्षण के लिए तीन विधियों का प्रयोग किया जाता है–

1. **ऐतिहासिक विश्लेषण**– इसके अन्तर्गत संगठन अपने इतिहास के अध्ययन की मदद से यह ज्ञात करता है कि संगठन की शक्तियाँ तथा दुर्बलताऐं क्या हैं? इन्हीं के आधार पर संगठन अपने मानक तय करता है तथा उन्हें प्राप्त करने का प्रयास करता है। वे क्षेत्र जो निरन्तर अच्छा प्रदर्शन कर रहे हैं किसी संगठन के लिए सबल संसाधन होते हैं किन्तु जिन क्षेत्रों में दुर्बलता प्रदर्शित हो रही है वहॉ के लिए विशेष रणनीति बनाकर सुधार के प्रयास किये जाते हैं।
2. **औद्योगिक नियम**– इस विधि में यह जानने का प्रयास किया जाता है कि संगठन का लागत ढॉचा किस प्रकार अपने समकक्ष संगठनों के समान है। समान उद्योग के अन्तर्गत कार्य करने वाले प्रतिस्पर्धी संगठन के साथ लागत की तुलना करने से अपने संगठन की सबलता तथा दुर्बलता का ज्ञान प्राप्त हो जाता है।
3. **मानदण्डीकरण**– किसी विशिष्ट उद्योग में लागत निर्धारण करने वाले विविध मानकों का निर्धारण किया जाता है तथा उसको आधार बनाकर अपने संगठन की तुलना की जाती है। अमेरिकन प्रोडक्टिविटी एण्ड क्वालिटी सेन्टर (ए0पी0क्यू0सी0) के अनुसार मानदण्डीकरण वह प्रथा है जिसमें उदारतापूर्वक यह स्वीकार किया जाता है कि कोई अन्य किसी क्षेत्र में हमसे बेहतर है तथा बुद्धिमतापूर्वक उनके समान बनने तथा आगे निकलने का यत्न किया जाता है।

तुलनात्मक शक्ति परीक्षण की प्रक्रिया विभिन्न संगठनों में उनकी आवश्यकता तथा आकार के अनुसार निर्धारित की जाती है। सामान्यतः तुलनात्मक शक्ति परीक्षण में तीन प्रकार की जॉच प्रक्रिया अपनाई जाती हैं–

अ) **अनियमित जॉचविधि**– इसप्रकार की जॉच की कोई निश्चित अवधि नहीं होती। जब भी संगठन को आवश्यकता होती है इसको कराया जा सकता है। संगठन के आन्तरिक वातावरण को निर्धारित तथा उसे प्रभावित करने वाले तत्वों की पहचान करते हुए तात्कालिक समस्या के समाधान हेतु शक्तियों तथा क्षीर्णताओं का विवेचन किया जाता है।

आ) **नियमित जॉचविधि**– इस प्रकार की जॉच नियमित अन्तराल पर कराई जाती है। इसका सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि एक निश्चित अवधि में अपनी शक्तियों का परीक्षण करके उनका व्यावसायिक लाभ उठाने का प्रयास किया जाता है तथा अपनी कमजोरियों को दूर करने के लिए प्रयास किये जाते हैं।

इ) **सतत जॉचविधि**– इस विधि में निरन्तर प्रयासों द्वारा संगठन की शक्तियों का परीक्षण किया जाता है तथा अवसरों का लाभ लेने का प्रयास किया जाता है। रणनीतिक निर्णयों की दृष्टि से यह विधि प्रभावशाली सिद्ध होती है। आन्तरिक संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग करने में सतत जॉच किया जाना महत्वपूर्ण होता है क्योंकि समयान्तराल के कारण होने वाली अतिरिक्त हानियों का इसमें स्थान नहीं होता।

8.10 निगम स्तरीय क्षमताएं एवं निदान

निगम स्तरीय क्षमताओं से आशय उन आन्तरिक शक्तियों से होता है जिसके द्वारा कोई कम्पनी अपनी शक्तियों का विस्तार करती है तथा कमजोरियों पर नियन्त्रण करती है। प्रत्येक कम्पनी की अपनी कुछ विशिष्टताएं होती हैं जो उसे अन्य कम्पनियों की तुलना में अलग करती हैं। सफल संगठन अपनी शक्तियों का भरपूर लाभ उठाते हैं। यहॉ तक कि कुछ प्रबन्धन तो अपनी कमजोरियों को भी शक्ति में परिवर्तित कर लेते हैं।

कम्पनी द्वारा अपनी संगठन क्षमता के आधार पर प्रबन्धन के विविध पक्षों की समस्याओं का विवेचन किया जाता है–

1. <u>सामान्य प्रबन्धन–</u>

प्रबन्धन का कार्य है कि वह अपने उपलब्ध संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग करते हुए संगठन को उद्देश्य प्राप्ति में सहयोग करे। कुशल प्रबन्धन में संसाधनों को प्राप्त करने, उन्हें बनाये रखने तथा विकसित करने के भी प्रयास किये जाते हैं। प्रबन्ध के विभिन्न क्षेत्रों नियोजन, संगठन, स्टाफिंग, निर्देशन तथा नियन्त्रण में क्षमताओं का विश्लेषण किया जाता है–

क) नियोजन– नियोजन रणनीति निर्माण का आधारभूत कार्य है। इसी के द्वारा किसी कार्य को करने की योजना बनाई जाती है। संगठन के रणनीतिक विकास में नियोजन की भूमिका महत्वपूर्ण है। संगठन की संरचना का निर्धारण, लक्ष्यों को निर्धारित करना, संसाधनों की पूर्ण उपादेयता प्राप्त करना, वातावरण का सृजन करना तथा परिस्थितियों पर नियन्त्रण बनाये रखना नियोजन की विशेषता है।

ख) संगठन– रणनीति के क्रियान्वयन की दृष्टि से संगठन एक अत्यन्त महत्वपूर्ण चरण है। इसके अन्तर्गत वे सभी क्रियाएं आती हैं जो किसी महत्वपूर्ण कार्य को करने के लिए आवश्यक होती हैं। संगठन संरचना, अधिकार व उत्तरदायित्वों का निर्धारण, कार्य के आबन्टन आदि से सम्बन्धित निर्णय इस अवस्था में लिए जाते हैं। अपनी नीतियों पर अन्तिम निर्णय लेने से पूर्व कम्पनी प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की नीतियों का अध्ययन करना आवश्यक समझती हैं।

ग) स्टाफिंग– विगत दशक में कम्पनियों के कार्य तथा चुनौतियों में व्यापक बदलाव हुए हैं। उनका प्रभाव स्टाफिंग नीतियों पर भी पड़ा है। वैश्वीकरण नीति के अपनाने के बाद भारत में अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनियों के आने से मानव संसाधन सम्बन्धी चुनौतियॉ बढ़ गई हैं। वेतन ढॉचे, कार्य की दशा तथा प्रशिक्षण आदि के विषय में भारतीय कम्पनियों को विदेशी कम्पनियों से कठिन चुनौती का सामना करना पड़ रहा है।

घ) निर्देशन– कर्मचारियों को अनुशासित करने, उन्हें उत्साहित रखने, मनोबल बढ़ाने, नेतृत्व प्रदान करने तथा उनसे संवाद स्थापित करने की दृष्टि से निर्देशन प्रबन्ध का सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। रणनीतिक प्रबन्धन के अन्तर्गत नीतियों का सर्वाधिक क्रियान्वयन इसी स्तर पर होता है। संगठनात्मक विकास का कार्य भी इस स्तर पर ही किया जाता है।

ङ) नियन्त्रण– रणनीतिक प्रबन्धन की दृष्टि से यह नीतियों के मूल्यांकन का समय होता है। इस स्तर पर गुणवत्ता नियन्त्रण, वित्त प्रबन्धन, प्रशासनिक व्यय नियन्त्रण,

लागत नियन्त्रण, विपणन प्रबन्धन आदि कार्यों से सम्बन्धित नीतियों का अनुपालन किया जाता है।

2. विशिष्ट कार्यात्मक प्रबन्धन

प्रबन्धन के कार्यात्मक क्षेत्रों में प्रतिस्पर्धात्मक रणनीतिक विकास की आवश्यकता होती है। निगम स्तरीय क्षमताओं का अध्ययन करने की दृष्टि से उत्पादन, वित्त, विपणन तथा मानव संसाधन के अन्तर्गत नीतियों का निर्माण व क्रियान्वयन किया जाता है।

अ) **उत्पादन तथा संचालन प्रबन्धन**– निर्माणी उद्योगों में उत्पादन–प्रबन्ध तथा सेवा क्षेत्र में संचालन–प्रबन्ध संगठन का आधार होते हैं। ये संगठन के मुख्य व्यवसाय को विकसित करने में सहायता प्रदान करता है। रणनीतिक प्रबन्धक इसके अन्तर्गत अपनी शक्तियों को प्राप्त करने हेतु यह सुनिश्चित करते हैं–

- संगठन द्वारा उत्पादित माल में कुछ ऐसी विशिष्टता होनी चाहिए जिसके लिए ग्राहक उसका चुनाव करे। अर्थात् प्रतिस्पर्धी कम्पनी के उत्पाद से अच्छा उत्पाद होना चाहिए।
- यदि उत्पाद नियमित श्रेणी का है तो उसके वितरण तथा पैकेजिंग आदि में ऐसे प्रयोग किये जाने चाहिए कि वह सामान्य उत्पाद भी विशिष्ट बन जाये। जैसे– होम डिलीवरी प्रदान करना, देर तक खराब न होने वाली पैकिंग (टेट्रा पैक), आकर्षक विक्रय योजनाएं आदि।
- अन्य कम्पनियों की तुलना में उत्पादन लागत कम होनी चाहिए जिससे कि विपणन नीति पर अनावश्यक दबाव न पड़े। आवश्यकतानुसार लाभ बढ़ाने अथवा मूल्य घटाने का विकल्प प्रबन्धन के पास सुरक्षित रहना चाहिए।
- सेवा क्षेत्र की कम्पनियों को ग्राहकों के लिए सुविधाजनक योजनाओं, आधुनिकीकरण, ग्राहक सन्तुष्टि आदि का ध्यान रखना चाहिए जिससे कि अन्य प्रतिस्पर्धियों की तुलना में ग्राहक वरीयता प्रदान कर सकें।

ब) **वित्तीय प्रबन्धन**– वित्त किसी व्यावसायिक संगठन की आत्मा है। वित्त पर नियंत्रण से ही किसी संगठन को अपने प्रतिद्वन्द्वियों पर निर्णायक बढ़त प्राप्त हो सकती है। रणनीतिक दृष्टि से वित्तीय प्रबन्धन से सम्बन्धित निम्न सूचनाएं महत्वपूर्ण हैं–

- पूॅंजी की लागत नियन्त्रित रखने के लिए विभिन्न श्रोतों से प्राप्त होने वाली पूॅंजी का ऐसा सम्मिश्र अपनाया जाना चाहिए जिसमें कि सही समय पर सही मात्रा में पूॅंजी न्यूनतम दर पर प्राप्त हो सके।
- अतिपूॅंजीकरण अथवा अल्पपूॅंजीकरण की स्थिति से बचने के लिए प्रभावी नीति अपनाई जानी चाहिए क्योंकि दोनों ही स्थितियों में कम्पनी को हानि होती है।
- दीर्घकालीन व अल्पकालीन निवेशों का ऐसा संमिश्र तैयार करना जिसमें कम्पनी को अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके तथा अपनी स्थायी सम्पत्तियों का प्रतिस्थापन करने में कठिनाई न हो।

स) **विपणन प्रबन्धन**– किसी भी व्यावसायिक संस्था में सबसे अधिक ध्यान दिया जाने वाला विषय है उत्पाद का विक्रय। रणनीतिक प्रबन्धन में बिक्री बढ़ाने के लिए निम्न क्षेत्रों पर ध्यान दिया जाता है–

- उत्पाद के लिए पर्याप्त मॉग सृजित की जाय। प्रस्तुतीकरण में आकर्षण उत्पन्न करना।
- मॉग के अनुरुप आपूर्ति सुनिश्चित करना। वितरण व्यवस्था को दुरुस्त रखना।
- विक्रयोपरान्त सेवा तथा ग्राहक सन्तुष्टि के द्वारा मॉग की पुनरावृत्ति सुनिश्चित करना।
- उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए निरन्तर शोध व अनुसंधान करना।
- उपभोक्ता व्यवहार पर निरन्तर शोध के द्वारा क्रय प्रवृत्तियों का अध्ययन करना।

द) **मानव संसाधन प्रबन्धन**– कहा जाता है कि प्रबन्धन केवल मानव का ही किया जाता है, शेष प्रबन्धन तो मानव द्वारा किया जाता है। किसी संगठन को सफल बनाने में सबसे बड़ा योगदान उसकी मानव शक्ति का ही होता है। प्रतिस्पर्धी कम्पनियों द्वारा दूसरी कम्पनियों के योग्य कर्मियों को प्राप्त करने के प्रयास भी किये जाते हैं। मानव संसाधन प्रबन्धन के लिए कम्पनियों द्वारा निम्न बिन्दुओं पर ध्यान दिया जाता है–

- मानव शक्ति नियोजन, कर्मचारी चयन व वेतन सम्बन्धी कार्यों में सतर्कता अपनाना
- कार्य आबंटन, कार्य निष्पादन मूल्यांकन, अनुशासन आदि के द्वारा नियन्त्रण स्थापित करना
- प्रशिक्षण, पदोन्नति, प्रोत्साहन, मनोबल तथा कर्मचारी कल्याण योजनाओं के द्वारा सकारात्मक वातावरण बनाना
- औद्योगिक सम्बन्ध मधुर बनाना, अवकाश प्राप्त कर्मचारियों के लाभों का भुगतान

आधुनिक युग में किसी कम्पनी का अच्छा सेवायोजक होना भी प्रतिष्ठा की बात मानी जाती है। इससे कम्पनी को अधिक योग्य कर्मचारी प्राप्त होते हैं तथा वे दीर्घावधि तक अपनी सेवाएं संगठन को देते हैं।

3. निगमीय नैदानिक क्षमताएं–

प्रत्येक संगठन को समय–असमय अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है जिसके लिए प्रबन्धक को अपने संसाधनों का कुशलतम उपयोग करते हुए उपाय खोजना होता है। संगठन की इस क्षमता को नैदानिक क्षमता कहा जाता है।

कम्पनी के स्तर पर संगठन की क्षमताओं के आकलन तथा समस्याओं के निदान से सम्बन्धित कार्यवाही को संसाधन उपयोग ढॉचा, रणनीतिक लाभ विवरण तथा कम्पनी प्रास्थिति विवरण के द्वारा समझा जा सकता है–

1. **संसाधन उपयोग ढॉचा**– संगठन के संसाधनों का बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग किसी कम्पनी की सबसे बड़ी चुनौती होती है। संगठन के पास उपलब्ध समस्त संसाधनों में से प्रत्येक का अलग–अलग विवेचन तथा विश्लेषण करना होता है। संसाधनों का उनकी विशेषताओं के अनुरुप संगठन के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन किया जाता है तथा इन्हें शक्तियों तथा क्षीर्णताओं के रुप में चिन्हित किया जाता है। वस्तुतः किसी संसाधन का उस संगठन के लिए शक्ति अथवा क्षीर्णता होना उसके उपयोग पर निर्भर करता है। उचित उपयोग न होने पर शक्ति भी क्षीर्णता बन सकती है। साथही, उचित उपयोग के द्वारा क्षीर्णताओं को संगठन की शक्ति में परिणित किया जा सकता है। शक्तियों को अवसरों में परिणित करना तथा क्षीर्णताओं को चुनौती बनने से रोकना संगठन की क्षमता का पैमाना होता है।

2. **रणनीतिक लाभ विवरण**– कोई भी संसाधन कम्पनी की शक्ति तभी बनता है जबकि वह प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की तुलना में अधिक लाभ प्रदान करने की स्थिति में हो। कम्पनी को अपनी सम्पत्तियों के उपयोग का अनुकूलतम उपयोग करने के साथ ही यह भी सुनिश्चित करना होता है कि अन्य कम्पनियों में इसका प्रयोग किस प्रकार किया जा रहा है। उत्पादन, वित्त, विपणन, मानव संसाधन आदि संगठन की क्षमताओं के साथ ही कमजोरियों का विवरण बनाया जाता है तथा उन्हीं बिन्दुओं पर प्रतिस्पर्धी कम्पनी की रणनीति के सापेक्ष अपनी नीतियों का निर्धारण किया जाता है।

3. **कम्पनी प्रास्थिति विवरण–** कम्पनी की प्रास्थिति का विश्लेषण करने के लिए निम्नलिखित छः कदम उठाये जाने की आवश्यकता बताई गई है–

क. कम्पनी द्वारा अपनाई गई नीतियों का मूल्यांकन तथा सफलता का अध्ययन

ख. कम्पनी की शक्ति, क्षीर्णता, अवसर तथा चुनौतियों का अध्ययन तथा विश्लेषण

ग. संगठन की क्षमताओं की पहचान करना

घ. प्रतिस्पर्धियों की तुलना में कम्पनी की लागत की गणना

ङ कम्पनी की प्रतिस्पर्धात्मक शक्तियों का आकलन करना

च. उन विषयों तथा समस्याओं की पहचान करना जिन पर संगठन को अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

अन्य कम्पनियों के सापेक्ष संगठन की शक्तियों का विवरण बनाते समय विगत अनेक वर्षों के विवरण की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए विपणन क्षेत्र की कुशलता के मूल्यांकन के लिए बाजार में भागीदारी का प्रतिशत विगत अनेक वर्षों के लिए ज्ञात किया जाता है जिसका अर्थ है कि बाजार में कार्यरत प्रतिस्पर्धी कम्पनियों के तुलना में संगठन की प्रास्थिति तथा स्वयं अपने गतवर्ष के व्यापार की तुलना में स्थिति की गणना करना।

इसे एक काल्पनिक उदाहरण द्वारा समझाया जा सकता है–

हीरो मोटरसाइकिल्स विगत 5 वर्षों से लगातार एक लाख मोटर साइकिल प्रतिवर्ष बेच रहा है। इसका अर्थ है कि कम्पनी की बिक्री स्थिर है। इस कम्पनी की बाजार में भागीदारी क्रमशः 50, 48, 44, 40 तथा 39 प्रतिशत है। निरन्तर घटता हुआ प्रतिशत इस बात का प्रतीक है कि अन्य उत्पादकों की तुलना में कम्पनी को विपणन के क्षेत्र में असफलता प्राप्त हो रही है। यहॉ यह भी अनुमान लगाया जा सकता है कि

गत वर्ष में कम्पनी ने बाजार भागीदारी में निरन्तर हो रही गिरावट का प्रतिशत कम करने (मात्र 1 प्रतिशत) में सफलता प्राप्त की है तथा कम्पनी पुनः अपना पुराना स्थान प्राप्त कर सकती है। इसप्रकार कम्पनी की अपनी पिछली प्रगति से तथा अन्य प्रतिस्पर्धी कम्पनियों से तुलना के आधार पर रणनीतिक विश्लेषण किया गया है।

8.11 सारांश

व्यवसाय की रणनीति के प्रतिपादन में आन्तरिक व वाह्य तत्वों का योगदान होता है। आन्तरिक तत्वों में मानवीय तत्वों के साथ ही संगठन के भौतिक संसाधनों (यथा– वित्त, सामग्री, मशीन व भवन आदि) की भी यथेष्ट भूमिका होती है। रणनीतिक प्रतिपादन की दृष्टि से संगठनात्मक परीक्षण किया जाना महत्वपूर्ण माना जाता है जिसमें संगठन के आन्तरिक संसाधनों का विविध कोणों से परीक्षण किया जाता है। संगठनात्मक परीक्षण के लिए संसाधनों, दोहन क्षमता, शक्ति एवं दुर्बलताओं का परीक्षण किया जाता है। मूल्य श्रृंखला परीक्षण, समग्र विश्लेषण, तुलनात्मक शक्ति परीक्षण आदि के द्वारा संगठन के आन्तरिक तत्वों का परीक्षण व मूल्यांकन किया जाता है।

मानव संसाधन तथा भौतिक संसाधनों के साथ ही पेटेन्ट, कार्य वातावरण, ख्याति आदि भी संसाधन के रुप में संगठन के रणनीतिक प्रबन्धन में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। संसाधनों की उपलब्धता किसी संगठन को स्वभाविक श्रेष्ठता प्रदान करती है। विशेषतः वे संसाधन जो अन्य प्रतिस्पर्धी संगठनों को उपलब्ध नहीं होते हैं (जैसे–पेटेन्ट आदि) से संगठन को श्रेष्ठता प्राप्त होती है। संसाधनों का कुशल उपयोग भी संगठन को अन्य की अपेक्षा लाभ प्रदान करता है अतः संगठन को अपने संसाधनों की उपलब्धता, रखरखाव, उपयोग आदि का निरन्तर परीक्षण करना होता है। संगठन को अपनी शक्ति, क्षीर्णता, अवसर तथा चुनौतियों का आकलन करने के लिए स्वॉट विश्लेषण तथा अन्य संगठनों से तुलना के लिए तुलनात्मक शक्ति परीक्षण का प्रयोग करना उपयोगी होता है। तुलनात्मक शक्ति परीक्षण के लिए ऐतिहासिक विश्लेषण, औद्योगिक नियम तथा मानदण्डीकरण विधियों का प्रयोग किया जाता है। यह विश्लेषण नियमित, अनियमित अथवा सतत प्रक्रिया द्वारा सम्पन्न किया जा सकता है।

मूल्य श्रंखला विश्लेषण में आपस में जुड़ी हुई अनेक मूल्याधारित कड़ियों के द्वारा वस्तु की लागत में सम्मिलित विभिन्न तत्वों का विवेचन किया जाता है तथा जिन क्षेत्रों में लागत में कटौती की संभावना होती है उन्हें चिन्हित किया जाता है। संख्यात्मक व गुणात्मक परीक्षण में क्रमशः गणितीय परिणाम तथा भावसूचक व्याख्याओं के द्वारा रणनीतिक निर्णय लेने का प्रयास किया जाता है। निगम स्तरीय क्षमता व निदान की विधि का प्रयोग भी रणनीतिक प्रबन्धन में किया जाता है। निगम स्तरीय क्षमताओं से आशय उन आन्तरिक शक्तियों से होता है जिसके द्वारा कोई कम्पनी अपनी शक्तियों का विस्तार करती है तथा कमजोरियों पर नियन्त्रण करती है। इसके अन्तर्गत सामान्य प्रबन्धन तथा विशिष्ट कार्यात्मक प्रबन्धन के विभिन्न पहलुओं की जॉच की जाती है तथा निगमीय नैदानिक क्षमताओं का परीक्षण किया जाता है।

8.12 शब्दावली

रणनीति प्रतिपादनः उच्च प्रबन्ध द्वारा संगठन के लिए रणनीति निर्माण की क्रिया।

संगठनात्मक परीक्षणः रणनीतिक दृष्टि से संगठन के संसाधनों का परीक्षण।

औद्योगिक सम्बन्धः प्रबन्धन तथा कर्मचारियों के मध्य कार्य सम्बन्ध।

संगठनात्मक संसाधनः संगठन के पास उपलब्ध अथवा अर्जित संसाधन जिनका प्रयोग संगठन के लिए किया जाता है।

संगठनात्मक व्यवहारः संगठन के संसाधनों के अनुकूलतम प्रयोग हेतु आवश्यक व्यावहारिक उपाय।

मितव्ययी आदेश मात्राः रहतिया प्रबन्धन की एक विधि जिसके द्वारा उस मात्रा का निर्धारण किया जाता है जिसको एकबार में क्रय करना संगठन के लिए लाभप्रद होता है।

लीफोः रहतिया मूल्यांकन की विधि जिसके अनुसार अन्त में आने वाले माल को पहले निर्गत किया जाता है।

फीफोः रहतिया मूल्यांकन की विधि जिसके अनुसार पहले आने वाले माल को पहले निर्गत किया जाता है।

स्वॉटः आन्तरिक मूल्यांकन की एक तकनीक जिसमें संगठन द्वारा अपनी शक्तियों, क्षीर्णताओं, अवसरों तथा चुनौतियों का आकलन किया जाता है।

आर्थिक मूल्यवर्द्धित विश्लेषणः संगठन की सम्पत्तियों का मूल्यांकन करने की एक विधि जिसमें परिवर्तनशील मूल्यों का समावेश किया जाता है।

गतिविधि आधारित लागतः परम्परागत लागत प्रणाली पर सुधार के द्वारा प्राप्त लागत जिसमें प्रत्येक गतिविधि की लागत का प्रथक विवरण रखा जाता है।

सन्तुलित स्कोर कार्डः संगठन को ग्राहक, वित्त, नवोन्मेष तथा आन्तरिक मूल्यों की दृष्टि से मापने के लिए बनाये जाने वाला विवरण।

संगठन क्षमता प्रोफाइलः ऐसा विवरण जिसमें संगठन के क्षमता बिन्दुओं को अंक प्रदान करते हुए सुधार के उपायों पर विचार किया जाता है।

ई0ओ0क्यू0	इकॉनोमिक आर्डर क्वान्टिटी
एफ0ई0एफ0ओ0	फर्स्ट इन फर्स्ट आउट (फीफो)
एल0ई0एफ0ओ0	लास्ट इन फर्स्ट आउट (लीफो)
सी0बी0एस0	कोर बैंकिंग सोल्यूशन
ए0टी0एम0	ऑटोमेटेड टेलर मशीन
एन0ई0एफ0टी0	नेशनल इलेक्ट्रोनिक फण्ड ट्रांसफर
आर0टी0जी0एस0	रियल टाइम ग्रास सैटिलमेन्ट
ओ0सी0पी0	ओर्गनाइजेशनल कैपेबिलिटी प्रोफाइल
ए0पी0क्यू0सी0	अमेरिकन प्रोडक्टिविटी एण्ड क्वालिटी सेन्टर
ए0बी0सी0	गतिविधि आधारित लागत
ई0वी0ए0	आर्थिक मूल्यवर्द्धित विश्लेषण

8.13 बोध प्रश्न

(क) अपनी प्रगति जॉचें

बताएं निम्न कथन सत्य हैं अथवा असत्य–

(अ) मूल्य श्रंखला विश्लेषण का विचार एम0ई0पोर्टर द्वारा दिया गया। (सत्य/असत्य)

(आ) संसाधन किसी संगठन को उसके उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता प्रदान करते हैं। (सत्य/असत्य)

(इ) संगठन द्वारा प्रदत्त विशिष्ट सेवाएं प्रतिस्पर्धात्मक विकास में बाधक होती हैं। (सत्य/असत्य)

(ई) संगठनात्मक व्यवहार संसाधनों के उचित उपयोग को सुनिश्चित करता है। (सत्य/असत्य)

(उ) कार्मिकों की उत्पादकता वृद्धि से समय व धन की बर्बादी होती है। (सत्य/असत्य)

(ऊ) मूल्य श्रृंखला विश्लेषण में न्यून लागत के लाभ तथा अधिक लागत की हानियों वाले क्षेत्रों का परीक्षण किया जाता है। (सत्य/असत्य)

(ख) अपनी प्रगति जॉचें

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए–

1. शक्ति तथा क्षीर्णता संगठन के .... (आन्तरिक पक्ष/बाहरी पक्ष) होते हैं।
2. अवसर तथा चुनौती संगठन के .... (आन्तरिक पक्ष/बाहरी पक्ष) होते हैं।
3. अनुपात विश्लेषण के द्वारा संगठन की तरलता, लाभप्रदता, शोधनक्षमता आदि की स्थिति .... (संख्यात्मक/गुणात्मक) परीक्षण में ज्ञात की जाती है।
4. .... (संख्यात्मक/गुणात्मक) परीक्षण पूर्णतः मनोविज्ञान पर आधारित है तथा भावुकता के साथ परिणामों का विवेचन करता है।
5. .... (समग्र विश्लेषण/तुलनात्मक शक्ति परीक्षण) में प्रतिस्पर्धी संगठन की तुलना में अपनी शक्ति का आकलन किया जाता है।

8.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

(क) अपनी प्रगति जॉचें

(अ) सत्य (आ) सत्य (इ) असत्य (ई) सत्य (उ) असत्य (ऊ) सत्य

(ख) अपनी प्रगति जॉचें

(1) आन्तरिक पक्ष, (2) बाहरी पक्ष, (3) संख्यात्मक, (4) गुणात्मक (5) तुलनात्मक विश्लेषण प्रणाली

8.15 स्वपरख प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न–

(अ) किसी व्यावसायिक संगठन के लिए उसके संसाधन क्यों महत्वपूर्ण होते हैं?

(आ) संगठन अपने संसाधनों की दोहन क्षमता का परीक्षण किस प्रकार करते हैं?

(इ) संसाधनों के गुणात्मक परीक्षण का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

(ई) संख्यात्मक तथा गुणात्मक परीक्षण में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

(उ) सन्तुलित स्कोर कार्ड को संक्षेप में समझाइए।

निबन्धात्मक प्रश्न–

1. व्यावसायिक संगठन में संसाधनों की प्राप्ति, संरक्षण तथा उपयोग का वर्णन कीजिए।
2. राबर्ट एम0 ग्राण्ट द्वारा प्रतिस्पर्धात्मक स्तर पर लाभ की दर प्राप्त करने के लिए सुझाए गये उपायों का वर्णन कीजिए?
3. मूल्य श्रृंखला विश्लेषण से क्या आशय है? रणनीतिक प्रबन्धन में इसका उपयोग किस प्रकार किया जाता है?
4.. शक्ति तथा क्षीर्णता का परीक्षण से क्या आशय है? रणनीतिक नियंत्रण की दृष्टि से इसका क्या महत्व है?
5.. तुलनात्मक शक्ति परीक्षण से क्या आशय है? इसकी विधि तथा प्रक्रिया को समझाइए।
6. निगम स्तरीय क्षमता से क्या आशय है? सामान्य प्रबन्धन तथा विशिष्ट कार्यात्मक प्रबन्धन के क्षेत्र में क्षमता का परीक्षण कैसे किया जाता है?
7. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–
   (अ) संख्यात्मक परीक्षण
   (ब) गुणात्मक परीक्षण
   (स) समग्र विश्लेषण
   (द) निगमीय नैदानिक क्षमता

8.16 सन्दर्भ पुस्तकें

1 राबर्ट एम0 ग्राण्ट, द रिसोर्स बेस्ड थ्योरी आफ कम्पटीटिव एडवान्टेजः इम्प्लीकेशन फार स्ट्रेटेजी फार्मुलेशन, नोलेज एण्ड स्ट्रेटेजी (एडिटेड)–मिशेल एच0जैक, ईबुक, पेज–7 (अनु0)

2 सुब्बाराव पी0, बिजनेस पालिसी एण्ड स्ट्रेटेजिक मैनेजमेन्ट, हिमालया पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई (2014), पृष्ठ– 137 (अनु0)

3 ए0पी0क्यू0सी0, बेसिक्स ऑफ बेंचमार्किंग, ह्यूस्टन–टैक्सास, 1993

4. Business Policy and Strategic Management, P. Subba Rao, Himalaya Publishing House, Mumbai.

5. Business Policy and Strategic Management, Azhar Kazmi, Tata McGraw- Hill Publishing Company Limited, New Delhi.

6. Business Policy and Strategic Management, GV Satya Sekhar, I K International Publishing House, New Delhi.

इकाई 9 निगम स्तरीय रणनीतियॉ

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना
9.2 स्थायित्व सम्बन्धी रणनीति
9.3 विस्तारण सम्बन्धी रणनीति
9.4 छॅटनी सम्बन्धी रणनीति
9.5 मिश्रित रणनीति
9.6 सारांश
9.7 शब्दावली
9.8 बोध प्रश्न
9.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
9.10 स्वपरख प्रश्न
9.11 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः

- निगम स्तरीय रणनीति प्रतिपादन के आशय को स्पष्ट कर सकें।
- रणनीतिक विकल्पों को समझ सकें।
- स्थिरता रणनीति व छॅटनी रणनीति का वर्णन कर सकें।
- विस्तारण रणनीति के विविध आयामों का वर्णन कर सकें।
- मिश्रित रणनीति (पोर्टफोलिओ पुनर्संरचना) का विवेचन कर सकें।
- रणनीतिक गठबन्धन को समझ सकें।

9.1 प्रस्तावना

पर्यावरण परीक्षण तथा संगठनात्मक परीक्षण किये जाने के बाद रणनीतिक प्रतिपादन की दृष्टि से सबसे महत्वपूर्ण कार्य निगम स्तर पर रणनीति का निर्धारण करना है। निगम स्तरीय रणनीति के आधार पर ही लघु व्यापार इकाई (एस0बी0यू0) स्तर पर रणनीति का प्रतिपादन किया जाता है। निगम स्तर पर रणनीति निर्धारण का आशय उन नीतियों के निर्माण से है जो सम्पूर्ण संगठन की समस्त इकाइयों के लिए व्यापक रुप से लागू की जायें। इनका आधार संसाधनों को व्यापार की विभिन्न इकाइयों में आबंटित करना, आवश्यकतानुसार एक इकाई से दूसरी इकाई को अन्तरित करना, प्रबन्धन करना तथा पोर्टफोलियो व्यवस्थित करना होता है। विभिन्न प्रकार के रणनीतिक विकल्पों की खोज, विचारण तथा सर्वोत्तम का चयन संगठन के उद्देश्यों तथा उपलब्ध संसाधनों के आधार पर किया जाता है। ग्लुएक तथा जैच[1] का मत है –रणनीतिक विकल्प इस प्रश्न के चारों ओर घूमता है कि व्यापार यथावत चालू रखना चाहिये या वर्तमान व्यापार में कतिपय परिवर्तन की आवश्यकता है अथवा व्यापार की क्षमता तथा प्रभावशीलता को बढ़ाने की आवश्यकता है जिसके द्वारा फर्म अपने निगमित उद्देश्यों को प्राप्त करता है।

इसप्रकार, समस्त निगम स्तरीय नीतियॉ संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए विकल्पों की खोज व अनुपालन से आवृत्त होती हैं। निगम स्तरीय रणनीति को निम्न आधार पर वर्गीकृत किया जाता है–

निगम स्तरीय रणनीति

स्थायित्व सम्बन्धी रणनीति	विस्तारण सम्बन्धी रणनीति	छँटनी सम्बन्धी रणनीति	मिश्रित रणनीति
यथास्थिति	आन्तरिक संवृद्धि	प्रतिगमन (टर्न एराउण्ड)	सहगामी मिश्रण
संपोषणीय संवृद्धि	एकाग्रता	बन्धित व्यापार (कैप्टिव)	क्रमिक मिश्रण
सावधानीपूर्ण चाल	विलय	रुपान्तरण (ट्रांसफोर्मेशन)	सहगामी व क्रमिक का मिश्रण
परिवर्तनहीनता	अधिग्रहण	विनिवेश	
लाभ स्थिरता	संयुक्त उपक्रम	समापन	

9.2 स्थायित्व सम्बन्धी रणनीति

किसी भी संगठन के लिए सबसे बड़ी चुनौती उसके अस्तित्व को बचाए रखने की होती है। निरंतर बढ़ रही प्रतियोगिता के कारण सभी कम्पनियों को विपणन की आक्रामक शैली अपनानी पड़ती है। गलाकाट प्रतिस्पर्धा में जो भी कम्पनी पिछड़ गई उसका बाजार से बाहर हो जाना निश्चित है इसलिए कम्पनी की यह प्राथमिकता होती है कि अपने संगठन को स्थायित्व प्रदान करे। कुछ कम्पनियॉ विकास की अपेक्षा स्थायित्व की रणनीति को अपने व्यापार के लिए अपनाना पसन्द करती हैं। स्थायित्व नीति का अर्थ यह कदापि नहीं है कि कम्पनी अपना विकास नहीं करना चाहती वरन् वह अपना कार्य अधिक दक्षता के साथ करना चाहती है जिससे कि वह अपने ग्राहकों अधिक सन्तुष्टि निरन्तर प्रदान कर सके।

स्थायित्व की रणनीति को अपनाने के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

- कम्पनी अपना कार्य अच्छे स्तर पर कर रही है तथा भविष्य में भी करते रहने की आशा है।
- कम्पनी के पास विस्तार के लिए आवश्यक संसाधन उपलब्ध नहीं हैं।
- कम्पनी अपने आरामदायक क्षेत्र से बाहर नहीं आना चाहती।
- प्रबन्धकों को लगता है कि नए क्षेत्रों में विस्तार से उनका नियन्त्रण व्यापार पर कमजोर हो जायेगा।
- प्रबन्धन नये क्षेत्रों में कार्य करने का जोखिम नहीं लेना चाहता क्योंकि वह वर्तमान स्तर पर सुरक्षित है।
- प्रबन्धन अपने उत्पादन, सेवा, विपणन आदि का स्तर उत्कृष्ट करना चाहता है तथा किसी प्रकार के विस्तार को उसमें बाधा मानता है।

- प्रबन्धन का लक्ष्य अधिक गुणवत्ता के साथ लाभ है न कि अधिक विक्रय के साथ लाभ।

व्यापार का अस्तित्व बनाए रखने तथा उसे स्थायित्व देने के लिए विभिन्न संगठनों द्वारा निम्न उपायों को प्रयोग किया जाता है–

1. **यथास्थिति–** इस रणनीति में प्रबन्धन अपने व्यापार को यथास्थिति रखने मे विश्वास रखता है। संगठन द्वारा अपना व्यापार जिस क्षेत्र में तथा जिस स्तर पर किया जा रहा है उसी पर उसे कायम रखने की नीति अपनाई जाती है। इस प्रकार के संगठन यह मानते हैं कि व्यापार की प्रतिष्ठा इस बात में है कि वह ग्राहकों को किस प्रकार सन्तुष्ट रखता है। उत्कृष्टतम सेवा प्रदान करना तभी संभव है जब व्यापार का आकार अपने नियंत्रण में हो। प्रायः इस प्रकार की नीति प्रायः छोटे स्तर के संगठनों में अपनाई जाती है क्योंकि इस प्रकार के व्यापार में व्यक्ति विशेष, कार्य विशेष अथवा स्थान विशेष की प्रतिष्ठा जुड़ी होती है। प्रबन्धन को डर होता है कि किसी प्रकार का प्रयोग करने पर उसकी वर्तमान ख्याति भी दुष्प्रभावित हो सकती है।

   यथास्थिति की नीति वर्तमान युग में जोखिमपूर्ण निर्णय है। यदि व्यापार की बढ़ती हुई मॉग को पूरा करने में कोई फर्म समर्थ नहीं है तो उसकी प्रतिस्पर्धी फर्मों का उदय हो जायेगा तथा फर्म को अस्तित्व का संकट उत्पन्न हो जायेगा।
2. **संपोषणीय संवृद्धि–** स्थायित्व सम्बन्धी रणनीति में संपोषणीय संवृद्धि अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसप्रकार की नीति अपनाने वाली कम्पनी अपने व्यापार के बहुदिशी विकास पर विश्वास नहीं करती वरन् उसका ध्येय अपने वर्तमान कारोबार को ही भली प्रकार संचालित करने का होता है। इस नीति के अन्तर्गत कम्पनी अपने व्यापार का उतना ही विस्तार करती है जितना उसके अस्तित्व को बचाये रखने के लिए आवश्यक हो। इससे व्यापार को निरन्तरता मिलती है। यथास्थिति की रणनीति में बाजार की बढती मॉग पूरी न कर पाने के कारण कम्पनी अपने प्रतिस्पर्धी स्वयं उत्पन्न कर लेती है किन्तु संपोषणीय संवृद्धि की रणनीति में कम्पनी अपनी बाजार में हिस्सेदारी निर्धारित कर लेती है और उसी के अनुकूल अपने व्यापार का विकास तय करती है। इससे कम्पनी को दौड़ में पिछड़ने का भय नहीं रहता है। कम्पनी अपनी गुणवत्ता में निरन्तर सुधार करते हुए स्थिर गति से विकास की रणनीति को अपनाती है।
3. **सावधानीपूर्ण चाल–** इस प्रकार की रणनीति को अपनाने वाली कम्पनी वातावरण तथा बाजार की परिस्थितियों को भलीभॉति परखते हुए सावधानीपूर्वक कदम उठाती है। कम्पनी कोई भी ऐसा कार्य नहीं करना चाहती जिससे किसी प्रकार का जोखिम उत्पन्न हो। कम्पनी अपने उन उत्पादों को ही आगे बढ़ाती है जो पूर्व में ही स्वीकारे जा चुके हों। कोई भी ऐसा उत्पाद या सेवा जिसके सम्बन्ध में बाजार प्रतिकूल प्रतिक्रिया मिल रही हो, तुरन्त रोक दिया जाता है। यदि बाजार की परिस्थितियॉ परिवर्तनशील हों तो कम्पनी तात्कालिक योजनाएं बनाती है। जैसे–जैसे बाजार में स्थिरता

आती जाती है, कम्पनी नीतियों में तदनुसार परिवर्तन करती जाती है। कुल मिलाकर कम्पनी अपने को सुरक्षित रखते हुए ही कोई रणनीति अपनाती है। यदि कम्पनी का कोई उत्पाद बाजार में सफल हो जाता है और कम्पनी को उसकी आपूर्ति देने में कठिनाई हो रही हो तो वह अन्य उत्पादों का उत्पादन कम कर सकती है या रोक सकती है जब तक कि स्थिति नियन्त्रण में न आ जाये।

4. **परिवर्तनहीनता–** कम्पनी की स्थिति बाजार में सन्तोषजनक होने पर वह किसी भी परिवर्तन से स्वयं को बचाने का प्रयास करती है। उसे लगता है कि परिवर्तन बाजार को अस्वीकार होने की स्थिति में कम्पनी को हानि हो सकती है। आन्तरिक अथवा वाह्य वातावरण में साधारण परिवर्तन होने पर भी कम्पनी अपनी नीतियों में परिवर्तन करने को सहमत नहीं होती। बाजार में मॉग बढ़ जाने पर कुछ नई फर्म बाजार में आ जाती हैं तथा मॉग में कमी आने पर कुछ कमजोर फर्म बाजार से बाहर हो जाती हैं। इसप्रकार कम्पनी को अपनी नीतियों में परिवर्तन की आवश्यकता का अनुभव नहीं होता है।
5. **लाभ स्थिरता–** इसप्रकार की नीति अपनाने वाली कम्पनी अपने लाभ का भाग स्थिर कर लेती है तथा बाजार की स्थितियों के परिवर्तित होने पर भी वह अपनी लाभ की दर में परिवर्तन नहीं करतीं। कम्पनी के विकास के साथ बाजार में उसके उत्पाद की मॉग बढ़ जाती है जिससे उसकी लागत में कमी आती है। कम्पनी अपनी लागत में कमी का लाभ अपने ग्राहकों को देते हुए भी अपना लाभ स्थिर कर सकती हैं। यह किसी कारण लागत में वृद्धि होती है तो कम्पनी अपने व्ययों में कटौती करते हुए मूल्यों को बढने से रोकती है। कभी–कभी कम्पनी अपनी बाजार की प्रतिष्ठा को बचाने के लिए कृत्रिम तरीकों से भी लाभ की स्थिरता प्रकट करती है। इसके लिए वह ह्रास की दरों अथवा प्रणाली में परिवर्तन कर सकती है अथवा अशोध्य ऋणों को देनदारों में प्रदर्शित कर सकती है अथवा अन्य कोई ऐसा उपाय कर सकती है जिससे कम्पनी के लाभ का स्तर समान प्रदर्शित हो।

9.3 विस्तारण सम्बन्धी रणनीति

व्यापार का सबसे प्रमुख उद्देश्य है अधिकतम लाभ कमाना। बिक्री को अधिकतम करना, परिसम्पत्तियों में वृद्धि करना तथा व्यापार के नये विस्तार को मूर्त रुप देना आदि लाभ को अधिकतम करने की दशा में प्रबन्धकों के रणनीतिक प्रयास होते हैं। संगठन के वर्तमान स्वरुप से ऊपर उठकर नये मार्गों की खोज के द्वारा संगठन की विस्तारण सम्बन्धी रणनीति निर्धारित की जाती है। विस्तारण रणनीति अपनाये जाने के प्रमुख कारण निम्न हैं–

- प्रबन्धन को लगता है कि वर्तमान व्यापार का उच्चतम स्तर प्राप्त किया जा चुका है तथा अब उसका कोई भविष्य नहीं है।
- प्रबन्धन की दृष्टि में वर्तमान व्यापार अत्यन्त जोखिमपूर्ण है तथा इसमें बहुत अधिक असुरक्षा है।

- वर्तमान व्यापार में प्रयुक्त संसाधनों से ही अन्य क्षेत्र के व्यापार भी संचालित किये जा सकते हैं तथा अतिरिक्त संसाधनों को जुटाने की आवश्यकता नहीं है।
- विस्तारण प्रतिस्पर्धी कम्पनियों का सामना करने तथा उन्हें पराजित करने के लिए आवश्यक है।
- नये क्षेत्रों में प्रवेश से पुराने कार्यों पर बुरा असर नहीं पड़ेगा वरन् पुराने क्षेत्रों के विकास में सहायता मिलेगी।
- व्यापार के विस्तार से कम्पनी की प्रतिष्ठा बढ़ेगी तथा सभी हितधारकों को लाभ होगा।

निगम स्तर पर विस्तारण सम्बन्धी रणनीति निर्धारित करने के लिए कम्पनियों के द्वारा विभिन्न उपायों को अपनाया जाता है जिनमें प्रमुख निम्नलिखित हैं–

1. **आन्तरिक संवृद्धि–** आन्तरिक संवृद्धि नीति के द्वारा कम्पनी अपनी उत्पादन क्षमता का विकास करती है। इसके लिए आवश्यक संसाधनों की आन्तरिक अथवा वाह्य श्रोतों से व्यवस्था की जाती है। मानव संसाधन को अधिक प्रशिक्षित तथा कर्तव्यनिष्ठ बनाया जाता है। वित्तीय श्रोतों को मजबूत बनाया जाता है तथा उसके कुशल उपयोग की व्यवस्था की जाती है। अनेक प्रबन्धक आन्तरिक संवृद्धि को वाह्य संवृद्धि की तुलना में अधिक प्रभावकारी मानते हैं क्योकि इसमें कम्पनी की आन्तरिक शक्ति का भरपूर उपयोग होने के साथ ही व्यापार पर नियन्त्रण बना रहता है। कम्पनी बाजार की मॉग के अनुसार अधिक उत्पादन करने तथा उसे प्रभावशाली ढंग से बेचने का प्रयास करती है जिससे बाजार में कम्पनी की हिस्सेदारी बढ़ती है तथा प्रतिस्पर्धी कम्पनियों को परास्त करने में मदद मिलती है।
2. **एकाग्रता–** इस रणनीति के अन्तर्गत कम्पनी अपने समस्त प्रयासों को बाजार के एक विशेष भाग अथवा ग्राहकवर्ग के लिए सीमित कर देती है तथा उसी पर अपनी विशेषज्ञता प्राप्त करने का प्रयास करती है। विस्तारण की रणनीति में संभवतः यह सबसे प्रथम एवं सुविधाजनक प्रयास होता है तथा सभी कम्पनियॉ अपने विस्तारण कार्यक्रम में सबसे पहले इस नीति को स्थान देती हैं। इस नीति का सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि कम्पनी को कुछ भी नया नहीं करना होता है। जो कार्य वह पहले से कर रही है तथा जिसको करने के लिए उसके पास पर्याप्त अनुभव तथा संसाधन उपलब्ध हैं, उसी को बड़े स्तर पर किया जाना होता है।

   इस नीति के अन्तर्गत निर्माता अपने ग्राहकों को अपने उत्पाद के नये प्रयोग बताते हैं। वे ग्राहक को नियमित रुप से तथा अधिक मात्रा में सामान खरीदने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। टूथपेस्ट बनाने वाली कम्पनी अपने ग्राहकों को दो बार पेस्ट करने की सलाह देती है तो पर्यटन विभाग पर्यटन स्थल पर अधिक दिन रहने के लिए प्रोत्साहित करती है। इसी के अनुसार वह पर्यटकों को पैकेज टूर के रुप में अधिक सुविधाएं देने की योजना बनाती है।

कम्पनी नये उत्पाद भी उसी क्षेत्र में लाती है जिसमें वह पहले से कार्य कर रही हो। उदाहरण के लिए– जॉनसन बच्चों के सामान बनाने में दक्षता रखती है। वह बच्चों के लिए पाउडर, साबुन आदि पहले से बना रही है। विस्तारण की दशा में वह मिलते–जुलते उत्पाद जैसे–बच्चों के लिए ऑसूरहित शैम्पू, डायपर आदि के निर्माण की दिशा में आगे बढ़ी है।

एकाग्रता की नीति का सबसे बड़ा दोष यह है कि इसमें जोखिम का विभाजन नहीं होता है। यदि कम्पनी के कार्यक्षेत्र में बाजार की मॉग गिरती है तो कम्पनी का जोखिम बढ़ जायेगा। सरकारी नीतियों में परिवर्तन अथवा अचानक किसी बड़े प्रतिस्पर्धी के बाजार में आ जाने पर भी कम्पनी के लिए कठिनाई उत्पन्न हो जाती है।

3. **विलय–** विलय व्यापारिक रणनीति का वह कदम है जिसके अन्तर्गत दो पृथक व्यापार करने वाली कम्पनियॉ मिलकर एक हो जाती हैं। इस प्रक्रिया में एक नई कम्पनी का जन्म होता है जोकि पुरानी दोनों कम्पनियों की सम्पत्तियों व दायित्वों को खरीद लेती है। पुरानी कम्पनियों को नई कम्पनी के अंशों के द्वारा मूल्य का भुगतान कर दिया जाता है। व्यापार के विस्तार की रणनीति के अन्तर्गत विलय एक सुरक्षित विकल्प माना जाता है। इस उपाय के द्वारा विलय होने वाली कम्पनियॉ समान व्यापार में अथवा पृथक व्यापार में कार्यरत हो सकती हैं। उनका आकार भी बड़ा या छोटा हो सकता है। वे एक देश में भी हो सकते हैं अथवा अलग–अलग देशों में। मुख्य बात यह है कि एक नया व्यापार पुराने व्यापारों को खरीद लेता है तथा पुराने संगठनों का समापन हो जाता है।

विलय के प्रकार– कम्पनियों का विलय होने की निम्न दशाएं हो सकती हैं–

अ) **क्षैतिज विलय**– इस प्रकार के विलय में विलीन होने वाली कम्पनियॉ एक समान व्यापार में कार्यरत होती हैं।

आ) **लम्बवत् विलय**– इस प्रकार के विलय में विलीन होने वाली कम्पनियॉ परस्पर निर्भर अथवा पूरक प्रकृति के व्यापार में संलग्न होती हैं।

इ) **संकेन्द्रित विलय**– इस प्रकार के विलय में विलीन होने वाली कम्पनियॉ एक ही ग्राहक वर्ग के लिए उत्पादन कर रही होती हैं।

ई) **साम्राज्यीकरण विलय**– इस प्रकार के विलय में कम्पनियॉ अलग–अलग क्षेत्रों में तथा अलग–अलग ग्राहक वर्ग के लिए कार्य कर रही होती हैं तथा अपना साम्राज्य बढ़ाने के उद्‌देश्य में नये क्षेत्रों में विस्तार का प्रयास करती हैं।

विलय की रणनीति के द्वारा व्यापार का विस्तारण करने के लिए उत्तरदायी कारण निम्नलिखित हैं–

- क्षैतिज विलय के द्वारा कम्पनी पारस्परिक प्रतियोगिता को कम करने तथा बाजार में हिस्सेदारी बढ़ाने का प्रयास करती हैं।

- विलय के फलस्वरुप कम्पनियों को अपने प्रशासनिक व्यय तथा वितरण व विपणन व्ययों में कटौती करने का अवसर मिलता है।
- प्रतियोगिता कम होने व व्ययों में कटौती के कारण लागत में कमी होती है। लाभ में वृद्धि होती है तथा कम्पनी की प्रतिष्ठा बढ़ती है।
- साम्राज्यीकरण के द्वारा विभिन्न प्रकार की कम्पनियों के विलय के कारण कम्पनी की स्थिति मजबूत होती है तथा किसी एक क्षेत्र में बाजार की उथल–पुथल होने पर भी कम्पनी अन्य क्षेत्रों से लाभ वसूल करके जोखिम से बचाव कर सकती है।

4. **अधिग्रहण–** अनेक बार व्यापार के विस्तार के लिए अधिग्रहण का मार्ग भी अपनाती है। जब एक विशाल कम्पनी किसी दूसरी कम्पनी का व्यापार क्रय कर लेती है तो इस व्यवहार को अधिग्रहण कहा जाता है। अधिग्रहण में क्रय करने वाली कम्पनी का अस्तित्व बना रहता है जबकि दूसरी कम्पनी का समापन हो जाता है। अधिग्रहण स्वेच्छापूर्वक भी हो सकता है और बलात् भी। क्रेता कम्पनी अधिग्रहीत कम्पनी के अंशों का प्राप्त करके उसपर अपना नियन्त्रण स्थापित कर लेती है जिसके बाद अधिग्रहीत कम्पनी का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। भारत में उदारीकरण की नीति को अपनाने के बाद अधिग्रहण विस्तारण रणनीति का एक महत्वपूर्ण अस्त्र बनकर उभरा है। गत दशक में स्टील क्षेत्र में टाटा स्टील द्वारा कोरस ग्रुप (यू0के0) का अधिग्रहण किया गया। इसीप्रकार वीडियोकोन द्वारा डेवू इलेक्ट्रोनिक्स (कोरिया) को तथा विदेश संचार निगम लिमिटेड (वी0एस0एन0एल0) द्वारा टेलीग्लोब (कनाडा) को अधिग्रहीत किया गया।

अधिग्रहण का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इसमें अधिग्रहणकर्ता कम्पनी के व्यापार को तीव्र गति मिलती है। अधिग्रहीत कम्पनी के संसाधन, उसकी मानव शक्ति तथा ख्याति का लाभ अधिग्रहणकर्ता को अविलम्ब प्राप्त हो जाता है, अनावश्यक प्रतियोगिता कम हो जाती है। भारत में आई0सी0आई0सी0आई0 बैंक द्वारा आई0सी0आई0सी0आई0 का अधिग्रहण विपरीत अधिग्रहण का उदाहरण है। इसमें मूल कम्पनी को उसकी अनुषंगी कम्पनी द्वारा अधिग्रहीत कर लिया गया।

अधिग्रहण के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

- अधिग्रहण का उपयोग साम्राज्य वृद्धि के लिये किया जा सकता है।
- अधिग्रहण के द्वारा प्रतियोगिता को कम करके बाजार में हिस्सेदारी को बढ़ाया जा सकता है।
- अधिग्रहण के द्वारा प्रशासनिक व्ययों को कम करके लागत में बचत तथा बिक्री पर अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है।
- अधिग्रहण द्वारा विस्तार करने पर उत्पाद जीवन चक्र की प्रारम्भिक अवस्था के संघर्ष से बचा जा सकता है। पूर्व में स्थापित कम्पनी का

क्रय करने से उसकी ख्याति तथा बाजार में हिस्सेदारी का लाभ लिया जा सकता है।

- रुग्ण इकाइयों का प्रबन्धन कुशल प्रबन्धकों के हाथों से जाने पर उनके पुनर्जीवित होने की संभावना बढ़ जाती है।

5. **संयुक्त उपक्रम (जे0वी0)–** बाजार में बहुत सी इकाइयॉ अपने व्यापार में व्यस्त होती हैं जिनकी अपनी कुछ शक्तियॉ तथा कुछ दुर्बलताएं होती हैं। अपनी शक्तियों का लाभ उठाते हुए बिना किसी फर्म का अस्तित्व समाप्त किये सम्मानपूर्वक सह–अस्तित्व के साथ काम करने का विकल्प संयुक्त उपक्रम के रुप में उपलब्ध है। यह एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें एकाधिक फर्म सामान्य व्यापारिक हितों की प्राप्ति के लिए मिलकर कार्य करती हैं।

संयुक्त उपक्रम से आशय ऐसी व्यापारिक व्यवस्था से है जिसमें दो अथवा अधिक फर्में किसी विशिष्ट योजना पर साथ मिलकर कार्य करते हैं। इस व्यवस्था में किसी फर्म का समापन नहीं होता है और न ही कोई नई फर्म स्थापित की जाती है। दोनों फर्मों का स्वतंत्र अस्तित्व बना रहता है तथा वे एक समझौते के आधार पर केवल निर्धारित प्रोजेक्ट पर व्यवहार करती हैं। उक्त परियोजना के अतिरिक्त इनका कोई सम्बन्ध नहीं होता है तथा यह भी सम्भव है कि किसी अन्य परियोजना के सम्बन्ध में दोनों फर्म एक दूसरे के विरुद्ध खड़ी हों।

निम्न परिस्थितियों में संयुक्त उपक्रम के माध्यम से कार्य करना लाभप्रद होता है–

- उपक्रम के लिए जितने संसाधनों की आवश्यकता है उतने संसाधन अकेले स्तर पर जुटाना संभव न हो।
- उपक्रम में जितनी जोखिम की संभावना हो वह अकेले स्तर पर वहन करना संभव न हो।
- उपक्रम के लिए लिए जिन शर्तों को पूरा किया जाना अनिवार्य हो वह अकेले स्तर पर पूरा करना संभव न हो।
- उपक्रम में सम्मिलित फर्मों के पास इस प्रकार की विशिष्ट योग्यताएं हों जिनके संयोग से लाभ की मात्रा बढ़ने की संभावना हो।
- विधिक अथवा राजनीतिक कारणों से दो फर्मों का मिलन अपरिहार्य हो।

संयुक्त उपक्रम एक सीमित अवधि का अनुबन्ध होता है जिसके अन्तर्गत दो अथवा अधिक फर्म किसी उद्देश्य विशेष को पूरा करने के लिए एकत्रित होती हैं तथा यह केवल तभी सम्भव है जबकि इसमें सभी सम्मिलित संगठनों के हित सिद्ध होते हों। संयुक्त उपक्रम एक ही देश की अथवा भिन्न देशों की तथा एक ही व्यापार अथवा भिन्न व्यवसायों में संलग्न व्यापारिक संस्थाओं का मिलन हो सकता है। जब भारत में विदेशी कम्पनियों को सीधे निवेश की अनुमति नहीं थी तो वे किसी भारतीय साझेदार की तलाश करते

थे। इसीप्रकार यदि किसी राज्य की सरकार केवल अपने राज्य की फर्म को ही अनुबन्ध करने की शर्त रखती है तो बाहर की फर्म स्थानीय फर्म के साथ उपक्रम बनाती है। जब किसी उपक्रम के लिए विविध योग्यताओं की आवश्यकता हो तो भी किसी साथी की तलाश कर संयुक्त उपक्रम का रुप दिया जाता है। ये पारस्परिक आवश्यकता अल्पकालीन तथा केवल एक परियोजना के लिए ही होती है अन्यथा स्थिति में दीर्घकालीन समझौते के लिए एकीकरण तथा अधिग्रहण जैसे विकल्प का प्रयोग किया जाता है।

संयुक्त उपक्रम यद्यपि सभी सम्मिलित संगठनों के लिए लाभदायक होता है किन्तु इसे सफल बनाना अत्यन्त कठिन होता है। दो विभिन्न कार्य वातावरण वाले जीवित संगठनों का मिलकर कार्य करना चुनौतीपूर्ण होता है। इनके कार्यों में सहयोग, समन्वय तथा अनुशासन के अभाव की समस्या हो सकती है।

9.4 छँटनी सम्बन्धी रणनीति

व्यापार की प्रारम्भिक अवस्था में जब संगठन को खड़ा करने का प्रयास किया जाता है तो सावधानीपूर्वक विकास की नीति अपनाई जाती है। विकास की अवस्था में लाभ बढ़ाने की नीयत से विस्तारवादी योजनाओं पर कार्य किया जाता है। किन्तु व्यापारिक अनिश्चितताओं के दौर में ऐसी स्थिति आ सकती है जब संगठन को अपना विस्तार समेटना पड़े। अचानक होने वाले बाजार–परिवर्तन, प्रतियोगिता में वृद्धि, सरकारी नीतियों में बदलाव, फैशन में परिवर्तन आदि के कारण ऐसी स्थिति आ सकती है जब किसी संगठन को अपने विस्तार में कटौती करना पड़े। इस प्रकार की नीतियों को छँटनी सम्बन्धी नीति कहा जाता है। व्यापार के विकास के दौर में अनेक उत्पादों के विविध ब्राण्ड़ पर फर्म कार्य करती है किन्तु मन्दी के दौर में जब बिक्री घट जाती है तो कम्पनी को विचार करना होता है कि अब किन वस्तुओं का उत्पादन बन्द कर दिया जाय। इसप्रकार की नीतियों में अपने व्यापार को सीमित करने का प्रयास किया जाता है।

उदाहरण–भारतीय ड़ाक व तार विभाग द्वारा समयातीत होने के कारण अपनी तार सेवा को बन्द कर दिया। हिन्दुस्तान मोटर्स द्वारा अपनी एम्बैस्डर कार बनाने वाली इकाई को बन्द कर दिया गया। हिन्दुस्तान यूनीलीवर द्वारा अपने अनेक ब्राण्डों की छॅटनी कर दी गई।

छॅटनी सम्बन्धी प्रयासों के अन्तर्गत संगठन द्वारा –

- कुछ कम लाभ वाले उत्पादों को बन्द किया जा सकता है, अथवा
- व्यापार के विस्तार को कम किया जा सकता है, अथवा
- वितरण को कुछ विशेष बॅधे हुए ग्राहकों के लिए सीमित किया जा सकता है, अथवा
- व्यापार का कुछ हिस्सा बेचा जा सकता है।

किसी संगठन द्वारा छॅटनी सम्बन्धी रणनीति बनाये जाने के लिए सामान्यतः निम्नलिखित कारण उत्तरदायी होते हैं–

- उत्पादक द्वारा बनाये जाने वाला कोई उत्पाद प्रचलन से बाहर हो गया है।
- बाजार की दशाओं में बदलाव के कारण मॉग में अत्यन्त कमी आ गई है।
- निरन्तर बढ़ती कच्चे माल की कीमतों के कारण लाभ की मात्रा कम हो गई है।
- प्रतिस्पर्धी फर्म उच्च तकनीक के साथ बाजार में उत्पादन प्रस्तुत कर रही है तथा कम्पनी के पास नवीनीकरण के लिए उचित संसाधन उपलब्ध नहीं हैं।
- कम्पनी के अन्य उत्पाद अत्यन्त सफल हैं तथा कम्पनी उन उत्पादों पर ही ध्यान केन्द्रित करना चाहती है जिनमें लाभ की दर अधिक है।
- नियमों में बदलाव के फलस्वरुप उत्पादन बन्द करना अनिवार्य है।
- कच्चे माल का कोटा सरकार द्वारा घटा दिये जाने से उत्पादन में कमी करना आवश्यक हो।
- कम्पनी के प्रबन्धन में बदलाव के बाद कुछ क्षेत्रों को प्राथमिकता से हटा दिया गया हो।
- प्रबन्धकों को ऐसा अनुभव हो रहा हो कि अत्याधिक विस्तार के कारण नियन्त्रण शिथिल हो रहा है।
- कम्पनी के पास अधिक लाभ वाले अन्य विकल्प उपलब्ध हैं जिनके लिए संसाधन जुटाया जाना आवश्यक है।

संगठन द्वारा छॅटनी प्रक्रिया अपनाये जाने के लिए अनेक विकल्प उपलब्ध होते हैं जिनमें से अपने लिए श्रेष्ठ विकल्प का चुनाव वह वातावरण के अनुरुप कर सकता है। विकल्प के चुनाव में कम्पनी की आर्थिक स्थिति, बाजार में हिस्सेदारी, प्रबन्धन की नीतियॉ तथा भविष्य का अनुमान महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। छॅटनी सम्बन्धी रणनीति के प्रमुख विकल्प निम्नलिखित हैं–

1. **प्रतिगमन (टर्न एराउण्ड)**– प्रतिगमन की रणनीति के द्वारा संगठन अपनी असफलताओं पर विजय प्राप्त करने का प्रयास करता है। संगठन अपनी आन्तरिक तथा बाहरी चुनौतियों का सामना करने के लिए अपनी नीतियों तथा प्रयासों की समीक्षा करता है तथा जो भी कार्य ऋणात्मक प्रभाव उत्पन्न कर रहे हैं उनसे कदम खींच लेता है। इस वापसी की क्रिया को ही प्रतिगमन या पलटना कहा जाता है। कम्पनी अपने उन निर्णयों को वापस ले लेती है जो समय की कसौटी पर खरे सिद्ध नहीं हो सके हैं। व्यवसाय की लाभ दर ऋणात्मक होने, संसाधनों के मूल्य में कमी आने, बाजार में हिस्सेदारी कम हो जाने, अतिपॅूजीकरण अथवा अल्प पॅूजीकरण होने, उत्पाद के अप्रचलित होने अथवा किसी अन्य प्रकार के कुप्रबन्धन का सामना करने के लिए प्रतिगमन की नीति को अपनाया जाता है। भट्टाचार्य एस0के0 के अनुसार[2]– प्रतिगमन रणनीति की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि रणनीतिक विषयों के अतिरिक्त अल्पकालीन व दीर्घकालीन वित्तीय आवश्यकताओं पर भी (बैंकों

और वित्तीय संस्थाओं के समान) ध्यान दिया जाय। इसके लिए निम्न लिखित प्रक्रिया को अपनाया जाता है–

- सर्वप्रथम, संगठन की वास्तविक समस्या का पता लगाने का प्रयास किया जाता है।
- प्रबन्धन सम्बन्धी निर्णयों की समीक्षा करते हुए विकास में घातक नीतियों तथा उसके अभिलेखों पर तुरन्त सुधारात्मक कार्यवाही की जा सकती है।
- आन्तरिक व वाह्य संसाधनों की समीक्षा की जाती है।
- उत्पादन तकनीक, प्रक्रिया, वित्तीय साधन तथा उनके उपयोग, मानव संसाधन के उपयोग आदि की समीक्षा की जाती है।
- संगठन की नीतियों के निर्माण में त्रुटि तथा उनके अनुपालन में लापरवाही का पता लगाया जाता है तथा इसके लिए उत्तरदायी अधिकारियों की पहचान की जाती है।
- अक्षम अधिकारियों को हटाया जाता है। त्रुटिपूर्ण नीतियों व निर्णयों को वापस लिया जाता है।
- नयी प्रबन्धन टीम व कार्य समूहों का गठन किया जाता है तथा नये सिरे से योजनाओं पर विचारण करके उन्हें क्रियान्वित किया जाता है।

2. **बन्धित व्यापार (कैप्टिव)–**

व्यापार से पीछे हटने की रणनीति के अन्तर्गत बन्धित व्यापार एक सुरक्षित कदम माना जाता है। इसके अन्तर्गत संगठन अपने व्यापार को संकुचित कर देता है तथा कुछ विशिष्ट ग्राहकों के लिए ही विक्रय की नीति को अपनाता है। व्यापारी अपने उत्पादन की मात्रा को सुनिश्चित बिक्री की मात्रा तक सीमित कर देता है।

उदाहरण– टाटा मोटर्स अपने वाहनों के निर्माण में केवल एक भाग ही स्वयं बनाती है तथा शेष भाग (पार्टस् एवं एक्सेसरीज) के निर्माण के लिए वह अलग–अलग अनेक कम्पनियों से समझौता करती है। ये कम्पनियॉ वेन्डर कम्पनी कहलाती हैं। प्रायः ये कम्पनियॉ टाटा के लिए ही उत्पादन करती हैं। इसका लाभ यह होता है कि वे टाटा से ही डिजायन प्राप्त करके उसी की आवश्यकता के अनुसार वांछित मात्रा में उत्पादन करती हैं। इन्हें विपणन कार्य में कोई भी प्रयास नहीं करने होते हैं।

यदि कोई फर्म प्रतिगमन के द्वारा अपने व्यापार को समेटना चाहती है तो उपरोक्त प्रकार का व्यापार अच्छा विकल्प होता है जिसमें सुरक्षित ढंग से किसी एक क्रेता को माल बेचकर निश्चित बिक्री तथा लाभ को प्राप्त किया जा सकता है।

नई तथा छोटी कम्पनियों की दशा में यह रणनीति प्रायः अधिक कारगर होती है।

3. **रुपान्तरण (ट्रांसफोर्मेशन)–** छॅटनी सम्बन्धी रणनीति के अन्तर्गत रुपान्तरण का विकल्प सबसे अधिक जोखिमपूर्ण तथा चुनौतीपूर्ण होता है। इस उपाय के

द्वारा फर्म अपने पिछले व्यापार में व्यापक परिवर्तन करता है। इसप्रकार का निर्णय लेना आसान नहीं है क्योंकि अनेक बार तो फर्म अपने व्यवसाय की दिशा ही बदल देती है।

कम्पनी को रुपान्तरण के द्वारा छँटनी रणनीति लागू करने के निम्न कारण हो सकते हैं–

- वर्तमान व्यापार समयातीत हो गया है। इसमें मॉग निरन्तर कम हो रही है तथा निकट भविष्य में भी इसके बढने की आशा नहीं है।
- वर्तमान व्यापार से इतर किसी अन्य क्षेत्र में अचानक तीव्र विकास की सम्भावना बन गई हो।
- बदले हुए परिवेश में कार्य करने के लिए उचित अवसर उपलब्ध हैं।
- प्रबन्धन उत्साही तथा मजबूत है जो कठिन निर्णय लेने में सक्षम है तथा जिसमें जोखिम लेने का साहस है।
- संगठन के पास इतने साधन उपलब्ध हैं कि नई योजनाओं को लागू करने में कोई समस्या उत्पन्न नहीं होगी।
- परिवर्तन के फलस्वरुप संसाधनों के निष्प्रयोज्य होने तथा मानव संसाधन के बेरोजगार होने के कारण हानि होने की तथा न्यायालयी कठिनाइयों के उत्पन्न होने सम्भावना न हो।

4. **विनिवेश–** विनिवेश से आशय उस दशा से है जिसमें कोई संगठन अपने व्यापार का अथवा पूॅजी का एक भाग बेच देता है। इस दशा को स्पिन ऑफ भी कहा जाता है। कम्पनी अपनी विभिन्न इकाइयों में से विनिवेश हेतु चयनित इकाई को अन्य कम्पनी को बेच सकती है। वह अपनी किसी इकाई के कारोबार का अन्य फर्म के साथ विलय कर सकती है। यह भी संभव है कि अपना कारोबार समाप्त ही कर दे। उपरोक्त सभी परिस्थितियों का प्रभाव समान है क्योंकि सभी में वर्तमान इकाई का समापन किया जा रहा है।

विनिवेश की रणनीति अपनाने के निम्नलिखित कारण हो सकते हैं–

- व्यापार का विकास विभिन्न चरणों में हुआ है तथा संगठन को ऐसा लगता है कि भविष्य की दृष्टि से यह विकास सुनियोजित नहीं है।
- किसी रणनीतिक व्यवसाय इकाई को निरन्तर हानि हो रही है तथा इसके कारण संगठन की औसत विकास गति दुष्प्रभावित हो रही है।
- यदि व्यापार का एक भाग अन्य व्यापार की अपेक्षा भिन्न प्रकृति का है तथा संगठन को इस भाग के नियंत्रण में अधिक संसाधनों का उपयोग करना पड़ रहा है।
- व्यापार का कोई भाग कम्पनी के मुख्य व्यापार की प्रकृति से भिन्न है जिसे चलाते रहने से कम्पनी अपने मुख्य लक्ष्य से भटक सकती है। उदाहरण– टाटा समूह ने अपनी कम्पनी टोम्को को हिन्दुस्तान लीवर को इसलिए बेच दिया क्योंकि तेल आदि का व्यापार टाटा का मुख्य

व्यापार नहीं था। इसीप्रकार टाटा फार्मा को भी वाक्हार्ट को बेच दिया गया।

- संगठन अपने व्यापार की दशा को परिवर्तित करना चाहता है किन्तु पुराना व्यापार इस विकास में बाधक है।
- संगठन को ऐसा प्रतीत होता है कि उसका उत्पाद समयातीत हो चुका है तथा अब उसे पुनर्जीवित करने का कोई लाभ नहीं है। उदाहरण– हिन्दुस्तान मोटर्स को भारत की सबसे अधिक प्रतिष्ठित तथा पुरानी कार जोकि 1958 से देशभर के लोगों का दिल जीत रही थी, का उत्पादन 2014 में बन्द करना पड़ा क्योंकि कम्पनी को अब अपनी एम्बैस्डर कार की बिक्री बढ़ने तथा इसकी बाजार में हिस्सेदारी कायम रखने पर भरोसा नहीं रहा।
- फर्म अपने किसी विशेष उत्पाद अथवा अथवा इकाई को प्रतिस्पर्धा की दृष्टि से दुर्बल मानती है और उसे लगता है कि इस पर अधिक ध्यान देने से संगठन अन्य क्षेत्रों में भी अपनी प्रतिष्ठा को खो देगा।
- कभी–कभी कानूनी दृष्टि से भी किसी इकाई को बेचा जाना आवश्यक हो जाता है। उदाहरण– हिन्दुस्तान लीवर लिमिटेड के पास लक्स, लिरिल, लाइफबॉय, सर्फ, रिन, डालडा जैसे निम्न तकनीक वाले उत्पाद थे किन्तु विदेशी विनिमय नियामक अधिनियम (फेरा) प्रावधानों के कारण उसने अपने निम्न तकनीक वाले वनस्पति घी एवं तेल के कारोबार को लिप्टन को बेच दिया तथा उनके स्थान पर केमिकल्स के उच्च तकनीक व्यापार में प्रवेश किया। इस परिवर्तन के कारण उसे अपनी पूँजी तथा अस्तित्व को बचाने में सफलता मिली।

कम्पनी द्वारा विनिवेश की दशा में सावधानी रखने की आवश्यकता है। इसके लिए विनिवेश के लिए सही समय का चुनाव किया जाना आवश्यक आवश्यक है। कम्पनी को निम्नलिखित सावधानियॉं रखने की आवश्यकता है–

(अ) जब भी कोई कम्पनी विनिवेश का निर्णय लेती है, यह मान लिया जाता है कि कम्पनी की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है। यह भी मान लिया जाता है कम्पनी को अपने व्यापार में हानि का सामना करना पड़ रहा है। इसके कारण विक्रेता फर्म की ख्याति में कमी आती है।

(आ) कम्पनी द्वारा एक भाग को बेचने का निर्णय का प्रभाव उसकी ख्याति पर पड़ता है। इससे कम्पनी की सम्पत्तियों का मूल्यांकन कम हो जाता है। विक्रय–मूल्य क्रेता कम्पनी के दबाव में निर्धारित होता है जो कि विक्रेता कम्पनी के पक्ष में नहीं होता तथा उसे हानि का सामना करना पड़ता है। अतः कम्पनी को विनिवेश सम्बन्धी निर्णय सही समय पर लेना चाहिए जिससे कि उसकी सम्पत्तियों का उचित मूल्य मिल सके। विक्रेता कम्पनी को बाजार पर निगरानी रखते हुए

यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उसकी इकाई उस समय बेची जाय जबकि उसकी स्थिति बाजार में अच्छी प्रदर्शित हो।

5. **समापन–** समापन वह रणनीति है जिसके द्वारा कम्पनी अपना व्यापार समाप्त कर देती है। यह किसी कम्पनी के लिए छँटनी सम्बन्धी अन्तिम विकल्प होता है कि वह अपने सम्पूर्ण व्यापार को समाप्त करके उसकी सम्पत्तियों को बेच दे तथा इस विक्रय से प्राप्त राशि से दायित्वों का भुगतान करते हुए शेष राशि अंशधारकों को भुगतान कर दे।

समापन का विकल्प कोई भी कम्पनी तभी प्रयोग करती है जबकि वह निरन्तर हानि का सामना कर रही हो। उसकी सम्पत्तियॉं क्षरित हो रही हों तथा निकट भविष्य में भी परिस्थिति में सुधार की कोई सम्भावना न हो। किसी कम्पनी द्वारा समापन का विकल्प प्रयोग किये जाने के निम्नलिखित कारण हो सकते हैं–

- व्यवसाय इस प्रकृति का है जिसे निश्चित समयावधि में पूर्ण किया जाना आवश्यक है।
- साझेदारी की दशा में किसी भी साझेदार के अवकाशग्रहण अथवा मृत्यु की दशा में फर्म का समापन हो जाता है।
- राजनीतिक अथवा कानूनी दबाव में व्यापार को बन्द करना अनिवार्य हो गया हो।
- फर्म को निरन्तर व्यावसायिक हानि का सामना करना पड़ रहा हो।
- कम्पनी द्वारा बनाये जाने वाला उत्पाद समयातीत हो गया है तथा व्यापार का विनिवेशन संभव न हो।
- कम्पनी के निवेशों पर प्रत्याय की उचित दर प्राप्त नहीं हो रही हो।
- कम्पनी को कोई अत्यन्त आकर्षक प्रस्ताव प्राप्त हो गया हो जिसके कारण पुराना व्यापार बन्द करना उचित प्रतीत होता हो।

समापन को निकृष्टतम विकल्प माना गया है क्योंकि इसके परिणाम अत्यन्त घातक होते हैं–

- कम्पनी की प्रतिष्ठा समाप्त हो जाती है। उसके द्वारा अन्य कोई व्यवसाय चुने जाने की राह भी कठिन हो जाती है।
- कम्पनी को अपनी सम्पत्तियों का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है।
- देनदारों की राशि के अशोध्य हो जाने का जोखिम बढ़ जाता है।
- कम्पनी में कार्यरत कर्मचारी बेरोजगार हो जाते हैं।
- कम्पनी को श्रम असन्तोष तथा विधिक अड़चनों का सामना करना पड़ता है।
- कम्पनी के विभिन्न हितधारकों (आपूर्तिदाता, लेनदार, बैंक, बीमा कम्पनी, दलाल, परिवहन, भंडारण आदि) को भी हानि होती है क्योंकि उन्हें अपने व्यापार की कमी को पूरा करने के लिए नये

ग्राहक की खोज करनी होती है। यह व्यापार प्राप्त करने के लिए उन्हें अनेक प्रयास करने होते हैं तथा अतिरिक्त धन व्यय करना होता है।

9.5 मिश्रित रणनीति

मिश्रित रणनीति से आशय उन नीतियों से है जिनके द्वारा कोई संगठन स्थायित्व सम्बन्धी, विस्तारण सम्बन्धी तथा छॅटनी सम्बन्धी रणनीतियों को एकसाथ एकीकृत मॉडल द्वारा लागू करती है। निरन्तर बदलते व्यावसायिक वातावरण में अनेक अवसर ऐसे आते हैं जिनमें किसी संगठन को अपने व्यापार का पुनर्गठन करना पड़ता है। पुराने व्यापार को नई परिस्थितियों के अनुकूल बनाने तथा लाभार्जन क्षमता में वृद्धि करने के उद्देश्य से संगठन को नई दिशा प्रदान करने के लिए यह भी संभव है कि फर्म अपने व्यापार के एक भाग को बेच दे तथा किसी अन्य भाग को स्थिर रखते हुए किसी तीसरे व्यापार का अधिग्रहण कर ले। अलग– अलग इकाइयों के लिए भिन्न प्रकार की नीतियों का पालन करते हुए व्यावसायिक सफलता को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार के रणनीतिक प्रयासों को पोर्टफोलिओ पुनर्संरचना के रुप में भी जाना जाता है क्योंकि इसमें संगठन अपने वर्तमान स्वरुप में अनेक बदलावों को सम्मिलित करते हुए नया सुविधाजनक, सुरक्षित तथा लाभपूर्ण आकार प्राप्त करने का प्रयास करता है।

व्यापार के विकास की विभिन्न अवस्थाएं होती हैं। प्रारम्भिक अवस्था में लागत अधिक आती है। द्वितीय अवस्था में धीरे–धीरे मॉग में वृद्धि के साथ लाभों में भी वृद्धि होती है। तृतीय अवस्था में कम्पनी अपने सर्वोच्च स्थान को प्राप्त करते हुए बाजार पर छा जाती है। इन अवस्थाओं के लिए कोई समयावधि निर्धारित नहीं है। कुछ कम्पनियॉ तो कुछ ही महीने में तीसरी अवस्था तक पहॅुच जाती हैं तो कुछ अन्य कई वर्षों तक भी एक ही अवस्था में बनी रहती हैं। कम्पनी के जो उत्पाद बाजार में स्वीकार किये जाते हैं उन्हीं को कम्पनी आगे बढ़ाना चाहती है तथा जो उत्पाद पिछड़ जाते हैं उन्हें योजनाबद्ध ढंग से बाजार से बाहर कर दिया जाता है।

मिश्रित रणनीति को तीन प्रकार से लागू किया जाता है–

1. सहगामी मिश्रण
2. क्रमिक मिश्रण
3. सहगामी तथा क्रमिक मिश्रण

सहगामी मिश्रण से आशय उस रणनीति से है जिसमें परिवर्तन की रणनीति को एक साथ अनेक इकाइयों अथवा उत्पादन लाइन में लागू किया जाता है अर्थात् एक व्यावसायिक इकाई में विस्तार की नीति तो दूसरी में छॅटनी की। क्रमिक मिश्रण में नीतियों को एक के बाद एक लागू किया जाता है। उदाहरण के लिए किसी कम्पनी में पहले चरण में सावधानीपूर्वक लाभ को बचाने का प्रयास किया जाता है तथा धीरे–धीरे किसी एक क्षेत्र में विशेषज्ञता प्राप्त की जाती है। उसके बाद संयुक्त उपक्रम, एकीकरण व विलय के बाद साम्राज्यवादी विस्तार को प्राप्त किया जा सकता है। कुछ संगठन इन दोनों नीतियों के मिश्रण को भी लागू कर सकता है जिसके अन्तर्गत कुछ

इकाइयों के लिए सहगामी मिश्रण का प्रयोग किया जाता है तो कुछ के लिए क्रमिक मिश्रण की नीति अपनाई जाती है।

जोए जी0 थॉमस ने किसी फर्म के रणनीतिक मूल्यांकन के लिए एक तालिका प्रस्तुत की है जिसमें रणनीतिक विकल्पों का एकीकृत मॉडल प्रस्तुत किया गया है। यह मॉडल बताता है कि किसी संगठन की निजी शक्तियों व दुर्बलताओं का सम्बन्ध उन्हें उपलब्ध संसाधनों से होता है तथा इन दोनों के तालमेल से ही भावी प्रगति तथा पुनर्गठन को आधार प्राप्त होता है।

	पारिस्थितिकी वातावरण	
	अवसरों की उपलब्धता	चुनौतियों का आरोपण
आन्तरिक वातावरण — सुदृढ़	आदर्श फर्म– 1. एकाग्रता 2. लम्बवत एकीकरण 3. क्षैतिज एकीकरण	आशंकित फर्म– 1. सीमित संवृद्धि 2. सकेन्द्रीय विविधता 3. साम्राज्यवादी विविधता 4. रुपान्तरण 5. संयुक्त उपक्रम
आन्तरिक वातावरण — दुर्बल	भाग्यशील फर्म– 1. प्रतिगमन 2. सकेन्द्रण 3. बन्धित व्यापार 4. सीमित संवृद्धि 5. एकीकरण 6. संयुक्त उपक्रम 7. विनिवेश 8. समापन	संकटग्रस्त फर्म– 1. प्रतिगमन 2. विनिवेश 3. समापन

उपरोक्त तालिका से यह ज्ञात होता है कि जिन संगठनों की शक्तियॉ उन्हें प्राप्त अवसरों के अनुरुप होती हैं वे तीव्र विकास करती हैं तथा लम्बवत तथा क्षैतिज एकीकरण के उपायों का प्रयोग करती हैं। वे अपनी इच्छानुसार किसी क्षेत्र को चुनकर उनमें एकाग्रता द्वारा विशेषज्ञता प्राप्त कर सकती हैं। जिन सुदृढ़ संगठनों को उचित अवसर प्राप्त नहीं हो पाते हैं वे सीमित अवसरों का सावधानीपूर्वक लाभ उठाने का प्रयास करते हैं। वे सीमित संवृद्धि तथा संयुक्त उपक्रम जैसे विकल्पों का उपयोग करते हैं। दुर्बल संगठन तो प्राप्त अवसरों का भी उचित लाभ नहीं उठा पाते हैं। वे लाभ प्राप्त करने के लिए दूसरों का सहारा लेते हैं या फिर किसी उचित प्रस्ताव के प्राप्त होने पर विनिवेश या समापन का मार्ग भी चुन सकते हैं। जो संगठन दुर्बल होते हैं तथा उन्हें चुनौतियों का सामना भी करना पड़े तो उनका संकटग्रस्त होना स्वभाविक ही है। वे तो बस प्रतिगमन, विनिवेश अथवा समापन का मार्ग ही चुन सकते हैं।

इसप्रकार जोए जी0 थॉमस द्वारा संगठन के मूल्यांकन में आन्तरिक सुदृढ़ता तथा वाह्य वातावरण को आधार बनाया गया है।

<u>रणनीतिक सन्धि</u>–

आधुनिक युग में व्यापार का विकास इस तरह हो रहा है कि परिस्थितियों में निरन्तर तथा असमान परिवर्तन होता है। अतः अस्तित्व के बचाव तथा विकास की समस्त नीतियों को बहुत तीव्रता से लागू करना पड़ता है। संगठन अपने लाभों में वृद्धि के लिए समयानुसार नीतियों में परिवर्तन करता है। इनमें से एक रणनीतिक सन्धि अथवा गठबन्धन भी है। योशिनो एवं रंगन[3] ने रणनीतिक सन्धि को आवश्यक विशेषताओं के आधार पर परिभाषित किया है–

- दो या अधिक फर्म निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति के लिए एकमत होती हैं किन्तु समझौते के उपरान्त वे स्वतन्त्र ही रहती हैं।
- भागीदार फर्म गठबन्धन के लाभों को बॉटती हैं तथा निर्धारित कार्य के निष्पादन पर नियन्त्रण करती हैं। संभवतः यह गठबन्धन का सबसे बड़ी विशेषता है।
- भागीदार फर्म तकनीक, उत्पादन जैसे एकाधिक महत्वपूर्ण विषय पर निरन्तर अपना योगदान देती हैं।

इस प्रकार, रणनीतिक सन्धि वे दीर्घकालीन समझौते हैं जिनमें दो कम्पनियॉ अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए तथा पारस्परिक हितों की पूर्ति के लिए आपस में मिलकर रणनीतिक कदम उठाते हैं। इसप्रकार की सन्धि में किसी भी फर्म का अस्तित्व समाप्त नहीं होता वरन् दोनों सहअस्तित्व की भावना से कार्य करते हैं। दोनों फर्म अपना पृथक व्यवसाय भी कर सकती हैं। यह सहयोग उत्पादक का उत्पादक के साथ अथवा सेवाप्रदाता के साथ अथवा सेवा प्रदाता का सेवा प्रदाता के साथ अथवा अन्य के किसी रुप में हो सकता है। इस प्रकार की सन्धि का सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि विश्वस्त साथी के उत्पाद अथवा सेवा की उपलब्धता न्यूनतम मूल्य पर हो जाती है।

गत दशक में रणनीतिक संधि के द्वारा व्यापार के विकास की प्रवृत्ति तीव्रता से बढ़ रही है। उत्पादक का परिवहन कम्पनी, बीमा कम्पनी अथवा विपणन कम्पनी के साथ समझौता महत्वपूर्ण हो सकता है। आजकल ई–कामर्स के युग में ऑनलाइन शॉपिंग का व्यापार दिनोंदिन प्रसिद्धि प्राप्त कर रहा है। शॉपिंग कम्पनी अपने सामान को ग्राहकों के द्वार तक पहॅुचाने के लिए कोरियर कम्पनियों के साथ सन्धि करते हैं। शॉपिग कम्पनी को भरोसेमन्द कोरियर कम्पनी का साथ मिलता है तो उसका व्यापार ग्राहकों का विश्वास अर्जित कर पाता है। दूसरी ओर कोरियर कम्पनी को भी बड़ी मात्रा में व्यापार एक ही ग्राहक से मिल जाता है। गत दिनों पतंजली आयुर्वेद लिमिटेड के उत्पादों को बेचने के लिए बिग बाजार के साथ इसीप्रकार की सन्धि की गई है। इस बीच बैंकेश्योरेंस का महत्व भी निरन्तर बढ़ता जा रहा है। यह शब्द बैंक तथा ऐश्योरेंस (इन्श्योरेन्स) के संयोग से बना है। इसके अन्तर्गत इन्श्योरेन्स कम्पनी बीमा पालिसी बेचने के लिए बैंकों की मदद लेते हैं। बैंकों को बीमा कम्पनी से कमीशन भी

मिलता है तथा जमाराशि भी। दूसरी ओर बीमा कम्पनी को पॉलिसी के विपणन में आसानी हो जाती है और उसका व्यवसाय बढ़ता है। पी0एन0बी0 मेटलाइफ, आईसीआईसीआई प्रूडेन्शियल आदि इस क्षेत्र में प्रमुख नाम हैं।

रणनीतिक सन्धि की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

- रणनीतिक सन्धि की सभी फर्म स्वतन्त्र होती हैं जो अपना व्यापार करती हैं किन्तु समझौते के द्वारा कुछ व्यापार मिलकर इसप्रकार करती हैं जैसे कि एक ही फर्म हो।
- रणनीतिक सन्धि दीर्घकालीन होती हैं और पारस्परिक हित के लक्ष्य को पूर्ण करती है।
- रणनीतिक सन्धि में सम्मिलित सभी फर्म अपने को लाभ की स्थिति में पाती हैं।
- रणनीतिक सन्धि में सम्मिलित सभी फर्म परस्पर सहयोग से अपने जोखिम को कम करने में सफल होते हैं।
- रणनीतिक सन्धि दोनों कम्पनियों के उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक होती है।
- प्रत्येक प्रतिभागी फर्म अपनी साथी फर्म को सशक्त करती है तथा उसकी दुर्बलताओं का सामना करने में मदद करती है।
- रणनीतिक सन्धि के प्रतिभागी अपने प्रतिस्पर्धियों को परास्त करने के लिए अपने रणनीतिक साझेदार की शक्तियों को प्रयोग करते हैं तथा बाजार में नेतृत्व की स्थिति प्राप्त करते हैं।

रणनीतिक सन्धि के प्रकार– रणनीतिक सन्धि दो सम्बन्धित संगठनों के बीच का व्यवहार है। प्रतिभागी संगठनों को इसमें किसी भी प्रकार से करार करने की स्वतन्त्रता होती है। अतः रणनीतिक सन्धि के विविध रुप दिखाई देते हैं–

1) **लाइसेंसिंग–** इस अवस्था में उत्पाद के निर्माण हेतु अधिकृत फर्म अपने अधिकार के प्रयोग के लिए अन्य संस्था को अधिकृत कर देती है। इसे लाइसेन्स कहा जाता है। लाइसेन्स का प्रयोग करने के बदले प्रयोगकर्ता फर्म द्वारा निश्चित धनराशि का भुगतान किया जाता है। इसका प्रयोग प्रायः उत्पादन के क्षेत्र में किया जाता है।

2) **फ्रेंचाइजिंग–** सेवाप्रदाता अपनी साख का लाभ लेते हुए सेवा प्रदान करने का अपना अधिकार अनेक स्थानों पर अन्य फर्मों को निश्चित किराये पर दे देता है। फ्रेंचाइजिंग के अन्तर्गत अधिकार देने वाली कम्पनी गुणवत्ता पर भी नियंत्रण रखती है क्योंकि ग्राहक उक्त कम्पनी की प्रतिष्ठा के आधार पर ही अधिकार प्रयोगकर्ता फर्म से माल अथवा सेवा प्राप्त करती है तथा किसी भी प्रकार से असन्तुष्ट होने पर अधिकार प्रदाता फर्म की साख को धक्का पहुॅचता है। इसका प्रयोग प्रायः सेवा के क्षेत्र में किया जाता है।

3) **सहविपणन–** दो फर्म अपने विपणन को इस प्रकार से प्रबन्धित करते हैं कि कुल मिलाकर वे एक दूसरे के पूरक बन जाते हैं अर्थात् उनके उत्पाद एक दूसरे को सहायता प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए एक साबुन निर्माता अपनी साबुन की

टिक्की के साथ साबुनदानी मुफ्त देने की योजना चलाती है तो वह साबुनदानी का क्रय करते समय उस कम्पनी को लाभ पहुँचा रही है, वहीं साबुनदानी निर्माता एक साथ विक्रय का लाभ लेने के लिए साबुन निर्माता को सस्ते दाम में माल देकर लाभ कमाता है। ग्राहक भी साबुनदानी मुफ्त मिलने के लालच में साबुन का क्रय करना है। उक्त समझौते से दोनों पक्षों के साथ ग्राहकों को भी लाभ होता है।

4) **प्रतिविपणन–** इस प्रकार के समझौते में एक वस्तु का उत्पादक दूसरी वस्तु के लिए मॉग सृजित करता है। कार का निर्माण बढ़ने से टायर की मॉग भी बढ़ती है। इसी प्रकार मरम्मत व रखरखाव के लिए वर्कशॉप का काम बढ़ता है, बीमा क्षेत्र का विकास होता है। सम्बन्धित फर्म परस्पर सन्धि के द्वारा लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

5) **वाह्य आपूर्ति (आउट सोर्सिंग)–** दीर्घकालिक समझौते के द्वारा एक कम्पनी अपने उत्पादन, वितरण अथवा सम्बन्धित सेवा का एक भाग किसी अन्य फर्म को सोंप देती है। आजकल अनेक बड़ी कम्पनियॉ अपने कर्मचारियों के वेतन, अवकाश आदि के प्रबन्धन का कार्य किसी मानव संसाधन फर्म को दे देती हैं। इसी प्रकार विपणन के कार्य के लिए भी अन्य फर्म से समझौता किया जा सकता है। इसका लाभ यह होता है कि कम्पनी केवल अपने उत्पादन को उत्कृष्ठ बनाने पर ध्यान देती है तथा दूसरी फर्म अपनी विक्रय क्षमता के आधार पर बिना अधिक पूॅजी लगाये लाभ प्राप्त करती है।

6) **सह–उत्पादक–** मुख्य उत्पादक सहायक सामग्री के लिए अन्य उत्पादकों से समझौता करता है। दोनों के संयुक्त प्रयास से ही मितव्ययी दरों पर उत्पादन करना सम्भव हो पाता है। प्रथम कम्पनी अपने मुख्य कार्य पर ध्यान केन्द्रित करके अच्छी गुणवत्ता का उत्पादन करती है तो दूसरी कम्पनी अपने माल के विपणन के समस्या से मुक्त होती है। अतः वह सस्ती दर पर सामान देने के लिए तैयार हो जाती है। इस समझौते से दोनों को लाभ होता है।

7) **ज्ञान विनिमय–** कम्पनी उत्पादन अथवा व्यापार में प्रयुक्त विशेष तकनीक को दूसरी कम्पनी को प्रयोग करने की अनुमति प्रदान करती है। दोनों कम्पनियॉ एक दूसरे की निर्माण, प्रशासन या प्रबन्धन, विपणन आदि की विधियों व सूचनाओं का प्रयोग करती है तथा शोध व सर्वेक्षण सूचनाओं का उपयोग करती हैं।

8) **संयुक्त उपक्रम–** इस अवस्था में दो उपक्रम साथ किसी परियोजना पर मिलकर कार्य करते हैं जिससे संसाधनों का उपयोग मितव्ययिता के साथ कर सकें। उदाहरण के लिए– किसी बड़े पुल को बनाने की सरकारी निविदा का मूल्य बहुत अधिक होने के कारण संभव है कि दो फर्म इसे मिलकर बनाने हेतु संयुक्त उपक्रम बना लें। दोनों फर्म अलग–अलग कारोबार तो करती रहेंगी किन्तु इस पुल को बनाने की परियोजना मिलकर पूरी करेंगे। इस पुल के अतिरिक्त अन्य कार्य अलग से करेंगे तथा पुल पूर्ण होने के बाद फिर अलग–अलग कार्य करते रहेंगे। पुल के निर्माण हेतु कार्य तथा लाभ के बॅटवारे हेतु समझौता कर लिया जायेगा।

9) **पूॅजी सहभागिता–** कम्पनी किसी सम्बन्धित व्यापार में परस्पर पूॅजी निवेश करके उसके प्रबन्धन में भाग लेती है तथा उसे अपने व्यापार के विकास के लिए प्रयोग करती हैं।

<u>रणनीतिक सन्धि की चुनौतियॉ</u>–

रणनीतिक सन्धि इस लक्ष्य के साथ की जाती है कि सम्बन्धित संगठनों को अपने लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायता हो सके। वे अपनी लागतों को कम कर सकें। संगठन की बाजार में हिस्सेदारी बढ़ सके। उनके लाभ बढ़ सकें तथा उनकी सम्पत्तियों के मूल्य में वृद्धि हो सके। यह सन्धि सभी साझेदारों के लिए लाभप्रद होती है अतः वर्तमान युग में इस प्रकार के समझौतों का व्यापार में चलन बढ़ गया है किन्तु व्यावहारिक रुप में रणनीतिक सन्धि होने पर अनेक चुनौतियों का भी सामना करना पड़ता है। इनमें से प्रमुख निम्न हैं–

- इस प्रकार की सन्धि दोनों पक्षों के पारस्परिक विश्वास पर आधारित होती है किन्तु समय के साथ यदि एक संगठन की स्थिति कमजोर होती है तो दूसरा उससे दूरी बनाने का प्रयास करने लगता है।
- इस प्रकार की सन्धि पारस्परिक लाभ का लक्ष्य लेकर अस्तित्व में आती हैं किन्तु कुछ समय बाद दोनों पक्षों को यह लगने लगता है कि दूसरे पक्ष का लाभ उनके लाभ से अधिक है। इसप्रकार गठबन्धन में दरार पड़ने लगती है।
- इसप्रकार की सन्धि के कारण संगठन एक दूसरे पर निर्भर हो जाते हैं तथा उनकी व्यक्तिगत सम्पूर्णता समाप्त हो जाती है।
- किसी एक पक्षकार पर अचानक संकट (हड़ताल, दुर्घटना, प्रतिबन्ध आदि) आ जाने पर दूसरा पक्षकार भी प्रभावित हो जाता है।
- अलग–अलग आकार तथा प्रक्रिया के कारोबारों का एक ही दिशा में सामंजस्यपूर्ण कार्य करना अत्यन्त चुनौतीपूर्ण होता है।
- दो संगठनों की प्रक्रियाओं के तालमेल तथा सामंजस्य में अनेक व्यावहारिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है।

आईटीसी लिमिटेडः एक संक्षिप्त अध्ययन

24 अगस्त 1910 को इम्पीरियल टोबैको कम्पनी ऑफ इण्डिया लिमिटेड के नाम से स्थापित कम्पनी अब आईटीसी लिमिटेड के नाम से जानी जाने वाली एक विशालकाय कम्पनी है जिसने तम्बाकू व्यवसाय से यात्रा प्रारम्भ करने के बाद होटल, पेपर के साथ आटा, अगरबत्ती, कन्फेक्सनरी, सौंदर्य प्रसाधन आदि अनेक त्वरित चालित उपभोक्ता वस्तुओं (एफ0एम0सी0जी0) में अपनी श्रेष्ठता कायम की है। कम्पनी ने 1970 में स्वयं को सार्वजनिक क्षेत्र की कम्पनी बनाने के बाद अपना नाम परिवर्तित कर इण्डियन टोबेको कम्पनी लि0 तत्पश्चात् सन् 1974 में आई0टी0सी0 लिमिटेड तथा 2001 में आईटीसी लिमिटेड कर दिया। वर्ष 2000 के बाद विविध निगमित रणनीतियों के अध्ययन की दृष्टि से यह कम्पनी सर्वाधिक बदलाव वाली कम्पनी रही है।

प्रथम छः दशकों में तम्बाकू उत्पाद बनाने वाली इस कम्पनी ने विल्स, गोल्ड फ्लेक, 555, कैप्सटन, नेवी कट, क्लासिक तथा सीजर्स जैसी सिगरेट से बाजार का 80 प्रतिशत भाग प्राप्त कर अपनी बादशाहत कायम की। इस बीच कम्पनी ने अपने दूसरे व्यापार पैकेजिंग व प्रिंटिग को प्रारम्भ (1925) किया था किन्तु उसे रणनीतिक ढंग से रोक दिया गया।

सन् 1975 में कम्पनी के नीतिकारों को यह अनुभव हुआ कि तम्बाकू क्षेत्र में अब संवृद्धि की संभावना सीमित है। अतः नये बाजार की खोज के रुप में एक होटल अधिग्रहीत करके होटल व्यवसाय में कदम रखा। पहले इसका नाम आईटीसी–वैलकम ग्रुप होटल तथा बाद में माई फार्च्यून (चेन्नई) कर दिया गया। वर्तमान में कम्पनी के द्वारा 90 से अधिक होटलों का संचालन किया जा रहा है। सन् 2000 के बाद से कम्पनी एक ओर नये क्षेत्रों में प्रवेश तथा दूसरी ओर पुराने क्षेत्र को मजबूत बनाने का प्रयास कर रही है। कम्पनी ने ग्रीटिंग कार्ड व स्टेशनरी (क्लासमेट, पेपरक्राफ्ट, कलर क्रू), सूचना तकनीक (आईटीसी इन्फोटेक), खाद्य पदार्थ (आशीर्वाद, बिंगो, सनफीस्ट, मिंट ओ गम, यिप्पी, कैण्डीमैन, बी नेचुरल), माचिस व अगरबत्ती (शिप, ऐम, मंगलदीप), सौन्दर्य प्रसाधन (फियामा डि विल्स, विवेल, एसेन्जा डी विल्स, सुपीरिया, ऐंगेज) आदि क्षेत्रों के माध्यम से विविधतापूर्ण व्यापारों में धीरे–धीरे प्रवेश किया है तथा उसके बाजार का एक बड़ा भाग अर्जित कर लिया है। सन् 2014 में कम्पनी ने ऑनलाइन व्यवसाय के क्षेत्र में भी प्रवेश कर लिया है। पुराने प्रतिष्ठित क्षेत्र तम्बाकू में भी कम्पनी निरन्तर अपनी श्रेष्ठता बनाये हुए है। सन् 1985 में नेपाल में सूर्या टोबेको कम्पनी की स्थापना संयुक्त उपक्रम के रुप में की जिसे सन् 2002 में आईटीसी की अनुषंगी बना दिया गया। सन् 2011 में कम्पनी द्वारा हस्तनिर्मित सिगार का उत्पादन भी प्रारम्भ किया गया है। प्रतिगमन, अधिग्रहण, संयुक्त उपक्रम, साम्राज्यीकरण जैसी विभिन्न रणनीतियों का आईटीसी द्वारा समय–समय पर अत्यन्त कुशलतापूर्वक प्रयोग किया गया है तथा अपने व्यापार को गहराई व ऊँचाई दोनों क्षेत्रों में विकसित किया है।

9.6 सारांश

निगम स्तर पर रणनीति का निर्धारण करना रणनीतिक प्रतिपादन का एक महत्वपूर्ण अंग है। निगम स्तरीय रणनीति के आधार पर ही लघु व्यापार इकाई (एस0बी0यू0) स्तर पर रणनीति का प्रतिपादन किया जाता है। निगम स्तर पर रणनीति निर्धारण का आशय उन नीतियों के निर्माण से है जो सम्पूर्ण संगठन की समस्त इकाइयों के लिए व्यापक रुप से लागू की जायें। ये रणनीतियॉ विभिन्न प्रकार की हो सकती हैं– स्थायित्व सम्बन्धी, विस्तारण सम्बन्धी, छॅटनी सम्बन्धी तथा मिश्रित रणनीति। स्थायित्व सम्बन्धी रणनीति में संगठन अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए यथास्थिति, संपोषणीय संवृद्धि, सावधानीपूर्ण चाल, परिवर्तनहीनता अथवा लाभ स्थिरता के प्रयास करता है। विस्तारण सम्बन्धी रणनीतिक प्रयासों में संगठन के सर्वांगीण विकास के लिए आन्तरिक संवृद्धि, एकाग्रता, विलय, अधिग्रहण तथा संयुक्त उपक्रम जैसे प्रयासों को सम्मिलित किया जाता है। छॅटनी सम्बन्धी प्रयास संगठन को कठिन परिस्थिति में स्वयं को सुरक्षित रखने के लिए किये जाते हैं जिसमें प्रतिगमन, बन्धित व्यापार, रुपान्तरण, विनिवेश अथवा समापन का मार्ग अपनाया जाता है। इनके अतिरिक्त मिश्रित रणनीति अपनाकर स्थायित्व, विस्तारण अथवा छॅटनी सम्बन्धी नीतियों के संयोग को एकसाथ अपनाया जाता है। यह मिश्रण सहगामी, क्रमिक अथवा सहगामी तथा क्रमिक मिश्रण प्रकृति का हो सकता है।

आधुनिक युग में सुरक्षित विकास की दृष्टि से रणनीतिक सन्धि का प्रचलन तेजी से बढ़ा है। रणनीतिक सन्धि वे दीर्घकालीन समझौते हैं जिनमें दो कम्पनियाँ अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए तथा पारस्परिक हितों की पूर्ति के लिए आपस में मिलकर रणनीतिक कदम उठाते हैं। इस प्रकार की सन्धि में किसी भी फर्म का अस्तित्व समाप्त नहीं होता वरन् दोनों सहअस्तित्व की भावना से कार्य करते हैं। इसके अन्तर्गत लाइसेंसिंग, फ्रेंचाइजिंग, सहविपणन, प्रतिविपणन, आउट सोर्सिंग, सह–उत्पादक, ज्ञान विनिमय जैसे उपायों को अपनाया जाता है।

9.7 शब्दावली

रणनीति प्रतिपादन	उच्च प्रबन्ध द्वारा संगठन के लिए रणनीति निर्माण की क्रिया
संगठनात्मक परीक्षण	रणनीतिक दृष्टि से संगठन के संसाधनों का परीक्षण
यथास्थिति	व्यापार का आकार बढ़ाये बिना गुणवत्ता विकास की नीति
संपोषणीय संवृद्धि	व्यापार में निरन्तर योजनाबद्ध वृद्धि की नीति
सावधानीपूर्ण चाल नीति	बाजार की प्रतिक्रिया पर आधारित सावधानीपूर्ण विकास की
परिवर्तनहीनता	अपनी सफल नीतियों पर स्थिर रहते हुए विकास की नीति
लाभ स्थिरता	लाभ का स्तर समान बनाये व बचाये रखने की नीति
आन्तरिक संवृद्धि	संसाधनों के अनुकूलतम प्रयोग द्वारा विकास की नीति
एकाग्रता	किसी क्षेत्र विशेष में ही अपनी गतिविधियों को बढ़ाने की नीति
विलय	पुरानी कम्पनियों के एकीकरण द्वारा नई कम्पनी बनाकर व्यापार करने की नीति
अधिग्रहण	दूसरी कम्पनी के व्यापार को क्रय करके अपने में मिला लेने की नीति
संयुक्त उपक्रम	किसी परियोजना विशेष के लिए कुछ कम्पनियों द्वारा मिलकर कार्य करने की नीति
प्रतिगमन	पिछले फैसलों को वापस लेकर पूर्ववत कार्य करने की नीति
बन्धित व्यापार	केवल एक या सीमित ग्राहकों के लिए व्यापार को सीमित करने की नीति
रुपान्तरण	पुरानी नीतियों के स्थान पर पूर्णतः नये क्षेत्रों के विकास की नीति
विनिवेश	व्यापार का पूर्णतः अथवा आंशिक रुप से विक्रय कर देने की नीति
समापन नीति	व्यापार को पूर्णतः बन्द करके परिसम्पत्तियों के निस्तारण के
सहगामी मिश्रण	स्थिरता, विस्तारण व छँटनी की नीतियों को व्यापार के विभिन्न स्तरों पर एक साथ लागू करना
क्रमिक मिश्रण	स्थिरता, विस्तारण व छँटनी की नीतियों को व्यापार के विभिन्न स्तरों पर एक–एक करके लागू करना

एस0बी0यू0	स्माल बिजनेस यूनिट
एफ0ई0आर0ए0	फॉरेन एक्सचेंज रेगुलेरिटी एक्ट (फेरा)
बैंकेश्योरेंस	बैंक तथा एश्योरेन्स (इन्श्योरेन्स) का समन्वित शब्द
एफ0एम0सी0जी0	फास्ट मूविंग कन्ज्यूमर गुड्स
जे0वी0	ज्वाइण्ट वेंचर

9.8 बोध प्रश्न

(क) अपनी प्रगति जॉचें

बताएं निम्न कथन सत्य हैं अथवा असत्य–

(अ) यथास्थिति रणनीति में संगठन नये क्षेत्रों में अपने व्यापार का विस्तार करता है। (सत्य / असत्य)

(आ) सम्पोषणीय संवृद्धि में कम्पनी अपनी गुणवत्ता में निरन्तर सुधार करते हुए स्थिर गति से विकास की रणनीति को अपनाती है। (सत्य / असत्य)

(इ) सावधानीपूर्ण चाल में संगठन बाजार की प्रतिक्रिया के आधार पर अपनी विकास की गति निर्धारित करती है। (सत्य / असत्य)

(ई) लाभ स्थिरता नीति में कम्पनी अपने लाभ को स्थिर रखती है चाहे इसके लिए उसे कितना भी मूल्य क्यों न बढ़ाना पड़े। (सत्य / असत्य)

(उ) आन्तरिक संवृद्धि में संगठन अपने उपलब्ध वित्तीय तथा मानव संसाधनों के अनुकूलतम प्रयोग द्वारा स्वयं को शक्तिशाली बनाता है। (सत्य / असत्य)

(ऊ) विलय की दशा में शक्तिशाली कम्पनी दुर्बल कम्पनी को खरीद लेती है। (सत्य / असत्य)

(ए) अधिग्रहण की दशा में क्रेता कम्पनी का अस्तित्व बना रहता है जबकि विक्रेता कम्पनी समाप्त हो जाती है। (सत्य / असत्य)

(ऐ) संयुक्त उपक्रम की दशा में दो कम्पनियों का विलय हो जाता है। (सत्य / असत्य)

(ख) अपनी प्रगति जॉचें

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए–

1. .... (प्रतिगमन / रुपान्तरण) की नीति अपनाने पर संगठन अपने त्रुटिपूर्ण एवं असफल निर्णयों को वापस ले लेती है।
2. .... (प्रतिगमन / बंधित व्यापार) नीति के अन्तर्गत संगठन अपने व्यापार को सीमित ग्राहकों के लिए ही संकुचित रखता है।
3. रुपान्तरण की नीति के अन्तर्गत कम्पनी अपने व्यापार की .... (नीतियों / साजसज्जा) में व्यापक परिवर्तन करती है।
4. .... (प्रतिगमन / विनिवेश) की नीति के अन्तर्गत कम्पनी अपने व्यापार का एक भाग बेच देती है।
5. छँटनी सम्बन्धी विकल्पों में कम्पनी अपनी सीमाओं को .... (विस्तृत / संकुचित) कर देती है।
6. रणनीतिक संधि में सभी पक्षकारों को परस्पर (सहयोग / प्रतिस्पर्धा) से लाभ प्राप्त होता है।

9.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

(क) अपनी प्रगति जॉचें

(अ) असत्य (आ) सत्य (इ) सत्य (ई) असत्य (उ) सत्य (ऊ) असत्य (ए) सत्य (ऐ) असत्य

(ख) अपनी प्रगति जॉचें

(1) प्रतिगमन (2) बंधित व्यापार (3) नीतियों (4) विनिवेश (5) संकुचित (6) सहयोग

9.10 स्वपरख प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न–

(अ) किसी व्यावसायिक संगठन को स्थायित्व सम्बन्धी रणनीति अपनाने की आवश्यकता क्यों पड़ती है?

(आ) विलय से क्या आशय है? यह अधिग्रहण से किस प्रकार भिन्न है?

(इ) संयुक्त उपक्रम से क्या आशय है? इसे अपनाने के मुख्य कारण क्या हैं?

(ई) जोए जी0 थॉमस द्वारा किसी फर्म के रणनीतिक मूल्यांकन के लिए प्रस्तुत तालिका में किन रणनीतिक विकल्पों का सुझाव दिया गया है?

(उ) वर्तमान युग में रणनीतिक संधि के कौन से विकल्प उपलब्ध हैं? संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्न–

1. किसी व्यावसायिक संगठन में अस्तित्व की रक्षा व सुरक्षात्मक विकास के लिये किन स्थायित्व सम्बन्धी रणनीतियों को अपनाया जाता है? वर्णन कीजिए।
2. विस्तारण सम्बन्धी रणनीतियों के अन्तर्गत एक संगठन किन उपायों को सामान्यतः अपनाते हैं? वर्तमान युग में विस्तारण की रणनीतियों का प्रचलन क्यों बढ़ गया है?
3. कोई संगठन किन परिथितियों में छॅटनी सम्बन्धी रणनीति को अपनाती है? इसके अन्तर्गत किन उपायों को सम्मिलित किया जाता है? विस्तार से उल्लेख कीजिए।
4. व्यावसायिक संगठन स्थायित्व, विकास तथा छॅटनी की रणनीति का आवश्यकतानुसार मिश्रण कर सकते हैं। ऐसा करने की आवश्यकता क्यों होती है तथा इसके क्या रुप हो सकते हैं?
5. वर्तमान युग में रणनीतिक संधि को व्यावसायिक विकास के अस्त्र के रुप में अपनाया जाता है। इसकी आवश्यकता, महत्व तथा चुनौतियों का वर्णन कीजिए।
6. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–
   - (अ) संपोषणीय संवृद्धि
   - (ब) लाभ स्थिरता
   - (स) आन्तरिक संवृद्धि
   - (द) प्रतिगमन
   - (ई) विनिवेश

9.11 सन्दर्भ पुस्तकें

1 ग्लुएक डब्ल्यू0एफ0 व एल0आर0 जैच, बिजनेस पालिसी एण्ड स्ट्रेटेजिक मैनेजमेन्ट, न्यूयार्क मैकग्राहिल 1984, पृष्ठ– 209 (अनु0)

2 भट्टाचार्य एस0के0, एक्जिक्यूटिंग ए टर्न एराउण्ड, बिजनेस वर्ल्ड, फरवरी 1–14, 1979 पृष्ठ– 13से15

3 योशिनो ऍम वाई0 तथा यू0श्रीनिवास रंगन, स्ट्रेटेजिक एलायन्स– एन इन्टरप्रन्योरियल एप्रोच टु ग्लोबलाइजेशन, बोस्टन हार्वर्ड बिजनेस स्कूल प्रेस, 1995.

4. Business Policy and Strategic Management, P. Subba Rao, Himalaya Publishing House, Mumbai.

5. Business Policy and Strategic Management, Azhar Kazmi, Tata McGraw- Hill Publishing Company Limited, New Delhi.

6. Business Policy and Strategic Management, GV Satya Sekhar, I K International Publishing House, New Delhi.

इकाई–10 रणनीतिक विश्लेषण एवं निर्णयन

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना
10.2 रणनीतिक विकल्पों के मूल्यांकन की कसौटियॉ
10.3 रणनीतिक विकल्पों के मूल्यांकन की प्रक्रिया
10.4 रणनीतिक मूल्यांकन ढॉचा
10.4.1 निगम स्तरीय रणनीतिक विश्लेषण
10.4.2 व्यापार स्तरीय रणनीतिक ढॉचा
10.5 सारांश
10.6 शब्दावली
10.7 बोध प्रश्न
10.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
10.9 स्वपरख प्रश्न
10.10 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः

- रणनीतिक निर्णयन का वर्णन कर सकें।
- रणनीतिक विकल्प मूल्यांकन की कसौटी का मूल्यांकन कर सकें।
- विकल्पों का मिलान एवं मूल्यांकन कर सकें।
- रणनीतिक निर्णयन प्रक्रिया का वर्णन कर सकें।
- निगम स्तरीय रणनीतिक विश्लेषण व व्यवसाय स्तरीय रणनीतिक विश्लेषण का विवेचन कर सकें।

10.1 प्रस्तावना

विभिन्न प्रकार के संगठन अपने आकार तथा व्यापार के स्वभाव के आधार पर अपनी रणनीति का निर्धारण करते हैं। इसके लिए वे अपने संगठन की शक्तियों व सीमाओं का अध्ययन करने के साथ ही आन्तरिक व वाह्य वातावरण के तत्वों का भी विश्लेषण करते हैं। पिछले अध्याय (इकाई–9) में संगठन की अवस्थाओं के आधार पर स्थिरता, विस्तारण, छॅटनी तथा मिश्रित रणनीति का परीक्षण किया गया है। इन रणनीतियों का प्रतिपादन करने के बाद इनका निगम स्तर पर तथा व्यापार इकाई स्तर पर परीक्षण किया जाता है। इनमें सामान्य रणनीति भी हो सकती है और आक्रामक अथवा रक्षात्मक अथवा कार्यात्मक रणनीति भी। यह ध्यान रखा जाता है कि रणनीति का चुनाव संगठन के मूल स्वभाव तथा उसके उद्देश्यों के अनुरूप होना चाहिए। संगठन अपने रणनीतिक विकल्पों के चुनाव तथा निर्णयन के लिए सुनिश्चित प्रक्रिया को अपनाता है। वह रणनीतिक विकल्पों का मूल्यांकन विभिन्न कसौटियों के आधार पर करता है तथा तदनुसार ही निर्णय लेता है। इस मूल्यांकन का उद्देश्य विभिन्न उपलब्ध रणनीतियों में से सर्वश्रेष्ठ का चुनाव करना होता है। इस चुनाव में

रणनीतिकार संसाधनों की उपलब्धता तथा भविष्य में बाजार की दशाओं की कल्पना को आधार बनाता है। साथ ही, सम्भावित बाधाओं का सामना करने का मार्ग भी तय किया जाता है।

10.2 रणनीतिक विकल्पों के मूल्यांकन की कसौटियॉ

रणनीति को संगठन हेतु स्वीकार्य बनाने के लिए उसका परीक्षण किया जाता है तथा यह ज्ञात किया जाता है कि आर्थिक, तकनीकी अथवा व्यावहारिक रूप से उसे अपनाया जाना कितना लाभदायक होगा। रणनीतिक विकल्पों के मूल्यांकन के लिए सामान्यतः निम्न कसौटियों का प्रयोग किया जाता है–

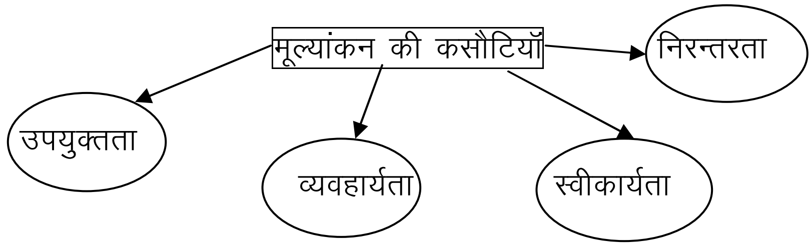

1. **उपयुक्तता–** यह कसौटी संगठन की विशेषताओं के साथ रणनीति के सामंजस्य को प्रदर्शित करती है। प्रत्येक संगठन किसी विशेष समय में ऐसी परिस्थितियों का सामना कर रहा होता है कि उसे एक विशिष्ट उपचार की आवश्यकता होती है। संगठन को यह सुनिश्चित करना होता है कि अपनाई गई रणनीति उक्त अवसर के अनुकूल है अथवा नहीं। पी0 सुब्बाराव के अनुसार– उपयुक्तता की कसौटी यह मापने का प्रयास करती है कि प्रस्तावित रणनीति किस मात्रा तक रणनीतिक विश्लेषण में दी गई परिस्थितियों के लिए उपयुक्त है।[1] नीतियों का निर्माण करते समय तत्कालीन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए संगठन की शक्तियों का उपयोग करना चाहिए तथा दुर्बलताओं को छुपाने का प्रयास करना चाहिए। रणनीति को तभी उपयुक्त माना जा सकता है जबकि वह बाजार में उपलब्ध अवसरों का लाभ लेने तथा चुनौतियों का सामना करने में समर्थ हो। उपयुक्तता की कसौटी पर कसते समय संगठन को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उक्त रणनीति अपनाने के बाद –

- संगठन अपने संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग कर सकेगा।
- संगठन अपनी वर्तमान समस्याओं (चुनौतियों) के समाधान में समर्थ हो सकेगा।
- संगठन बाजार में अपनी हिस्सेदारी बढ़ाने में समर्थ हो सकेगा।
- संगठन अपनी संदृष्टि, ध्येय तथा उद्देश्यों से विचलित हुए बिना विकास कर सकेगा।
- संगठन के सभी हितधारकों के लिए यह नीति लाभदायक सिद्ध होगी।

कोई भी रणनीति तभी उपयुक्त मानी जाती है जब कि वह सम्बन्धित संगठन में तत्कालीन परिस्थितियों में लागू किये जाने के लिए सर्वथा उपयुक्त हो।

2. **व्यवहार्यता–** व्यवहार्यता का सम्बन्ध व्यावहारिक अनुपालनीयता से है। इसमें उन सभी तत्वों को सम्मिलित किया जाता है जो रणनीति को लागू करने में सहायक हो सकते हैं। कोई रणनीति किसी परिस्थिति में संगठन के लिए लाभदायक हो सकती है किन्तु हो सकता है कि उसे व्यवहार में लागू करना सम्भव न हो। व्यवहार्यता की कसौटी पर कसते समय संगठन को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उक्त रणनीति अपनाया जाना –

- संगठन के लिए विधिक दृष्टि से आपत्तिजनक नहीं है।
- संगठन के लिए नैतिक दृष्टि से अनुचित नहीं है।
- संगठन के संसाधनों तथा प्रशासनिक क्षमताओं की सीमाओं के बाहर नहीं है।
- हितधारकों के किसी विशेष वर्ग के लिए अहितकारी नहीं है।
- बाजार में प्रचलित सर्वमान्य नियमों की अवहेलना नहीं है। व्यापार संघों व परिषदों के द्वारा निर्धारित पारस्परिक सहमति के नियमों का पालन किया जाना भी वैधानिक नियमों के समान ही अनिवार्य है।

व्यवहार्यता की कसौटी संगठन को इस योग्य बनाती है कि अपनी नीतियों की समीक्षा धरातल स्तर पर कर सके।

3. **स्वीकार्यता–** स्वीकार्यता की कसौटी के द्वारा संगठन यह सुनिश्चित करता है कि उसकी रणनीति से विभिन्न हितधारक किस प्रकार प्रभावित होंगे तथा रणनीति के प्रति उनकी प्रतिक्रिया कैसी होगी। संगठन की रणनीति सभी पक्षों द्वारा स्वीकार्य हो तो अधिक सफल होती है। यद्यपि सर्वस्वीकार्यता सदैव सम्भव नहीं है किन्तु कुछ पक्षों की अस्वीकार्यता संगठन की नीति के समस्त लाभदायक व तकनीकी पक्षों से भी ऊपर सिद्ध होती है। स्वीकार्यता की कसौटी के अन्तर्गत संगठन आश्वस्त होना चाहता है कि–

- रणनीति के लागू होने का संगठन के व्यापार, लाभों, बाजार में हिस्सेदारी आदि पर सकारात्मक असर होगा।
- अन्य फर्म इस नीति की प्रतिक्रियास्वरुप ऐसी नीति नहीं अपनाएंगी जिससे संगठन को पुनः नीति बदलनी पड़े।
- नई नीति के फलस्वरुप निवेशकों के लाभ तथा कर्मचारियों के वित्तीय लाभ व भविष्य की प्रगति में व्यवधान न हो।
- संगठन की पूॅजी संरचना, तरलता व शोधनक्षमता आदि में नकारात्मक परिवर्तन न हो।

सभी पक्षों को स्वीकार्य तथा संगठन के सभी हितधारकों के लिए सकारात्मक विकास में सहायक नीति ही सफल नीति मानी जाती है।

4. **निरन्तरता–** निरन्तरता की कसौटी के अन्तर्गत संगठन को यह सुनिश्चित करना होता है कि जो रणनीति वह अपनाने जा रहा है वह लम्बे समय संगठन का साथ निभा सकेगी। किसी भी संगठन के लिए रणनीति में

अचानक परिवर्तन किया जाना उचित नहीं होता है। रणनीति ऐसी होनी चाहिए जिसे दीर्घकाल तक लागू किया जा सके तथा जो विभिन्न व्यापारिक परिस्थितियों में सामान्य बदलावों को सहन कर सके। इस कसौटी के द्वारा संगठन यह सुनिश्चित करता है कि–

- रणनीति इतनी स्पष्ट होनी चाहिए कि सभी वर्ग उस पर विश्वास कर सकें।
- रणनीति के अनुपालन से किसी प्रकार की अराजकता, असन्तोष अथवा असहमति प्रदर्शित नहीं होनी चाहिए।
- रणनीति सभी हितधारकों अथवा पक्षकारों पर दूरगामी लाभकारी प्रभाव प्रकट करती हो।
- रणनीति विधिक, नैतिक तथा मनोवैज्ञानिक आधार पर दृढ़तापूर्ण होनी चाहिए।
- रणनीति को अपनाने में सभी पक्षों को लाभ की स्थिति (विन–विन सिचुएशन) का अनुभव होना चाहिए तभी यह दीर्घजीवी हो सकती है। विलय, संयुक्त उपक्रम आदि की रणनीति अपनाने में इसकी विशेष भूमिका होती है।

10.3 रणनीतिक विकल्पों के मूल्यांकन की प्रक्रिया

विभिन्न रणनीतिक विकल्पों को विकसित करने के बाद संगठन उनका मूल्यांकन करता है। सर्वश्रेष्ठ रणनीति का चयन करने की प्रक्रिया में निम्नलिखित कदम उठाये जाते हैं–

1. **वातावरण अध्ययन एवं विकल्पों का ज्ञान–** सर्वप्रथम संगठन रणनीतिक विश्लेषण के इस चरण के द्वारा अपने वातावरण तथा परिस्थितियों का अध्ययन करता है और यह ज्ञात करने का प्रयास करता है कि कम्पनी की वास्तविक चुनौतियॉ क्या हैं तथा कौन से अवसर कम्पनी के पास उपलब्ध हैं जिनका लाभ उठाया जा सकता है। सभी उपलब्ध रणनीतिक विकल्पों पर विचार किया जाता है तथा सम्भावनाओं का पता लगाया जाता है।
2. **प्रारम्भिक विश्लेषण–** इस चरण में कम्पनी उन आधारों की खोज करती है जिनके द्वारा तुलना के आधार तय किये जाते हैं। उद्योग स्तर पर अथवा प्रतिस्पर्धी संगठनों के आधार तुलना की जा सकती है। उन तर्कों व विवेकसम्मत मार्गों की खोज की जा सकती है जो संगठन के लिए नीति निर्धारण का आधार बन सकें तथा इनके आधार पर विकल्पों की छॅटनी करके कम उपयुक्त विकल्पों को अलग कर दिया जाता है जिससे कि उपयुक्ततम विकल्प को छॉटा जा सके।
3. **उपयुक्तता की जॉच–** रणनीति को उपयुक्तता की कसौटी पर परखा जाता है तथा उन नीतियों को हटा दिया जाता है जो संगठन की संदृष्टि के अनुकूल न हों। संगठन के पास उपलब्ध संसाधनों के प्रयोग की दृष्टि से सर्वोचित रणनीति का ही चुनाव किया जा सकता है।

4. **व्यवहार्यता की जॉच–** रणनीति की व्यवहार्यता की जॉच के द्वारा भी विकल्पों की छॅटनी की जाती है। इसमें नीति के विधिक व नैतिक पक्षों की जॉच के द्वारा उसकी उपादेयता को परखा जाता है। साथ ही, संगठन के विभिन्न हितधारकों के हित को सुरक्षित रखने का प्रयास किया जाता है।
5. **स्वीकार्यता व निरन्तरता की जॉच–** संगठन के अन्दर उसकी उपादेयता का परीक्षण करने हेतु वित्तीय परीक्षण किया जाता है। साथ ही यह भी आकलन किया जाता है कि संगठन की इस नीति का प्रतिस्पर्धी कम्पनियों पर क्या असर होगा, प्रतिक्रियास्वरुप वे किस प्रकार के कदम उठा सकते हैं, इस गलाकाट प्रतियोगिता का अन्तिम परिणाम क्या होगा, आदि। नीतियों को दीर्घजीवी बनाने के लिए इसके निष्पक्ष तथा स्पष्ट होने का परीक्षण अनिवार्य है।
6. **रणनीति का अन्तिम चयन–** उपरोक्त जॉचों के उपरान्त सभी विकल्पों को चयन के वरीयता क्रम में रखा जाता है तथा अपने संसाधनों के अनुकूल, उद्देश्यों पर आधारित तथा भावी अवसरों के लक्ष्य संधान को दृष्टिगत रखते हुए सर्वोपयुक्त रणनीति का अन्तिम चयन किया जाता है।

10.4 रणनीतिक मूल्यांकन ढॉचा

रणनीतिक मूल्यांकन के ढॉचे को समझने के लिए उसके दो रुपों को जानना आवश्यक है–

निगम स्तरीय रणनीतिक विश्लेषण, तथा व्यवसाय स्तरीय रणनीतिक विश्लेषण

10.4.1 <u>निगम स्तरीय रणनीतिक विश्लेषण (**Corporate Level Strategic Analysis**)</u>–

निगम की रणनीति का विश्लेषण करने के लिए विविध प्रयासों को समन्वित रुप से रणनीतिक विश्लेषण कहा जाता है जिसके अन्तर्गत विभिन्न स्तरों पर किये जाने वाले प्रयासों को सम्मिलित किया जाता है।

निगम स्तरीय रणनीतिक मूल्यांकन विश्लेषण

- प्रथम स्तर (निवेश स्तर)
  - आन्तरिक तत्व मूल्यांकन आव्यूह
  - वाह्य तत्व मूल्यांकन आव्यूह
  - प्रतिस्पर्धात्मक प्रोफाइल आव्यूह
- द्वितीय स्तर (मिलान स्तर)
  - टाओस आव्यूह
  - स्पेस आव्यूह
  - बीसीजी आव्यूह
  - जीई नाइन सैल आव्यूह
  - निर्देशन नीति आव्यूह
  - हॉफर का जीवन चक्र आव्यूह
  - आन्तरिक–वाह्य आव्यूह
  - वृहद रणनीति आव्यूह
- तृतीय स्तर (निर्णयन स्तर)
  - मात्रात्मक रणनीतिक नियोजन आव्यूह

1. **प्रथम स्तर–**

रणनीतिक विश्लेषण के प्रथम चरण को निवेशन स्तर कहा जाता है। इसके अन्तर्गत आन्तरिक, वाह्य तथा प्रतिस्पर्धात्मक तत्वों के आधार पर रणनीति का मूल्यांकन किया जाता है।

(अ) **आन्तरिक तत्व मूल्यांकन आव्यूह (Internal Factor Evaluation Matrix)–**

इस विधि द्वारा मूल्यांकन करते समय कम्पनी की आन्तरिक क्षमताओं (शक्तियों) तथा दुर्बलताओं (क्षीर्णताओं) के आधार पर रणनीति का मूल्यांकन किया जाता है। यह जानने का प्रयास किया जाता है कि कम्पनी अपनी शक्तियों को किस स्तर तक अवसरों में परिवर्तित कर सकती है तथा अपनी दुर्बलताओं को प्रगति की राह में आने से कैसे रोका जा सकता है। चुनौतियों का सामना करने में संसाधनों का उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है। इस विधि के अन्तर्गत संगठन अपनी शक्तियों व दुर्बलताओं को उनकी मात्रा अथवा घनत्व के आधार पर अंक (भार) आबन्टित किये जाते हैं तथा अन्त में उनका योग प्राप्त करके यह ज्ञात किया जाता है कि रणनीति का भारित परिणाम अनुकूल है अथवा नहीं। उदाहरण के लिए किसी रणनीति में कम्पनी अपनी शक्ति को धनात्मक तथा दुर्बलताओं को ऋणात्मक अंक प्रदान करती है तो वह अत्यधिक सबल को +2 सबल को +1 दुर्बल को –1 तथा अत्यधिक दुर्बल को –2 अंक प्रदान कर सकती है। इसी प्रकार कुछ मानक निर्धारित किये जाते हैं जो कि कम्पनी की प्राथमिकताओं के आधार पर भारित होते हैं। इन्हें 1 के किसी अंश के रुप में इसप्रकार निर्धारित किया जाता है कि सभी मानकों का समेकित भार 1 हो। अब, सभी मानकों को लिखकर उनके सम्मुख सम्बन्धित भार तथा रेटिंग लिख दी जाती है। तत्पश्चात भार व रेटिंग के गुणनफल के द्वारा भारित मूल्य ज्ञात कर लिया जाता है। गुणनफल का योग ही यह निर्धारित करता है कि रणनीति वास्तव में कितनी सफल सिद्ध हो सकती है। एक काल्पनिक उदाहरण द्वारा इस आव्यूह को समझाया जा सकता है।

क्रमांक	मुख्य निर्धारक तत्व	भार	मूल्यांकन	भारित मूल्यांकन
1	कम्पनी की प्रतिष्ठा में परिवर्तन	0.20	+1.00	+0.20
2	कम्पनी की उत्पादकता में परिवर्तन	0.25	+1.00	+0.25
3	कम्पनी की बिक्री के स्तर में परिवर्तन	0.15	+1.00	+0.15
4	कम्पनी के व्यय स्तर में परिवर्तन	0.10	–2.00	–0.20
5	कम्पनी के संगठन में परिवर्तन	0.05	–1.00	–0.05
6	कम्पनी के अंश मूल्यों में परिवर्तन	0.15	+1.00	+0.15
7	लाभ के स्तर में परिवर्तन	0.10	+1.00	+0.10
	योग	1.00		+0.60

उपरोक्त उदाहरण में प्रदत्त भार से यह ज्ञात होता है कि कम्पनी ने संगठन की प्रतिष्ठा तथा उत्पादकता को काफी अधिक महत्व दिया है तथा वह व्यय व लाभ को तुलनात्मक रुप में कम महत्व देती है। यहॉ कम्पनी का मूल्यांकन +0.60 है जो कि अत्यन्त उत्साहजनक है। वर्तमान रणनीति को अपनाने से कम्पनी की उत्पादकता, लाभ, विक्रय की मात्रा, अंशों के मूल्य तथा प्रतिष्ठा में वृद्धि हो रही है किन्तु व्ययों की

मात्रा में अत्यधिक वृद्धि होने के कारण तथा संगठन संरचना सम्बन्धी अड़चनों के कारण हानि उठाने को विवश है। प्रस्तावित रणनीति संगठन के पक्ष में है किन्तु सर्वोत्तम परिणामों के लिए प्रबन्धन को अपने व्ययों को नियन्त्रित करने के प्रयास करने होंगे।

(ब) वाह्य तत्व मूल्यांकन आव्यूह (External Factor Evaluation Matrix)–

आन्तरिक पक्ष की ही भॉति वाह्य पक्ष का मूल्यांकन करने के लिए भी आव्यूह का उपयोग किया जाता है। इसके लिए व्यापार के वातावरण से प्राप्त आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, तकनीकी, सरकारी, अन्तर्राष्ट्रीय तथा प्रतिस्पर्धी कम्पनियों के स्तर की चुनौतियों के समक्ष संगठन की रणनीति का आकलन किया जाता है। यह ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है कि कम्पनी किस स्तर तक इन चुनौतियों का सामना करने में सक्षम है। आन्तरिक तत्वों के मूल्यांकन के ही समान वाह्य तत्वों के मूल्यांकन के लिए भी मूल्यांकन (रेंकिंग) तथा भार की विधि को अपनाया जाता है। प्रत्येक तत्व के महत्व के अनुसार उसे इस प्रकार भार आबन्टित किये जाते हैं कि समस्त तत्वों के भारों का योग 1.00 हो जाय। समस्त तत्वों को उनकी निष्पादन योग्यता के अनुसार ऋणात्मक तथा धनात्मक अंक प्रदान किये जाते हैं। अति उच्च निष्पादन के लिए +2 उच्च निष्पादन को +1 प्रदान किया जा सकता है। इसी प्रकार अति निम्न निष्पादन के –2 तथा निम्न निष्पादन के लिए –1 अंक प्रदान किया जाता है तत्पश्चात मूल्य तथा भार के गुणनफल के रुप में भारांकित मूल्य ज्ञात किया जाता है।

क्रमांक	मुख्य निर्धारक तत्व	भार	मूल्यांकन	भारित मूल्यांकन
1	अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा का प्रभाव	0.25	–2.00	–0.50
2	स्थानीय बाजार में प्रतिस्पर्धा का प्रभाव	0.25	–1.00	–0.25
3	सरकारी नीतियों का प्रभाव	0.10	+2.00	+0.20
4	सामाजिक परिवर्तनों का प्रभाव	0.10	+1.00	+0.10
5	कच्चे माल के मूल्यों में परिवर्तन	0.15	+2.00	+0.30
6	नये व्यापारिक समझौतों का प्रभाव	0.15	+2.00	+0.30
	योग	1.00		+0.15

उपरोक्त काल्पनिक उदाहरण में विदेशी प्रतिस्पर्धी कम्पनियों के आगमन के कारण बाजार–मॉग में गिरावट आने के कारण कम्पनी को हानि हो रही है। स्थानीय बाजार में भी अन्य प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की आमद के कारण बाजार की हिस्सेदारी में कमी आ रही है। किसी भी कम्पनी के लिए बिक्री में कमी होना सबसे महत्वपूर्ण तत्व है, अतः इसे 0.25 भार दिया गया है। विदेशी बिक्री पर अधिक आधारित होने के कारण उसे 2 रेंक अंक दिये गये हैं तथा स्थानीय बिक्री को 1 रेंक अंक दिया गया है। ये दोनों ही ऋणात्मक हैं अतः भारित मूल्यांकन भी ऋणात्मक है। सरकार की नीतियों में व्यापार के प्रोत्साहन के लिए अनेक रियायतें दी गई हैं जिसका लाभ कम्पनी की बिक्री में वृद्धि के रुप में मिलेगा। सामाजिक व शैक्षिक विकास के साथ भी

मॉग में वृद्धि होगी। सरकारी प्रयास से कर दरों में कमी के कारण कच्चे माल की लागत में भी कमी आ रही है। सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह है कि कम्पनी ने इन परिस्थितियों का सामना करने के लिए नये व्यापारिक समझौते किये हैं। इनका मूल्यांकन 2.00 रखा गया है। इसके धनात्मक होने का लाभ भी कम्पनी को मिल रहा है। कुल मिलाकर विभिन्न चुनौतियों के उपरान्त भी कम्पनी की रणनीति सफलता के प्रमाण प्रस्तुत कर रही है।

(स) प्रतिस्पर्धात्मक प्रोफाइल आव्यूह (Competitive Profile Matrix)–

प्रतिस्पर्धात्मक प्रोफाइल आव्यूह में कम्पनी विभिन्न पहलुओं पर अपनी तुलना निकटतम प्रतिस्पर्धियों के साथ करते हुए यह जानने का प्रयास करती है कि वे कौन से स्थान हैं जहॉ सुधार की आवश्यकता है तथा किन स्थानों पर कम्पनी अपनी सुदृढ़ता का लाभ उठाकर बाजार में अपनी स्थिति मजबूत कर सकती है। एक काल्पनिक मेट्रिक्स द्वारा इसे समझा जा सकता है।

क्रमांक	मुख्य निर्धारक तत्व	भार	कम्पनी अ		कम्पनी ब	
			मूल्यांकन	भारित मूल्यांकन	मूल्यांकन	भारित मूल्यांकन
1 2 3 4 5 6	उत्पाद की गुणवत्ता मूल्य ग्राहक सेवा वितरण सेवा का जाल विपणन एवं विज्ञापन दक्षता वित्तीय सुदृढ़ता	0.20 0.25 0.15 0.15 0.15 0.10	+2 +1 +1 –2 +1 –2	+0.40 +0.25 +0.15 –0.30 +0.15 –0.20	+1 +2 –1 –1 +2 +2	+0.20 +0.50 –0.15 –0.15 +0.30 +0.20
		1.00		+0.45		+0.80

उपरोक्त स्थिति में प्रदर्शित कम्पनी की दो प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की तुलनात्मक स्थिति प्रकट की गई है। कम्पनी अ का उत्पाद गुणवत्ता में अच्छा है जबकि मूल्य के आधार पर ब कम्पनी लाभ की स्थिति में है। ब कम्पनी की सबसे बड़ी मजबूती उसकी वित्तीय सुदृढ़ता है। कुल मिलाकर ब कम्पनी अधिक मजबूत है अतः कम्पनी को रणनीति बनाते समय उसका मुकाबला करने का प्रयास करना होगा। यहॉ कम्पनी के प्रबन्धक यह भी ध्यान में रखेंगे कि कम्पनी अ यद्यपि दुर्बल प्रतीत होती है किन्तु वह उत्पाद की गुणवत्ता तथा ग्राहक सेवा की दृष्टि से मजबूत है। यह कम्पनी यदि किसी व्यापारिक समझौते के द्वारा वित्तीय सुदृढ़ता प्राप्त कर सकता है और इसी आधार पर विज्ञापन व विपणन को आक्रामक बनाकर गम्भीर प्रतिस्पर्धात्मक खतरा उत्पन्न कर सकती है।

2. द्वितीय स्तर–

इस स्तर को रणनीति मिलान स्तर तथा निगमित पोर्टफोलियो विश्लेषण स्तर भी कहा जाता है। इस स्तर पर कम्पनी द्वारा विभिन्न स्थापित आव्यूहों में से किसी को अपनाकर अथवा स्वयं अपना कोई मॉडल स्थापित करके अपनी नीतियों को परखने का कार्य किया जाता है।

(क) टाओस आव्यूह (TOWS Matrix)–

स्वॉट विश्लेषण की ही तरह टाओस (TOWS) भी उन्हीं अंग्रेजी शब्दों के प्रथमाक्षरों से बना किन्तु अलग ढंग से विन्यासित शब्द है। ये शब्द हैं– Threats (चुनौती), Opportunities (अवसर), Weaknesses (क्षीर्णता) तथा Strengths (शक्तियॉ)। यहॉ टाओस को मेट्रिक्स के रुप में प्रदर्शित करके अवसरों का लाभ लेने के लिए शक्तियों का प्रयोग करने तथा चुनौतियों का सामना करने में उनका उपयोग करने के लिए कम्पनी को मार्गदर्शन प्राप्त होता है। इसीप्रकार अपनी दुर्बलताओं का सामना करने तथा अवरोधों को हटाने में भी कम्पनी को मदद प्राप्त होती है।

टाओज मेट्रिक्स TOWS Matrix	शक्तियॉ 1. 2. 3. 4.	क्षीर्णताएं 1. 2. 3. 4.
अवसर 1. 2. 3. 4.	**शक्ति/अवसर रणनीति** **1.** **2.** **3. अ** **4.**	**क्षीर्णता/ अवसर रणनीति** **1.** **2.** **3. ब** **4.**
चुनौतियॉ 1. 2. 3. 4.	**शक्ति/चुनौती रणनीति** **1.** **2.** **3. स** **4.**	**क्षीर्णता/ चुनौती रणनीति** **1.** **2.** **3. द** **4.**

उपरोक्त मेट्रिक्स को ध्यान से देखने पर यह स्पष्ट होता है कि अ, ब, स तथा द अंकित खानों में कम्पनी की रणनीति निर्धारण का सूत्र छुपा है।

- अ खाने में उन शक्तियों का वर्णन किया जाता है जिन्हें कम्पनी अवसर के रुप में प्रयोग करती है।

- ब खाने में उन क्षीर्णताओं को लिखा जाता है जिनका दमन कम्पनी अवसर प्राप्त होने के कारण कर सकती है अर्थात् उन कमियों के दुष्प्रभावों को कम्पनी समाप्त करने में सक्षम होती है।
- स अंकित खाने में उन शक्तियों को सम्मिलित किया जाता है जिनका प्रयोग कम्पनी चुनौतियों का सामना करने के लिए करती है।
- द अंकित खाने में उन उपायों को लिखा जाता है जिनके द्वारा कम्पनी चुनौतियों का सामना करने के लिए अपनी क्षीर्णताओं को न्यूनतम स्तर तक ले जाती है।

(ख) स्पेस आव्यूह (SPACE Matrix)– यह विधि Strategic Position and Action Evaluation Matrix के प्रथमाक्षरों से बना का सूक्ष्म रुप है। रणनीतिक स्थिति तथा कार्रवाई मूल्यांकन आव्यूह के अंग्रेजी रूपान्तर का संक्षिप्तीकरण निगम स्तर पर रणनीति के विश्लेषण की एक महत्वपूर्ण विधि है। इस विधि के अनुसार कम्पनी अपनी स्थिति की उद्योग की स्थिति से तुलना करके उन क्षेत्रों का पता चलाती है जहॉ उसे परम्परागत सतर्कता बरतनी है, आक्रामकता बरतनी है, सुरक्षात्मकता बरतनी है अथवा प्रतिस्पर्धात्मक रणनीति बनानी है।

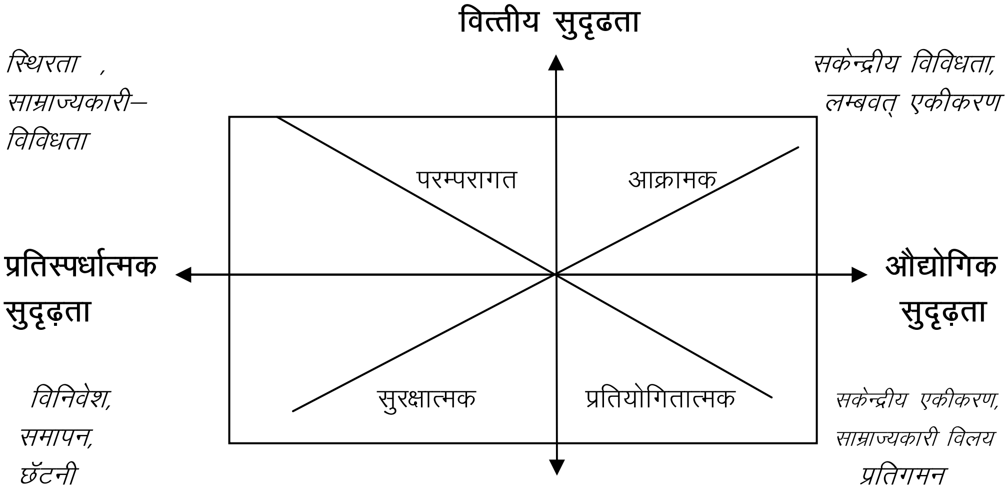

कम्पनी अपनी वित्तीय सुदृढ़ता की जॉच करने के लिए विनियोग पर आय, तरलता, लीवरेज आदि की स्थिति ज्ञात करती है तथा उद्योग स्तर की सूचनाओं से मिलान करती है। औद्योगिक सुदृढ़ता के अन्तर्गत उद्योग स्तर पर विकास तथा लाभ की सम्भावनाओं का मिलान किया जाता है। वातावरण की स्थिरता के अन्तर्गत यह देखा जाता है कि तकनीकी स्तर पर उत्पादन, वितरण आदि में किस प्रकार के परिवर्तन हो रहे हैं। इसीप्रकार प्रतिस्पर्धात्मक सुदृढ़ता के अन्तर्गत यह ज्ञात किया जाता है कि समान उद्योग में कार्यरत प्रतिस्पर्धी संगठनों की नीतियॉ किस प्रकार की

हैं, बाजार में हिस्सेदारी किस प्रकार बदल रही है तथा भविष्य में ग्राहकों को आकर्षित करने के लिए अन्य कम्पनियॉ किन उपायों को अपना सकती हैं।

वित्तीय सुदृढ़ता तथा प्रतिस्पर्धात्मक सुदृढ़ता आन्तरिक पहलू माने जाते हैं क्योंकि कम्पनी अपने प्रयासों से इन्हें प्रभावित कर सकती है तथा उसमें सुधार कर सकती है। औद्योगिक सुदृढ़ता तथा वातावरणीय स्थिरता वाह्य पहलू हैं जिनके अनुसार कम्पनी को अपनी नीतियों में परिवर्तन करना होता है। आर्थिक रूप से सुदृढ़ कम्पनी प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की स्थिति को देखते हुए स्थायित्व तथा साम्राज्यकारी विकास की ओर बढ़ती है जबकि दुर्बल स्थिति वाली कम्पनी को अपनी नीति में वातावरण की स्थिति को ध्यान में रखते हुए विनिवेश तथा व्यापार समझौते व छॅटनी की नीतियों का पालन करना आवश्यक हो जाता है।

(ग) बी0सी0जी0 आव्यूह (B.C.G.Matrix)–

बोस्टन कन्सल्टिंग ग्रुप मॉडल पर आधारित मेट्रिक्स को बीसीजी आव्यूह तथा संवृद्धि अंश आव्यूह (ग्रोथ शेयर मेट्रिक्स) के नाम से जाना जाता है। यह मेट्रिक्स दो चरों– उत्पाद के बाजार की वृद्धि दर तथा कम्पनी द्वारा बाजार में प्रतिस्पर्धी कम्पनी की तुलना में धारित बाजार अंश पर आधारित होती है। बाजार की विकास दर का आशय है कि सम्बन्धित उद्योग की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के सापेक्ष विकास गति। यह किसी भी उद्योग के आकर्षण का प्रतीक है। बाजार अंश में वृद्धि कम्पनी की प्रतिस्पर्धियों का सामना करने की क्षमता का प्रतीक है। बाजार में व्यवसायरत विभिन्न अन्य संस्थाओं की प्रगति दर की तुलना में सम्बन्धित कम्पनी के विकास की स्थिति उच्च अथवा निम्न हो सकती है।

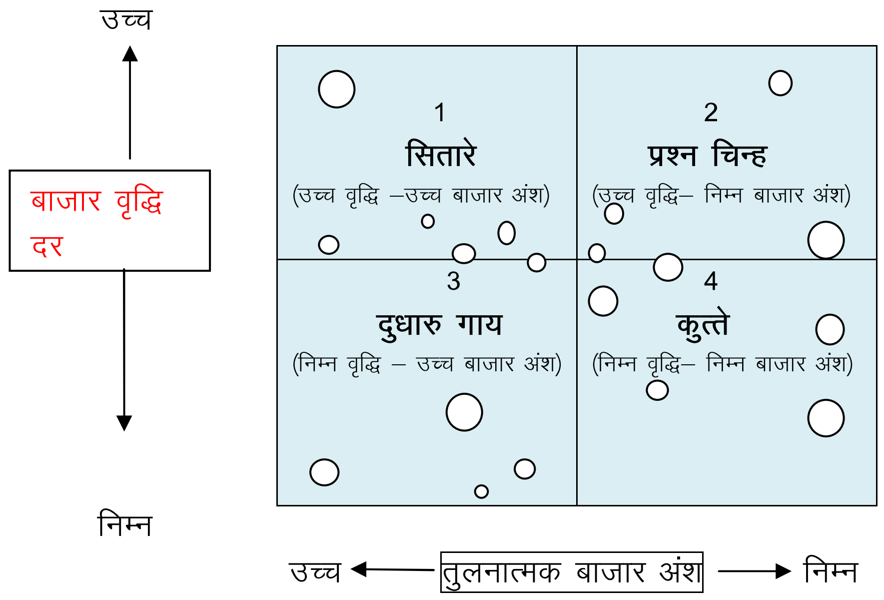

बीसीजी आव्यूह में लम्बवत् भुजा में बाजार वृद्धि दर तथा क्षैतिज भुजा में तुलनात्मक बाजार अंश को प्रदर्शित किया जाता है। बाजार संवृद्धि का अर्थ है सम्बन्धित उत्पाद के बाजार के विकास की दर तथा तुलनात्मक बाजार अंश का अर्थ है कम्पनी का सर्वश्रेष्ठ प्रतिद्वंदी की तुलना में बाजार अंश। उक्त दोनों भुजाएं उच्च और निम्न मात्रा के द्वारा आपस में टकराकर चार वर्ग बनाती हैं इस प्रकार प्राप्त वर्ग 1 में उच्च वृद्धि व उच्च बाजार अंश, वर्ग 2 में उच्च वृद्धि व निम्न बाजार दर, वर्ग 3 में निम्न वृद्धि व उच्च बाजार दर तथा वर्ग 4 में निम्न वृद्धि तथा निम्न विकास दर को प्रदर्शित करते हैं। इन वर्गों को क्रमशः सितारे, प्रश्न चिह्न, दुधारु गाय तथा कुत्ते का शीर्षक दिया गया है। विभिन्न परिस्थितियों को इस प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है–

1. **सितारे–** जब बाजार ऊँचा हो अथवा अर्थव्यवस्था की प्रगति दर की तुलना में कम्पनी की विकास दर अधिक है। साथ ही, कम्पनी का बाजार में तुलनात्मक अंश भी अधिक हो तो विकास उच्चतम स्तर पर सितारे के रुप में दिखाई देता है। इस अवस्था में विकास की असीम सम्भावनाएं होती हैं तथा कम्पनी को विकास के लिए भारी निवेश की भी आवश्यकता होती है। वृहद स्तरीय उत्पादन के कारण लागत में कमी आती है जिससे लाभ बढ़ता है तथा कम्पनी का व्यापार सितारों सा चमकता है।
2. **प्रश्न चिह्न–** यदि अर्थव्यवस्था में उद्योग का अंश बढ़ रहा हो तथा बाजार विकसित हो रहा हो किन्तु कम्पनी के बाजार अंश में गिरावट आ रही है तो चिन्ता की स्थिति है अतः इसे प्रश्न– चिह्न का रुप दिया गया है। इसे प्रॉब्लम चाइल्ड भी कहा जाता है। कम्पनी को अपनी नीतियों पर पुनर्विचार करते हुए बाजार में अपनी हिस्सेदारी बढ़ाने सम्बन्धी प्रयास करने होते हैं।
3. **दुधारु गाय–** इस स्थिति को बाजार में वृद्धि दर कम होने पर भी यदि तुलनात्मक बाजार अंश ऊँची है तो यह लाभ कमाने का मौका है। इस अवस्था को बीसीजी मेट्रिक्स में दुधारु गाय (कैश काऊ) बताया गया है। उद्योग की दर कम होने के कारण कुछ कमजोर फर्म बाजार से बाहर हो जाती हैं और कम्पनी बाजार अंश को और अधिक बढ़ाते हुए भारी लाभ कमाती है।
4. **कुत्ते–** यदि बाजार की वृद्धि दर कम है और तुलनात्मक अंश भी घट रहा है तो यह गम्भीर स्थिति है और इसे कुत्ते के रुप में प्रदर्शित किया गया है। एक ओर सम्बन्धित उद्योग की अर्थ व्यवस्था में स्थिति कमजोर हो रही है, वहीं दूसरी ओर कम्पनी स्वयं अपनी स्थिति को भी मजबूत नहीं कर पा रही है। इस स्थिति में कम्पनी को छँटनी व समापन जैसे विकल्पों पर विचार करना पड़ता है।

बीसीजी मेट्रिक्स का कम्पनी की रणनीति में महत्वपूर्ण योगदान होता है। इसके आधार पर कम्पनी अपने व्यापार में अतिरिक्त निवेश, विनिवेश, विस्तारण व छँटनी आदि की नीतियों को क्रियान्वित करती है तथा कम्पनी का पोर्टफोलियों निर्धारित करने में सहायक सिद्ध होती है किन्तु इस मेट्रिक्स में कुछ कमियॉं भी प्रकट

होती हैं। जैसे– यह मेट्रिक्स विकास की उच्च या निम्न अवस्था पर कार्य करती है किन्तु सामान्यतः कोई भी फर्म उच्च या निम्न स्थिति में होना आवश्यक नहीं है। सामान्य स्थिति के व्यवसायों के लिए नीतियों का विश्लेषण करना कठिन है। अर्थव्यवस्था में उद्योग के अंश तथा बाजार के हिस्सेदारी को निवेश का निश्चित आधार बनाया जाना सदैव सटीक नहीं होता है।

(घ) जी0ई0 नाइन सैल आव्यूह–

इस मेट्रिक्स का प्रयोग सर्वप्रथम अमेरिका की जनरल इलेक्ट्रिक कम्पनी द्वारा अपने विनियोगों के विश्लेषण के लिए अपनी सलाहकार कम्पनी मेकिन्से एण्ड कम्पनी के सहयोग से किया गया। इसमें बीसीजी मेट्रिक्स की कुछ कमियों में सुधार करने का प्रयास किया गया है। उच्च व निम्न के साथ मध्यम स्तर को भी इसमें सम्मिलित किया गया है। इसके लम्बवत् अक्ष में उद्योग के आकर्षण तथा क्षैतिज अक्ष में व्यवसाय की शक्तियों तथा प्रतिस्पर्धात्मक प्राथमिकता को प्रदर्शित किया जाता है। उद्योग के आकर्षण के अन्तर्गत अग्रलिखित आठ तत्वों को सम्मिलित किया जाता है– बाजार का आकार एवं वृद्धि दर, उद्योग में लाभ सीमा, प्रतिस्पर्धात्मक तीव्रता, मौसमी तत्व, चक्रीयता, पैमाने के प्रतिफल, तकनीक तथा सामाजिक, पर्यावरणीय, विधिक व मानवीय तत्व। व्यवसाय की शक्तियों का भी भारित समेकित श्रेणीयन अग्रलिखित सात तत्वों पर आधारित होता है– सम्बन्धित बाजार अंश, लाभ सीमा, मूल्य व गुणवत्ता में प्रतिस्पर्धा की क्षमता, ग्राहक तथा बाजार की जानकारी, प्रतिस्पर्धात्मक शक्ति व क्षीर्णता, तकनीकी क्षमता तथा प्रबन्धकीय सक्षमता।[2]

जी0ई0 नाइन सैल मेट्रिक्स का नमूना

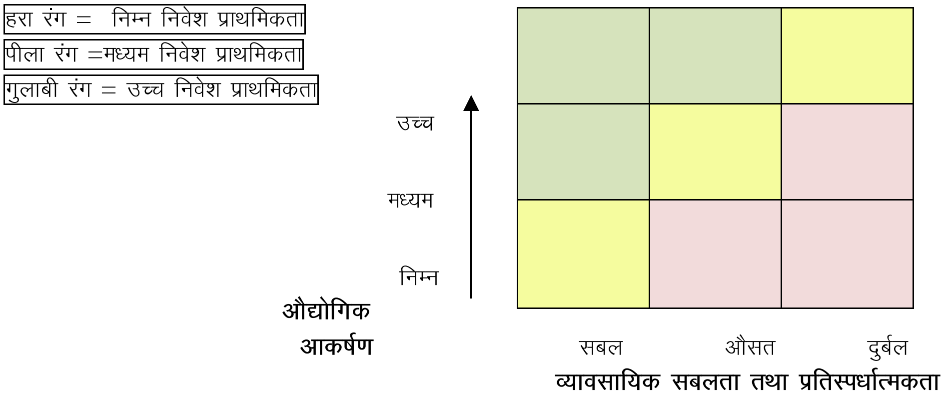

जी0ई0 मेट्रिक्स में दोनों अक्षों पर दी गई सूचनाओं को तीन श्रेणियाँ प्रदान की गई हैं– उच्च, मध्यम तथा निम्न। इनके संयोग से ही नौ खानों की रचना होती है। प्रत्येक आयाम के लिए भार निर्धारित किया गया है तथा भार व श्रेणी के गुणनफल से ही मूल्य की गणना की जाती है। औद्योगिक आकर्षण के एक काल्पनिक उदाहरण के द्वारा इस गणना को समझा जा सकता है–

तत्व	भार	श्रेणी	मूल्य
आवक की उपलब्धता	0.20	7	1.40
बाजार का आकार	0.15	8	1.20

बाजार की वृद्धि दर	0.15	6	0.90
लाभदायकता	0.15	8	1.20
प्रतियोगिता की तीव्रता	0.15	6	0.90
तकनीक की आवश्यकता	0.10	7	0.70
क्षमता का उपयोग	0.10	6	0.60
योग	1.00		6.90

उपरोक्त गणना दस श्रेणी अंकों के आधार पर की जाती हैं जिसमें 1 से 4 तक अंक दुर्बल, 4 से 7 अंक तक मध्यम तथा 7 से 10 अंक तक सबल स्थिति मानी जाती है। यहाँ 6.90 अंकों के साथ औद्योगिक आकर्षण मध्यम स्तर का है। इसी प्रकार की गणना व्यावसायिक सबलता तथा प्रतिस्पर्धात्मकता के लिए भी की जाती है जिसमें बाजार अंश, बाजार वृद्धि दर, ब्राण्ड की लोकप्रियता, मूल्य, वितरण, विपणन, गुणवत्ता, तकनीक आदि गुणों का मूल्यांकन किया जाता है। दोनों अक्षों पर दर्शाई गई सूचनाओं के पारस्परिक मिलान द्वारा नीतियों का विश्लेषण किया जाता है।

(ङ) निर्देशन नीति आव्यूह–

निर्देशन नीति आव्यूह (Directional Policy Matrix- DPM) का विकास इग्लैण्ड की शैल कैमिकल्स द्वारा किया गया। इस मेट्रिक्स में व्यापार क्षेत्र की सम्भावनाओं तथा कम्पनी की स्पर्धात्मक क्षमता के आधार पर नीतियों का विश्लेषण किया जाता है। जी0ई0 विश्लेषण की ही भॉति इसमें भी औद्योगिक आकर्षण तथा कम्पनी की प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता को तीन स्तरों पर रखकर नीतियों की समीक्षा की जाती है।

मेट्रिक्स से स्पष्ट है कि जब व्यापार क्षेत्र में विकास की सम्भावनाएं कमजोर हों तथा कम्पनी स्वयं भी अपनी प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की तुलना में कमजोर हो (बॉया ऊपरी खाना) तो कम्पनी को व्यापार में विनिवेश की नीति अपनाना हितकर होता है, जबकि यदि कम्पनी सबल हो और बाजार के विकास की गति भी अच्छी हो (दॉया निचला खाना) तो बाजार में अधिक से अधिक निवेश करके नए उत्पादों को लाने का प्रयास करना कम्पनी के लिए हितकर होता है। मेट्रिक्स के अन्य खानों में इसी प्रकार निवेश का स्तर तय किया जाता है।

व्यवसाय क्षेत्र की सम्भावनाएं

कम्पनी की प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता

	अनाकर्षक	सामान्य	आकर्षक
दुर्बल	विनिवेश / समापन	छँटनी / स्थिरता	क्रमिक वापसी
औसत	विलय / क्रमिक वापसी	सम्पोषणीय विकास / निरन्तरता	विस्तार / उत्पाद विविधीकरण
सबल	विविधीकरण / धनोत्पादन	संवृद्धि / बाजार विभक्तीकरण	बाजार नेतृत्व / नवोन्मेष

निर्देशन नीति आव्यूह में बॉई ओर नीचे से दाईं ओर ऊपर की ओर जाने वाले विकर्णाकार खानों में सावधानीपूर्वक निवेश की आवश्यकता होती है तथा कम्पनी अपनी स्थिति को कायम रखते हुए धीरे–धीरे निरन्तर विकास का लक्ष्य प्राप्त करना चाहती है। इस स्थिति में कम्पनी न्यूनतम जोखिम लेकर कार्य करने पर विश्वास रखती है।

(च) हॉफर का जीवन चक्र आव्यूह (Hofer's Life Cycle Matrix)–

हॉफर द्वारा प्रस्तुत 15 खानों वाला आव्यूह किसी कम्पनी की प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता के साथ बाजार की दशाओं का जीवन चक्र की पॉच अवस्थाओं में विश्लेषण करता है। ये अवस्थाएं हैं– प्रारम्भिक विकास अथवा परिचय अवस्था, संवृद्धि की अवस्था, तीव्र विकास की अवस्था, संतृप्ति की अवस्था तथा पतन की अवस्था। उपरोक्त अवस्थाओं का व्यापार की दशाओं (सबल, औसत तथा निर्बल) के आधार पर समायोजन करते हुए नीतियों का विश्लेषण किया जाता है।

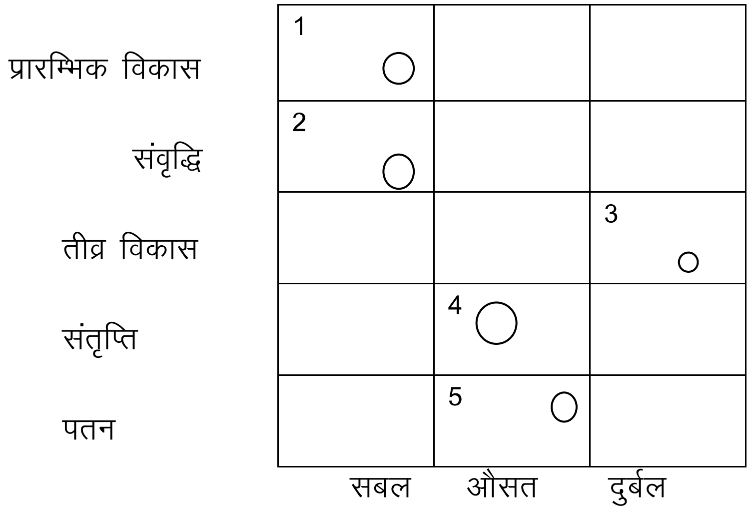

उपरोक्त चित्र में व्यापार की पॉच काल्पनिक परिस्थितियों का हॉफर विधि से प्रदर्शन किया गया है। प्रथम स्थिति उस व्यापारिक अवस्था से सम्बन्धित है जिसमें उत्पाद का बाजार मजबूत है, उसकी बाजार में अच्छी मॉग है तथा भविष्य में भी इस व्यापार के विकसित होने की आशा है। जिस फर्म की नीति का विवेचन किया जा रहा है, वह अभी प्रारम्भिक अवस्था में है किन्तु उसकी वित्तीय स्थिति अच्छी है तथा यह आशा है कि उसके द्वारा उत्पादित माल बाजार में बिक जायेगा। यह फर्म क्रमिक निवेश की नीति अपनाकर व्यापार का विकास करने का प्रयास करेगी। दूसरी स्थिति की फर्म सबल है किन्तु अभी संवृद्धि की दशा में ही है। इसके पास यद्यपि भारी लाभ कमाने के उचित अवसर उपलब्ध हैं किन्तु इसे सावधानीपूर्वक निवेश की नीति अपनाना चाहिए। तीसरी स्थिति में फर्म की प्रतिस्पर्धात्मक स्थिति दुर्बल है। यह फर्म तीव्र विकास की स्थिति में होने पर भी उसका लाभ उठाने की स्थिति में नहीं है। चौथी स्थिति में फर्म संतृप्ति की स्थिति में है। इस स्थिति में फर्म अपने ब्राण्ड को भुनाकर खूब लाभ कमा सकती है किन्तु प्रतिस्पर्धात्मक शक्ति औसत स्तर की है जिसे सशक्त किये जाने की आवश्यकता है। पॉचवीं स्थिति अत्यन्त चिंताजनक है। फर्म जीवन चक्र में पतन की स्थिति पर है अर्थात् उसकी बिक्री व लाभ घट रहे हैं। साथ

ही, उसकी अन्य फर्मों के साथ प्रतिस्पर्धा करने की शक्ति भी सीमित है। यह फर्म विनिवेश या समापन की ओर अग्रसर है। कम्पनी को अपना पोर्टफोलिओ तैयार करते समय हॉफर के जीवन चक्र का ध्यान रखकर नीति विश्लेषण करना लाभदायक होता है।

(छ) आन्तरिक–वाह्य आव्यूह (Internal External Matrix)–

आन्तरिक व वाह्य आव्यूह को संयुक्त रुप से लागू करने का मॉडल दो रुपों में नीतियों का विश्लेषण करता है। इसमें आन्तरिक तत्वों को क्षैतिज रुप में तथा वाह्य तत्वों को लम्बवत् अंश में प्रदर्शित किया जाता है।

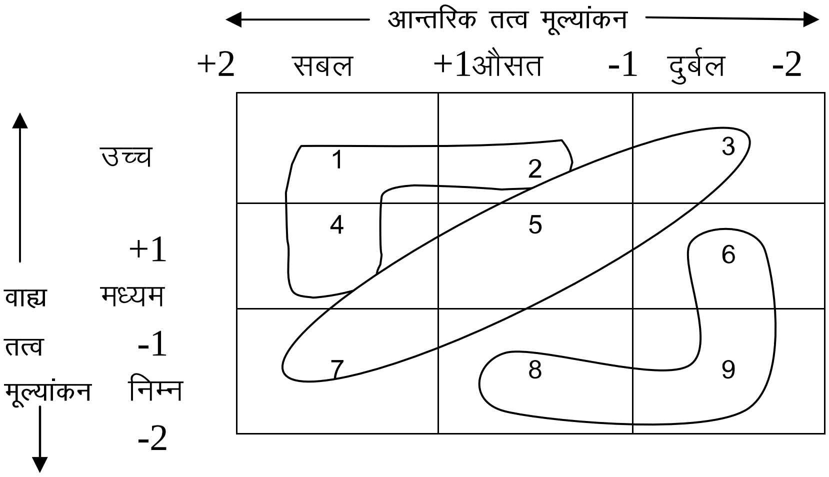

उपरोक्त वर्ग तालिका में आन्तरिक व वाह्य तत्वों के विश्लेषण के आधार पर मूल्यांकन किया जाता है। आन्तरिक तत्वों में कम्पनी का सामान्य प्रबन्धन, मानव संसाधन, वित्त, विपणन, उत्पादन तकनीक आदि को सम्मिलित किया जाता है तथा वाह्य तत्वों में आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, तकनीकी, विधिक, सरकारी, अन्तर्राष्ट्रीय आदि तत्वों को सम्मिलित किया जाता है। इस आधार पर सबल आन्तरिक तथा उच्च वाह्य मूल्यांकन वाली स्थिति निवेश की दृष्टि से श्रेष्ठ होती है। वर्ग 1, 2 व 4 में विकास की प्रखर सम्भावनाएं दिखाई देती हैं। इस स्थिति में कम्पनी अधिक से अधिक निवेश करके समृद्ध बाजार का लाभ लेना चाहती है। अन्य व्यापारों का अधिग्रहण करना, नई उत्पाद लाइन में प्रवेश करना, उत्पादन व विपणन आदि में नए प्रयोग करना आदि इस स्थिति में अनुकूल होता है। मध्यम स्थिति में सावधानीपूर्वक बाजार की परिस्थिति के अनुसार निवेश करना उचित होता है। इसमें कम्पनी संयुक्त उपक्रम आदि विकल्पों पर विचार करती है। वर्ग 3, 5 व 7 में इस स्थिति को दर्शाया गया है। वर्ग 6, 8 व 9 की स्थितियॉ प्रतिकूल हैं। आन्तरिक अथवा वाह्य परिस्थिति अथवा दोनों के प्रतिकूल होने के कारण निवेश के डूबने की पूर्ण सम्भावना हो जाती है। इन परिस्थितियों में कम्पनी को प्रतिगमन, छॅटनी आदि के बारे में विचार करना पड़ता है। कम्पनी को अपनी नीतियों का विश्लेषण करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि आन्तरिक व वाह्य परिस्थितियॉ उसके पक्ष में हैं अथवा नहीं।

(ज) वृहद रणनीतिक आव्यूह (Grand Strategic Matrix)–

इस रणनीतिक आव्यूह में कम्पनी की रणनीतियों के लिए परिस्थितियों को दो आधारों– प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता तथा बाजार का विकास पर विचार करते हुए चार वर्गों में विभाजित करती है।

तीव्र ↑ बाजार का विकास ↓ सुस्त

द्वितीय चतुर्थांश 1. बाजार का विकास 2. नये बाजारों में प्रवेश 3. उत्पाद का विकास 4. क्षैतिज समेकन 5. छँटनी	प्रथम चतुर्थांश 1. बाजार का विकास 2. नये बाजारों में प्रवेश 3. उत्पाद का विकास 4. पूर्व व पश्च समन्वय 5. क्षैतिज समेकन 6. सकेन्द्रीय विविधीकरण
तृतीय चतुर्थांश 1. छँटनी 2. क्षैतिज समेकन 3. साम्राज्यीकृत विविधीकरण 4. सकेन्द्रीय विविधीकरण 5. छँटनी 6. समापन	चतुर्थ चतुर्थांश 1. क्षैतिज समेकन 2. सकेन्द्रीय विविधीकरण 3. संयुक्त उपक्रम 4. साम्राज्यीकृत विविधीकरण

निर्बल ← प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता → सबल

उपरोक्त चित्र के अनुसार यदि बाजार के विकास की दर तथा प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता को ग्राफ के रुप प्रदर्शित किया जाय तो चार चतुर्थांश प्राप्त होते हैं। प्रथम चतुर्थांश में तीव्र बाजार विकास दर तथा सबल प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता की स्थिति को रखा जाता है। इस वर्ग में बाजार में मॉग निरन्तर बढ़ती है तथा कम्पनी की प्रबन्धकीय उस परिस्थिति को भुनाने में सक्षम है। वह अपनी नेतृत्वकारी नीतियों के द्वारा बाजार में नये उत्पाद लाने, नये बाजारों में प्रवेश करने, अधिग्रहण करने तथा सम्बन्धित सेवाओं, वितरण आदि पर नियन्त्रण करने में सक्षम होती है। द्वितीय चतुर्थांश उस परिस्थिति को प्रदर्शित करता है जिसमें बाजार तो उन्नत स्थिति में होता है किन्तु कम्पनी स्वयं को अपने प्रतिस्पर्धियों का सामना करने में कमजोर पाती है। उसका बाजार में अंश निरन्तर गिर रहा होता है। कम्पनी को इस स्थिति में थोड़ी सावधानी के साथ विकास करने की रणनीति अपनाना श्रेयस्कर होता है। वह अपने उत्पाद में सुधार करने तथा नये बाजार में प्रवेश करने तथा अपने कम महत्व के उत्पादों को बाजार से हटाने पर विचार कर सकता है। तृतीय चतुर्थांस घनघोर निराशा की स्थिति को प्रदर्शित करता है। यह उस स्थिति को प्रदर्शित करता है जिसमें कम्पनी निर्बल स्थिति में है। वह बाजार की प्रतिस्पर्धा में पिछड़ रही है। साथ ही, बाजार भी मन्दा चल रहा है। अन्य उद्योगों की तुलना में सम्बन्धित उद्योग की विकास दर कम है।

निश्चय ही इस स्थिति में कमजोर फर्म के अस्तित्व को संकट उत्पन्न हो जाता है। कम्पनी को अपने संसाधनों का यथासम्भव उपयोग करते हुए अस्तित्व बचाने का प्रयास करना चाहिए तथा छँटनी व विनिवेश की नीति पर विचार करना होगा अन्यथा समापन की ही कार्रवाई करनी होगी। चौथा चतुर्थांस बाजार की उस स्थिति को प्रदर्शित करता है जिसमें बाजार सुस्त चाल से चल रहा है। उत्पाद की मॉग में निरन्तर कमी आ रही है किन्तु कम्पनी की प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता उच्च स्तर की है। वह अपने उद्योग की अन्य कम्पनियों की तुलना में सबल है। इस स्थिति का लाभ उठाते हुए वह समापन की ओर अग्रसर कम्पनियों का अधिग्रहण कर सकती है अथवा कमजोर कम्पनियों की परियोजना को पूरा करने के लिए संयुक्त उपक्रम बनाकर अपने लिए लाभदायक शर्तों पर काम कर सकती है। वह बाजार की कमजोर स्थिति में भी नेतृत्वकारी साम्राज्यीकरण की नीति अपना सकता है।

3. तृतीय स्तर–

रणनीति विश्लेषण के तृतीय स्तर को निर्णयन की अवस्था भी कहा जाता है। निवेश स्तर व मिलान स्तर के बाद अन्तिम चरण के रुप में निर्णयन की अवस्था में मात्रात्मक रणनीतिक नियोजन आव्यूह (Quantative Strategic Planning Matrix-QSPM) को अपनाया जाता है। इस आव्यूह में निवेश स्तर की सूचनाओं को मिलान स्तर के अनेक आव्यूहों के तुलनात्मक विश्लेषण द्वारा परिणाम प्राप्त करने के लिए प्रयोग किया जाता है। इस आव्यूह की रचना में निर्धारक तत्वों में आन्तरिक एवं वाह्य तत्वों को सम्मिलित किया जाता है।

मुख्य निर्धारक तत्व	श्रेणी	रणनीतिक विकल्प					
		स्तर 1		स्तर 2		स्तर 3	
		आकर्षण अंक	कुल अंक	आकर्षण अंक	कुल अंक	आकर्षण अंक	कुल अंक
आन्तरिक तत्व–							
प्रबन्धन							
विपणन							
वित्त							
मानव संसाधन							
उत्पादन व संचालन							
शोध एवं विकास							
वाह्य तत्व–							
मितव्ययिता							
राजनीतिक							
सामाजिक							
तकनीकी							
प्रतिस्पर्धात्मक							
योग							

(कुल अंक की गणना श्रेणी तथा आकर्षण अंको के गुणनफल द्वारा प्राप्त की जाती है।)

आन्तरिक तत्वों में प्रबन्धकीय क्षमता, विपणन प्रबन्ध, वित्तीय प्रबन्ध, मानव संसाधन प्रबन्धन, उत्पादन व संचालन तथा शोध व विकास आदि का परीक्षण किया जाता है जबकि वाह्य तत्वों में उत्पादन की मितव्ययिता के साथ ही विभिन्न राजनीतिक, सामाजिक, तकनीकी तत्वों तथा प्रतिस्पर्धात्मक क्षमताओं का परीक्षण किया जाता है। विभिन्न तत्वों को उनकी महत्ता के अनुसार श्रेणी या रेंक प्रदान की जाती है। इसके बाद प्रत्येक तत्व को अंक प्रदान किये जाते हैं। प्राप्त अंकों को रेंक से गुणा करके कुल अंक ज्ञात किये जाते हैं। मिलान स्तर पर विभिन्न मेट्रिक्स (यथा– टाओस, स्पेस, बी0सी0जी, जी0ई0, आई0ई0, निर्देशन नीति, वृहद रणनीति आदि) में से चयनित नीतियों के कुल अंकों की तुलना की जाती है। किसी भी नीति का मूल्यांकन करते समय यह ज्ञात किया जाता है कि उक्त नीति दी गई परिस्थितियों में अलग–अलग मेट्रिक्स का अनुपालन करके कितने अंक प्राप्त कर रही है।

श्रेणी अंक प्रदान करने के लिए आन्तरिक मूल्यांकन में बड़ी दुर्बलता, सामान्य दुर्बलता, सामान्य सबलता तथा बड़ी सबलता को क्रमशः 1, 2, 3 तथा 4 अंक दिये जाते हैं। इसी प्रकार वाह्य मूल्यांकन में बड़ी चुनौती, सामान्य चुनौती, सामान्य अवसर तथा बड़ा अवसर को भी इसी प्रकार के अंक दिये जाते हैं। आकर्षण अंकों का निर्धारण भी इसी प्रकार किया जाता है जिसमें अस्वीकार्य को 1 अंक, संभवतः स्वीकार्य को 2 अंक, सम्भाव्य को 3 अंक तथा पूर्णतः स्वीकार्य को 4 अंक दिये की रीति है। इन तुलनाओं से प्राप्त अंक के आधार पर नीति को लागू करने का प्रयास किया जाता है।

10.4.2 <u>व्यापार स्तरीय रणनीतिक ढॉचा (Business Level Strategic Structure)</u>

व्यापार स्तर पर रणनीतिक विश्लेषण के लिए निम्नलिखित ढॉचा उपलब्ध होता है–

1. <u>अनुभव वक्र विश्लेषण (Experience Curve Analysis)</u>– इस विश्लेषण के अन्तर्गत यह देखा जाता है कि व्यापार के अन्य प्रतिस्पर्धियों की तुलना में फर्म के उत्पाद की गुणवत्ता ऊॅची हो, लागत कम हो तथा बिक्री व लाभ अधिक हो। यह विश्लेषण इस अवधारणा पर आधारित है कि कोई फर्म जितनी अनुभवी होगी उसकी लागतों में उतनी ही कमी होती जायेगी। इसका कारण पैमाने के प्रतिफल के कारण बचत, तकनीकी उन्नयन, उत्पाद की डिजाइनिंग आदि तत्व है। बाजार के विकास तथा फर्म के अनुभव के आधार पर नीति का विश्लेषण किया जाता है।
2. <u>जीवन चक्र विश्लेषण (Life Cycle Analysis)</u>– बाजार का जीवन–चक्र भी उत्पाद जीवन–चक्र की ही भॉति परिचय, विकास, संतृप्ति तथा पतन की अवस्थाओं से होकर गुजरता है। इस विश्लेषण अवधारणा के अनुसार बाजार की दशाओं का व्यापार की रणनीति में विशेष प्रभाव होता है। जब बाजार प्रारम्भिक अवस्था में होता है तो व्यापार में क्रमिक निवेश के द्वारा विकास का लक्ष्य रखा जाता है तथा जब विकास की दशा में होता है तो अधिक से अधिक निवेश करके व्यापार की मॉग पर कब्जा करने का प्रयास किया जाता है। संतृप्ति की अवस्था में मॉग अधिकतम होती है। इस अवस्था में व्यापार को

सावधानीपूर्वक आगे बढ़ाया जाता है। बाजार के पतन की अवस्था में मॉग कमजोर पड़ने के कारण दुर्बल फर्म बन्द होने लगती हैं। इस स्थिति में सबल फर्म उनकी मॉग पर कब्जा करने तथा उत्पाद विविधीकरण के द्वारा अपने लाभों को स्थिर रखने की नीति अपनाने का प्रयास करती हैं।

3. उद्योग विश्लेषण (Industry Analysis)– उद्योग उन विभिन्न कम्पनियों का समूह होता है जो एक ही प्रकार की अथवा मिलती जुलती अथवा पूरक वस्तुओं का निर्माण करती हैं। उदाहरण के लिए– विभिन्न प्रकार की दवाएं बनाने वाली कम्पनियों के समूह को भेषज समूह या फार्मा सेक्टर कहा जाता है। इस विश्लेषण के अनुसार व्यापार नीतियों के विश्लेषण के लिए सम्बन्धित उद्योग का विश्लेषण किया जाना चाहिए। मिशेल ई0 पोर्टर के अनुसार किसी फर्म की नीतियों का विश्लेषण करने पूर्व सम्बन्धित उद्योग का ढॉचागत परीक्षण करना चाहिए जिससे कि फर्म अपनी शक्तियों तथा क्षीर्णताओं को जान सके। उन्होंने पॉच प्रतिस्पर्धात्मक शक्तियों वाला एक मॉडल प्रस्तावित किया है, ये शक्तियॉ हैं– नई आने वाली फर्मों से भय, प्रतिस्पर्धियों के मध्य प्रतियोगिता, आपूर्तिदाता की सौदेबाजी की शक्ति, क्रेताओं की सौदेबाजी की शक्ति तथा स्थानापन्न वस्तुओं का भय। किसी उद्योग में इन पॉच शक्तियों वाले मॉडल के प्रयोग के द्वारा फर्म अपनी शक्तियों तथा दुर्बलताओं का आकलन कर सकती है तथा तदनुसार अपनी नीतियों का विश्लेषण कर सकती है।

4. रणनीतिक समूह विश्लेषण (Strategic Group Analysis)– रणनीतिक समूह विभिन्न प्रतिस्पर्धी फर्मों के वे वैचारिक संकुल होते हैं जो समान रणनीति का अनुपालन करते हैं, अतः वे अन्य फर्मों की तुलना में आपस में अधिक प्रत्यक्ष प्रतिस्पर्धा में होते हैं।[3] इनका कोई औपचारिक अस्तित्व नहीं होता किन्तु अपनी समरुपी नीतियों के कारण उनका टकराव अधिक होता है क्योंकि ये फर्म अपनी नीतियों का निर्धारण करने के लिए संकुल की अन्य फर्मों की नीतियों का अध्ययन करती हैं। यह विश्लेषण तकनीक वास्तविक विषय का अध्ययन सही आधार पर करती है क्योंकि अन्य समान स्तरीय संस्थाओं की नीतियों का अध्ययन करने के उपरान्त ही नीति तैयार की जाती है तथा उनका सामना करने के लिए पर्याप्त उपाय इस नीति में किए जाते हैं।

5. प्रतिस्पर्धी विश्लेषण (Compititor's Analysis)– रणनीतिक विश्लेषण के अन्तर्गत उद्योग विश्लेषण में जहॉ सम्पूर्ण उद्योग का तथा रणनीतिक समूह विश्लेषण में उद्योग में कार्यरत एक विशेष समूह की समस्त इकाइयों का समवेत अध्ययन किया जाता है। प्रतिस्पर्धी विश्लेषण इस दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण होता है कि यह फर्म की निकटतम प्रतिद्वन्दी फर्मों की नीति के आधार पर अपनी नीति का विश्लेषण करता है। एम0 ई0 पोर्टर ने प्रतिस्पर्धी विश्लेषण के निम्नांकित उद्देश्य बताए हैं–

- उद्योग अथवा वातावरण में किसी परिवर्तन का प्रतिस्पर्धियों पर प्रतिक्रियात्मक प्रभाव ज्ञात करना।

- फर्म द्वारा नीतियों में किसी परिवर्तन का प्रतिस्पर्धियों पर प्रतिक्रियात्मक प्रभाव का अनुमान लगाना।
- प्रत्येक प्रतिस्पर्धी द्वारा अपनाये जा सकने वाले सम्भावित रणनीतिक परिवर्तनों की प्रकृति तथा सफलता की प्रोफाइल विकसित करना।

उपरोक्त उद्‌देश्यों के साथ प्रतिस्पर्धी संगठनों का विश्लेषण करने के लिए चार तत्वों का उपयोग किया जाता है– प्रतिस्पर्धियों के भावी लक्ष्य, उसकी वर्तमान रणनीति, उसकी स्वयं तथा उद्योग के सम्बन्ध मान्यताएं तथा फर्म की शक्तियों व दुर्बलताओं के आधार पर क्षमताएं।

10.5 सारांश

विभिन्न प्रकार के संगठन अपने आकार तथा व्यापार के स्वभाव के आधार पर अपनी रणनीति का निर्धारण करते हैं। इसके लिए वे अपने संगठन की शक्तियों व सीमाओं का अध्ययन करने के साथ ही आन्तरिक व वाह्य वातावरण के तत्वों का भी विश्लेषण करते हैं। इस के बाद इनका निगम स्तर पर तथा व्यापार इकाई स्तर पर परीक्षण किया जाता है। संगठन अपने रणनीतिक विकल्पों के चुनाव तथा निर्णयन के लिए निश्चित प्रक्रिया को अपनाता है तथा तदनुसार ही निर्णय लेता है। रणनीतिक विकल्पों का मूल्यांकन करने के लिए नीति को उपयुक्तता, व्यवहार्यता, स्वीकार्यता तथा निरन्तरता की कसौटियों पर परखा जाता है अर्थात् यह सुनिश्चित किया जाता है कि संगठन द्वारा अपनाई जाने वाली नीति लाभदायक भी हो और व्यावहारिक भी। विभिन्न रणनीतिक विकल्पों को विकसित करने के बाद संगठन उनका मूल्यांकन करता है। सर्वश्रेष्ठ रणनीति का चयन करने की प्रक्रिया में वातावरण अध्ययन एवं विकल्पों का ज्ञान, प्रारम्भिक विश्लेषण, उपयुक्तता की जॉच, व्यवहार्यता की जॉच तथा स्वीकार्यता व निरन्तरता की जॉच के बाद रणनीति का अन्तिम चयन किया जाता है।

रणनीतिक मूल्यांकन के ढॉचे को समझने के लिए निगम स्तर तथा व्यवसाय स्तर पर रणनीतिक विश्लेषण किया जाता है। निगम स्तर पर विश्लेषण के लिए तीन स्तरों पर निवेश, मिलान तथा निर्णयन का कार्य विभिन्न आव्यूह (मेट्रिक्स) के द्वारा किया जाता है। निवेश स्तर का विश्लेषण आन्तरिक तत्व मूल्यांकन आव्यूह, वाह्य तत्व मूल्यांकन आव्यूह तथा प्रतिस्पर्धात्मक प्रोफाइल आव्यूह द्वारा किया जाता है। आन्तरिक तत्वों में संगठन की शक्तियों तथा दुर्बलताओं को तथा वाह्य तत्वों में अवसरों तथा चुनौतियों को परखा जाता है। प्रतिस्पर्धात्मक स्तर पर समान स्तरीय कम्पनियों की नीतियों का विश्लेषण किया जाता है। मिलान स्तर पर टाओस आव्यूह, स्पेस आव्यूह, बीसीजी आव्यूह, जीई नाइन सैल आव्यूह, हॉफर का जीवन चक्र आव्यूह, आन्तरिक–वाह्य आव्यूह, निर्देशन नीति आव्यूह तथा वृहद रणनीति आव्यूह का प्रयोग नीतियों के मिलान के लिए किया जाता है। इन मेट्रिक्स का प्रयोग विभिन्न संगठनों के द्वारा अपनी नीतियों का परीक्षण करने के लिए किया गया तथा कालान्तर में अन्य कम्पनियों द्वारा इन्हें अपनाया गया। निर्णयन स्तर पर मात्रात्मक रणनीतिक नियोजन आव्यूह को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना गया है। व्यवसाय स्तर पर रणनीतिक विश्लेषण के लिए

अनुभव वक्र विश्लेषण, जीवन चक्र विश्लेषण, उद्योग विश्लेषण, रणनीतिक समूह विश्लेषण तथा प्रतिस्पर्धी विश्लेषण तकनीक का प्रयोग किया जाता है।

10.6 शब्दावली

रणनीति विकल्प	रणनीति निर्माण के लिए उपलब्ध वैकल्पिक मार्ग
आन्तरिक तत्व मूल्यांकन आव्यूह	संगठन की शक्तियों तथा दुर्बलताओं के आधार पर निवेश स्तर पर नीतियों का मूल्यांकन
वाह्य तत्व मूल्यांकन आव्यूह	संगठन के वाह्य वातावरण के आधार पर निवेश स्तर पर नीतियों का मूल्यांकन
प्रतिस्पर्धात्मक प्रोफाइल आव्यूह	निकटतम प्रतिस्पर्धी संगठनों से निश्चित बिन्दुओं पर तुलना द्वारा मूल्यांकन
टाओस आव्यूह	चुनौती, अवसर, दुर्बलता तथा शक्ति के परीक्षण द्वारा मिलान स्तर पर मूल्यांकन
स्पेस आव्यूह	रणनीतिक स्थिति तथा कार्रवाई मूल्यांकन की विधि जिसमें संगठन उन स्थितियों का पता लगाता है जिनमें सतर्कता या आक्रामकता अपनानी है।
बीसीजी आव्यूह	बोस्टन कन्सल्टेन्सी ग्रुप द्वारा सुझाया गया आव्यूह
जीई नाइन सैल आव्यूह	जनरल इलैक्ट्रीकल्स द्वारा अपनाया गया आव्यूह
निर्देशन नीति आव्यूह	शैल कम्पनी द्वारा अपनाया गया व्यापार क्षेत्र की सम्भावनाओं तथा कम्पनी की स्पर्धात्मक क्षमता के आधार पर आव्यूह
हॉफर का जीवन चक्र आव्यूह	कम्पनी के जीवन चक्र की अवस्था के अनुसार नीतियों के मूल्यांकन का हॉफर द्वारा सुझाया गया आव्यूह
आन्तरिक–वाह्य आव्यूह	आन्तरिक व वाह्य दोनों तत्वों के आधार पर मूल्यांकन
वृहद रणनीति आव्यूह	प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता तथा बाजार की विकास दर के संयोजन द्वारा निर्मित आव्यूह द्वारा मूल्यांकन
मात्रात्मक रणनीतिक नियोजन आव्यूह	मिलान स्तर के अनेक आव्यूहों के तुलनात्मक विश्लेषण का निर्णयन स्तर का आव्यूह
अनुभव वक्र विश्लेषण	व्यापार स्तर की रणनीति में अनुभव के आधार पर लागत की न्यूनता तथा बिक्री की अधिकता का आव्यूह
जीवन चक्र विश्लेषण	बाजार की दशाओं के आधार पर व्यापार की नीतियों के परीक्षण का आव्यूह
उद्योग विश्लेषण	व्यापार से सम्बन्धित उद्योग की परिस्थितियों पर आधारित आव्यूह

रणनीतिक समूह विश्लेषण	सम्बन्धित उद्योग के अन्तर्गत समान स्तर व विचारधारा की कम्पनियों के समूह का आव्यूह
प्रतिस्पर्धी विश्लेषण	व्यापार की प्रमुख प्रतिस्पर्धी कम्पनी से तुलना का आव्यूह
क्यू0एस0पी0एम0	क्वान्टिटेटिव स्ट्रेटेजिक प्लानिंग मेट्रिक्स
टी0ओ0डब्ल्यू0एस0 (टाओस)	थ्रेट अपॉर्चुनिटी वीकनैस स्ट्रेन्थ
एस0पी0ए0सी0ई0 (स्पेस)	स्ट्रेटेजिक पोजीशन एण्ड एक्शन इवैल्युएशन
जी0ई0	जनरल इलैक्ट्रिकल्स
बी0सी0जी0	बोस्टन कन्सल्टिंग ग्रुप
डी0पी0एम0	डाइरेक्शनल पालिसी मेट्रिक्स
क्यू0एस0पी0एम0	क्वान्टिटेटिव स्ट्रेटेजिक प्लानिंग मेट्रिक्स

10.7 बोध प्रश्न

(क) अपनी प्रगति जॉचें

बताएं निम्न कथन सत्य हैं अथवा असत्य–

(अ) उपयुक्तता की कसौटी के अनुसार रणनीति को अवसरों का लाभ लेने तथा चुनौतियों का सामना करने में सक्षम होना चाहिए। (सत्य/असत्य)

(आ) व्यवहार्यता की कसौटी के अनुसार रणनीति को विधिक, नैतिक तथा प्रशासनिक दृष्टि से अनुकूल होना चाहिए। (सत्य/असत्य)

(इ) निरन्तरता की कसौटी के अनुसार रणनीति को ऐसा होना चाहिए कि उसे बाजार के सामान्य परिवर्तनों का असर न पड़े तथा दीर्घकाल तक लागू रखा जा सके। (सत्य/असत्य)

(ई) उपयुक्तता तथा व्यवहार्यता की जॉच के बाद वातावरण तथा परिस्थितियों का अध्ययन किया जाता है। (सत्य/असत्य)

(उ) आन्तरिक तत्व मूल्यांकन आव्यूह के अन्तर्गत अवसरों तथा चुनौतियों पर आधारित विश्लेषण किया जाता है। (सत्य/असत्य)

(ऊ) टाओस आव्यूह में कम्पनी अपनी स्थिति की उद्योग की स्थिति से तुलना करके उन क्षेत्रों का पता चलाती है जहॉ उसे सतर्कता, आक्रामकता, सुरक्षात्मकता अथवा प्रतिस्पर्धात्मकता अपनानी है। (सत्य/असत्य)

(ए) स्पेस आव्यूह के अन्तर्गत वित्तीय सुदृढ़ता, औद्योगिक सुदृढ़ता, प्रतिस्पर्धात्मक सुदृढता तथा वातावरणीय स्थिरता के आधार पर नीतियों का मिलान किया जाता है। (सत्य/असत्य)

(ऐ) टाओस आव्यूह में शक्तियों तथा क्षीर्णताओं का अवसरों तथा चुनौतियों के साथ मिलान किया जाता है। (सत्य/असत्य)

(ख) अपनी प्रगति जॉचें

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए–

1. बी0सी0जी0 आव्यूह का ही अन्य नाम .... (संवृद्धि अंश आव्यूह / स्पेस आव्यूह) भी है।

2. बी0सी0जी0 मेट्रिक्स में उच्च वृद्धि तथा निम्न बाजार अंश की दशा को .... (सितारे/प्रश्न चिन्ह) द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।
3. यदि बाजार की वृद्धि दर कम है और तुलनात्मक अंश भी घट रहा है तो यह स्थिति (प्रश्न चिन्ह/कुत्ते) के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।
4. निर्देशन नीति आव्यूह का प्रतिपादन .... (मेकिन्से एण्ड कम्पनी /शैल कैमिकल्स) के द्वारा किया गया है।
5. हॉफर का जीवन चक्र आव्यूह ....(चार/नौ/पन्द्रह) खानों द्वारा बनाया गया है।
6. मात्रात्मक रणनीतिक नियोजन आव्यूह का प्रयोग .... (निवेश/मिलान/निर्णयन) स्तर पर किया जाता है।

10.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

(क) अपनी प्रगति जॉचें –

(अ) सत्य (आ) सत्य (इ) सत्य (ई) असत्य (उ) असत्य (ऊ) असत्य (ए) सत्य (ऐ) सत्य

(ख) अपनी प्रगति जॉचें –

(1) संवृद्धि अंश आव्यूह (2) प्रश्न चिन्ह (3) कुत्ते (4) शैल कैमिकल्स (5) पन्द्रह (6) निर्णयन

10.9 स्वपरख प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न–

(अ) रणनीतिक विकल्पों के मूल्यांकन के लिए किन कसौटियों का प्रयोग किया जाता है?

(आ) रणनीतिक विकल्पों के मूल्यांकन की प्रक्रिया को समझाइए?

(इ) रणनीतिक विकल्पों के मिलान के टाओस तथा स्पेस आव्यूहों को समझाइए।

(ई) मात्रात्मक रणनीतिक नियोजन आव्यूह का प्रयोग रणनीतिक विश्लेषण में किस स्तर पर किया जाता है? इस आव्यूह की प्रमुख विशेषताएं बताइए।

(उ) उद्योग विश्लेषण, रणनीतिक समूह विश्लेषण तथा प्रतिस्पर्धी विश्लेषण में क्या अन्तर है? संक्षेप में समझाइए।

निबन्धात्मक प्रश्न–

3. निगम स्तरीय रणनीति मूल्यांकन के निवेश स्तर के विभिन्न आव्यूहों को समझाइए?
4. निगम स्तरीय रणनीति मूल्यांकन के मिलान स्तर पर किन आव्यूहों का प्रयोग किया जाता है? किन्ही दो को विस्तार से समझाइए?
3. टाओस आव्यूह का प्रयोग किस प्रकार किया जाता है? इसमें संगठन के आन्तरिक एवं वाह्य तत्वों का समन्वय कैसे किया जाता है? विस्तार से वर्णन कीजिए।
4. किसी संगठन का उदाहरण लेते हुए उसका वृहद रणनीतिक आव्यूह बनाइए तथा संगठन का रणनीतिक विश्लेषण कीजिए।

5. व्यापार स्तरीय रणनीतिक ढॉचे का विश्लेषण किन आव्यूहों के द्वारा किया जाता है? संक्षेप में समझाइए।
6. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–
   (अ) बी0सी0जी0आव्यूह
   (ब) जी0ई0 नाइन सैल मेट्रिक्स
   (स) हॉफर का जीवन चक्र आव्यूह
   (द) वृहद रणनीतिक आव्यूह
   (ई) अनुभव वक्र विश्लेषण

10.10 सन्दर्भ पुस्तकें

1 सुब्बाराव पी0, बिजनेस पालिसी एण्ड स्ट्रेटेजिक मैनेजमेन्ट, हिमालया पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई (2014) पृष्ठ–295 (अनूदित)

2 एलेन एम0जी0, 'डाइग्रामिंग जीईज् प्लानिंग फार ह्वट्स वॉट' इन 'कार्पोरेट प्लानिंग– टेक्नीक एण्ड एप्लीकेशन्स' आर0जे0एलिओ एण्ड एम0डब्ल्यू0 पेनिंगटन, न्यूयॉर्क, एमाकाम,1979 (अनूदित)

3 मिलर ए0 एवं जी0जी0 डैस, स्ट्रेटेजिक मैनेजमेन्ट (न्यूयार्क मैकग्रा हिल, सेकेन्ड एडीशन, 1996) पृष्ठ 71

4 पोर्टर एम0ई0, कम्पटीटिव स्ट्रेटेजी– टेक्नीक फॉर एनालाइजिंग इण्डस्ट्रीज एण्ड कम्पटीटर्स, न्यूयार्कः द फ्री प्रेस, 1980. पृष्ठ–47

5. Business Policy and Strategic Management, P. Subba Rao, Himalaya Publishing House, Mumbai.

6. Business Policy and Strategic Management, Azhar Kazmi, Tata McGraw- Hill Publishing Company Limited, New Delhi.

7. Business Policy and Strategic Management, GV Satya Sekhar, I K International Publishing House, New Delhi.

8. Business Policy and Strategic Management, Francis Cherunilam, Himalaya Publishing House, Mumbai.

इकाई–11 रणनीतिक क्रियान्वयन

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना
11.2 रणनीति प्रतिपादन तथा क्रियान्वयन में अन्तर्सम्बन्ध
11.3 रणनीतिक क्रियान्वयन के तत्व
11.4 रणनीति क्रियान्वयन के चरण
    11.4.1 परियोजना क्रियान्वयन
    11.4.2 कार्यविधिक क्रियान्वयन
    11.4.3 संसाधन आबंटन
    11.4.4 संरचनात्मक क्रियान्वयन
    11.4.5 व्यवहारात्मक क्रियान्वयन
11.5 सारांश
11.6 शब्दावली
11.7 बोध प्रश्न
11.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
11.9 स्वपरख प्रश्न
11.11 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः

- रणनीति क्रियान्वयन का परिचय, तत्व एवं प्राविधि की व्याख्या कर सकें।
- संरचनात्मक क्रियान्वयन का वर्णन कर सकें।
- रणनीतिक दृष्टि से संरचना के प्रकार की व्याख्या कर सकें।
- संगठनात्मक प्रारुप एवं परिवर्तन का वर्णन कर सकें।
- संगठनात्मक पद्धतियों का मूल्यांकन कर सकें।
- व्यवहारात्मक क्रियान्वयन– नेतृत्व, मूल्य, सामाजिक दायित्वों की व्याख्या कर सकें।

11.1 प्रस्तावना

इकाई–10 में रणनीतिक निर्णयन की प्रक्रिया तथा निगम स्तरीय व व्यवसाय स्तरीय रणनीतिक विश्लेषण के सम्बन्ध में चर्चा की गई है। इसके बाद संगठन को सुविचारित एवं चयनित रणनीति के क्रियान्वयन की चुनौती का सामना करना होता है। रणनीति को तैयार करना जितना महत्वपूर्ण है उतना ही महत्वपूर्ण है उसे क्रियान्वित करना। रणनीति स्वयं कुछ नहीं करती। यह तो कागज पर लिखी कुछ लाइनों से अधिक कुछ नहीं। महत्वपूर्ण है नीति का क्रियान्वयन। उचित क्रियान्वयन के अभाव में अच्छी नीति भी प्रभावहीन हो जाती है। के0आर0एण्ड्रयूज के अनुसार– वास्तविक जीवन में प्रतिपादन तथा क्रियान्वयन प्रक्रिया परस्पर गुँथे हुए शब्द हैं।[1] जो नीति क्रियान्वयन के योग्य न हो, उसके होने का कुछ अर्थ नहीं है।

क्रियान्वयन की दृष्टि से रणनीति में विभिन्न योजनाएं होती हैं जिनमें अनेक कार्यक्रम होते हैं। प्रत्येक कार्यक्रम में अनेक परियोजनाएं हो सकती हैं। परियोजनाएं कोष अथवा वित्त से जुड़ी होती हैं जो कि बजट से प्राप्त होता है। इसप्रकार किसी संगठन में योजना, परियोजना, कार्यक्रम तथा रणनीति का क्रियान्वयन करते समय नीति, नियम, प्रावधान, प्रक्रिया आदि का प्रयोग किया जाता है।

11.2 रणनीति प्रतिपादन तथा क्रियान्वयन में अन्तर्सम्बन्ध

रणनीति के प्रतिपादन तथा क्रियान्वयन में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। इन्हें एक दूसरे का पूरक माना जाता है। प्रायः प्रतिपादन तथा क्रियान्वयन के सम्बन्ध की व्याख्या दो रुपों में की जाती है–

आग्रवर्ती कड़ी (फारवर्ड लिंकेजेस)– संगठन की रणनीति का प्रतिपादन इस आधार पर किया जाता है कि वह संगठन के भविष्य का आधार तय करेगी। इसके लिए संगठनात्मक मूल्यांकन तथा वातावरणीय परीक्षण किया जाता है। यह ध्यान रखा जाता है कि रणनीति व्यवहार्य हो तथा भविष्य के परिवर्तनों को सहन करने में समर्थ हो। रणनीति को लागू करने के लिए उचित नेतृत्व क्षमता का विकास किया जाना भी आवश्यक है जो कि रणनीति का उसकी मूल भावना के अनुरुप संचालन कर सके। रणनीति बनाते समय उसके संचालन सम्बन्धी समस्त पहलुओं पर विचार किया जाना अनिवार्य है।

पूर्ववर्ती कड़ी (बैकवर्ड लिंकेजेस)– जिसप्रकार रणनीति का क्रियान्वयन उसके प्रतिपादन पर निर्भर होता है उसी प्रकार रणनीति का प्रतिपादन भी उसके क्रियान्वयन पर आधारित होता है। कोई भी संगठन जब रणनीति के निर्धारण के लिए विकल्पों पर विचार कर रहा होता है तो एक महत्वपूर्ण पहलू उसकी क्रियान्वयनशीलता भी होता है। यह जानने का प्रयास किया जाता है कि विगत काल में किस प्रकार की रणनीतियों को संगठन के उच्च प्रबन्धन द्वारा स्वीकृति प्रदान की गई है अथवा संगठन के लक्ष्य, उद्देश्य तथा संदृष्टि किस प्रकार की रणनीति स्वीकार करने को तैयार हैं। साथ ही संगठन के संसाधन किस प्रकार की रणनीति को स्वीकार कर सकते हैं।

रणनीति का प्रतिपादन एक प्रबन्धकीय कार्य है जिसे ऑकड़ों के विश्लेषण व अनुभवों के आधार पर सम्पन्न किया जाता है, जबकि उसका क्रियान्वयन एक प्रशासनिक कार्य है जिसे प्रक्रियात्मक कुशलता तथा व्यवहारात्मक दक्षता से सिद्ध किया जाता है।

11.3 रणनीतिक क्रियान्वयन के तत्व

जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है कि किसी संगठन में रणनीति का क्रियान्वयन करते समय नीति, नियम, प्रावधान, प्रक्रिया आदि का प्रयोग किया जाता है। ये तत्व रणनीति को सफलतापूर्वक क्रियान्वित करने में सहयोग करते हैं–

योजना– रणनीति के क्रियान्वयन का प्रथम चरण योजना के रुप में प्रदर्शित होता है। उदाहरणार्थ– यदि संगठन की रणनीति विस्तार करने की है तो उसे नये उत्पादों को बाजार में लाने की योजना बनानी होगी किन्तु यदि वह स्थिरता की रणनीति अपनाता है तो उसे वर्तमान उत्पादों में ही सुधार लाने होंगे तथा उनके उपयोग में सुधार लाने

व मॉग बढाने की योजना पर अमल करना होगा। एक योजना में अनेक कार्यक्रम सम्मिलित हो सकते हैं।

कार्यक्रम– किसी योजना को सफल बनाने के लिए अनेक कोणों से मंथन करते हुए कार्यक्रम तैयार किये जाते हैं। इसमें कम्पनी के लक्ष्य, नीति, नियम, प्रक्रिया आदि को सम्मिलित करते हुए बजट की व्यवस्था की जाती है। यह एक विस्तृत एवं दीर्घकालीन विषय है जिसके अन्तर्गत छोटी परियोजनाएं सम्मिलित हो सकती हैं। किसी ऑटोमोबाइल कम्पनी में शोध एवं विकास को एक विस्तृत कार्यक्रम के रुप में अपनाया जा सकता है जिसमें नए मॉडल के विकास, पुराने मॉडल में क्षमता विकास, सुविधा तथा रखरखाव आदि के क्षेत्र में अनेक परियोजनाएं इसका अंग हो सकती हैं।

परियोजना– परियोजना एक विशिष्ट कार्य पर किया जाने वाला समेकित प्रयास होता है जिसके अन्तर्गत सम्बन्धित गतिविधियों के नियमित संचालन की व्यवस्था की जाती है। उपरोक्त उदाहरण में कम्पनी किसी नए मॉडल के विकास के लिए एक परियोजना बना सकती है। इसीप्रकार, कम्पनी अपने नए प्लान्ट को स्थापित करने के लिए एक टीम को प्रतिनियुक्त कर सकती है। परियोजना में प्रायः एक निश्चित टीम एक निश्चित लक्ष्य के साथ समयबद्ध रुप से कार्य करती है।

11.4 रणनीति क्रियान्वयन के चरण

रणनीति का क्रियान्वयन उसके निर्माण से भी अधिक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। सही क्रियान्वयन के अभाव में अच्छी से अच्छी योजना भी असफल हो सकती है। अतः रणनीति को व्यवस्थित रुप से लागू करने के लिए निर्धारित प्रयास एक विशिष्ट क्रम में करने होते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि ये सभी कार्य इसी क्रम से एक के बाद एक किये जायें। इसमें से कुछ कार्य एक साथ भी किये जा सकते हैं तथा संगठन की आवश्यकता के अनुरुप इनका संयोजन व स्वरुप बदला भी जा सकता है। रणनीति क्रियान्वयन के विभिन्न चरण निम्नलिखित हैं–

1. परियोजना क्रियान्वयन
2. कार्यविधिक क्रियान्वयन
3. संसाधन आबंटन
4. संरचनात्मक क्रियान्वयन
5. व्यवहारात्मक क्रियान्वयन
6. कार्यात्मक एवं परिचालनात्मक क्रियान्वयन

इस इकाई में प्रथम पॉच चरणों की व्याख्या की गई है जबकि कार्यात्मक एवं परिचालनात्मक क्रियान्वयन को इकाई–12 में वर्णित किया गया है।

11.4.1 परियोजना क्रियान्वयन (प्रोजेक्ट इम्प्लीमेन्टेशन)

प्रोजेक्ट मैनेजमेन्ट इन्स्टीट्यूट, अमेरिका के अनुसार– परियोजना एकल–संधानित, समय–सीमित, लक्ष्य–निर्देशित वृहद उपक्रम होती है जिसमें विभिन्न कौशल एवं संसाधनों की आवश्यकता होती है।[2] परियोजना के क्रियान्वयन में निम्नलिखित चरण महत्वपूर्ण हैं–

(अ) **अवधारण चरण**– इस चरण में टीम द्वारा एक विचार विकसित किया जाता है। इसके लिए विभिन्न विकल्पों का अध्ययन किया जाता है तथा कम्पनी की संदृष्टि,

विचारधारा तथा प्राथमिकताओं के आधार पर उसे धरातल पर अवतरित किया जाने योग्य बनाया जाता है।

(आ) **परिभाषण चरण**– इस चरण में निर्धारित समस्या के परिवृत्त को परिभाषित करते हुए परियोजना के सम्बन्धित पहलुओं की जॉच की जाती है जिसमें तकनीक, वित्त, अर्थ, विपणन, पारिस्थितिकी आदि से जुड़े विभिन्न पक्षों का परीक्षण किया जाना महत्वपूर्ण है। परियोजना की तकनीकी व्यवहार्यता तथा आर्थिक लाभप्रदता सुनिश्चित होने पर ही परियोजना का कार्य आगे बढ़ाया जाता है।

(इ) **नियोजन एवं संगठन चरण**– परिभाषण के बाद सम्बन्धित संसाधनों को एकत्रित करने तथा अवस्थापन सुविधाओं का विकास करने का कार्य किया जाता है। इस चरण में मानव संसाधन (प्रबन्धकीय, प्रशासनिक, तकनीकी अधिकारी व कर्मचारीगण), भौतिक संसाधन (भूमि, भवन, मशीन, उपकरण आदि), बौद्धिक संसाधन (तकनीकी ज्ञान, पेटेन्ट, विधिक अधिकार आदि) की व्यवस्था की जाती है।

(ई) **क्रियान्वयन चरण**– इस चरण में पिछले चरण में अर्जित तथा सृजित संसाधनों को विन्यासित करके कम्पनी के लक्ष्यों के अनुरुप कार्य योग्य बनाया जाता है जिससे कि अपेक्षित सफलता प्राप्त की जा सके। भवन की व्यवस्था अथवा निर्माण, सामग्री के क्रय हेतु आदेश, कर्मचारियों की भर्ती की प्रक्रिया अथवा तकनीकी प्रबन्धन का कार्य करने के साथ ही लक्ष्यानुरुप कार्य सम्पन्न कर लिया जाता है।

(उ) **स्वच्छीकरण चरण**– परियोजना के लक्ष्य पूर्ण होने के बाद अन्तिम चरण उक्त योजना को उचित प्रकार बन्द करना भी है। स्वच्छीकरण चरण में स्थापन के अवशेष अस्थाई संसाधनों को निस्तारित किया जाता है तथा कार्य योग्य परियोजना को संचालन हेतु सम्बन्धित टीम को सौंप दिया जाता है।

11.4.2 कार्यविधिक क्रियान्वयन (प्रोसीजरल इम्प्लीमेंटेशन)–

किसी इकाई की स्थापना की परियोजना पूर्ण होने का अर्थ है कि वह इकाई अब अपना कार्य प्रारम्भ करने की स्थिति में है। अब वास्तविक उत्पादन करने के पूर्व समस्त औपचारिकताओं को पूर्ण करना होता है। प्रमुख औपचारिकताएं हैं–

(अ) **कम्पनी स्थापना सम्बन्धी**– कम्पनी एक विधि द्वारा निर्मित कृत्रिम व्यक्ति होती है। इसकी अधिकारिक स्थापना के लिए कम्पनी अधिनियम 1956 के प्रावधानों का पालन करते हुए विविध औपचारिकताओं को पूर्ण करना होता है। इस सम्बन्ध में प्रवर्तकों द्वारा पार्षद सीमा नियम (एम0ओ0ए0), पार्षद अन्तर्नियम (ऐ0ऐ0), प्रविवरण तथा अन्य प्रपत्रों को तैयार करना होता है। कम्पनी के पंजीकरण की आवश्यक कार्यवाही करनी होती है तथा पूॅजी की व्यवस्था करने हेतु अंशों के निर्गमन किया जाता है तथा लोक कम्पनी की दशा में व्यापार प्रारम्भ करने का प्रमाण पत्र भी प्राप्त करना होता है।

(आ) **लाइसेंस सम्बन्धी**– विभिन्न प्रकार की कम्पनियों को प्रारम्भ करने के लिए नियमानुसार लाइसेन्स प्राप्त करना होता है। यद्यपि भारत में सन् 1991 में अपनायी गई उदारीकरण नीति के बाद लाइसेंस की आवश्यकता अत्यन्त कम हो गई है तथापि विभिन्न विधिक संस्थाओं की अनुमति यदि आवश्यक हो, प्राप्त की जानी चाहिए।

(इ) **सेबी सम्बन्धी**– भारतीय प्रतिभूति विनिमय बोर्ड (सेबी) अधिनियम 1972 के द्वारा कम्पनियों के पूॅजी सम्बन्धी व्यवहार को नियमित एवं नियंत्रित किया जाता है। इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य निवेशकों के हितों की सुरक्षा तथा प्रतिभूति बाजार को प्रोत्साहित एवं नियमित व नियन्त्रित करना है। समस्त पंजीकृत कम्पनियों को इसके प्रावधानों का पालन करना अनिवार्य होता है।

(ई) **प्रतिस्पर्धा सम्बन्धी**– एकाधिकार तथा प्रतिबन्धात्मक व्यवहार अधिनियम (एम0आर0टी0पी0) 1969 की व्यवस्थाओं के द्वारा व्यापार को अनुचित प्रतिस्पर्धा अथवा बाजार को कब्जाने की दृष्टि से किये गये अनुचित प्रयासों से बचाने के प्रयास किये गये हैं। इसके अतिरिक्त प्रतियोगिता अधिनियम 2002 के द्वारा भी अनेक व्यवस्थाओं को लागू किया गया है जिससे कि गलाकाट प्रतियोगिता के कारण व्यापार का विकास अवरुद्ध न हो तथा सभी व्यापारी स्वस्थ प्रतिस्पर्धा के द्वारा विकास कर सकें। नव स्थापित कम्पनी के द्वारा इन अधिनियमों की व्यवस्थाओं का अनुपालन सुनिश्चित करना होता है।

(उ) **विदेशी व्यापार एवं विदेशी विनिमय सम्बन्धी**– जो कम्पनियॉ विदेश व्यापार में प्रवेश करना चाहती हैं अथवा विदेशी सहयोग से कार्य करना चाहती हैं उन्हें विदेशी व्यापार सम्बन्धी औपचारिकताओं को भी पूर्ण करना होता है। विदेशी सहयोगियों के साथ निवेश करने की दशा में तत्सम्बन्धी नियमों का पालन करना होता है। विदेशी फर्मों के द्वारा निवेश में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफ0डी0आई0) अथवा विदेशी संस्थागत निवेश (एफ0आई0आई0) से सम्बन्धित नियमों का अनुपालन करना आवश्यक है।

विदेशी मुद्रा के देशी कम्पनियों में निवेश के लिए विदेशी विनिमय नियमन अधिनियम (फेरा), 1973 की व्यवस्थाओं का अनुपालन किया जाता था जिसे सन् 2000 में विदेशी विनिमय प्रबन्धन अधिनियम (फेमा) में परिवर्तित किया गया। इसकी व्यवस्थाओं का पालन किया जाना होता है। इसके अतिरिक्त यदि कम्पनी के व्यापार में आयात व निर्यात का कार्य भी किया जाना है तो देश की निर्यात–आयात नीति (एक्जिम पॉलिसी) तथा एफ0टी0डी0आर0एक्ट,1992 के प्रावधानों का अनुपालन किया जाना चाहिए।

(ऊ) **पेटेन्ट व ट्रेडमार्क सम्बन्धी**– कम्पनी को अपने उत्पादन को प्रारम्भ करने से पूर्व उत्पाद के डिजायन आदि के पंजीकरण का कार्य पूर्ण करना होता है। यदि उत्पाद का डिजायन स्वयं कम्पनी द्वारा विकसित किया गया है तो उसे संरक्षित करना होता है और यदि किसी अन्य का डिजायन प्राप्त किया गया है तो इसके लिए आवश्यक अनुबन्ध किया जाना चाहिए अन्यथा विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू0टी0ओ0) के ट्रिप्स प्रावधानों के उल्लंघन के कारण कठिनाई आ सकती है। बौद्धिक सम्पदा के अन्तर्गत कॉपीराइट, पेटेन्ट, ट्रेडमार्क आदि के सम्बन्ध में सम्बन्धित कानूनों का पालन किया जाना अनिवार्य होता है।

(ए) **श्रम कानून सम्बन्धी**– व्यापार में मानव संसाधन की प्राप्ति, निर्देशन व नियन्त्रण के सम्बन्ध में अनेक श्रम सम्बन्धी कानूनी प्रावधानों का पालन किया जाना अनिवार्य होता है। भारतीय उद्योग अधिनियम, न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, औद्योगिक प्रतिवाद अधिनियम जैसे श्रम कानूनों का पालन करते हुए कामगारों की भर्ती करना,

उनके वेतन व मानदेय की व्यवस्था करना तथा न्यूनतम देयकों व कार्य की दशाओं के सम्बन्ध में अधिनियमों व सरकारी आदेशों के पालन की व्यवस्था किया जाना सुनिश्चित करना होता है।

(ऐ) **पर्यावरण सम्बन्धी–** पर्यावरण एक नैतिक विषय है तथा इसका ध्यान रखा जाना चाहिए। पिछले दशक से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी पर्यावरण सम्बन्धी चिन्ताएं बढ़ रही हैं। विविध कानूनों के द्वारा पर्यावरण को सुरक्षित करने के प्रयास किये जा रहे हैं। कम्पनी को सम्बन्धित कानूनों का पालन करना चाहिए। वन (संरक्षण) अधिनियम 1980, वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम 1972, वायु (रोकथाम एवं प्रदूषण नियन्त्रण) अधिनियम 1981, जल (रोकथाम एवं प्रदूषण नियन्त्रण) अधिनियम 1974 तथा अन्य अनेक नियमों के अनुपालन द्वारा पर्यावरण संरक्षण, प्रदूषण नियन्त्रण तथा संपोषणीय विकास को सुनिश्चित किया जाना चाहिए। सम्बन्धित नियमों व कानूनों के प्रावधानानुसार आवश्यक अनुमति तथा तदनुसार कार्यपूर्ति की जानी चाहिए।

(ओ) **उपभोक्ता संरक्षण सम्बन्धी–** उपभोक्ता किसी व्यापारिक संगठन का सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति होता है। उसके हितों को ध्यान में रखना व्यापार के हित में है तथा ऐसा करना व्यापार के लिए अनिवार्य भी है। उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के प्रावधानों का अनुपालन करते हुए यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि उपभोक्ताओं को उचित सूचना दी जा रही है तथा उनको उचित सामग्री उपलब्ध कराई जा रही है। साथ ही उनकी समस्याओं को सुना भी जा रहा है। उपभोक्ताओं को उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत अनेक अधिकार प्रदान किये गये हैं। कम्पनी का गठन करते समय यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि कम्पनी उपभोक्ताओं के हित संरक्षित रखने के लिए समस्त प्रयास कर रही है।

(औ) **प्रोत्साहन, रियायतों व सुविधाओं सम्बन्धी–** किसी परियोजना के निर्माण के समय जिन तथ्यों को ध्यान में रखा जाता है उनमें स्थानीय स्तर पर उपलब्ध सुविधाओं तथा सरकार की ओर से प्रदत्त रियायतों व प्रोत्साहनों का निर्धारण करना भी है। क्रियान्वयन के समय यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि उनका लाभ संगठन के हित में किस प्रकार लिया जायेगा? उक्त लाभों की प्राप्ति के लिए जिन शर्तों का अनुपालन करना अनिवार्य हो, उनको सुनिश्चित किया जाये तथा अनुपालन के कारण यदि कोई विपरीत असर पड़ने की संभावना हो तो उसका मंथन करके आवश्यक मार्ग तय किया जाये। मानव संसाधन की प्राप्ति के लिए सरकारी संस्थाओं का उपयोग, स्थानीय भर्ती आदि से लेकर विक्रय के लिए डी0जी0एस0डी0 के लिए अनुबन्ध तक अनेक कार्य सरकारी सुविधाओं का लाभ लेने के लिए किये जाते हैं। समाचार–पत्र व पत्रिकाओं के मामले में कम्पनी को सरकारी कोटे से कागज अथवा सरकारी विज्ञापन की भी पात्रता शर्तें होती हैं जिनका पालन किया जाना आवश्यक होता है।

11.4.3 संसाधन आबंटन (रिसोर्स एलोकेशन)–

किसी परियोजना के क्रियान्वयन में संसाधनों की प्राप्ति सबसे बड़ी चुनौती होती है। कम्पनी को अपने सफल संचालन के लिए निम्नलिखित संसाधनों की आवश्यकता होती है–

क. भौतिक संसाधन (भूमि, भवन, मशीन, फर्नीचर, वाहन आदि)

ख. मानव संसाधन, (प्रबन्धक, विशेषज्ञ, तकनीकी स्टाफ, प्रशासनिक स्टाफ), तथा
ग. वित्तीय संसाधन (अंश पूँजी, ऋण, वित्तीय संस्थाओं से ऋण)

भौतिक संसाधन शरीर का आकृति देने वाली अस्थियों के समान होते हैं। मानव संसाधन जहॉ कम्पनी के मस्तिष्क व हाथ–पैर हैं तो वित्तीय संसाधन उसकी धमनियों व सिराओं में बहने वाला रक्त है। किसी भी कार्य–योजना को आकार देने तथा सफल बनाने में इन संसाधनों को ही श्रेय मिलता है। धन के बिना कोई भी योजना धरातल पर उतारी नहीं जा सकती और मानव की सहभागिता के बिना इसके अपेक्षित परिणाम प्राप्त करना सम्भव नहीं है। संसाधनों की प्राप्ति तथा उनके आबंटन की प्रक्रिया में अत्यधिक सजगता तथा विवेकशीलता की आवश्यकता होती है। कम्पनी के भौतिक एवं मानव संसाधनों के सम्बन्ध में संचालनात्मक एवं कार्यात्मक रणनीति के अन्तर्गत वर्णन किया गया है, अतः प्रस्तुत इकाई को वित्तीय संसाधनों पर ही केन्द्रित किया गया है।

1. वित्त की प्राप्ति–

वित्तीय संसाधनों की व्यवस्था में अनेक सावधानियों का पालन करना पड़ता है। वस्तुतः प्रत्येक वित्त की एक निर्धारित लागत होती है तथा उसका एक भार अथवा जोखिम भी होता है। कम्पनी को यह निर्धारित करना होता है कि–

- वास्तव में व्यापार को कितने वित्त की आवश्यकता है?
- वित्त की आवश्यकता कितने समय के लिए है?
- वित्त की आवश्यकता स्थायी है अथवा अस्थायी? अर्थात् यह स्थायी रुप से लिया जाना है या वापसी योग्य है?
- वित्त के निवेश पर होने वाला लाभ इसकी लागत से अधिक होगा अथवा नहीं?
- निवेश जन्य जोखिम क्या होंगे?

उपरोक्त प्रश्नों के आधार पर यह तय किया जाता है कि वित्त की व्यवस्था आन्तरिक श्रोत से की जाय अथवा वाह्य श्रोत से। आन्तरिक श्रोत का अर्थ है कि कम्पनी अंशधारकों से पूर्वाधिकारी अथवा समता अंशों की मदद से वित्त जुटा ले अथवा अपनी धारित पूँजी, ह्रास निधि अथवा चालू सम्पत्तियों से वित्त की व्यवस्था करे। वाह्य श्रोतों में अथवा ऋणपत्रों या वित्तीय संस्थाओं से प्राप्त ऋणों की मदद ली जाती है। उपरोक्त सूत्रों से दीर्घकालीन वित्त की प्राप्ति होती है जबकि अल्पकालीन वित्त के रुप में कार्यशील पूँजी के लिए अधिविकर्ष, साख सीमा अथवा अल्पकालीन ऋण की व्यवस्था की जाती है। ऋण पूँजी से प्राप्त वित्त की लागत कम होती है किन्तु उसमें जोखिम अधिक होता है क्योंकि कम्पनी को लाभ न होने पर (अर्थात् हानि होने पर) भी ऋण पर ब्याज का भुगतान करना पड़ता है जो कि कम्पनी की आर्थिक सेहत के लिए एक भार सिद्ध होता है। अंश पूँजी में यह भार नहीं होता है क्योंकि अंशधारकों को लाभांश तभी दिया जाता है जबकि कम्पनी को लाभ होता है किन्तु अंश पूँजी से प्राप्त वित्त की लागत अधिक होती है। अतः कम्पनी को एक ऐसा सम्मिश्रण बनाना होता है जिसमें पर्याप्त वित्त न्यूनतम लागत तथा न्यूनतम जोखिम

पर प्राप्त हो जाये। वित्त की व्यवस्था करने समय मुख्य रुप से यह सुनिश्चित करना होता है कि सही मात्रा में वित्त की आपूर्ति सही समय पर हो सके।

वित्त के श्रोत

आन्तरिक श्रोत	वाह्य श्रोत	अल्पकालीन श्रोत	दीर्घकालीन श्रोत
अंश पूँजी	ऋण पत्र	साख सीमा	अंश पत्र
धारित पूँजी	वित्तीय संस्थाओं से ऋण	अल्पकालीन ऋण	ऋण पत्र
ह्रास निधि		बैंक अधिविकर्ष	दीर्घकालीन ऋण
चालू सम्पत्ति			
चालू लाभ			

ऋण पूँजी प्रदान करने वाली संस्थाओं में बैंकों के अतिरिक्त केन्द्र स्तर की संस्थाओं यथा— आई0डी0बी0आई0, सिडबी, आई0एफ0सी0आई0, यू0टी0आई0 आदि का महत्वपूर्ण स्थान है। राज्य स्तर पर राज्य वित्त निगम (एस0एफ0सी0) तथा राज्य वित्त विकास निगम (एस0एफ0डी0सी0) वित्त प्रबन्धन में योगदान देते हैं।

2. **वित्त का आबंटन—**

वित्तीय संसाधनों की प्राप्ति के बाद उनके उचित स्थान पर निवेशन की आवश्यकता होती है। इसके लिए सामान्यतः तीन धारणाओं का पालन किया जाता है— ऊपर से नीचे का क्रम जिसमें सर्वोच्च अधिकारी अपने अधीनस्थों के लिए वित्त का आबंटन करते हैं, नीचे से ऊपर का क्रम जिसमें परियोजना स्तर से वित्त का अनुमान लगाते हुए कम्पनी की वित्तीय आवश्यकता का पता लगाया जाता है तथा मिश्रित धारणा जिसमें विभिन्न स्तरों पर रणनीतिक बजटिंग द्वारा वित्त का आबंटन किया जाता है।

वित्त आबंटन के साधन—

वित्त की आवश्यकता की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रकार के सूत्रों द्वारा प्रबन्धन के प्रयास कम्पनी के द्वारा किये जाते हैं। यह सूत्र किसी कम्पनी में उसकी विविध वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इसप्रकार व्यवस्था करते हैं कि समस्त परियोजनाओं को ससमय व सुनिश्चित वित्त समुचित मात्रा में प्राप्त हो सके तथा उसकी लागत भी प्राप्त उपयोगिता की तुलना में पर्याप्त कम हो। इसके लिए अनेक रणनीतिक उपायों को अपनाया जा सकता है। पूँजी बजटिंग के द्वारा आवश्यकताओं को महत्व के क्रम में विन्यासित करके उच्च प्रबन्धन द्वारा वित्त का आबंटन किया जाता है। पे बैक पीरियड, डिस्काउन्टेड पे बैक पीरियड आदि का भी प्रयोग किया जाता है। जीरो बेस बजटिंग में बिना किसी पूर्वाग्रह अथवा पिछले अनुभवों को अभिलेखित किये हुए नये सिरे से वास्तविक आवश्यकताओं के आधार पर वित्त का

आबंटना किया जाता है। उत्पाद जीवन चक्र (प्रोडक्ट लाइफ साइकिल) आधारित बजटिंग में उत्पाद की जीवन चक्र अवस्था के आधार पर वित्त का आबंटन किया जाता है। उत्पाद को प्रारम्भिक अवस्थाओं (परिचय तथा संवृद्धि) में अधिक संसाधनों की आवश्यकता होती है जबकि संतृप्ति की अवस्था में वह लाभ प्राप्त कर कम्पनी को समृद्ध करता है। बी0सी0जी0 मेट्रिक्स के आधार पर धन का आबंटन करने में प्रश्न चिन्ह व कुत्ते की अवस्था में अधिक धन की आवश्यकता होती है। दुधारु गाय अवस्था में कम्पनी लाभों का उपयोग अन्य नई परियोजना के लिए कर सकती है। इसके अतिरिक्त भी अन्य अनेकों परम्परागत तथा वैज्ञानिक विधियॉ हैं जिनका उपयोग वित्त आबंटन के लिए किया जा सकता है।

<u>वित्त आबंटन को प्रभावित करने वाले तत्व</u>–

संसाधन सीमित होते हैं तथा उन्हें विनियोजित करने के लिए कम्पनी की विभिन्न वैकल्पिक योजनाएं होती हैं। उच्च प्रबन्धन को यह निर्णय करना होता है कि किन योजनाओं को प्राथमिकता प्रदान की जाय। विभिन्न परियोजनाओं तथा प्रक्रियाओं के लिए वित्त का आबंटन करने के लिए कम्पनी कुछ विशिष्ट मान्यताओं तथा सिद्धान्तों का पालन करती है। किसी कम्पनी में वित्त के आबंटन को प्रभावित करने वाले प्रमुख तत्व निम्नलिखित हैं–

- **संदृष्टि एवं लक्ष्य–** कम्पनी के संचालक कोई भी निर्णय अपनी संदृष्टि तथा पूर्व निर्धारित लक्ष्यों के अनुरुप लेते हैं। वित्तीय आबंटन के सम्बन्ध में भी उन परियोजनाओं को स्वीकृति प्राप्त होने की अधिक आशा होती है जो कि कम्पनी संदृष्टि की मूल भावना के निकट हो।
- **रणनीतिकारों की व्यक्तिगत पसन्द–** किसी कम्पनी में प्रभावशाली रणनीतिकारों के व्यक्तिगत विचार उसके वित्तीय आबंटना को प्रभावित करते हैं। प्रायः देखा गया है कि संचालक मण्डल अथवा अन्य विशिष्ट पदों पर व्यक्तियों के परिवर्तित होने पर कम्पनियों की प्राथमिकताओं में भी परिवर्तन होता है जबकि संगठन के लक्ष्य पूर्ववत ही रहते हैं।
- **बाजार की दशाएं–** बाजार में व्याप्त दशाओं के आधार पर भी कम्पनी को अपने वित्तीय निर्णय लेने पड़ते हैं। यदि बाजार में तेजी व्याप्त है और उत्पाद की पर्याप्त मॉग उपलब्ध है तो कम्पनी अपना उत्पादन अधिक मात्रा में करके लाभ प्राप्त करना चाहती है। ऐसे में उसे वर्तमान उत्पाद के उत्पादन पर ही अधिक निवेश करना चाहिए जबकि मन्दी की दशा में उत्पाद विविधीकरण के द्वारा तथा नये प्रयोगों में वित्त निवेश करना होगा।
- **प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की नीतियॉ–** प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की नीति के आधार पर भी कम्पनी को अपनी नीतियों में परिवर्तन करना पड़ता है। यदि प्रतिस्पर्धी कम्पनी ने अपने उत्पाद की नीतियों में कमी की है तो कम्पनी को भी कटौती करने के लिए विवश होना पड़ता है। ऐसी स्थिति में उसे लागत तथा विपणन की नीतियों में परिवर्तन करना पड़ता है। वित्त का आबंटन इन्हीं रणनीतिक निर्णयों के अधीन किया जाता है।

- **सरकारी नीतियॉ–** कभी–कभी सरकारी नीतियों अथवा कर की दरों में परिवर्तन होने से कम्पनी को अपनी नीतियों में तदनुसार परिवर्तन करना पड़ता है। अचानक होने वाले परिवर्तनों का सामना करने के लिए कम्पनी को उक्त क्षेत्र में वित्त का आबंटन करना पड़ता है जिससे पूर्व नियोजित अन्य कार्यों के लिए वित्त में कटौती करनी पड़ती है।
- **आन्तरिक दबाव–** कम्पनी के संचालक, अंशधारक, कर्मचारी आदि किसी विशेष मॉग को लेकर दबाव बनाते हैं। कम्पनी को स्थिति नियंत्रित करने के लिए वित्त का आकस्मिक आबंटन करना पड़ सकता है।
- **वाह्य दबाव–** कम्पनी के कच्चे माल के आपूर्तिदाता अपने मूल्य अथवा शर्तों में बदलाव कर देते हैं, ग्राहक अपनी पसन्द में परिवर्तन करते हैं, वित्त प्रदाता संस्थाओं की नीतियों में परिवर्तन होता है अथवा ऋणदाताओं, ट्रांसपोर्टरों, बीमादाताओं, सहयोगी संगठनों आदि की कोई विशिष्ट मॉग होती है जिसको पूर्ण करने अथवा बदली हुई परिस्थितियों का लाभ उठाने के लिए कम्पनी को अपनी वित्त आबंटन नीति में बदलाव करना पड़ता है। अनेक बार सामाजिक संस्थाओं के दबाव में भी कम्पनी को अपनी वित्त आबंटन नीति को परिवर्तित करना पड़ता है।

<u>वित्त आबंटन की कठिनाइयॉ</u>–

वित्त किसी व्यवसाय के लिए प्राणवायु के समान होता है। इसका नियोजन, नियमन व नियंत्रण अत्यन्त कठिन कार्य है। निम्नलिखित कठिनाइयॉ वित्त आबंटन में सामने आती हैं–

- **संसाधनों की सीमितता–** किसी कम्पनी को अनेक कार्यों के लिए वित्त की आवश्यकता होती है किन्तु वित्त की उपलब्धता की अपनी एक सीमा होती है। वित्त की व्यवस्था करना तथा उसकी लागत का भुगतान करना कठिन कार्य होता है। सीमित संसाधनों से असीमित आवश्यकताओं की पूर्ति एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। कम्पनी को अपनी आवश्यकताओं का क्रम निर्धारित करना होता है, बजट में कटौती करनी पड़ती है तथा आकस्मिकताओं के लिए प्रावधान करना पड़ता है।
- **आन्तरिक प्रतिस्पर्धा–** विभागों के मध्य पारस्परिक प्रतिस्पर्धा के कारण विभागीय अधिकारियों द्वारा अपने विभाग की आवश्यकताओं को बढ़ा–चढा कर बताया जाता है तथा उसकी अनिवार्यता को सिद्ध करने का प्रयास किया जाता है जिसके कारण वित्तीय प्रबन्धकों के ऊपर दबाव बढ़ जाता है।
- **आकस्मिकताएं–** परिस्थितियों में अचानक आने वाले परिवर्तनों के कारण वित्त के आबंटन में आकस्मिक परिवर्तन करने पड़ते हैं। जिन आवश्यकताओं के लिए बजट में उस वर्ष प्रावधान किया जाता है, उन्हें आकस्मिक मद में वित्त उपलब्ध कराये जाने के कारण कटौती करनी पड़ती है। यह आकस्मिकता व्यवसाय के रुख में परिवर्तन, बाजार में मंदी की स्थिति, सरकारी नियमों या कर की दरों में परिवर्तन आदि के रुप में हो सकते हैं।

- **मानवीय अक्षमताएं–** वित्त एक महत्वपूर्ण संसाधन है तथा सभी अन्य संसाधन इससे ही नियंत्रित होते हैं किन्तु स्वयं वित्त को मानव संसाधन द्वारा नियंत्रित किया जाता है। इसप्रकार वित्त की उपादेयता उसके उपयोगकर्ता की योग्यता तथा कुशलता पर निर्भर होती है। यदि वित्त प्रबन्धक कुशल होंगे तो वित्त का उपयोग सही समय पर तथा सही मात्रा में सर्वोपयुक्त कार्य के लिए करेंगे अन्यथा कुप्रबन्धन के कारण अति वित्तीयन अथवा अल्प वित्तीयन होने से हानि का सामना करना सुनिश्चित है।

11.4.4 संरचनात्मक क्रियान्वयन (स्ट्रक्चरल इम्प्लीमेंटेशन)–

प्रत्येक कम्पनी की अपनी पृथक संगठन संरचना होती है तथा नीतियों के क्रियान्वयन में उनकी संरचना का विशेष योगदान होता है। अतः रणनीतिक क्रियान्वयन का अध्ययन करने से पूर्व कम्पनी की संगठन संरचना का अध्ययन किया जाना आवश्यक है।

संरचना– संरचना का अर्थ है किसी संगठन में कार्य प्रतिपादन हेतु उपलब्ध नीति निर्धारक एवं कार्यकारी ढॉचा। यह एक मार्ग का निर्धारण करती है जिसके माध्यम से समस्त नीतियों का लम्बवत् तथा समानान्तर बहाव तथा अनुपालन सुनिश्चित किया जाता है। यह अधिकारों के विस्तार तथा उत्तरदायित्वों के निर्वाह को परिभाषित करती है। संगठन अपनी संरचना निर्धारित करते समय अपने लक्ष्यों के अनुरुप कार्यों को विभाजित करता है तथा फिर अपने विभागों का गठन करता है। प्रत्येक विभाग के उपविभागों का गठन कर कार्यों व क्रिया प्रणाली को क्रमानुसार विन्यासित किया जाता है। संगठन अपने कार्यों के अनुरुप संगठन संरचना का निर्धारण करता है तथा जैसे–जैसे इसका विस्तार होता है संगठन संरचना में भी तदनुसार परिवर्तन करना अपरिहार्य हो जाता है।

संगठन संरचना निर्धारण की प्रणाली– संरचना के निर्धारण हेतु सामान्यतः निम्नलिखित प्रणाली का प्रयोग किया जाता है–

1. सर्वप्रथम रणनीति के क्रियान्वयन के लिए प्रमुख कार्यों का निर्धारण किया जाता है।
2. विशेष प्रकृति के कार्यों को प्राप्ति योग्य समूहों में विभाजित कर विभाग बनाये जाते हैं।
3. अधिकारों तथा उत्तरदायित्वों का विभाजन किया जाता है।
4. विभाजित उत्तरदायित्वों में मध्य समन्वय स्थापित किया जाता है।
5. कार्यों का मूल्यांकन किया जाता है।
6. विभागों के कार्यों को नियन्त्रित किया जाता है।
7. संगठन के भावी विकास की नीति तैयार की जाती है।

संरचना का क्रमिक विकास– किसी संगठन की संरचना का विकास विभिन्न चरणों में होता है। विद्वानों ने संगठन संरचना विकास के निम्न चार चरण बताये हैं–

प्रथम चरण– प्रारम्भिक अवस्था में सामान्यतः व्यापार का आकार छोटा होता है और इसे एकल स्वामी द्वारा संचालित किया जा सकता है। कार्यों को विभिन्न विभागों में

विभाजित करने की आवश्यकता नहीं होती है। समस्त कार्यों का उत्तरदायित्व एकल अधिकारी पर होता है। छोटे व्यापार तथा नए संगठनों में इस प्रकार की संरचना पाई जाती है।

<u>द्वितीय चरण</u>– इस चरण में संगठन का आकार कुछ बड़ा होता है तथा इसे एक व्यक्ति द्वारा नियन्त्रित नहीं किया जा सकता है। इस अवस्था में सम्पूर्ण व्यापार की क्रियाओं को विभिन्न विभागों में विभाजित किया जाता है। उत्पादन विभाग, विपणन विभाग, मानव संसाधन विभाग, लेखांकन विभाग आदि में संगठन के कार्यों को बॉटा जाता है तथा उन्हें सीमित स्वायत्तता देते हुए कार्य संचालन किया जाता है।

<u>तृतीय चरण</u>– तृतीय चरण में उन संगठनों को सम्मिलित किया जाता है जिनका आकार बड़ा है तथा व्यापार का विस्तार अधिक है। इसके व्यापारिक कार्य विभिन्न स्थानों पर फैले होते हैं जिन्हें एक स्थान से नियन्त्रित करना संभव नहीं है। इस प्रकार के संगठनों की संरचना में क्षेत्रीय कार्यालय बनाकर तथा प्रत्येक क्षेत्र के लिए कार्यक्रम तैयार किये जाते हैं।

<u>चतुर्थ चरण</u>– यह चरण उन व्यापारिक संगठनों की संरचना को प्रदर्शित करता है जिनमें व्यापारिक गतिविधियॉ जटिल रुप में होती हैं। अनेक प्रकार के व्यापार व सेवाओं का संचालन एक ही उद्यम द्वारा किया जाता है। इस प्रकार के उद्यमों में कार्यानुसार विभागों की संरचना की जाती है तथा व्यापार को क्षेत्रानुसार भी संचालित किया जाता है।

उपरोक्त चारों चरण किसी एक संगठन में आवश्यक रुप से होना अनिवार्य नहीं है। कुछ संगठन प्रारम्भ से ही बड़े स्तर पर चलाये जाते हैं तथा उनकी संगठन संरचना भी उसी प्रकार तृतीय अथवा चतुर्थ चरण के अनुरुप होती है।

संरचना के प्रकार– रणनीतिक क्रियान्वयन की दृष्टि से संगठन संरचना को निम्नप्रकार से प्रदर्शित किया जा सकता है–

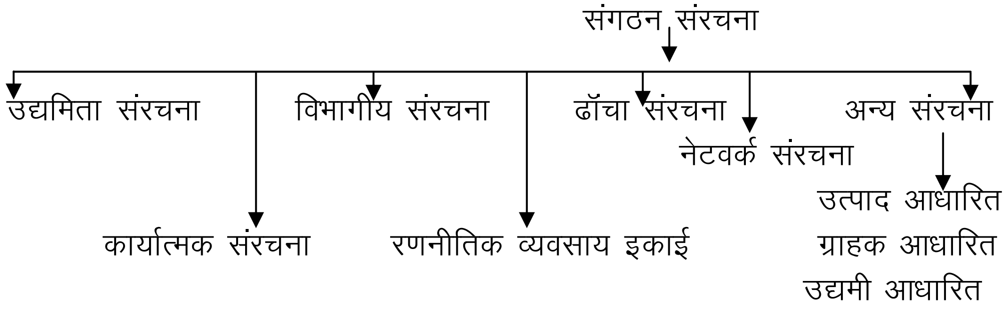

1. **उद्यमिता संरचना**–

इस प्रकार की संगठन संरचना छोटे स्तर की व्यापारिक संस्थाओं में जहॉ सीमित क्षेत्र में व्यापार किया जाता है तथा एकल उत्पाद बनाया जाता है, अपनाई जाती है। इसमें व्यापार का स्वामी स्वयं सम्पूर्ण व्यापार को निर्देशित एवं नियन्त्रित करता है। सभी कर्मचारी सीधे व्यापार के स्वामी से निर्देश प्राप्त करते हैं तथा उसके प्रति उत्तरदायी होते हैं। संरचना के क्रमिक विकास में प्रथम चरण में इस प्रकार की संरचना को वर्णन किया गया है। इसप्रकार की संरचना को निम्न चार्ट द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है–

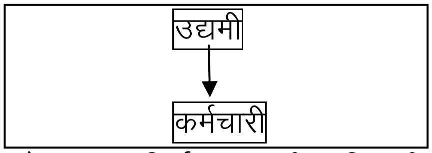

इस प्रकार की संगठन संरचना में समस्त निर्णय एक ही अधिकारी द्वारा लिये जाते हैं अतः समस्याओं का निस्तारण अविलम्ब प्राप्त हो जाता है। इसमें अधिकारों में टकराव अथवा संशय की स्थिति उत्पन्न नहीं होती है। इस प्रकार का संगठन प्रायः अनौपचारिक तथा सरल प्रारुप में कार्य करता है।

यह प्रारुप केवल छोटे संगठनों के लिए ही उपयोगी है तथा व्यापार के विकसित होते ही यह अनुपयोगी सिद्ध हो जाता है।

2. **कार्यात्मक संरचना–**

इस प्रकार की संगठन संरचना में व्यापार का स्वामी प्रमुख कार्यों को विभागों के रुप में विभाजित करता है तथा प्रत्येक विभाग के लिए अधिकारी नियुक्त करता है। इन नियुक्त अधिकारियों के माध्यम से वह व्यापार की समस्त गतिविधियों का संचालन

व नियन्त्रण करता है। इस प्रकार की संगठन संरचना को निम्न चार्ट द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है–

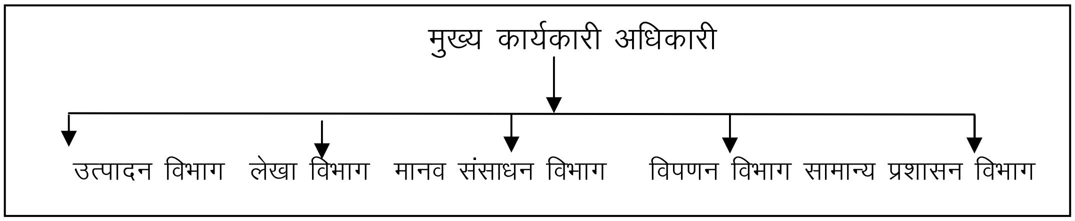

कार्यात्मक संरचना में संगठन अपने व्यापार की आवश्यकतानुसार विभागों का गठन करने को स्वतन्त्र होता है। इन विभागों में विशेषज्ञ प्रबन्धक व कर्मचारी नियुक्त किये जाते हैं जो अपनी विशिष्ट योग्यताओं के आधार पर वैकल्पिक योजनाएं प्रस्तुत करते हैं जिनमें से सर्वश्रेष्ठ का चयन उच्च प्रबन्धन के द्वारा किया जाता है। इस संरचना में संगठन को श्रम विभाजन तथा विशिष्टीकरण के लाभ प्राप्त होते हैं। सामान्य कामकाज तथा निर्णयन विभागीय अधिकारियों द्वारा सम्पन्न कर लिये जाते हैं अतः उच्चाधिकारियों को गम्भीर तथा अधिक महत्वपूर्ण निर्णयों पर ध्यान केन्द्रित करने का अधिक अवसर प्राप्त होता है।

कार्यात्मक संरचना में सबसे बड़ी चुनौती विभिन्न विभागों के मध्य समन्वय स्थापित करने की है। विभागीयकरण के कारण लागतों में वृद्धि होती है। विभागों के मध्य परस्पर स्पर्धा तथा स्वयं को अन्य से अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध करने की दौड़ में उच्चाधिकारियों को गलत सूचना देने तथा व्यापार के सामान्य हितों को हानि पहुँचाने की आशंका रहती है।

3. **विभागीय संरचना–**

विभागीय संगठन संरचना का प्रयोग उन प्रतिष्ठानों में किया जाता है जहॉ एक से अधिक प्रकार के उत्पादों का उत्पादन व विपणन किया जाता है तथा इनका प्रबन्ध, प्रशासन तथा नियन्त्रण पृथक रखा जाता है। साथ ही, इन्हें सम्पूर्ण संगठन में एक इकाई के रुप में रखा जाता है। इसे चार्ट में निम्न रुप से प्रदर्शित किया जा सकता है–

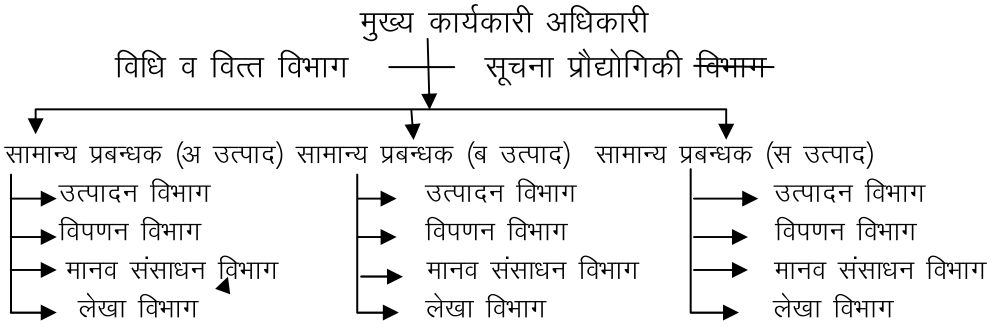

इस संगठन में प्रत्येक उत्पाद के लिए एक अलग सामान्य प्रबन्धक स्तर का अधिकारी नियुक्त करके उसे अधिकार सम्पन्न बनाया जाता है। वह अपने अधीन विभिन्न विभागीय अधिकारी नियुक्त करता है। केवल कुछ अत्यन्त महत्वपूर्ण विभागों, जिन्हें मुख्यालय द्वारा संचालित किया जाता है, के अतिरिक्त अन्य सभी कार्य विभागीय अधिकारियों के माध्यम से सम्पन्न किये जाते हैं। सभी विभागों को अपनी कुशलता प्रदर्शित व निर्णय लेने का अवसर प्राप्त होता है तथा सर्वोच्च प्रबन्धन को केवल रणनीतिक निर्णय ही लेने होते हैं। प्रत्येक उत्पाद के लिए पृथक स्तर पर समस्त विभागों के संचालन से लागत में वृद्धि होती है तथा निगम स्तर व विभाग स्तर पर संघर्ष की संभावना बनी रहती है।

4. **रणनीतिक व्यावसायिक इकाई–**

वृहद स्तर के व्यावसायिक उपक्रम जहॉ अनेक उत्पाद रेखाओं पर कार्य किया जाता है। प्रत्येक रेखा को एक पृथक रणनीतिक व्यावसायिक इकाई माना जाता है तथा प्रत्येक को स्वतन्त्र रुप से कार्य करने का अवसर प्रदान किया जाता है। इस संगठन संरचना को निम्न प्रकार से चार्ट द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है–

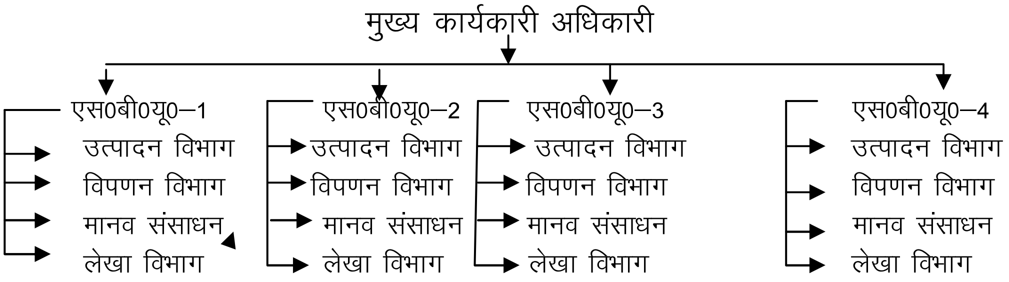

इस प्रकार की संगठन संरचना में प्रत्येक उत्पाद रेखा पूर्णतः स्वतन्त्र रुप से कार्य करते हुए परिणाम प्रदान करती है। इससे इनके परिणामों का विश्लेषण करते हुए इनके विकास अथवा रोक का निर्णय उच्च प्रबन्धन द्वारा लिया जाता है। बड़े

संगठनों के लिए यह संरचना उत्तम है किन्तु छोटे संगठनों के लिए अत्यन्त अपव्ययपूर्ण है। बाजार के निराशाजनक काल में कुछ इकाइयों को बन्द करने का निर्णय लेना पड़ता है क्योंकि वे अपनी लागत वहन करने में असमर्थ हो जाती हैं। रणनीतिक व्यवसाय इकाइयों को किस स्तर तक स्वतन्त्रता दी जाय, इस प्रश्न पर संशय बना रहता है।

5. **ढॉचा संरचना (मेट्रिक्स स्ट्रक्चर)–**

बड़े स्तर के संगठनों में जहॉ प्रत्येक उत्पाद रेखा को पृथक पहचान देनी होती है किन्तु उन्हें एक निगमित स्तर के प्रबन्धन से जोड़ना भी होता है, वहॉ ढॉचा संरचना का प्रयोग किया जाता है। ढॉचा संरचना को चार्ट द्वारा निम्न प्रकार प्रदर्शित किया जाता है–

मुख्य कार्यकारी अधिकारी

	उत्पादन व संचालन	**मानव संसाधन**	**वित्त व लेखा**	**विपणन**
परियोजना–1				
परियोजना–2				
परियोजना–3				

इस प्रकार की संरचना में परियोजनाओं तथा विभागों का एक जालदार ढॉचा तैयार हो जाता है जिसमें प्रत्येक परियोजना को मुख्यालय स्तर के समस्त विभागों का मार्गदर्शन प्राप्त हो जाता है। समस्त परियोजनाओं को पोषित करने के लिए निगम स्तरीय विभागों का गठन किया जाता है तथा परियोजनाएं अपने स्तर से भी विभिन्न विभागों के कार्यो का संचालन करती हैं। इस संरचना में विशेषज्ञों की सेवाएं सभी परियोजनाओं के लिए प्राप्त हो जाती हैं किन्तु इस प्रणाली में समन्वय की अधिक आवश्यकता बनी रहती है तथा भ्रम व गलतफहमी की आशंका बनी रहती है।

6. **नेटवर्क संरचना –**

इस प्रकार की संगठन संरचना में मकड़ी जाल की तरह संरचना को बुना जाता है जिसमें विभिन्न विभाग, परियोजनाओं तथा क्षेत्रों को संगठन मुख्यालय से जोड़ा जाता है। सभी का सीधा नियन्त्रण प्रधान कार्यालय से रहता है। यह एक विकेन्द्रित संगठन है जिसमें सभी इकाइयों व परियोजनाओं के स्तर पर निर्णयन का कार्य सम्भव है। इस संरचना का चार्ट निम्न प्रकार प्रदर्शित होता है–

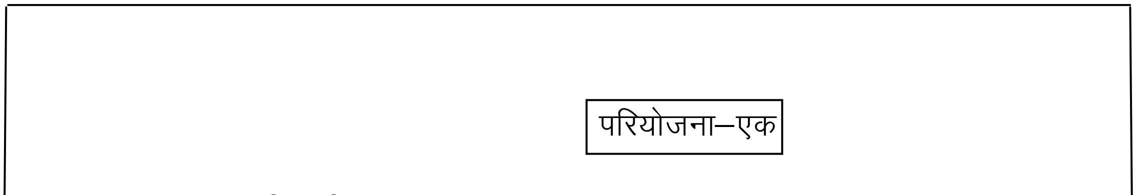

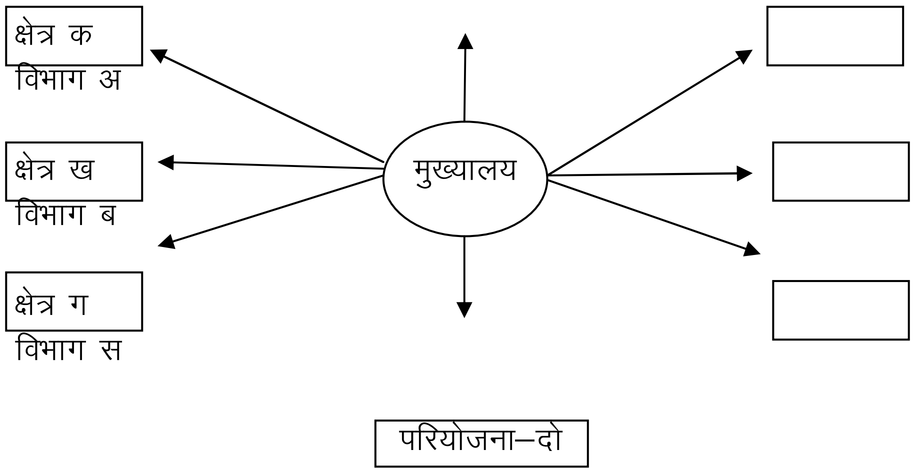

नेटवर्क संरचना में सभी निर्णय–केन्द्र स्वतन्त्र रुप से कार्य करते हुए भी पारस्परिक सहयोग बनाये रखते हैं, जिससे निर्णय शीघ्र होते हैं तथा निरन्तर होने वाले परिवर्तनों का सामना करने में आसानी होती है। सभी विभाग सभी क्षेत्रों तथा परियोजनाओं के लिए कार्य करते हैं अतः कार्यों के दोहराव की आशंका रहती है तथा लागत बढ़ जाती है।

7. **अन्य संरचना–**

उपरोक्त के अतिरिक्त निम्नलिखित अन्य संरचना हैं जो रणनीतिक निर्णयों को क्रियान्वित करने में सहायक होती हैं–

1. **उत्पाद आधारित संरचना–** इस प्रकार की संरचना में कम्पनी अपने विभिन्न उत्पादों के आधार पर विभागों की संरचना की जाती है। प्रत्येक विभाग में उसकी विशिष्टता के अनुरुप विशेषज्ञों की नियुक्ति की जाती है। यह संरचना उन संगठनों के लिए उपयोगी है जहॉ विभिन्न उत्पाद रेखाओं पर कार्य किया जाता है।
2. **ग्राहक आधारित संरचना–** जिन संगठनों में विभिन्न प्रकार के ग्राहकों के लिए अलग–अलग रणनीति की आवश्यकता होती है वहॉ इस प्रकार की संरचना अपनाई जाती है। काउन्टर ग्राहक, आनलाइन ग्राहक, उधार ग्राहक आदि के लिए अलग–अलग विभाग बनाकर रणनीतियों का क्रियान्वयन किया जाता है।
3. **भौगोलिक संरचना–** इस प्रकार की संरचना का प्रयोग उन संगठनों में किया जाता है जहॉ व्यापार का भौगोलिक विस्तार अधिक होता है। इन संगठनों में विभागीयकरण क्षेत्रानुसार किया जाता है। जैसे– उत्तरी क्षेत्र, मध्य क्षेत्र, दक्षिण क्षेत्र आदि।
4. **आन्तरिक उद्यमिता संरचना–** जब संगठन का विस्तार बहुत अधिक हो जाता है तो उसे संभालने के लिए विकेन्द्रीयकरण की आवश्यकता होती है। इसके लिए संगठन के अन्दर से ही कुछ उद्यमी प्रकृति के व्यक्तियों को विशेष उत्तरदायित्व देकर उन्हें पर्याप्त शक्तियॉ प्रदान की जाती हैं जिससे कि संगठन उनकी रचनात्मकता तथा विचारशीलता का लाभ प्राप्त कर सके।

संगठन डिजायन

विभिन्न संगठन संरचनाओं का अध्ययन करने के बाद यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि सर्वश्रेष्ठ संरचना का चयन किस प्रकार किया जाय। सभी संरचनाओं के अपने गुण–दोष होते हैं तथा उनका उपयोग संगठन की आवश्यकताओं के अनुरुप किया जा सकता है। संगठन की विशेषताओं तथा उसके व्यापार की प्रकृति के आधार पर संरचना का चुनाव किया जाता है अथवा किसी नए डिजायन को अपनाया जाता है। संगठन डिजायन का चुनाव करने की प्रक्रिया निम्नवत् है–

1. संगठन की आवश्यकताओं, व्यापार की प्रकृति, विस्तार, ग्राहकवर्ग से सम्बन्धित प्रमुख सूचनाओं का संकलन किया जाता है तथा संगठन के उद्देश्यों व संदृष्टि से उसका मिलान किया जाता है।
2. व्यापार की समस्त क्रियाओं को समरुपी वर्गों में विन्यासित किया जाता है जिससे कि समूहों के आधार पर वर्गीकरण किया जा सके।
3. संगठन की आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाली विभिन्न संरचनाओं (विकल्पों) की जानकारी एकत्र की जाती है।
4. विभागों का गठन संगठन की आवश्यकता के अनुरुप (उत्पादानुसार, ग्राहकानुसार, स्थानानुसार, कार्यानुसार, परियोजनानुसार आदि) किया जाता है। यह निर्धारित किया जाता है कि विभाग कितने बनाये जायें तथा भविष्य में उनका विस्तार किस प्रकार किया जाय।
5. विभिन्न विभागों के मध्य सहयोग व समन्वय स्थापित करने के लिए आवश्यक प्रणाली विकसित की जाती है जिससे कि समस्त विभाग परस्पर सहभागिता के आधार पर सामूहिक लक्ष्यों को प्राप्त कर सकें।

11.4.5 व्यवहारात्मक क्रियान्वयन (बिहेवियरल इम्प्लीमेंटेशन)–

संगठन में रणनीति को क्रियान्वित करने में मनोवैज्ञानिक पहलुओं को ध्यान में रखना आवश्यक होता है। एक ही प्रकार की नीति विभिन्न संगठनों में उसके क्रियान्वयनकर्ताओं के स्वभाव तथा हितधारकों के प्रभाव के कारण अपना स्वरुप बदल सकती है। व्यवहारात्मक क्रियान्वयन के प्रमुख घटक निम्नलिखित हैं–

क. मानसिकता–

किसी संगठन की सफलता उसके उच्चतम प्रबन्ध की मानसिकता पर निर्भर होती है। मानसिकता का प्रभाव संगठन के प्रत्येक क्षेत्र पर पड़ता है और विशेषतः मानवीय व्यवहार पर। सकारात्मक मानसिकता से जहॉ सम्पूर्ण संगठन में विश्वास तथा सौहार्द का वातावरण विकसित होता है वहीं नकारात्मक मानसिकता परस्पर मतभेद तथा मनमुटाव का आधार बनता है। सकारात्मकता में प्रत्येक कर्मचारी यह मानकर व्यवहार करता है जैसे कि वह उसका अपना व्यापार है तथा प्रबन्धन भी सम्पूर्ण अधीनस्थों को अपना परिवार मानता है किन्तु नकारात्मकता में कर्मचारी अपने उत्तरदायित्वों से बचने का प्रयास करते हैं और प्रबन्धक अपने अधीनस्थों को कामचोर व अविश्वसनीय ही मानते हैं। संगठन में सकारात्मक विचारधारा का प्रवाह उच्च प्रबन्धन के सार्थक प्रयासों से ही सम्भव है अन्यथा स्थिति में किसी भी नये निर्णय को लागू करना सम्भव नहीं हो पाता है क्योंकि कर्मचारी उसके प्रति आशंकाग्रस्त रहते हैं।

ख. नैतिकता–

व्यक्तिगत मानव मूल्य तथा व्यावसायिक नैतिकता किसी संगठन में नीति के क्रियान्वयन में मानव व्यवहार का आधार बनता है। संगठन की संदृष्टि व उद्देश्यों का निर्धारण इसी सोच को प्रतिबिम्बित करता है। बड़े व्यापारिक घरानों में पूर्व से स्थापित मूल्य उस संगठन का मार्गदर्शन करते हैं। मानव मूल्य के आधार पर ही किसी संगठन का कार्य वातावरण तैयार होता है। कर्मचारियों, ग्राहकों, आपूर्तिदाताओं तथा अन्य सम्बन्धित पक्षकारों के साथ व्यवहार में व्यावसायिक नैतिकता संगठन को सफलता के चरमोत्कर्ष तक ले जाती है। यह सभी हितधारकों के मन में संगठन के प्रति आदर का भाव उत्पन्न करती है तथा आत्म–सम्मान, समता, सुरक्षा, सहकारिता आदि के द्वारा सभी पक्षकारों का सहयोग प्राप्त करने में सफल होती है। आई0बी0एम0 कम्पनी के 40 देशों में कार्यरत 1,16,000 कर्मचारियों पर आधारित गीर्ट हाफ्स्टीड के एक सर्वेक्षण[3] में संगठन के मानव–मूल्य तथा व्यावसायिक नैतिकता के निम्नलिखित आधारों का वर्णन किया गया है–

- **शक्ति अन्तराल–** शक्ति के समान वितरण तथा सन्तुलन के आधार पर किसी संगठन के व्यावसायिक मूल्यों को समझा जा सकता है। किसी भी देश में वहाँ के वातावरण के अनुरुप शक्तियों के विभाजन तथा वितरण को स्वीकार किया जाता है।
- **व्यक्तिवाद अथवा समूहवाद–** यह निर्धारित किया जाना महत्वपूर्ण है कि किसी व्यक्ति के जीवन में एकल प्रयास का अधिक महत्व है अथवा सामूहिक प्रयास का। इसका निर्धारण भी संगठन के वातावरण के आधार पर होता है।
- **जीवन की मात्रात्मकता अथवा जीवन की गुणात्मकता–** किसी देश तथा समाज की संस्कृति यह निर्धारित करने का आधार होती है कि जीवन का सुख भौतिक सुख–सुविधाओं में निहित है अथवा प्रेम तथा मानसिक शान्ति में।
- **भ्रम निवारण–** इस स्थिति में यह प्रयास किया जाता है कि सभी काम सुविचारित तथा सुनियोजित ढंग से किया जाय ताकि किसी प्रकार के भ्रम की स्थिति न रहे। यह भी देखा जाता है कि भ्रम की स्थिति में उसका निवारण कितनी बुद्धिमानी के साथ किया जाता है।
- **अल्पकालिक अथवा दीर्घकालिक अभिविन्यास–** कार्य वातावरण के आधार पर यह भी तय किया जाता है कि कर्मचारियों में अल्पकालिक विषयों के प्रति अधिक गम्भीरता है अथवा दीर्घकालीन विषयों के।

ग. नेतृत्व–

विभिन्न प्रकार के नेतृत्वकर्ता अपनी नेतृत्व शैली से संगठन में रणनीति को सही भावना के साथ लागू करने में सहायता प्रदान करते हैं। "शैली यह बताती है कि किस प्रकार उच्च प्रबन्धक अपने संगठन को नेतृत्व देने तथा मनोबल बढ़ाने के सम्बन्ध में व्यवहार करते हैं।" नेतृत्व द्वारा जो भी शैली अपनाई जाती है, नीतियों के परिणाम भी तदनुसार ही प्रभावी हो जाते हैं। सामान्यतः निम्नलिखित नेतृत्व शैलियों का प्रयोग प्रबन्धकों के द्वारा किया जाता है–

- स्वेच्छाचारी नेतृत्व–इसे अधिनायकवादी नेतृत्व शैली भी कहा जाता है। नेतृत्व की इस शैली में प्रबन्धक अपने स्तर पर ही समस्त निर्णय लेकर उसे लागू करते हैं। इसमें सत्ता का पूर्णतः केन्द्रीयकरण रहता है। नीतियों को बलपूर्वक क्रियान्वित किया जाता है।
- सहभागी नेतृत्व शैली– इस शैली में प्रबन्धक अपने साथियों व सहायकों के विचारों को अपनी रणनीति में स्थान देते हैं। नेतृत्व के द्वारा सुझावों के आधार पर नीतियों का निर्माण किया जाता है तथा क्रियान्वयन में भी उनका सहयोग प्राप्त किया जाता है।
- लोकतान्त्रिक शैली– इस शैली को अपनाने वाले प्रबन्धक अधिकारों का विकेन्द्रीयकरण करते हैं। वे नीतियों को बनाने तथा क्रियान्वित करने में अपने अधीनस्थों का सहयोग लेते हैं तथा संयुक्त रुप से निर्णय लेते हैं।
- **निर्बाध शैली**– वस्तुतः यह कोई शैली नहीं है। इस प्रकार के प्रबन्धन में प्रबन्धक स्वयं अधिकारों तथा उत्तरदायित्वों को वहन करने से बचते हैं। अधीनस्थों द्वारा लिये गये निर्णयों अथवा परम्पराओं के आधार पर नीतियों का निर्माण या क्रियान्वयन किया जाता है।

  उपरोक्त शैलियों में सभी के कुछ गुण व दोष अवश्य होते हैं अतः यह कहना सम्भव नहीं है कि इनमें से कौन सी शैली श्रेष्ठ है।

रणनीतिक नेतृत्वकर्ता संगठन के उच्चतम प्रबन्धन का हिस्सा होते हैं। ये वे दूरदर्शी होते हैं जो भविष्य की कल्पना करते हैं, उसे तैयार करते हैं और उससे तादात्म स्थापित करते हैं। संगठन की संदृष्टि, ध्येय, उद्देश्य आदि निर्धारित करते हैं। रणनीति बनाते हैं तथा उसका पालन कराते हैं। ये अत्यन्त रचनात्मक प्रकृति के व्यक्ति होते हैं तथा जोखिम लेना जानते हैं। कुछ विद्वानों ने नेतृत्व के दो प्रकार बताए हैं– कार्यकारी नेतृत्व (ट्रांजेक्शनल लीडरशिप) तथा परिवर्तनकारी नेतृत्व (ट्रांसफोरमेशनल लीडरशिप)। कार्यकारी नेतृत्व जहॉ संगठन के उद्देश्यों तथा संदृष्टि को ध्यान में रखते हुए संगठन को आगे बढाने का कार्य करता है, वहीं परिवर्तनकारी नेतृत्व संगठन को नई राह दिखाने वाला होता है। वह कार्य के वातावरण को परिवर्तित करने वाला होता है तथा नए प्रतिमान स्थापित करने वाला होता है। उदाहरणार्थ– कार्यकारी नेतृत्व कर्मचारियों को प्रोत्साहित करने के लिए वेतन बढ़ाने, भत्ते व सुविधाओं में परिवर्तन का प्रयास कर सकता है तो परिवर्तनकारी नेतृत्व कर्मचारियों को संगठन की सफलता में भागीदार बनाते हुए संगठन की संदृष्टि को कर्मचारियों के स्वप्न में बदल देता है।

घ. संस्कृति–

संगठन अपनी कार्य संस्कृति से संचालित होते हैं। प्रत्येक कम्पनी अपनी समस्याओं के निस्तारण तथा कार्य के संचालन के लिए एक विशेष प्रणाली को स्वतः अपना लेती है। यह उस कम्पनी की संस्कृति के रुप में विकसित हो जाती है तथा कम्पनी द्वारा जाने अनजाने सभी विषयों से सम्बन्धित निर्णयों में इसकी झलक दिखाई देती है। यह संस्कृति उक्त कम्पनी की अपनी विशेषता होती है तथा उसी उद्योग की

अन्य कम्पनियों तथा उस परिवेश के अन्य संगठनों से अलग तथा अनूठी होती हैं। इसकी स्थापना प्रारम्भिक काल के उच्चाधिकारियों, प्रबन्धकों, प्रवर्तकों आदि के व्यवहार से होती है तथा कालान्तर में इसे व्यवहार में सम्मिलित कर लिया जाता है। यदि कार्य संस्कृति कमजोर है तो यह कर्मचारियों को संगठन के उद्देश्यों से बाँध पाने में अक्षम रहती है। वे स्वयं को केवल नौकरी (अर्थात् जीवन यापन के साधन) तक ही सीमित रखते हैं किन्तु मजबूत संस्कृति वाली कम्पनियों में कर्मचारी कम्पनी को अपना संगठन मानते हैं तथा जी–जान से उसकी उन्नति के लिए प्रयास करते हैं।

ङ. शक्ति–संतुलन–

किसी संगठन में नीतियों के रणनीतिक क्रियान्वयन में उसमें शक्तियों के वितरण का विशेष महत्व है। शक्तियों का सन्तुलन ही किसी संगठन में निर्णयन तथा क्रियान्वयन का आधार होता है। आन्तरिक तथा वाह्य शक्तियों का समन्वय अथवा टकराव कम्पनी के स्वरुप को निर्धारित करता है। आन्तरिक शक्तियों में कम्पनी के अधिकारी व कर्मचारियों के अतिरिक्त, संगठन के अन्दर का कोई करिश्माई व्यक्तित्व या सौदाकारी श्रम संगठन आदि की भूमिका निर्णयों के क्रियान्वयन में प्रभावकारी होती है। वाह्य शक्तियों में संसाधनों व सामग्री के आपूर्तिदाता, विपणन के मध्यस्थ (थोक व फुटकर व्यापारी, व्यापार प्रतिनिधि, कमीशन ऐजेन्ट, फ्रेन्चाइजी आदि), उपभोक्ता व उपभोक्ता संगठन, नियामक सरकारी संस्थाएं, वित्तीय संस्थाएं आदि भी अपनी भूमिका का निर्वहन करते हैं। ये सभी आन्तरिक व वाह्य तत्व अपने प्रभाव का प्रयोग करते हुए निर्णयों के क्रियान्वयन को प्रभावित करते हैं। इनके व्यवहार से संगठन की क्षमता तथा सफलता निर्धारित होती है।

च. सामाजिकता–

कम्पनी के उच्च प्रबन्धन के समाज के प्रति दृष्टिकोण का प्रभाव उसकी नीतियों के क्रियान्वयन पर पड़ता है। जिस प्रकार व्यक्तिगत नैतिकता संगठन को प्रभावित करती है उसी प्रकार कम्पनी की सामाजिक जिम्मेदारी की भावना भी कम्पनी की नीतियों के क्रियान्वयन को प्रभावित करती है। किस प्रकार से व्यापार के लाभों को कमाया जाय तथा कैसे उसे विनियोजित किया जाय यह कम्पनी की व्यापारिक नीतियों में निहित होता है किन्तु उस लाभ को किस प्रकार सामाजिक कार्यों में व्यय किया जाय, यह उसकी सामाजिक नीतियों से परिलक्षित होता है। निगमों का सामाजिक उत्तरदायित्व अब विधिक अनिवार्यता का विषय बन चुका है। कम्पनियॉ अपने लाभों का एक अंश सामाजिक कार्यों में व्यय करती हैं। इसके अन्तर्गत प्रायः शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण, ग्रामीण विकास आदि से जुड़े कार्यों को सम्पन्न किया जाता है। कम्पनी का मानवीय पक्ष प्रस्तुत करते हुए यह उसके सामाजिक सरोकारों को उजागर करता है।

व्यावहारात्मक क्रियान्वयन को रणनीतिक प्रबन्धन का एक मनोवैज्ञानिक पक्ष माना जाता है। प्रत्येक विषय अथवा समस्या का किसी व्यक्ति अथवा संगठन पर जो प्रभाव होता है तथा जिस प्रकार वह इनका सामना व समाधान करता है, वह पूर्णतः उसकी आन्तरिक शक्तियों व मान्यताओं पर आधारित होता है तथा इस पर विभिन्न आन्तरिक व वाह्य कारकों का भी प्रभाव होता है।

11.5 सारांश

रणनीति को तैयार करना जितना महत्वपूर्ण है उतना ही महत्वपूर्ण है उसे क्रियान्वित करना। क्रियान्वयन की दृष्टि से रणनीति में विभिन्न योजनाएं होती हैं जिनमें अनेक कार्यक्रम होते हैं। प्रत्येक कार्यक्रम में अनेक परियोजनाएं हो सकती हैं। परियोजनाएं कोष अथवा वित्त से जुड़ी होती हैं जो कि बजट से प्राप्त होता है। इसप्रकार किसी संगठन में योजना, परियोजना, कार्यक्रम तथा रणनीति का क्रियान्वयन करते समय नीति, नियम, प्रावधान, प्रक्रिया आदि का प्रयोग किया जाता है।
रणनीति के प्रतिपादन तथा क्रियान्वयन में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। इन्हें एक दूसरे का पूरक माना जाता है। आग्रवर्ती कड़ी तथा पूर्ववर्ती कड़ी के रुप में यह एक दूसरे के विकास में सहायक होते हैं। जिसप्रकार रणनीति का क्रियान्वयन उसके प्रतिपादन पर निर्भर होता है उसी प्रकार रणनीति का प्रतिपादन भी उसके क्रियान्वयन पर आधारित होता है। रणनीति क्रियान्वयन के विभिन्न चरण निम्नलिखित हैं– 1. परियोजना क्रियान्वयन, 2. कार्यविधिक क्रियान्वयन, 3. संसाधन आबंटन, 4. संरचनात्मक क्रियान्वयन, 5. व्यवहारात्मक क्रियान्वयन, 6. कार्यात्मक एवं परिचालनात्मक क्रियान्वयन।

परियोजना के क्रियान्वयन में अवधारण, परिभाषण, नियोजन एवं संगठन, क्रियान्वयन तथा स्वच्छीकरण चरण महत्वपूर्ण होते हैं। कार्यविधिक क्रियान्वयन में वास्तविक उत्पादन करने के पूर्व समस्त औपचारिकताओं को पूर्ण करना होता है। इसके लिए विभिन्न औपचारिकताओं को पूर्ण करना आवश्यक है जिनमें कम्पनी स्थापना सम्बन्धी, लाइसेंस सम्बन्धी, सेबी सम्बन्धी, प्रतिस्पर्धा सम्बन्धी, विदेशी व्यापार एवं विदेशी विनिमय सम्बन्धी, पेटेन्ट व ट्रेडमार्क सम्बन्धी, श्रम कानून सम्बन्धी, पर्यावरण सम्बन्धी, उपभोक्ता संरक्षण सम्बन्धी तथा प्रोत्साहन, रियायतों व सुविधाओं सम्बन्धी औपचारिकताएं महत्वपूर्ण हैं।

किसी परियोजना के क्रियान्वयन में संसाधनों की प्राप्ति सबसे बड़ी चुनौती होती है। मानव संसाधन जहॉ कम्पनी के मस्तिष्क व हाथ–पैर हैं तो वित्तीय संसाधन उसकी धमनियों व सिराओं में बहने वाला रक्त है। संसाधनों की प्राप्ति तथा उनके आबंटन की प्रक्रिया में अत्यधिक सजगता तथा विवेकशीलता की आवश्यकता होती है। वित्त की सही मात्रा, सही समय पर तथा मितव्ययिता के साथ उपलब्ध कराना एक बड़ी चुनौती है। इसके लिए आन्तरिक एवं वाह्य संसाधनों के उचित सम्मिश्रण की आवश्यकता होती है। पूॅजी बजटिंग, पे बैक पीरियड, डिस्काउन्टेड पे बैक पीरियड, जीरो बेस बजटिंग, उत्पाद जीवन चक्र, बी0सी0जी0 मेट्रिक्स तथा अन्य अनेकों परम्परागत तथा वैज्ञानिक विधियॉ हैं जिनके आधार पर वित्त का आबंटन किया जा सकता है। विभिन्न परियोजनाओं तथा प्रक्रियाओं के लिए वित्त का आबंटन करने के लिए कम्पनी कुछ विशिष्ट मान्यताओं तथा सिद्धान्तों का पालन करती है। इसमें रणनीतिकारों की व्यक्तिगत पसन्द, बाजार की दशाएं, प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की नीतियॉ, आन्तरिक तथा वाह्य दबाव को ध्यान रखना आवश्यक है।

प्रत्येक कम्पनी की नीतियों के क्रियान्वयन में उनकी संरचना का विशेष योगदान होता है। रणनीतिक क्रियान्वयन की दृष्टि से संगठन संरचना के विभिन्न रुप हो सकते हैं जैसे–उद्यमिता संरचना, कार्यात्मक संरचना, विभागीय संरचना, रणनीतिक

व्यवसाय इकाई, ढॉचा संरचना, नेटवर्क संरचना आदि। व्यावहारात्मक क्रियान्वयन को रणनीतिक प्रबन्धन का एक मनोवैज्ञानिक पक्ष माना जाता है। एक ही प्रकार की नीति विभिन्न संगठनों में उसके क्रियान्वयनकर्ताओं के स्वभाव तथा हितधारकों के प्रभाव के कारण अपना स्वरुप बदल सकती है। व्यवहारात्मक क्रियान्वयन के प्रमुख घटकों में मानसिकता, नैतिकता, नेतृत्व, संस्कृति, शक्तियों का सन्तुलन, सामाजिकता आदि प्रमुख बिन्दु हैं।

11.6 शब्दावली

पार्षद सीमा नियम	कम्पनी स्थापना के समय रजिस्ट्रार कार्यालय में जमा किया जाने वाला प्रपत्र जिसमें वाह्य जगत के लिए अनिवार्य सूचनाएं प्रदर्शित की जाती हैं।
पार्षद अन्तर्नियम	कम्पनी स्थापना के समय रजिस्ट्रार कार्यालय में जमा किया जाने वाला प्रपत्र जिसमें आन्तरिक प्रबन्धन सम्बन्धी सूचनाएं प्रदर्शित की जाती हैं।
प्रविवरण	सम्भावित निवेशकों को कम्पनी का परिचय देने तथा उन्हें निवेश हेतु आमन्त्रित करने वाला पत्रक या पुस्तिका
भारतीय प्रतिभूति विनिमय बोर्ड	प्रतिभूतियों के क्रय–विक्रय का नियामक बोर्ड
एक्जिम पॉलिसी	निर्यात आयात नीति
एम0ओ0ऐ0	मेमोरेण्डम ऑफ एसोसिएशन (पार्षद सीमा नियम)
ऐ0ऐ0	आर्टिकल ऑफ एसोसिएशन (पार्षद अन्तर्नियम)
एस0ई0बी0आई0 (सेबी)	सिक्योरिटी एक्सचेंज बोर्ड ऑफ इण्डिया (भारतीय प्रतिभूति विनिमय बोर्ड)
एफ0ई0आर0ए0 (फेरा)	फारेन एक्सचेंज रेगुलेटरी एक्ट (विदेशी विनिमय नियमन अधिनियम)
एफ0ई0एम0ए0 (फेमा)	फारेन एक्सचेंज मैनेजमेन्ट एक्ट (विदेशी विनिमय प्रबन्धन अधिनियम)
एम0आर0टी0पी0एक्ट	मोनोपोली एण्ड रेस्ट्रिक्टेड ट्रेड प्रेक्टिसेज एक्ट (एकाधिकार तथा प्रतिबन्धात्मक व्यवहार अधिनियम)
एफ0डी0आई0	फारेन डाइरेक्ट इन्वेस्टमेन्ट (प्रत्यक्ष विदेशी निवेश)
एफ0आई0आई0	फारेन इंस्टीट्यूशनल इन्वेस्टमेन्ट (विदेशी संस्थागत निवेश)
एफ0टी0(डी0आर0)एक्ट 1992	फॉरेन ट्रेड (डवलपमेन्ट एण्ड रेगुलेशन) एक्ट 1992
डब्ल्यू0टी0ओ0	वर्ल्ड ट्रेड ऑर्गेनाइजेशन (विश्व व्यापार संगठन)
टी0आर0आई0पी0एस0 (ट्रिप्स)	ट्रेड रिलेटेड आस्पेक्ट आफ इन्टलेक्चुअल प्रापर्टीज
डी0जी0एस0डी0	डाइरेक्टरेट जनरल ऑफ सप्लाई एण्ड डिस्पोजल
एस0बी0यू0	स्ट्रेटेजिक बिजनेस यूनिट (रणनीतिक व्यवसाय इकाई)

11.7 बोध प्रश्न

(क) अपनी प्रगति जॉचें

बताएं निम्न कथन सत्य हैं अथवा असत्य–

(अ) रणनीति के अन्तर्गत विभिन्न कार्यक्रम हो सकते हैं। (सत्य/असत्य)

(आ) एक परियोजना में अनेक कार्यक्रम हो सकते हैं। (सत्य/असत्य)

(इ) रणनीति का प्रतिपादन तथा क्रियान्वयन परस्पर निर्भर होते हैं।(सत्य/असत्य)

(ई) परियोजना क्रियान्वयन के अवधारणा चरण में कम्पनी की संदृष्टि, ध्येय, उद्देश्य आदि का निर्धारण किया जाता है। (सत्य/असत्य)

(उ) कार्यविधिक क्रियान्वयन की अवस्था में कम्पनी की स्थापना तथा उसके व्यापार संचालन के सम्बन्ध में व्यावहारिक मामलों को सम्मिलित किया जाता है। (सत्य/असत्य)

(ऊ) बौद्धिक सम्पदा के अन्तर्गत कॉपीराइट, पेटेन्ट, ट्रेडमार्क आदि के सम्बन्ध में सम्बन्धित कानूनों का पालन किया जाना संसाधन आबन्टन प्रक्रिया का एक अंग है। (सत्य/असत्य)

(ए) वित्त आबन्टन करते समय प्रबन्धकों को आन्तरिक एवं वाह्य दबावों का सामना करना पड़ता है। (सत्य/असत्य)

(ऐ) वित्त के आबन्टन में पूॅजी की लागत तथा सहज उपलब्धता का ध्यान रखा जाता है। (सत्य/असत्य)

(ख) अपनी प्रगति जॉचें

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए–

1. संरचना विकास के .... (प्रथम/द्वितीय) चरण में कार्यानुसार विभागों का गठन किया जाता है।
2. ....(विभागीय/कार्यात्मक) संगठन संरचना का प्रयोग उन प्रतिष्ठानों में किया जाता है जहॉ एक से अधिक प्रकार के उत्पादों का उत्पादन व विपणन किया जाता है तथा इनका प्रबन्ध, प्रशासन तथा नियन्त्रण पृथक रखा जाता है।
3. ....(ढॉचा/नेटवर्क) संरचना में विभिन्न परियोजनाओं के लिए सम्मिलित तथा पृथक नीति का अनुपालन संभव हो पाता है।
4. .... (व्यवहारात्मक क्रियान्वयन/संरचना डिजायन) का आशय संगठन के विभिन्न कार्यों को इस प्रकार विन्यासित करना है कि संगठन अपने संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग कर सके।
5. ....(सकारात्मक /नकारात्मक) मानसिकता में प्रत्येक कर्मचारी यह मानकर व्यवहार करता है जैसे कि वह उसका अपना व्यापार है तथा प्रबन्धन भी समस्त अधीनस्थों को अपना परिवार मानता है।
6. .... (कार्यकारी /परिवर्तनकारी) नेतृत्व संगठन के उद्देश्यों तथा संदृष्टि को ध्यान में रखते हुए संगठन को आगे बढाने का कार्य करता है।

11.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

(क) – अपनी प्रगति जॉचें

(अ) सत्य (आ) असत्य (इ) सत्य (ई) सत्य (उ) सत्य (ऊ) असत्य (ए) सत्य (ऐ) सत्य

(ख) – अपनी प्रगति जॉचें

(1) द्वितीय (2) विभागीय (3) ढॉचा (4) संरचना डिजायन (5) सकारात्मक (6) कार्यकारी

11.9 स्वपरख प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न–

(अ) रणनीति के प्रतिपादन तथा क्रियान्वयन में क्या सम्बन्ध है?

(आ) आन्तरिक तथा वाह्य वित्तीय संसाधनों को समझाइए?

(इ) रणनीति किस प्रकार संगठन संरचना को प्रभावित करती है?

(ई) उत्पाद आधारित संरचना तथा ग्राहक आधारित संरचना में अन्तर बताइए।

(उ) निगमित कार्य संस्कृति का निर्माण किन तत्वों के द्वारा होता है?

(ऊ) रणनीतिक क्रियान्वयन में सामाजिक उत्तरदायित्व की क्या भूमिका है?

(ए) मानवीय जीवन मूल्य किस प्रकार रणनीतिक क्रियान्वयन को प्रभावित करते हैं?

निबन्धात्मक प्रश्न–

5. रणनीतिक प्रतिपादन तथा क्रियान्वयन के अन्तर्सम्बन्ध को समझाइए। रणनीतिक क्रियान्वयन के तत्वों तथा इसके विभिन्न चरणों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
6. परियोजना क्रियान्वयन को समझाइए। इसके विभिन्न चरण कौन से हैं?
3. कम्पनी के विभिन्न वित्तीय संसाधन कौन से हैं? वित्तीय आबन्टन को प्रभावित करने वाले तत्वों को समझाइए।
4. संगठन संरचना की रणनीति के क्रियान्वयन में क्या भूमिका होती है? विभिन्न प्रकार की संगठन संरचनाओं के परिप्रेक्ष्य में विस्तार से समझाइए।
5. रणनीतिक क्रियान्वयन को प्रभावित करने वाले विभिन्न व्यवहारात्मक पहलुओं की विस्तार से चर्चा कीजिए।
6. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–
    (अ) विभागीय संरचना
    (ब) रणनीतिक व्यावसायिक इकाई संरचना
    (स) संगठन डिजायन
    (द) परियोजना क्रियान्वयन के विभिन्न चरण
    (ई) वित्त आबन्टन की कठिनाइयॉ

11.10 सन्दर्भ पुस्तकें

3 एण्ड्रयूज के0आर0, द कान्सेप्ट आफ कार्पोरेट स्ट्रेटेजी (मुम्बई, तारापोरवाला, 1971) पृष्ठ 179 (अनूदित)

2 प्रोजेक्ट मैनेजमेन्ट जर्नल (यू0एस0ए0ः प्रोजेक्ट मैनेजमेन्ट इन्स्टीट्यूट, अगस्त 1984) (अनूदित)

3 सुब्बाराव पी0, बिजनस पालिसी एण्ड स्ट्रेटेजिक मैनेजमेन्ट, (हिमालय पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई 2014) पृष्ठ 376 पर आधारित

4 बाल्टन, डब्ल्यू0 आर0, बिजनेस पालिसीः द आर्ट ऑफ स्ट्रेटेजिक मैनेजमेन्ट (न्यूयार्क मैकमिलन, 1984) पृष्ठ 18 (अनूदित)

5. Business Policy and Strategic Management, P. Subba Rao, Himalaya Publishing House, Mumbai.

6. Business Policy and Strategic Management, Azhar Kazmi, Tata McGraw- Hill Publishing Company Limited, New Delhi.

7. Business Policy and Strategic Management, GV Satya Sekhar, I K International Publishing House, New Delhi.

8. Business Policy and Strategic Management, Francis Cherunilam, Himalaya Publishing House, Mumbai.

इकाई–12 कार्यात्मक एवं संचालनात्मक क्रियान्वयन

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना
12.2 कार्यात्मक क्रियान्वयन
12.3 कार्यात्मक योजनाएं एवं नीतियॉ
12.3.1 वित्तीय योजनाएं एवं नीतियॉ
12.3.2 उत्पादन योजनाएं एवं नीतियॉ
12.3.3 विपणन योजनाएं एवं नीतियॉ
12.3.4 सेविवर्गीय योजनाएं एवं नीतियॉ
12.3.5 सूचना प्रबन्धन योजनाएं एवं नीतियॉ
12.4 परिचालनात्मक क्रियान्वयन
12.4.1 परिचालनात्मक प्रभावशीलता
12.4.2 परिचालनात्मक प्रभावशीलता के क्षेत्र
12.4.3 परिचालनात्मक क्रियान्वयन नीतियों का चुनाव तथा अनुपालन
12.5 सारांश
12.6 शब्दावली
12.7 बोध प्रश्न
12.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
12.9 स्वपरख प्रश्न
12.10 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- कार्यात्मक रणनीति की व्याख्या कर सकें।
- लम्बवत् एवं समतल उपयुक्तता की अवधारणा का वर्णन कर सकें।
- कार्यात्मक, वित्तीय, विपणन, उत्पादन, सूचना प्रबन्धन व सेविवर्गीय सम्बन्धी योजनाएं व नीतिओं की व्याख्या कर सकें।
- विभिन्न कार्यात्मक नीतियों का समन्वयन का विवेचन कर सकें।
- परिचालनात्मक क्रियान्वयन का परिचय, प्रभावशीलता व क्षेत्र की व्याख्या कर सकें।
- परिचालनात्मक क्रियान्वयन नीतियों का चुनाव तथा अनुपालन को जान सकें।

12.1 प्रस्तावना

इकाई–11 में रणनीतिक क्रियान्वयन के विविध पक्षों का वर्णन किया गया है। इसके अन्तर्गत परियोजना, कार्यविधिक, संसाधन, संरचना तथा व्यवहारात्मक क्रियान्वयन पर प्रकाश डाला गया है। प्रस्तुत इकाई में कार्यात्मक तथा परिचालनात्मक क्रियान्वयन से सम्बन्धित योजनाओं व नीतियों के सैद्धान्तिक व व्यावहारिक पक्षों से अवगत कराया जा रहा है।

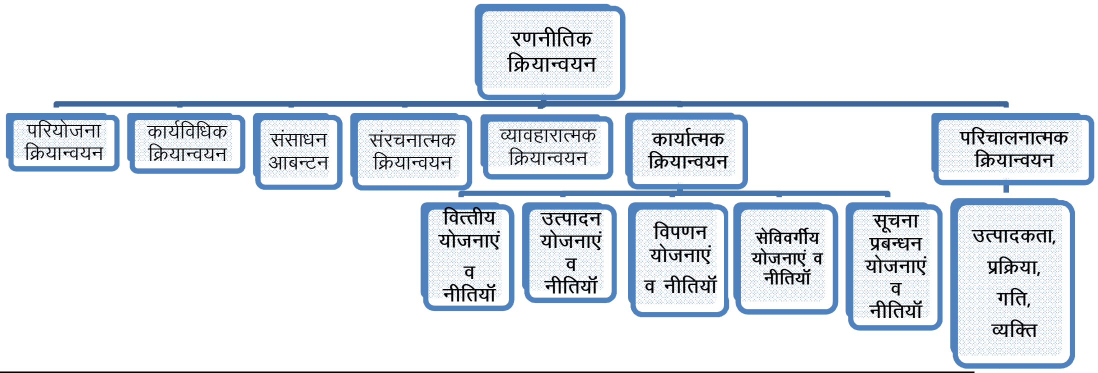

12.2 कार्यात्मक क्रियान्वयन

कार्यात्मक रणनीति के अन्तर्गत उन सभी विभागों अथवा कार्यों से सम्बन्धित रणनीतिक क्रियान्वयन को सम्मिलित किया जाता है जिन्हें व्यापारिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक माना जाता है। इसके अन्तर्गत उत्पादन, वित्त, विपणन, मानव संसाधन, सूचना प्रबन्धन आदि के क्षेत्र में रणनीति के क्रियान्वयन तथा उनके समन्वयन का परीक्षण किया जाता है। कार्यात्मक रणनीति के अन्तर्गत वस्तु के उत्पादन तथा सम्बन्धित सेवाओं को प्रदान करने की विभिन्न रणनीतियों को धरातल के स्तर पर लागू किया जाता है जिससे कि इसका प्रभाव सम्पूर्ण संगठन पर सकारात्मक रुप से पड़े। वस्तुतः कार्यात्मक क्रियान्वयन संगठन की वृहद् रणनीति का व्यावहारिक पक्ष है। उदाहरण के लिए यदि कोई कम्पनी अपने संगठन में मितव्ययिता की नीति अपनाती है तो उसे अपने उत्पाद के निर्माण में कच्चे माल व प्रक्रिया स्तर पर व्ययों पर नियन्त्रण करना होगा। साथ ही, उसे अपनी विपणन नीति, कार्यालयी नीति, सेविवर्गीय नीति, वित्तीय नीति तथा सूचना प्रबन्धन आदि के स्तर पर भी व्ययों में आवश्यक कटौती करनी होगी। इस प्रकार कार्यात्मक क्रियान्वयन के लिए समस्त विभागीय नीतियों में तदनुसार समन्वयन करना आवश्यक होता है। इसे उपयुक्तता (Fit) के रुप में भी जाना जाता है। उपयुक्तता लम्बवत् तथा समतल दोनों प्रकार की हो सकती है। लम्बवत् तथा समतल दोनों प्रकार की उपयुक्तताएं संगठन की नीतियों के सफल क्रियान्वयन के लिए आवश्यक हैं। लम्बवत् उपयुक्तता जहॉं संगठन को कार्यात्मक क्रियान्वयन की ओर अग्रसर करती है, वहीं समतल उपयुक्तता संचालनात्मक क्रियान्वयन के लिए उपयोगी है।

(अ) लम्बवत् उपयुक्तता (Vertical Fit)–

लम्बवत् उपयुक्तता से आशय संगठन के विभिन्न स्तरों पर नीतियों के समन्वयन व क्रियान्वयन से है। यह संगठन में विभिन्न स्तरों पर कार्यात्मक रणनीतियों के क्रियान्वयन के लिए उपयोगी है। इस प्रकार लम्बवत् उपयुक्तता रणनीतिक वित्त प्रबन्धन, रणनीतिक विपणन प्रबन्धन, रणनीतिक मानव संसाधन प्रबन्धन, अथवा रणनीतिक सूचना प्रबन्धन के द्वारा रणनीतियों को निगम स्तर, व्यापार स्तर, कार्य स्तर तक लागू करने तथा उनमें परस्पर समन्वय स्थापित करने में अपनी प्रभावी भूमिका का निर्वाह करता है। इसमें नीतियों का प्रवाह खड़ी रेखा के रुप में होता है–

निगम स्तरीय नीति
↓
व्यापार स्तरीय नीति
↓
कार्य स्तरीय नीति

(ब) समतल उपयुक्तता (Horizontal Fit)–

समतल उपयुक्तता से आशय संगठन की विभिन्न गतिविधियों अथवा क्रियाओं का समान स्तर पर समन्वयन व क्रियान्वयन किये जाने से है। यह संचालनात्मक रणनीतियों के क्रियान्वयन के लिए महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। इसके अन्तर्गत किसी संगठन के विभिन्न कार्यों का आन्तरिक संयोजन किया जाता है। प्रत्येक क्रिया के अन्दर अनेक उपक्रिया हो सकती हैं। उदाहरण के लिए विपणन विभाग के अन्दर बाजार विकास, भण्डारण, विज्ञापन, विक्रय सम्वर्द्धन, वितरण, मरम्मत एवं विक्रयोपरान्त सेवा आदि अनेक कार्यों का संचालन किया जा सकता है। इन सभी को एक समन्वित योजना के माध्यम से संचालित करते हुए निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।

वित्तीय नीति → विपणन नीति → मानव संसाधन नीति → संचालन नीति → सूचना प्रबन्धन नीति

कार्यात्मक रणनीति का क्रियान्वयन सीधे नहीं किया जा सकता। इसके लिए कार्यात्मक योजनाओं व नीतियों की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त वित्त, विपणन, उत्पादन, कार्मिक आदि क्षेत्रों की योजनाओं और नीतियों का निर्माण व क्रियान्वयन संगठन की रणनीतिक सफलता के लिए किया जाता है–

12.3 कार्यात्मक योजनाएं एवं नीतियॉ

रणनीति की सफलता का श्रेय उसके द्वारा अपनाई जाने वाली कार्यात्मक योजनाओं एवं नीतियों की सफलता में निहित है। प्रत्येक विभाग की अपनी कार्यात्मक योजनाएं होती हैं जो कि विभाग की समस्त गतिविधियों को समेकित करते हुए समग्र विकास का संवाहक होती हैं। किसी उत्पादक संगठन में उत्पादन, कार्मिक, वित्त, विपणन, शोध व अनुसंधान आदि अनेक विभाग हो सकते हैं। उत्पादन में भी कच्चे माल के क्रय, संग्रहण, भंडारण से लेकर उत्पादन की विभिन्न प्रक्रियाओं व निर्मित माल के प्रेषण तक अनेक कार्य हो सकते हैं। उदाहरण के लिए – टाटा मोटर्स की इकाई में कार के इंजन व चेसिस का निर्माण किया जाता है, सहउत्पादकों से पुर्जों व सामग्री का क्रय किया जाता है, संयोजनीकरण (एसेम्बलिंग) का कार्य किया जाता है, पेन्ट शॉप में कार पेन्ट करके उसे बाजार में जाने लायक बनाया जाता है। इन सभी कार्यों के लिए पृथक एवं समेकित योजनाएं तैयार की जाती हैं। इसी प्रकार कार्मिक विभाग सम्पूर्ण संगठन के लिए कर्मचारियों के वेतन व अवकाश का निर्धारण, नियमन व स्वीकृति आदि का कार्य करता है। इसके अतिरिक्त मानव संसाधन नियोजन, कार्मिकों की भर्ती, प्रशिक्षण, निष्पादन मूल्यांकन, स्थानान्तरण व पदोन्नति, परिवेदना

निवारण, अनुशासन व अनुशासनात्मक कार्यवाही जैसे अनेक कार्यों को भी पूर्ण करना होता है। संगठन की नीतियों को लागू करने के लिए इन सभी के मध्य एकरुपता तथा सामंजस्य का होना आवश्यक है जिससे कि संगठन को सही समय पर सही योग्यता वाले कार्मिक मिल सकें तथा वे पूर्ण मनोयोग व मनोबल के साथ कार्य कर सकें। इसी प्रकार विपणन, वित्त आदि क्षेत्रों के लिए भी योजनाएं बनानी होती हैं।

डब्ल्यू0 एफ0 ग्लुएक एवं एल0 आर0 जाउच के अनुसार[1] कार्यात्मक योजना एवं नीतियों की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से पड़ती है–

- रणनीतिक निर्णय संगठन के समस्त प्रभागों में लागू किये जाते हैं।
- व्यापार के विभिन्न कार्यात्मक क्षेत्रों में गतिविधियों को नियन्त्रित करने का आधार प्राप्त होता है।
- स्पष्ट योजनाओं द्वारा कार्य निर्धारण तथा नीतियों के द्वारा प्रस्तुत ऐच्छिक रुपरेखा के कारण कार्यात्मक प्रबन्धकों के निर्णयन में लगने वाले समय में बचत होती है।
- कार्यात्मक प्रबन्धकों द्वारा निरन्तर विभिन्न कार्यात्मक क्षेत्रों में समरुपी समस्याओं का सामना किया जाता है।
- जहॉ भी आवश्यकता हो, संगठन के विभिन्न कार्यों के मध्य समन्वय की आवश्यकता होती है।

कार्यात्मक योजनाओं तथा नीतियों के विकास की प्रक्रिया औपचारिक तथा अनौपचारिक हो सकती है। उक्त दोनों ही प्रकार की कार्यात्मक योजनाओं तथा नीतियों के विकास की प्रक्रिया रणनीति के निष्पादन की प्रक्रिया के ही समान होती है। वृहद् संगठनों में सैकड़ों योजनाएं एक साथ कार्य करती हैं जबकि छोटे संगठन भी अनेक योजनाओं पर कार्य करते हैं। विभिन्न कार्यों के आधार पर विभागीय कार्यात्मक योजनाएं तैयार की जाती हैं, यथा– वित्तीय योजनाएं, मानव संसाधन योजनाएं, विपणन योजनाएं आदि।

12.3.1 वित्तीय योजनाएं एवं नीतियॉ

वित्त प्रबन्धन किसी संगठन की समस्त क्रियाओं का केन्द्र बिन्दु होता है। वित्त की प्राप्ति तथा उपयोग संगठन को स्थापित तथा विकसित करने की दृष्टि से अनिवार्य एवं अपरिहार्य हैं। अल्प पूॅजीकरण तथा अति पूॅजीकरण दोनों ही संगठन के लिए हानिकारक अवस्थाएं हैं। अतः सही मात्रा में, सही समय पर तथा अधिकतम मितव्ययिता के साथ प्राप्त वित्त ही संगठन की सफलता का आधार बनता है। समयान्तराल के साथ ही संगठन की वित्तीय आवश्यकताओं में भी परिवर्तन होता है, अतः तदनुसार वित्तीय योजनाओं व नीतियों का निर्माण किया जाता है।

वित्त के श्रोत– व्यापार के उपयोग हेतु स्थिर तथा कार्यशील पूॅजी हेतु वित्त की व्यवस्था की जाती है। आन्तरिक श्रोतों (समता अंश, पूर्वाधिकारी अंश आदि) तथा वाह्य श्रोतों (ऋणपत्र, वित्तीय संस्थाओं से ऋण आदि) से प्राप्त होने वाले धन की कुछ न कुछ लागत अवश्य होती है। आन्तरिक श्रोतों से प्राप्त पूॅजी की लागत अधिक होती है किन्तु इसमें लाभ यह है कि वित्तीय

हानि की स्थिति में संगठन पर अनावश्यक भार नहीं होता है। वाह्य श्रोतों से प्राप्त धन की लागत अपेक्षाकृत कम होती है किन्तु उन पर ब्याज का भुगतान करना अनिवार्य होता है, चाहे संगठन को लाभ हो या हानि। अतः हानि की दशा में संगठन को दोहरा भार सहन करना पड़ता है। वित्तीय प्रबन्धकों के लिए यह निर्णय लेना कठिन होता है कि वित्त का प्रबन्ध किस प्रकार किया जाय तथा ऋण–समता अनुपात कितना रखा जाये ताकि संगठन को उपयुक्त मात्रा में वित्त की उपलब्धता मितव्ययी दरों पर हो सके। इसके लिए उपयुक्त योजनाओं व नीतियों का निर्माण किया जाता है।

वित्त का उपयोग– वित्त की प्राप्ति के साथ ही इसका उपयोग भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। संगठन की विविध आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए सीमित साधनों का कुशलतापूर्ण उपयोग किया जाता है। वित्तीय आवश्यकताओं का बजटन इसप्रकार किया जाता है कि सही समय पर उपयोग हेतु पर्याप्त वित्त न्यूनतम लागत पर प्राप्त हो सके। इसके लिए पूँजी बजटन की विभिन्न तकनीक (यथा– अपरिहार्यता रीति, पुनर्भुगतान अवधि रीति, वर्तमान मूल्य रीति आदि) का प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त रोकड़ बजट, लोचदार बजट आदि का भी उपयोग किया जाता है। इन सभी रीतियों के माध्यम से वित्त प्रबन्धक को वित्तीय आवश्यकताओं का अनुमान लगाने में आसानी होती है।

वित्त प्रबन्धन– वित्त प्रबन्धन वित्तीय आवश्यकताओं के अनुमान, वित्त की प्राप्ति तथा वित्त के उपयोग की कला है। वित्तीय विवरणों के विश्लेषण के द्वारा विभिन्न कोणों से संगठन के वित्तीय स्वास्थ्य का परीक्षण किया जाता है और आवश्यक उपचार किये जाते हैं। इस हेतु वित्तीय योजनाओं तथा नीतियों का निर्माण व क्रियान्वयन किया जाता है। कम्पनी को यह तय करना चाहिए कि वह आवश्यक धन का प्रबन्ध व्ययों में कटौती द्वारा, मूल्यों में वृद्धि के द्वारा, लाभों में वृद्धि द्वारा अथवा अन्य किसी नीति के द्वारा करेगी। इसी प्रकार धन का उपयोग कम्पनी शोध व विकास, नई मशीनों व तकनीक के क्रय, वितरण व्यवस्था में सुधार, प्रशिक्षण आदि में किस प्रकार करेगी, पर भी विचार किया जाना चाहिए। जो भी नीति तय की जाये, उसी के अनुरुप ही योजनाओं का निर्माण किया जाना चाहिए। कभी–कभी विभिन्न हितधारकों के हितों में टकराव की दशा में प्रबन्धकों को अतिरिक्त सावधानी के साथ योजनाओं को क्रियान्वित करना चाहिए। वित्तीय योजनाओं के क्रमिक विकास व क्रियान्वयन के लिए उपयोजनाओं को क्रियान्वित किया जाता है तथा अनेक वैकल्पिक मार्गों में से सर्वाधिक लाभप्रद मार्ग का चुनाव किया जाता है।

12.3.2 उत्पादन योजनाएं एवं नीतियॉ

निर्माणी उद्योगों में उत्पादन सम्बन्धी योजनाओं का निर्माण व क्रियान्वयन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसप्रकार के उद्योगों में कच्चे माल की सामग्री की चयन, शोध एवं अनुसंधान के द्वारा उत्पाद विकास, सामग्री एकत्रण, निर्माण तकनीक का चुनाव,

निर्माण प्रक्रिया के स्तर व उत्पादन की मात्रा का निर्धारण, उत्पादन लक्ष्यों को तय करना, गुणवत्ता नियन्त्रण एवं विकास, निर्मित माल का भण्डारण आदि विषयों के लिए योजनाओं को क्रियान्वित किया जाता है। संगठन के द्वारा योजनाबद्ध रुप से उत्पादन में क्रिया के स्तर, नये उत्पादों को प्रारम्भ करने, तुलनात्मक रुप से हानिप्रद उत्पादों को बन्द करने आदि के सम्बन्ध में योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाता है।

उत्पादन सम्बन्धी योजनाओं के निर्धारण तथा क्रियान्वयन की प्रक्रिया अत्यन्त जटिल है। सर्वप्रथम तो निर्धारित किया जाता है कि किस वस्तु का निर्माण किया जायेगा, कितनी मात्रा में निर्माण किया जायेगा, निर्माण की प्रक्रिया क्या होगी, मशीनीकरण की क्या स्थिति होगी, उत्पाद के विकास व विस्तार की रणनीति क्या होगी, निर्मित माल की गुणवत्ता का निर्धारण व नियन्त्रण किस प्रकार किया जायेगा आदि। उपरोक्त प्रश्नों के आधार पर निर्मित नीति के क्रियान्वयन में उपरोक्त सभी बिन्दुओं पर उचित कार्यवाही को सुनिश्चित किया जाता है। समय के साथ अनेक नीतियों को संशोधित किये जाने की भी आवश्यकता होती है। यथा– जिस उत्पाद को कम्पनी बना रही है वह अप्रचलित हो जाये, सरकारी रोक लग जाये, तकनीक में परिवर्तन हो जाये आदि।

उत्पादक को उत्पाद की गुणात्मकता तथा मात्रात्मकता के सम्बन्ध में निर्मित नीतियों को निरन्तर सजग रह कर क्रियान्वित करना होता है। गुणवत्ता के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार की कमी होने पर कम्पनी के उत्पाद की मॉग के साथ ही उसकी साख भी दुष्प्रभावित हो सकती है। इसीप्रकार उत्पादन की मात्रा पर भी नियन्त्रण रखना होता है। इसे बाजार की मॉग तथा कम्पनी की रणनीति के अनुरुप निर्धारित तथा नियमित करना होता है। बड़े औद्योगिक प्रतिष्ठानों को यह भी निर्धारित करना होता है कि वह सम्पूर्ण उत्पादन स्वयं करेंगे अथवा उसका कुछ भाग बाहर से प्राप्त करेंगे। इस प्रकार की स्थिति में बाहरी कम्पनी तथा आन्तरिक उत्पादन के मध्य सामंजस्य बैठाना भी आवश्यक होता है।

12.3.3 विपणन योजनाएं एवं नीतियॉ

विपणन किसी भी कम्पनी की अनिवार्यतम क्रिया है। कम्पनी चाहे निर्माणी हो, व्यापारिक हो अथवा सेवाप्रदाता– उसे अपने उत्पाद अथवा सेवा का विपणन अवश्य करना होगा। वस्तुतः कम्पनी का लक्ष्य ही उत्पाद अथवा सेवा की बिक्री द्वारा लाभ कमाना होता है। कम्पनी अपने विपणन सम्मिश्र (उत्पाद, मूल्य, स्थान तथा संवर्द्धन) पर नियन्त्रण करके तथा उस पर कम्पनी की नीतियों का कुशलतापूर्वक क्रियान्वयन करके ही अपने अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त कर सकती है। विपणन सम्मिश्र को 4Ps के रुप में भी प्रदर्शित किया जाता है जिसमें Product, Price, Place तथा Promotion के प्रथमाक्षर का संकेत माना गया है।–

(अ) उत्पाद (Product)– विपणन की नीतियॉ उसके उत्पाद के आधार पर निर्धारित होती हैं। यदि उत्पाद सुनिश्चित बिक्री वाला है तो उत्पादक उसे लागत विचार के बिना पूर्ण गुणवत्ता के साथ उचित लाभ दर के साथ बेच सकता है किन्तु प्रतिस्पर्धा की दशा में मूल्य बाजार दर से तय होने के कारण लागत कारक का ध्यान रखते हुए गुणवत्ता पर विचार किया जाता है। विपणन की उत्पाद अवधारणा के

अनुसार ग्राहक उस वस्तु को अधिक पसन्द करता है जो कि अधिक गुणवत्तायुक्त हो। कम्पनी अपनी विपणन नीतियों का निर्धारण अपने उत्पाद के प्रकार के अनुसार करती है तथा एक सुनिश्चित रणनीति के द्वारा उत्पाद को बाजार में स्थापित करती है। कम्पनी को यह निर्धारित करना होता है कि वह एक ही उत्पाद बनाए अथवा विभिन्न उत्पादों को बाजार में उतारे, यह भी तय करना होता है कि एक ही उत्पाद रेखा के विभिन्न उत्पाद बनाये जायें अथवा एकाधिक उत्पाद रेखाओं के अन्तर्गत उत्पादन किया जाये। कम्पनी को अपने लिए बाजार विभक्तीकरण के अन्तर्गत बाजार भाग तय करना होता है तथा तदनुसार स्वयं को तथा अपने उत्पाद को स्थापित करना होता है। उदाहरण के लिए– एक कम्पनी को यह तय करना होता है कि वह केवल साबुन बनाए अथवा साबुन के साथ टूथपेस्ट व तेल का भी उत्पादन करे। यदि यह तय होता है कि केवल साबुन का उत्पादन किया जाना है तो कितने प्रकार के साबुन तथा उन्हें कितने आकार व डिजायन में तैयार किया जायेगा। यह भी देखना होता है कि साबुन का सम्भावित ग्राहक कौन होगा? अर्थात् यह सम्पन्न वर्ग, मध्यम वर्ग अथवा निम्न आय वर्ग के लिए बनाया जा रहा है। यह भी विचारणीय है कि इसे स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में बेचे जाने के लिए तैयार किया गया है। उत्पाद को प्रथम वर्ष, प्रथम तीन वर्ष, प्रथम पॉच वर्ष में किस स्तर तक बाजार में स्थापित किया जायेगा अथवा बाजार का कितना अंश प्राप्त कर लिया जायेगा, के सम्बन्ध में भी नीतियों को बनाया तथा नीति की मूल भावना को बाजार की बदलती स्थिति के अनुसार क्रियान्वित किया जाना चाहिए।

(ब) मूल्य (Price)– विपणन नीतियों में उत्पाद के मूल्य निर्धारण का विशेष महत्व है। प्रतिस्पर्धी बाजार में वस्तु का मूल्य बाजार की दशाओं के द्वारा निर्धारित होता है अतः उत्पादक को उसका पालन करना ही होता है। इस दशा में वह केवल लागत अथवा अपने लाभ भाग में ही परिवर्तन कर सकता है। एकाधिकारी दशा में उत्पादक स्वयं मूल्य निर्धारित कर सकता है।

मूल्य नीतियों में कम्पनी प्रतिस्पर्धी कम्पनियों के उत्पाद के बराबर, उनसे कम अथवा अधिक मूल्य निर्धारित कर सकती है। यह कम्पनी की मूल्य नीति सम्बन्धी रणनीति हो सकती है।

उत्पाद जीवन चक्र (Product Life Cycle- PLC) की अवस्था के आधार पर भी कम्पनी उत्पाद के मूल्य का निर्धारण कर सकती है। परिचय अवस्था में मॉग कम होने के कारण लागत अधिक होती है किन्तु धीरे–धीरे विकास व परिपक्वता की अवस्था में जाने पर वृहद स्तरीय उत्पादन होने के कारण लागतों में कमी आती है, अतः कम्पनी मूल्यों में कमी कर सकती है अथवा स्थिति का लाभ लेते हुए लाभ की मात्रा बढ़ा सकती है। प्रायः कम्पनी मूल्यों को कम करना अपनी प्रतिष्ठा के विरुद्ध मानती है अतः वह मूल्य कम करने के स्थान पर अतिरिक्त मात्रा देना, उपहार देना, त्यौहारों पर विशेष छूट देना जैसे विपणन सम्बर्द्धन उपकरणों का प्रयोग करती हैं।

(स) स्थान (Place)– विपणन की नीतियों में बाजार के स्थान का भी प्रभाव होता है। ग्रामीण बाजार व शहरी बाजारों में विपणन की नीतियों में पर्याप्त अन्तर होता है। जिस प्रकार दूरस्थ क्षेत्र में उत्पादन करने में उत्पादक को सस्ते श्रम, किराये आदि

का लाभ मिलने से लागत कम आती है, उसी प्रकार ग्रामीण व शहरी विपणन में भी पर्याप्त रणनीतिक अन्तर पाये जाते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में जहॉ थोक व फुटकर व्यापारी के माध्यम से बिक्री की जाती है, वहीं शहरी क्षेत्रों में बड़े शोरुम, शॉपिंग मॉल आदि के माध्यम से बिक्री की जाती है। दोनों स्थानों में ग्राहक को प्रभावित करने के लिए अलग प्रकार की रणनीति का प्रयोग किया जाता है। शहरी क्षेत्रों में किसी एक ब्राण्ड का एकल स्टोर हो सकता है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में यह सम्भव नहीं हो पाता है। वहॉ प्रायः विभिन्न ब्राण्ड व वस्तुओं को एक ही स्थान पर बेचा जाता है। विपणन नीतियों में इसको ध्यान में रखना आवश्यक है।

आधनिक युग में ई–कामर्स के उदय व विकास के कारण स्थान के विचार को चुनौती मिली है। अब ऑन लाइन शॉपिंग के द्वारा ग्राहक को घर बैठे वह वस्तु प्राप्त हो जाती हैं जिनके लिए पहले बाजार जाना आवश्यक था। कम्प्यूटर व इन्टरनेट के माध्यम से ग्रामीण अथवा शहरी किसी भी स्थान पर बैठा व्यक्ति एक सी वस्तु का आदेश दे सकते हैं तथा उसे घर बैठे प्राप्त कर सकते हैं। इन्टरनेट के प्रयोग द्वारा अब घर बैठे ही बड़े व्यवसायों का संचालन किया जाना सम्भव है। ऐसे में ग्राहकों की आसान पहुॅच वाले स्थलों की अवधारणा भी परिवर्तित हो रही है। इसके कारण विपणन नीतियों के क्रियान्वयन में अतिरिक्त सावधानी का पालन आवश्यक हो गया है।

(द) सम्वर्द्धन (Promotion)– व्यापार का अन्तिम लक्ष्य होता है अधिकतम बिक्री के द्वारा लाभ की प्राप्ति। बिक्री बढ़ाने के लिए उत्पादक अपने उत्पाद को गुणवत्ता, मूल्य आदि के आधार श्रेष्ठ सिद्ध करने का प्रयास करता है किन्तु अधिकतम बिक्री के लिए इतना ही पर्याप्त नहीं है। कम्पनी को प्रतिस्पर्धा का सामना करने के लिए विक्रय सम्वर्द्धन सम्बन्धी उपायों को भी अपनाना आवश्यक हो जाता है। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित उपायों को अपनाया जाता है–

1. **विज्ञापन (Advertising)**– विज्ञापन वर्तमान युग का सबसे सशक्त माध्यम माना जाता है। यह एक ओर उत्पाद व उत्पादक के सम्बन्ध आवश्यक सूचनाएं प्रदान करता है, वहीं उपभोक्ता को क्रय के लिए प्रेरित भी करता है। यह उपभोक्ता के सामने वस्तु का ऐसा लुभावना चित्र प्रस्तुत करता है कि वह तुरन्त उसे क्रय करने को आतुर हो जाता है। AIDA मॉडल के अनुसार विज्ञापन क्रेता का ध्यानाकर्षण करने (Attention), उनमें वस्तु के प्रति अभिरुचि उत्पन्न करने (Interest), उत्कण्ठा जाग्रत करने (Desire) तथा अन्ततः क्रय हेतु प्रवृत्त करने (Action) का कार्य करता है। उपभोक्ता वस्तुओं को विज्ञापन की अधिक आवश्यकता होती है। अनेक उपभोक्ता वस्तुओं का विज्ञापन बजट उसके उत्पादन बजट से भी काफी अधिक होता है। इसके लिए बड़ी–बड़ी विज्ञापन कम्पनियों की विशेषज्ञ सेवाओं को प्राप्त किया। विज्ञापन के लिए मुद्रित तथा दृष्य–श्रव्य माध्यमों का उपयोग किया जा सकता है। समाचार पत्र, पत्रिकाएं, रेडियो, टेलीविजन, होर्डिंग्स, भित्ती विज्ञापन का प्रयोग सर्वत्र देखा जा

सकता है। रणनीतिक प्रयासों के द्वारा ग्राहक को वस्तु की अधिकाधिक मात्रा क्रय करने के लिए उद्यत किया जाता है। कम्पनी अपने विज्ञापन बजट को व्यवस्थित करने, उसे नियन्त्रित करने तथा विज्ञापन के प्रभाव का मूल्यांकन करने के लिए बनाई गई योजनाओं व नीतियों का निरन्तर क्रियान्वयन तथा मूल्यांकन करती रहती है। इनमें बाजार की परिस्थितियों तथा प्रतिस्पर्धी कम्पनी के व्यवहार के अनुरुप परिवर्तन भी किये जाते हैं।

2. **विक्रय सम्वर्द्धन (Sales Promotion)**– विक्रय सम्वर्द्धन ऐसे अल्पकालिक प्रयास होते हैं जिनके द्वारा वस्तु का मॉग में उछाल उत्पन्न किया जाता है। इसके अन्तर्गत उन अल्पावधिक उपायों को सम्मिलित किया जाता है जो किसी विशेष समय अथवा स्थान पर वस्तु को क्रय करने का लालच देते हैं। यथा– आफ सीजन पर अतिरिक्त छूट, अतिरिक्त मात्रा, एक वस्तु के क्रय पर दूसरी मुफ्त, इनामी योजना आदि को निश्चित समय के लिए अथवा स्टॉक रहने तक लागू किया जाता है जिसके परिणाम स्वरुप ग्राहक अधिक छूट के लालच में अधिक मात्रा में सामान का तुरन्त क्रय करता है। इन उपायों से बिक्री के लक्ष्यों को प्राप्त किया जाता है। वर्तमान युग में इस प्रकार की रणनीति सभी कम्पनियों द्वारा अपनाई जाती है। ग्राहक को इतना माल एक साथ बेच दिया जाता है कि वह अन्य कम्पनियों के माल के प्रति आकर्षित ही न हो सके। कम्पनियॉ रणनीतिक योजनाओं के द्वारा समय–समय पर ऐसे प्रयास करती हैं तथा उनमें परिवर्तन भी करती हैं जिससे कि योजनाओं की ताजगी बनी रहे।

3. **प्रचार (Publicity)**– प्रचार वे प्रयास हैं जिनके द्वारा कम्पनी अपनी तथा अपने उत्पादों की छवि को चमकाने का प्रयास करती है। इसके लिए वह अपनी कम्पनी की संदृष्टि, ध्येय आदि का प्रचार करते हुए उसे नैतिकता, समाजसेवा, उत्कृष्ट उत्पादकता आदि के क्षेत्र में समाचार, साक्षात्कार जैसे माध्यमों से प्रचारित करती है। यथा– उद्योगपति रतन टाटा के साक्षात्कार में उनके विचारों को सुनने से टाटा कम्पनी की छवि चमकती है जिससे उसके विभिन्न उत्पादों के प्रति ग्राहकों का आकर्षण बढ़ जाता है। इसी प्रकार किसी कलाकार की जब कोई फिल्म जारी होती है तो उस समय उसके साक्षात्कार प्रकाशित होते हैं तथा फिल्म निर्माण के किस्से प्रकाशित होते हैं। इनसे दर्शक उस फिल्म के प्रति आकर्षित होते हैं। प्रचार विपणन सम्प्रेषण का एक ऐसा माध्यम है जिस पर यद्यपि कम्पनी का कोई नियन्त्रण नहीं होता तथापि वह इसे अपने पक्ष में करने का प्रयास करती है। प्रचार को विज्ञापन का एक लागतरहित माध्यम माना जाता है। यह सामान्यतः वस्तु का उपयोग करने वाले अथवा उससे प्रभावित होने वाले व्यक्तियों द्वारा एक से दूसरे को संप्रेषित किया जाता है।

यह माध्यम विज्ञापन की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली माना जाता है क्योंकि कोई भी नया उपभोक्ता वस्तु के उपयोग से पहले अन्य लोगों के विचार जानना चाहता है। किसी शिक्षण संस्थान में प्रवेश लेने से पहले विद्यार्थी पूर्व छात्रों के अनुभवों की जानकारी लेते हैं तथा उन्हें संस्था के विज्ञापनों की अपेक्षा अधिक महत्व देते हैं। कम्पनी विज्ञापन के अतिरिक्त समाज के मध्य अपनी एक ऐसी छवि बनाने का प्रयास करती है कि जनता उसके प्रति अपनी सकारात्मकता प्रदर्शित करे तथा स्वतः ही उसके उत्पादों को पसन्द करने लगे। इन प्रयासों के लिए एक सोची समझी रणनीति अपनाई जाती है तथा समय–समय पर इसमें परिवर्तन किया जाता है जिससे कि बदलती परिस्थिति में भी अवसरों का लाभ लिया जा सके।

4. **प्रत्यक्ष विपणन (Direct Marketing)–** प्रत्यक्ष विपणन की रणनीति में कम्पनी उन व्यक्तियों अथवा संस्थाओं को चिन्हित करती है जो कि उसके द्वारा निर्मित उत्पाद अथवा सेवा के सम्भावित ग्राहक हो सकते हैं तथा सीधे ही उन पर अपने प्रयास केन्द्रित कर देती है। बीमा कम्पनी अपने उन ग्राहकों से सम्पर्क में रहती है जिनकी बीमा अवधि समाप्त हो रही है। वह उक्त पालिसियों को नवीनीकरण कराने का प्रयास करती है। इसी प्रकार वाहन विक्रेता वाहनों की अनुरक्षण सेवा (सर्विस) के लिए ग्राहकों से सम्पर्क करती है।

   वाणिज्यिक उत्पादों के लिए प्रत्यक्ष विपणन सर्वश्रेष्ठ साधन है क्योंकि इसमें ग्राहकों की संख्या कम होती है तथा उन्हें अधिक समझाए जाने की आवश्यकता होती है। व्यापार की मात्रा अधिक होती है तथा सीमित ग्राहकों के साथ भी बड़ी मात्रा में व्यापार किया जा सकता है। कम्पनी अपने रणनीतिक प्रयासों के द्वारा ऐसे ग्राहकों की सूची बनाती है जिनसे सम्पर्क किया जाना है तथा उन्हें प्रभावित करने के लिए प्रभावी रणनीति बनाती है।

5. **वैयक्तिक विक्रय (Personal Selling)–** वैयक्तिक विक्रय भी प्रत्यक्ष विपणन के समान ही सम्भावित ग्राहकों को प्रभावित करने प्रयास होता है किन्तु प्रत्यक्ष विपणन की भॉति इसमें ग्राहक पूर्व चयनित नहीं होते। कम्पनी के प्रतिनिधि विभिन्न व्यक्तियों से सम्पर्क कर अपनी वस्तु की बिक्री के लिए व्यक्तिगत प्रयास करते हैं। भारत में यूरेका फोर्ब्स कम्पनी के द्वारा अपने वाटर प्योरीफायर तथा वैक्यूम क्लीनर की बिक्री के लिए यह विधि अपनाई गई। कम्पनी के विक्रय प्रतिनिधि घर–घर घूमकर अपनी मशीनों का प्रदर्शन करके लोगों को यह समझाने का प्रयास करते हैं कि उनका उत्पाद कितना उपयोगी है। इसी से प्रभावित होकर लोग वस्तु का क्रय कर लेते हैं।

एकीकृत विपणन रणनीति– विपणन की उपरोक्त वर्णित नीतियों की अपनी कुछ विशेषताएं एवं सीमाएं हैं तथा किसी एक नीति के प्रयोग से कम्पनी को सफलता प्राप्त

नहीं हो सकती अतः इनके मिश्रण के द्वारा प्रभावी व आक्रामक विपणन नीति तैयार की जाती है। कम्पनी अपनी विपणन सम्बन्धी रणनीति में विज्ञापन, प्रचार, विक्रय सम्वर्द्धन आदि का इस प्रकार मिश्रण करती है कि उसे इच्छित परिणाम प्राप्त हो सकें। प्रत्येक कम्पनी द्वारा अपने उत्पाद की बिक्री बढ़ाने के लिए विज्ञापन का सहारा लिया जाता है किन्तु ग्राहक उसकी ओर आकृष्ठ नहीं होता क्योंकि एक तो वह पूर्व से उपयोग किये जाने वाले उत्पाद को बदलना नहीं चाहता तथा दूसरी ओर यह माना जाता है कि उत्पादक तो अपने उत्पाद की प्रशंसा करेगा ही, अतः यह बहुत विश्वसनीय नहीं माना जाता। उसे विक्रय सम्वर्द्धन की योजनाओं से आकृष्ठ किया जा सकता है किन्तु योजना को ग्राहकों तक पहुॅचाने के लिए भी विज्ञापन का सहारा लेना आवश्यक हो जाता है। प्रचार का प्रभाव ग्राहकों पर सकारात्मक होता है किन्तु यह कम्पनी के नियन्त्रण में नहीं होता। कम्पनी को सम्वर्द्धन के विभिन्न उपायों को समेकित एवं समन्वित करना होता है। इसके लिए कम्पनी स्वयं अपने स्तर पर अथवा विशेषज्ञ व्यावसायिक कम्पनियों की सहायता से अभियान चलाती है। इसके लिए रणनीति उपायों, नीतियों तथा योजनाओं को चरणबद्ध रुप में क्रियान्वित करना होता है। अन्य कम्पनियों की रणनीतियों, अपने संसाधनों तथा बाजार खण्ड की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाता है।

12.3.4 सेविवर्गीय योजनाएं एवं नीतियॉ

सेविवर्गीय योजनाओं तथा नीतियों से अभिप्राय संगठन के सम्पूर्ण मानव संसाधन के प्रबन्धन से है। संगठन में अधिकारियों व कर्मचारियों की आवश्यक संख्या का आकलन करने, उन्हें संगठन की ओर आकृष्ठ करने, भर्ती करने, वेतन निर्धारण व वितरण, कार्य आबन्टन करने, अनुशासन स्थापित करने तथा अन्य अनेक महत्वपूर्ण विषयों का संचालन सेविवर्गीय विभाग का कार्य होता है। मानव को प्रबन्धन का सबसे महत्वपूर्ण कारक माना गया है क्योंकि एक ओर यह स्वयं एक संसाधन है वहीं दूसरी ओर अन्य संसाधनों का नियन्त्रणकर्ता भी है। उच्च मनोबल वाले संस्थानों में कार्य परिणाम सदा ही सकारात्मक होते हैं। इसी प्रकार अनुशासन तथा कार्य वातावरण की भी संगठन की सफलता में विशिष्ट भूमिका होती है। उच्चतम प्रबन्धन के विचार तथा रणनीति के अनुरुप ही सम्पूर्ण संगठन अपना स्वरुप प्राप्त करता है। पेट्रोलियम क्षेत्र के नियंत्रण मुक्त होने के बाद हिन्दुस्तान पेट्रोलियम कार्पो0 लि0 को ऐसा प्रतीत हुआ कि उनकी अफसरशाही वाली पुरानी प्रणाली प्रतिस्पर्धात्मक बाजार में उपयुक्त नहीं होगी। इसमें सुधार के लिए उन्होंने एक पारदर्शी मूल्यांकन प्रणाली अपनाने, स्थानांतरण कम करके विशेषज्ञता बढ़ाने तथा सम्प्रेषण व्यवस्था को सुदृढ़ करने के द्वारा मानव संसाधन प्रणाली में सुधार किया।

सेविवर्गीय नीतियों के निर्धारण के साथ उनका अनुपालन भी अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। अधिकांशतः औद्योगिक परिवेदनाओं का जन्म भ्रम, संशय तथा असमानतापूर्ण व्यवहार के कारण होता है। कोई भी नीति कितनी भी सुदृढ़ क्यों न हो उसकी सफलता का श्रेय क्रियान्वयन क्षमता तथा मानवीय संवेदनशीलता को ही जाता है। औद्योगिक सम्बन्धों की दृष्टि से कर्मचारी सन्तुष्टि, सुरक्षा, सम्मान, स्वतन्त्रता, सहभागिता आदि अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। टाटा स्टील को सेविवर्गीय नीतियों की दृष्टि

से श्रेष्ठतम नियोक्ताओं में सम्मिलित किया जाता है। वहाँ 'नो रिट्रेन्चमेन्ट' पॉलिसी (निष्कासन मुक्त नीति) का पालन किया जा रहा है[2] तथा वहाँ कई दशकों से कोई गम्भीर श्रम विवाद उत्पन्न नहीं हुआ है।

12.3.5 सूचना प्रबन्धन योजनाएं एवं नीतियाँ

सूचना प्रबन्धन आधुनिक युग का सबसे चुनौतीपूर्ण कार्य है। सूचना की आवश्यकता संगठन के अन्दर तथा बाहर सभी स्थानों पर विभिन्न पक्षों के मध्य समन्वयन तथा कार्यों को उचित गति व नियन्त्रण प्रदान करने के लिए होती है। सूचनाओं के ससमय व सही प्रारुप में प्राप्त हो जाने तथा उसका उचित विश्लेषण किये जाने से व्यापार के विकास की गति पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। संगठन को नियोजन, उत्पादन, वित्त, विपणन, मानव संसाधन आदि क्षेत्रों में सूचना व तकनीकी प्रबन्धन की आवश्यकता होती है। अपने ग्राहकों की आवश्यकताओं व रुचियों का अनुमान लगाने के लिए कम्पनी विभिन्न प्रकार के सर्वेक्षण स्वयं अथवा विशेषज्ञ संस्थाओं के माध्यम से आयोजित करती है। इसके परिणामों का विश्लेषण करके कम्पनी अपने उत्पादन को दिशा प्रदान करती है। जिन ग्राहकों को कम्पनी ने अपना उत्पाद अथवा सेवा प्रदान किया है, उनसे प्रतिक्रिया जानकर अपने उत्पाद का विकास किया जाता है। ई–कामर्स ने विपणन के क्षेत्र में सूचना तकनीक के प्रयोग के द्वारा सम्पूर्ण परिदृश्य बदल दिया है। अब ग्राहकों को उनके घर बैठे उनकी रुचि का कोई भी उत्पाद किसी भी समय मितव्ययी मूल्य पर प्राप्त हो जाता है। विक्रयोपरान्त सेवा किसी भी व्यावसायिक संगठन के निरन्तर विकास के लिए अनिवार्य है। मारुति कम्पनी अपनी कारों के ग्राहकों को समय–समय पर सर्विस कराने तथा बीमा नवीनीकरण आदि की जानकारी देती है।

वित्तीय सेवाओं के सम्बन्ध में भी सूचना तकनीक का प्रयोग लाभदायक होता है। बैंकों में साप्ताहिक आधार पर जमाराशि पर एक निश्चित प्रतिशत नकद कोषानुपात (सी0आर0आर0) के रुप में भारतीय रिजर्व बैंक में रखना होता है। इस राशि के कम होने पर दण्डात्मक व्यवस्था है अतः बैंक अधिक राशि रखकर स्वयं को सुरक्षित करते हैं। कोर बैंकिंग सोल्यूशन (सी0बी0एस0) के प्रयोग से बैंक अपनी सभी शाखाओं पर जमा राशि का सही योग जान पाते हैं तथा उपयुक्त मात्रा में राशि नकद कोषानुपात के रुप में रखकर शेष राशि का निवेश लाभप्रद कार्यों में करते हैं, जिससे उनकी लाभप्रदता बढ़ जाती है। ई–बैंकिंग ने उपभोक्ताओं की अनावश्यक धन को घर में रोकने की आदत डालकर चलन में मुद्रा की वास्तविक मात्रा बढ़ा दी है जिससे बैंकिंग के क्षेत्र में तीव्र विकास हुआ है। बैंकिंग के क्षेत्र में फिनैकल व अन्य सोफ्टवेयर भी देश–विदेश में फैले हुए व्यवसाय को एकीकृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रहे हैं।

उत्पादन के क्षेत्र में सूचना तकनीक के उचित प्रबन्धन के द्वारा नये प्रयोगों के सम्बन्ध जानकारी प्राप्त करने तथा उन पर प्रतिक्रिया प्राप्त करने में आसानी होती है। वैश्विक स्तर पर वैचारिक आदान– प्रदान के द्वारा शोध कार्यों को उत्पादन के क्षेत्र में लागू किया जाता है।

आधुनिक व्यापार जगत में सैप एक ऐसे सोफ्टवेयर के रुप में प्रचलित हुआ है जिसने वित्त, लेखा, मानव संसाधन, विपणन आदि क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तनों का मार्ग प्रशस्त किया है। सैप जर्मन कम्पनी सैप एसई द्वारा विकसित एक साफ्टवेयर है जिसका पूर्ण नाम 'सिस्टम्स एप्लीकेशन्स प्रोडक्स (एस0ए0पी0) इन डाटा प्रोसेसिंग' है। इसके विभिन्न मॉड्यूल व्यापार के विभिन्न क्षेत्रों में सूचनाओं का उद्देश्यपूर्ण संकलन तथा प्रसंस्करण करते हैं। सैप के प्रयोग से कम्पनी को अपने व्यापार पर उचित नियंत्रण के साथ व्ययों को बचाने में भी सहायता मिलती है। सैप के अतिरिक्त टैली, बिजी–बी आदि साफ्टवेयर भी छोटे स्तर पर व्यापार संचालन में सहायक होते हैं।

सूचना प्रबन्धन के विकास की योजनाओं व नीतियों के विकास तथा क्रियान्वयन के लिए संगठन को अपनी सूचनाओं को अद्यतन रखना आवश्यक होता है। उसे अपने व्यापार के अनुरुप सूचनाओं को विकसित करने तथा उनका संकलन, समीक्षा तथा विश्लेषण करने के लिए ढॉचा विकसित करना होता है। आधुनिक युग में सूचना की सत्यता, शुद्धता तथा समयबद्धता को ध्यान में रखना आवश्यक होता है। प्रत्येक व्यावसायिक संगठन की अपनी वेबसाइट होती है जिससे उसके समस्त हितधारक सम्बन्धित सूचनाएं प्राप्त करते हैं। सूचनाओं के उचित प्रदर्शन से संगठन के कार्यों में पारदर्शिता आती है तथा उसकी साख में वृद्धि होती है।

विभिन्न कार्यात्मक नीतियों का समन्वयन–

व्यावसायिक संगठनों की विभिन्न कार्यात्मक नीतियों का अपना–अपना महत्व है। कोई भी संगठन इनमें से किसी को भी न तो छोड़ सकता है और न ही सभी नीतियों उनके मूल स्वरुप में लागू कर सकता है। प्रत्येक संगठन की अपनी कुछ विशिष्टताएं होती हैं तथा प्रत्येक की प्राथमिकताएं भी पृथक होती हैं। अतः उन्हें विभिन्न नीतियों के समन्वय के द्वारा अपनी एक विशिष्ट नीति तैयार करनी होती है जिसके आधार पर वह अपने कर्मचारियों, ग्राहकों तथा अन्य पक्षकारों से व्यवहार करती है।

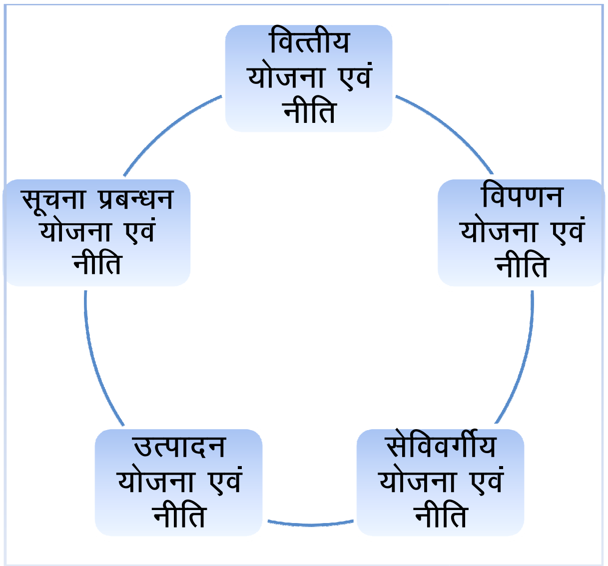

उपरोक्त के अतिरिक्त संगठन की आवश्यकता के अनुरुप अन्य अनेक योजना व नीति तैयार कर क्रियान्वयन के लिए तैयार की जा सकती हैं। उपरोक्त नीतियों का समन्वयन व सुदृढीकरण करते समय निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान में रखा जाना चाहिएः

1. **सहजता एवं व्यवहार्यता** – व्यापार की विभिन्न कार्यात्मक नीतियों तथा योजनाओं के सफल क्रियान्वयन के लिए यह आवश्यक है कि प्रबन्धन उनकी सहजता तथा व्यवहार्यता का परीक्षण करे। वही नीति सफल हो सकती है जो संगठन के सभी पक्षकारों, हितधारकों तथा वैधानिक संस्थाओं को सहज स्वीकार्य हो तथा उसके लागू करने से किसी प्रकार की व्यावहारिक अथवा विधिक जटिलता का सामना न करना पड़े। विभिन्न विभागों की नीतियों में भी समन्वय होना आवश्यक है। यदि विभिन्न विभागों की नीतियों में पारस्परिक मतभेद है तो उसका निवारण किया जाना चाहिए।
2. **संगठन संरचना के अनुरुप**– नीतियों के क्रियान्वयन से पूर्व संगठन संरचना का अध्ययन किया जाना आवश्यक है। विभिन्न प्रकृति तथा आकार वाले व्यापारों के लिए अलग प्रकार की संरचना तथा तदनुसार नीतियों का क्रियान्वयन किया जाता है। टेलीकॉम इण्डस्ट्री और फार्मा इण्डस्ट्री के लिए नीति एक प्रकार की नहीं हो सकती। इसी प्रकार नई व पुरानी तथा बड़ी व छोटी कम्पनियों के लिए नीतियों व योजनाओं का स्वरुप अलग होना स्वभाविक है।
3. **विषमता व अनिश्चितताओं का समायोजन**– नीतियों में लोचशीलता का होना आवश्यक है। नीतियों का सफल क्रियान्वयन तभी सम्भव है जबकि इसमें विभिन्न विषमताओं तथा अनिश्चितताओं का सामना करने क्षमता हो। उत्पादन, विपणन, सेविवर्गीय तथा संचालन सम्बन्धी योजनाओं को परस्पर सहयोगी होना चाहिए। बाजार में मॉग के उच्चावचन तथा सरकारी नीतियों के बदलाव के आधार पर संगठन की नीतियों में स्वतः परिवर्तित होने की क्षमता होनी चाहिए। इसका लाभ यह होता है कि निर्णयन की गति तीव्र होती है तथा संगठन अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफल होता है।
4. **पूर्ववर्ती व पश्चातवर्ती संयोजनों का निर्धारण**– नीतियों को केवल बनाना ही पर्याप्त नहीं है, उनका क्रियान्वयन करने के लिए पूर्ववर्ती तथा पश्चातवर्ती कड़ियों को जोड़ना भी व्यावहारिक होता है। यह निर्धारित होना चाहिए कि कम्पनी की नीतियॉ किन तत्वों से प्रभावित होंगी? तथा, किन तत्वों को प्रभावित करेंगी? संगठन की निरन्तरता के लिए इन कड़ियों के निर्धारण तथा समन्वयन की आवश्यकता होती है।
5. **योजनाओं व नीतियों की समयबद्धता व सामयिकता**– कोई नीति कितनी भी कुशल एवं उपयुक्त क्यों न हो, वह तभी सफल होती है जबकि उसे सही समय पर तथा सही रुप में लागू किया जाये। बाजार की मॉग का समय पूर्व आकलन करके उचित मात्रा में पूॅजी की व्यवस्था करना, कार्मिकों की भर्ती करना तथा उत्पादन विधियों में परिवर्तन करना विभागीय नीतियों के समन्वय

पर ही निर्भर है। इन नीतियों में से किसी एक के भी स्तर पर कमी आने की दशा में सम्पूर्ण संगठन अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में असफल हो सकता है।

12.4 परिचालनात्मक क्रियान्वयन

किसी संगठन की सफलता उसकी कार्यात्मक रणनीतियों में तो निहित होती ही है किन्तु परिचालनात्मक क्रियान्वयन की मजबूती के बिना इसे प्राप्त करना सम्भव नहीं है। परिचालनात्मक सक्षमता के विकास के द्वारा कम्पनी अपने उत्पाद में कमियों को दूर करने तथा भविष्य में कमियॉ न होने देने की प्रयास करती है जिससे उत्तरोत्तर गुणवत्तापूर्ण उत्पाद प्राप्त हो सकें। परिचालनात्मक दक्षता के द्वारा कम्पनी का प्रयास उत्तम को उत्कृष्टतम बनाना होता है। कम्पनी का उत्पाद गुणवत्तापूर्ण हो, न्यूनतम लागत पर उत्पादित हो, तीव्र गति से उत्पादित हो, उसकी बिक्री की गति अधिक हो, पूॅजी का प्रवाह अनुकूलतम हो आदि विषय परिचालनात्मक क्रियान्वयन के क्षेत्र हैं।

12.4.1 परिचालनात्मक प्रभावशीलता–

परिचालनात्मक प्रभावशीलता का अर्थ कम्पनी की नीतियों को इस प्रकार लागू करना है कि उसके परिणाम सकारात्मक हों तथा कम्पनी अपने उद्देश्यों में सफल हो सके। परिचालनात्मक प्रभावशीलता को सामान्यतः इस अर्थ में समझा जाता है कि कम्पनी अपने निर्धारित मार्ग पर सफलतापूर्वक अग्रसर हो सके किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि कम्पनी सुनिश्चित सफलता प्राप्त करेगी क्योंकि इसके लिए रणनीति का उपयुक्त होना भी आवश्यक है। उपयुक्त नीति का उपयुक्त क्रियान्वयन ही सफलता प्रदान कर सकता है अन्यथा अनुपयुक्त नीति का उपयुक्त क्रियान्वयन के गम्भीर परिणाम हो सकते हैं। एम0ई0 पोर्टर के अनुसार– 'परिचालनात्मक प्रभावशीलता के अन्तर्गत दक्षता सम्मिलित है किन्तु यह दक्षता तक सीमित नहीं है। इसमें वे सभी व्यवहार संदर्भित हैं जो कम्पनी को अपने संसाधनों के उच्चतर प्रयोग की अनुमति देते हैं। यथा– उत्पाद में कमियों का न्यूनीकरण अथवा उच्चतर उत्पाद को तीव्रता से विकसित करना।'

यह महत्वपूर्ण है कि समान अथवा कम संसाधन होने पर भी कुछ कम्पनियॉ अपने प्रतिद्वद्वियों की तुलना में अधिक सफल तथा लाभप्रद अवस्था में होती हैं। एक पुरानी कहानी के माध्यम से इसे आसानी से समझा जा सकता है। एक किसान ने अपने दो बच्चों को अपनी सारी जमीन व जायजाद बराबर बॉट दी। कुछ वर्ष पश्चात् एक भाई समृद्ध हो गया किन्तु दूसरे की जमीन भी बचानी कठिन हो गई। परेशान निर्धन भाई सहायता मॉगने के लिए अपने पिता के पास गया तो वह बोले– तुम अपने मजदूरों से कहते थे कि चलो काम करो, जबकि तुम्हारा भाई कहता था कि आओ काम करें। तुम्हारा भाई सही रणनीति का पालन करता था तथा निरन्तर उसका क्रियान्वयन सुनिश्चित करता था। तुम्हारी रणनीति ठीक नहीं थी यद्यपि तुम उसका पालन (क्रियान्वयन) खूब करते थे। यहॉ गलत रणनीति का पालन करने के कारण स्थिति दयनीय हो गई जबकि सही रणनीति तथा उसके उचित क्रियान्वयन ने दूसरे भाई को अपने समान संसाधन व अवसर वाले दूसरे भाई की तुलना में अधिक सम्पन्न व सफल बना दिया।

परीक्षाओं में भी छात्र अपने सहपाठियों से आगे निकलने के लिए इसी प्रकार के रणनीतिक प्रयास करते हैं। समान विद्यालय, समान अध्यापक, समान पाठ्यक्रम तथा समान समय मिलने पर भी कुछ छात्र अपने साथियों की तुलना में अधिक अंक अर्जित करने में सफल होते हैं।

12.4.2 परिचालनात्मक प्रभावशीलता के क्षेत्र–

एफ0 डब्ल्यू0 टेलर द्वारा प्रतिपादित वैज्ञानिक प्रबन्ध के सिद्धान्त में समय अध्ययन, गति अध्ययन, थकान अध्ययन आदि के द्वारा अपने संसाधनों को जानने व उचित प्रयोग करने पर बल दिया गया है। काजमी एवं काजमी द्वारा संचालनात्मक प्रभावशीलता के क्षेत्र 4पी के माध्यम से समझाए गए हैं, ये हैं–

1. प्रोडक्टिविटी अर्थात् उत्पादकता
2. प्रोसेस अर्थात् प्रक्रिया
3. पेस अर्थात् गति, तथा
4. पीपुल अर्थात् व्यक्ति

1. **उत्पादकता–** उत्पादकता से आशय उपलब्ध संसाधनों के अनुकूलतम उपयोग से है। इसके अन्तर्गत मानव व भौतिक संसाधनों के उचित प्रयोग के द्वारा सकारात्मक परिणाम प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। उत्पादकता बढ़ाने के लिए सभी संगठन नवीन तकनीक अपनाने का प्रयास करते हैं। विगत दशकों में इस दिशा मे अनेक प्रयास किये गये हैं। सकल गुणवत्ता प्रबन्धन (टोटल क्वालिटी मैनेजमेन्ट–टी0क्यू0एम0) की अवधारणा प्रबन्धन के सभी क्षेत्रों में उत्पादकता वृद्धि का प्रयास करती है। सत्तर के दशक में सटीक समय (जस्ट इन टाइम–जे0आई0टी0) अवधारणा ने उत्पादन प्रक्रिया के सरलीकरण तथा उत्पादन चक्र के सुव्यवस्थीकरण के द्वारा औद्योगिक संगठनों में समय पालन की दशा में सुधारात्मक परिवर्तन प्रदर्शित किया। इसके बाद, इसीप्रकार का सुधार चक्रावधि न्यूनीकरण (साईकिल टाइम रिडक्शन – सी0टी0आर0) तथा अनुकूलतम उत्पादन तकनीक (ओप्टिमाइज्ड प्रोडक्शन टेक्नीक–ओ0पी0टी0) की अवधारणा से भी देखने में आया। अस्सी के दशक में आई लोचपूर्ण उत्पादन प्रणाली (फ्लेक्सिबल प्रोडक्शन सिस्टम–एफ0पी0एस0) ने कम्प्यूटर के प्रयोग द्वारा उचित मात्रा में मॉग के आधार पर उत्पादन कर

अनावश्यक स्टॉक रखने अथवा माल के खराब होने के जोखिम को कम कर दिया है। उदाहरण के लिए पहले पेन्ट उद्योग द्वारा विभिन्न रंग के पेन्ट का निर्माण करके बिक्री हेतु भेजा जाता था। इसमें किसी भी दुकान पर सीमित मात्रा में तथा सीमित रंगों का ही स्टॉक रखा जाना सम्भव था। इस व्यवस्था में उत्पादक को विभिन्न रंगों का उत्पादन करना होता था, विक्रेता को अधिक मात्रा में स्टॉक रखना होता था जिसमें पूॅजी अवरुद्ध होती थी तथा ग्राहक को अपनी पसन्द के रंग उपलब्ध नहीं हो पाते थे जिसके कारण उसे अन्य रंगों से समझौता करना पड़ता था। नई तकनीक के साथ कम्पनी ने हर शहर में कम्प्यूटर आधारित मशीन 'कलर बैंक' भेज दी जो मनचाहे रंग बनाने में सक्षम थी। अब विक्रेता को बेस कलर तथा कुछ रंग लेने होते हैं जिनके विभिन्न समायोजनों से सैकड़ों रंग व शेड तैयार हो जाते हैं। ग्राहक कम्प्यूटर पर अपने मनपसन्द रंग का चयन करता है तथा कम्प्यूटर से जुड़ी मशीन वही रंग केवल कुछ मिनट में बना देता है। इस तकनीक से उत्पादक, विक्रेता तथा ग्राहक सभी को लाभ हुआ है।

लीन मैन्यूफैक्चरिंग की अवधारणा ने भी उत्पादन की विभिन्न प्रक्रियाओं को एकीकृत करके तथा विभिन्न उत्पादों को लोचपूर्ण ढंग से उत्पादित करके उत्पादन जगत में क्रान्तिकारी बदलाव किये हैं। इसके अतिरिक्त अन्य अनेकों तकनीकों का भी उद्योगों की उत्पादकता बढ़ाने में विशेष योगदान है।

2. **प्रक्रिया–** प्रक्रिया का अर्थ है कार्य का सुविचारित, सुव्यवस्थित तथा सुचारु सम्पादन। इसमें कार्य की लागत व व्यवहार्यता को ध्यान में रखते हुए गुणवत्ता प्रबन्धन का प्रयास किया जाता है। यह माना जाता है कि प्रक्रिया में सुधार के द्वारा ही कोई संगठन उत्पादन–लागत में मितव्ययिता, शीघ्रता तथा सरलता प्राप्त कर अपने प्रतिस्पर्धियों पर विजय प्राप्त कर सकता है। किसी प्रक्रिया को स्वयं सम्पन्न कराने की अपेक्षा बाहरी संस्था से कराकर लागत में कमी लाई जा सकती है। नब्बे के दशक में बी0पी0आर0, बी0पी0ओ0, के0पी0ओ0 आदि अवधारणाओं ने उद्योग जगत में प्रक्रिया स्तर पर क्रान्तिकारी परिवर्तन किये हैं। आज विदेशों में स्थित कम्पनियों के शिकायत निवारण प्रकोष्ठ भारत से संचालित हो रहे हैं। सम्पूर्ण प्रक्रिया टेलीफोन पर आधारित तथा कम्प्यूटर द्वारा नियंत्रित होने के कारण किसी भी प्रकार से गुणवत्ता में कमी नहीं आती है। वरन् उक्त देशों की तुलना में भारतीय मजदूरी दरों में कमी होने के कारण कम्पनी की लागत में कमी आती है तथा भारतीय कम्पनी को काम के अतिरिक्त भारतीय व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त होता है। इससे अर्थव्यवस्था को भी लाभ पहुॅचता है। ई0आर0पी0, सैप, फिनेकल जैसे कम्प्यूटर आधारित कार्यक्रमों ने वित्तीय लेखांकन के कार्यों को इकाई आधारित प्रणाली से निकाल कर निगम स्तरीय स्वरुप प्रदान किया है। इनके कारण सम्पूर्ण संगठन के कार्यों का एकीकरण कर पाना सम्भव हुआ है जिससे एक ओर कम्पनी का अपनी गतिविधियों पर नियन्त्रण मजबूत हुआ है

वहीं दूसरी ओर लागत में कटौती करने में भी सफलता मिली है। आपूर्ति श्रंखला प्रबन्धन (सप्लाई चेन मैनेजमेन्ट– एस0सी0एम0), ई–बैंकिंग तथा ई–कामर्स ने विपणन की प्रक्रिया में आमूलचूल परिवर्तन कर दिया है।

3. **गति–** गति में कार्य के सहज प्रवाह तथा निर्बाध निस्तारण का परीक्षण किया जाता है। गति अध्ययन, थकान अध्ययन आदि के द्वारा कार्य को न्यूनतम प्रयास में प्रभावशाली परिणाम प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है। टेलर द्वारा प्रतिपादित गति–अध्ययन, समय–अध्ययन व थकान–अध्ययन की अवधारणा ने कार्य को सहज प्रवाह में किये जाने का मन्त्र प्रदान किया। उदाहरण के लिए पुरानी बैंकिंग प्रणाली में जब कोई ग्राहक चैक भुगतान के लिए शाखा पर जाता था तो उसे चैक के बदले टोकन मिलता था। चैक सम्बन्धित लिपिक द्वारा खाते में लिखा जाता था, फिर एक चपरासी उसे लेकर खाताबही के साथ अधिकारी के पास जाता था, फिर वह खाताबही वापस लिपिक के पास तथा चैक रोकडिये के पास जाता था, जहॉ टोकन प्राप्त कर भुगतान किया जाता था। इसमें कार्य में विलम्ब तथा वातावरण में बोझिलता रहती थी। बाद में टेलर प्रणाली प्रारम्भ होने पर एक ही काउन्टर से सारा कार्य होने लगा तो कार्य की गति बढ गई। आधुनिक बैंकिंग में ए0टी0एम0 तथा ई–बैंकिंग ने कार्य की गति को तीव्रतम तथा प्रवाह को सरलतम बना दिया है, जिससे साख का सृजन होने से चलन में मुद्रा की मात्रा बढ़ गई है। इसका सीधा प्रभाव बैंकों की लाभप्रदता में वृद्धि के रुप में हुआ है। कोर बैंकिंग सोल्यूशन (सी0बी0एस0) ने भी बैंकिंग के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तनों को आधार दिया है।

4. **व्यक्ति–** व्यक्ति किसी भी संगठन का आधार होते हैं। इसके अन्तर्गत संगठन के समस्त हितधारकों को सम्मिलित किया जाता है जिनको आधार बनाकर ही संगठन की नीतियों का क्रियान्वयन किया जाता है। अंशधारक, कर्मचारी, ग्राहक, आपूर्तिदाता आदि सभी पक्षकारों के हितों पोषित करने का प्रयास किया जाता है।

पूर्वकाल में कर्मचारी को एक उपकरण माना जाता था, उसका शोषण होता था तथा बलपूर्वक काम लिया जाता था जिससे उसका मनोबल गिरा हुआ होता था। प्रबन्धकीय विचारों के विकास के साथ व्यक्ति को संसाधन का स्थान प्रदान करते हुए उसे विकास का एक आवश्यक अंग माना गया। औद्योगिक सम्बन्धों को सम्मान देते हुए उसके आर्थिक तथा सामाजिक कल्याण की अवधारणा का पालन किया गया। न्यूनतम वेतन प्रणाली, प्रोत्साहन राशि, बोनस, ओवर–टाइम, पेंशन, भविष्यनिधि आदि के लाभ प्रदान किये गये। साथ ही, यातायात सुविधा, निवास सुविधा, सस्ती दरों पर भोजन, प्रसूती अवकाश, सम्मान आदि अनेकों लाभ भी कर्मचारियों को दिये गये जिससे कि वे मन लगाकर कार्य कर सकें। वेतन में सुनिश्चित न्यूनतम वृद्धि तथा समयबद्ध पदोन्नति आदि की व्यवस्था ने कर्मचारियों को संगठन के प्रति अधिक निष्ठावान बनाया है जो संगठन व कर्मचारियों के लिए लाभकारी है।

वस्तुतः व्यक्ति प्रबन्धन के विभिन्न कारकों (मानव, मशीन, मुद्रा, माल, प्रणाली तथा बाजार) में से एक तो है ही, साथ ही वह अन्य कारकों का नियंत्रणकर्ता भी है। संगठन की समस्त नीतियों का क्रियान्वयन उसी के माध्यम से किया जाता है, अतः मानव को सर्वाधिक महत्व दिया जाना आवश्यक है।

संचालन की प्रभावशीलता का आकलन उपरोक्त चार कारकों उत्पादकता, प्रक्रिया, गति तथा मानव की प्रगति के आधार पर ही किया जा सकता है।

12.4.3 परिचालनात्मक क्रियान्वयन नीतियों का चुनाव तथा अनुपालन–

व्यापार एक सतत परिवर्तनशील प्रक्रिया है। गलाकाट प्रतियोगिता के इस युग में किसी भी प्रकार अपने प्रतिस्पर्धी संगठन की तुलना में आगे निकलने का प्रयास हर कम्पनी करती है। तकनीकी विकास ने परिवर्तन की गति को तीव्रतर कर दिया है। के0ग्रिन्ट के अनुसार– विगत 40 वर्षों में प्रत्येक वर्ष कम से कम एक नई तकनीक का अभ्युदय अवश्य हुआ है। इसीप्रकार, रिग्बी एवं बिलोद्यू मानते हैं कि वर्ष 1993 से 2005 की अवधि में विभिन्न संगठनों द्वारा कम से कम 65 तकनीकों का प्रयोग अपनी नीतियों के क्रियान्वयन के लिए किया गया।[6] जस्ट इन टाइम, काइजन, सी0टी0आर0, ओ0पी0टी0, एफ0पी0एस0 जैसी अनेक योजनाएं व्यापारिक संगठनों द्वारा अपनाई गई हैं। कुछ रणनीतियों का व्यापार जगत में खूब स्वागत किया गया किन्तु कुछ अन्य शीघ्र ही काल कलवित हो गईं। विभिन्न उपलब्ध प्रबन्धकीय तकनीकों में से सर्वोत्तम का चुनाव निम्न आधार पर किया जाता है–

- संगठन की अवस्था
- संगठन की आवश्यकता
- बाजार की स्थिति
- तकनीकी ज्ञान का स्तर
- आर्थिक व्यवहार्यता
- सरकार की नीतियॉ
- औद्योगिक सम्बन्धों की स्थिति
- अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक व व्यापारिक दशाएं, आदि।

उपरोक्त आधारों पर यह निर्धारित किया जाता है कि कौन सी क्रियान्वयन नीति ऐसी है जो सरलता व सहजता के साथ, बिना किसी विधिक अथवा सामाजिक विवाद के अपनाई जा सकती है तथा जिनके माध्यम से संगठन अपनी संदृष्टि, ध्येय व उद्देश्यों को पूर्ण कर सके।

12.5 सारांश

रणनीतिक क्रियान्वयन के अन्तर्गत कार्यात्मक रणनीति में उत्पादन, वित्त, विपणन, मानव संसाधन, सूचना प्रबन्धन आदि के क्षेत्र में रणनीति के क्रियान्वयन तथा उनके समन्वयन का परीक्षण किया जाता है। कार्यात्मक क्रियान्वयन संगठन की वृहद् रणनीति का व्यावहारिक पक्ष है। इसे उपयुक्तता (Fit) के रुप में भी समझा जा सकता है। उपयुक्तता लम्बवत् तथा समतल दोनों प्रकार की हो सकती है। लम्बवत्

उपयुक्तता से आशय संगठन के विभिन्न स्तरों पर नीतियों के समन्वयन व क्रियान्वयन से है। समतल उपयुक्तता के अन्तर्गत किसी संगठन के विभिन्न कार्यों का आन्तरिक संयोजन किया जाता है।

कार्यात्मक रणनीति के क्रियान्वयन के लिए कार्यात्मक योजनाओं व नीतियों की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त वित्त, विपणन, उत्पादन, कार्मिक आदि विभिन्न क्षेत्रों की योजनाओं और नीतियों का निर्माण व क्रियान्वयन संगठन की रणनीतिक सफलता के लिए किया जाता है। वित्त की प्राप्ति तथा उपयोग को प्रभावशाली बनाने हेतु सही मात्रा में, सही समय पर तथा अधिकतम मितव्ययिता के साथ वित्त की प्राप्ति तथा वित्तीय आवश्यकताओं का बजटन इस प्रकार किया जाता है।

निर्माणी उद्योगों में कच्चे माल की सामग्री की चयन, शोध एवं अनुसंधान के द्वारा उत्पाद विकास, सामग्री एकत्रण, निर्माण तकनीक का चुनाव, निर्माण प्रक्रिया के स्तर व उत्पादन की मात्रा का निर्धारण, उत्पादन लक्ष्यों को तय करना, गुणवत्ता नियन्त्रण एवं विकास, निर्मित माल का भण्डारण आदि विषयों के लिए योजनाओं को क्रियान्वित किया जाता है। उत्पादक को उत्पाद की गुणात्मकता तथा मात्रात्मकता के सम्बन्ध में निर्मित नीतियों को निरन्तर सजग रह कर क्रियान्वित करना होता है। गुणवत्ता के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार की कमी होने पर कम्पनी के उत्पाद की मॉग के साथ ही उसकी साख भी दुष्प्रभावित हो सकती है। कम्पनी अपने विपणन सम्मिश्र (उत्पाद, मूल्य, स्थान तथा संवर्द्धन) पर नियन्त्रण करके तथा उस पर कम्पनी की नीतियों का कुशलतापूर्वक क्रियान्वयन करके ही अपने अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त कर सकती है। कम्पनी अपनी विपणन नीतियों का निर्धारण अपने उत्पाद के प्रकार के अनुसार करती है तथा एक सुनिश्चित रणनीति के द्वारा उत्पाद को बाजार में स्थापित करती है।

सेविवर्गीय योजनाओं तथा नीतियों में अधिकारियों व कर्मचारियों की आवश्यक संख्या का आकलन करने, उन्हें संगठन की ओर आकृष्ट करने, भर्ती करने, वेतन निर्धारण व वितरण, कार्य आबन्टन करने, अनुशासन स्थापित करने तथा अन्य अनेक महत्वपूर्ण विषयों का संचालन सेविवर्गीय विभाग का कार्य होता है। सेविवर्गीय नीतियों की सफलता का श्रेय क्रियान्वयन क्षमता तथा मानवीय संवेदनशीलता को ही जाता है। सूचना प्रबन्धन के विकास की योजनाओं व नीतियों के विकास तथा क्रियान्वयन के लिए संगठन को अपनी सूचनाओं को अद्यतन रखना आवश्यक होता है।

किसी संगठन की सफलता उसकी कार्यात्मक रणनीतियों में तो निहित होती ही है किन्तु परिचालनात्मक क्रियान्वयन की मजबूती के बिना इसे प्राप्त करना सम्भव नहीं है। परिचालनात्मक दक्षता के द्वारा कम्पनी का प्रयास उत्तम को उत्कृष्टतम बनाना होता है। संचालनात्मक प्रभावशीलता के चार क्षेत्र बताए गए हैं– उत्पादकता, प्रक्रिया, गति तथा व्यक्ति। इन क्षेत्रों में उत्पाद की गुणवत्ता, कार्य की प्रणाली, सहजता तथा सम्बद्ध हितधारकों की सन्तुष्टि से ही परिचालनात्मक नीतियों के क्रियान्वयन की सफलता को प्रमापित किया जा सकता है।

12.6 शब्दावली

लम्बवत् उपयुक्तता संगठन की किसी गतिविधि का विभिन्न स्तरों पर क्रियान्वयन। यथा– निगम स्तर, व्यापार स्तर, कार्य स्तर आदि

समतल उपयुक्तता संगठन की विभिन्न गतिविधियों अथवा क्रियाओं का समान स्तर पर क्रियान्वयन । यथा– विपणन नीति, उत्पादन नीति, सूचना प्रबन्धन नीति आदि।

उत्पाद जीवन चक्र मनुष्य के जीवन के समान किसी उत्पाद का परिचय, विकास, संतृप्ति तथा पतन की अवस्थाओं से गुजरना

ई–बैंकिंग इलेक्ट्रोनिक बैंकिंग अर्थात इन्टरनेट के माध्यम से बैंकिंग लेनदेन करना

ई–कामर्स इलेक्ट्रोनिक कामर्स अर्थात इन्टरनेट के माध्यम से व्यावसायिक गतिविधियों का संचालन

विज्ञापन सम्प्रेषण का अवैयक्तिक स्वरुप जिसमें विचारों, वस्तुओं अथवा सेवाओं का प्रस्तुतीकरण किया जाता है। इसके लिए किसी प्रत्यावर्तक को भुगतान किया जाता है।

विक्रय सम्वर्द्धन विविध प्रलोभनों, अधिकांशतः अल्पकालिक, का समूह जिनको उपभोक्ता द्वारा तीव्र व अधिक क्रय करने हेतु उत्प्रेरक के रुप में प्रयोग किया जाता है। उदाहरण– छूट, अतिरिक्त सामग्री आदि।

प्रचार किसी वस्तु अथवा सेवा के उपभोक्ताओं अथवा अन्य सम्बन्धित पक्षकारों द्वारा व्यक्त विचार जिसके लिए कोई भुगतान नहीं किया जाता किन्तु वे बाजार मॉग को प्रभावित करते हैं।

वैयक्तिक विक्रय व्यक्तियों के सम्मुख व्यक्तिगत रुप से उपस्थित होकर प्रस्तुतिकरण करना, प्रश्नों का उत्तर देना तथा आदेश प्राप्त करने हेतु प्रत्यक्ष सम्पर्क करना।

प्रत्यक्ष विपणन विक्रेता अथवा सेवाप्रदाता द्वारा सीधे सम्भावित ग्राहकों को विक्रय का प्रयास करना।

एकीकृत विपणन रणनीति	वस्तु के उत्पादन, मूल्य, स्थान तथा सम्वर्द्धन की नीतियों को समन्वित करते हुए एक समेकित प्रभावशाली विपणन नीति बनाया जाना।
पी0एल0सी0	प्रोडक्ट लाइफ साइकिल (उत्पाद जीवन चक्र)
ए0आई0डी0ए0	अटेन्शन, इन्ट्रेस्ट, डिजायर, एक्शन (ध्यानाकर्षण, अभिरुचि, इच्छा, कार्रवाई)
सी0आर0आर0	कैश रिजर्व रेशियो (नकद कोषानुपात)
सी0बी0एस0	कोर बैंकिंग सोल्यूशन
एस0ए0पी0 (सैप)	सिस्टम्स, एप्लीकेशंस, प्रोडक्टस्
टी0क्यू0एम0	टोटल क्वालिटी मैनेजमेन्ट (सकल गुणवत्ता प्रबन्धन)
जे0आई0टी0	जस्ट इन टाइम (समयबद्ध)
सी0टी0आर0	साइकिल टाइम रिडक्शन (चक्रावधि न्यूनीकरण)
ओ0पी0टी0	ऑप्टीमाइज्ड प्रोडक्शन टेक्नीक (अनुकूलतम उत्पादन तकनीक)
एफ0पी0एस0	फ्लेक्सीबल प्रोडक्शन सिस्टम (लोचपूर्ण उत्पादन प्रणाली)
बी0पी0आर0	बिजनेस प्रोसेस रिइन्जीनियरिंग
बी0पी0ओ0	बिजनेस प्रोसेस आउटसोर्सिंग
के0पी0ओ0	नोलेज प्रोसेस आउटसोर्सिंग
ई0आर0पी0	एन्टरप्राइज रिसोर्स प्लानिंग (उद्यम संसाधन नियोजन)
एस0सी0एम0	सप्लाई चेन मैनेजमेन्ट (आपूर्ति श्रंखला प्रबन्धन)
ए0टी0एम0	ऑटोमेटेड टैलर मशीन

12.7 बोध प्रश्न

(क) अपनी प्रगति जॉचें

बताएं निम्न कथन सत्य हैं अथवा असत्य–

(अ) कार्यात्मक योजनाओं तथा नीतियों के विकास की प्रक्रिया औपचारिक तथा अनौपचारिक हो सकती है। (सत्य/असत्य)

(आ) ऋणपत्र कम्पनी के आन्तरिक वित्तीय श्रोत होते हैं। (सत्य/असत्य)

(इ) वाह्य श्रोतों से प्राप्त धन की लागत अपेक्षाकृत कम होती है। (सत्य/असत्य)

(ई) विपणन की उत्पाद अवधारणा के अनुसार ग्राहक उस वस्तु को अधिक पसन्द करता है जो कि अधिक गुणवत्तायुक्त हो। (सत्य/असत्य)

(उ) विक्रय सम्वर्द्धन ऐसे अल्पकालिक प्रयास होते हैं जिनके द्वारा वस्तु का मॉग में उछाल उत्पन्न किया जाता है। (सत्य/असत्य)

(ऊ) प्रचार पर कम्पनी का कोई नियन्त्रण नहीं होता। (सत्य/असत्य)

(ए) प्रचार को विज्ञापन का एक लागतरहित माध्यम माना जाता है।(सत्य/असत्य)

(ऐ) दूरदर्शन पर प्रसारित होने वाले विज्ञापन प्रत्यक्ष विपणन का उदाहरण हैं।

(सत्य/असत्य)

(ओ) वैयक्तिक विक्रय तथा प्रत्यक्ष विपणन समानार्थी शब्द हैं। (सत्य/असत्य)

(ख) अपनी प्रगति जॉचें

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए—

1. उच्च मनोबल वाले संस्थानों में कार्य परिणाम सदा ही .... (सकारात्मक/नकारात्मक) होते हैं।
2. एक ओर मानव स्वयं एक संसाधन है वहीं दूसरी ओर यह अन्य संसाधनों का ....(शोषणकर्ता/ नियन्त्रणकर्ता भी है।
3. टाटा स्टील में ....('नो रिट्रेन्चमेन्ट'/'नो पनिशमेन्ट') पॉलिसी का पालन किया जा रहा है।
7. .एस0ए0पी0 (सैप) आधुनिक व्यावसायिक संगठनों में प्रयोग किया जाने वाला एक बहु—उपयोगी प्रचलित .... (सोफ्टवेयर/हार्डवेयर) है।
8. कार्यात्मक नीतियों का समन्वयन उनके ....(आकार /व्यापार/आकार व व्यापार दोनों) के आधार पर किया जाता है।

9- सटीक समय, चक्रावधि न्यूनीकरण आदि तकनीक परिचालनात्मक प्रभावशीलता के................. (उत्पादन/प्रक्रिया/गति) क्षेत्र को प्रभावित करते हैं।

10. .... (सत्तर/नब्बे) के दशक में बी0पी0आर0, बी0पी0ओ0, के0पी0ओ0 आदि अवधारणाओं ने उद्योग जगत में प्रक्रिया स्तर पर क्रान्तिकारी परिवर्तन किये हैं।
11. उत्पाद, मूल्य, स्थान तथा संवर्द्धन को .... (उत्पादन/विपणन) सम्मिश्र का अंग माना गया है।

12.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

(क) — अपनी प्रगति जॉचें

(अ) सत्य, (आ) असत्य, (इ) सत्य, (ई) सत्य, (उ) सत्य, (ऊ) सत्य, (ए) सत्य, (ऐ) असत्य, (ओ) असत्य.

(ख) — अपनी प्रगति जॉचें

(1) सकारात्मक (2) नियन्त्रणकर्ता (3) नो रिट्रेन्चमेन्ट (4) सोफ्टवेयर (5) आकार व व्यापार दोनों (6) उत्पादन (7) नब्बे (8) विपणन

12.9 स्वपरख प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न—

(अ) लम्बवत उपयोगिता तथा समतल उपयोगिता को समझाइए।

(आ) कार्यात्मक योजना एवं नीतियों की आवश्यकता क्यों पड़ती है?

(इ) आन्तरिक तथा वाह्य श्रोतों से प्राप्त वित्त में से कौन श्रेष्ठ हैं और क्यों?

(ई) उत्पादन सम्बन्धी योजनाओं और नीतियों के क्रियान्वयन में किन बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए?

(उ) विपणन नीतियों के अन्तर्गत मूल्य नीति के क्रियान्वयन में बाजार दशाओं का क्या प्रभाव होता है?

(ऊ) क्या प्रत्यक्ष विपणन और वैयक्तिक विपणन समानार्थी होते हैं?

(ए) परिचालनात्मक नीतियों के क्रियान्वयन के लिए किन तत्वों को ध्यान में रखा जाना चाहिए?

निबन्धात्मक प्रश्न–

7. रणनीतिक के कार्यात्मक क्रियान्वयन से आप क्या समझते हैं? योजनाओं व नीतियों का क्रियान्वयन करने के प्रमुख आधार कौन से हैं? समझाइए।
8. वित्तीय नीतियों के क्रियान्वयन की दृष्टि से वित्त के श्रोत तथा आबन्टन पर विस्तृत चर्चा कीजिए।
3. क्रियान्वयन की दृष्टि से विपणन की उत्पाद, मूल्य, स्थान व सम्वर्द्धन से सम्बन्धित नीतियों को समझाइए।
4. कार्यात्मक नीतियों के समन्वयन की क्या आवश्यकता है? इसके लिए किन बिन्दुओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए।
5. परिचालनात्मक प्रभावशीलता से क्या आशय है? इसके क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।
6. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–

   (अ) विपणन सम्मिश्र

   (ब) उत्पाद जीवन चक्र का मूल्य नीति पर प्रभाव

   (स) सूचना प्रबन्धन नीतियों का क्रियान्वयन

   (द) उत्पादकता के क्षेत्र में परिचालनात्मक प्रभावशीलता

   (ई) एकीकृत विपणन रणनीति

12.10 सन्दर्भ पुस्तकें

1 अजहर काजमी एवं अडेला काजमी, स्ट्रेटेजिक मैनेजमेन्ट, मैकग्राहिल एजुकेशन (इण्डिया)प्रा0 लि0, नई दिल्ली (2015), पृष्ठ 463 में संदर्भित।

2 अजहर काजमी एवं अडेला काजमी, स्ट्रेटेजिक मैनेजमेन्ट, मैकग्राहिल एजुकेशन (इण्डिया) प्रा0 लि0, नई दिल्ली (2015), पृष्ठ 464 (अनूदित)।

3 एम0ई0पोर्टर, ह्वाट इज स्ट्रेटेजी? हावर्ड बिजनेस रिव्यू (नवम्बर–दिसम्बर 1996) पृ062।

4 अजहर काजमी एवं अडेला काजमी, स्ट्रेटेजिक मैनेजमेन्ट, मैकग्राहिल एजुकेशन (इण्डिया) प्रा0 लि0, नई दिल्ली (2015), पृष्ठ 477 में संदर्भित।

5 के0 ग्रिन्ट, फजी मैनेजमेंटः कन्टेम्परेरी आइडियाज एण्ड प्रेक्टिसेज एट वर्क, आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, 1997।

6 डी0 रिग्बी एवं बी0 बिलोद्यू, मैनेजमेन्ट टूल्स एण्ड ट्रेन्डस्, 2005, ग्लोबल रिजल्टस् (बेन एण्ड कम्पनी, बोस्टन), 2005 ।

7. Business Policy and Strategic Management, P. Subba Rao, Himalaya Publishing House, Mumbai.

8. Strategic Management, Azhar Kazmi- Adela Kazmi, Tata McGraw- Hill Education (India) Private Limited, New Delhi.

9. Business Policy and Strategic Management, GV Satya Sekhar, I K International Publishing House, New Delhi.

10. Business Policy and Strategic Management, Francis Cherunilam, Himalaya Publishing House, Mumbai.

इकाई–13 रणनीतिक मूल्यांकन एवं नियन्त्रण

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना
13.2 रणनीतिक मूल्यांकन व नियन्त्रण
13.3 रणनीतिक मूल्यांकन के सहभागी पक्षकार
13.4 मूल्यांकन के अवरोधक तत्व
13.5 प्रभावशाली मूल्यांकन के आवश्यक तत्व
13.6 नियन्त्रण की आवश्यकता व प्रकार
13.7 रणनीतिक नियन्त्रण की तकनीक
13.7.1 मूल्यांकन तकनीक
13.7.2 परिचालनात्मक नियन्त्रण की तकनीक
13.8 सारांश
13.9 शब्दावली
13.10 बोध प्रश्न
13.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
13.12 स्वपरख प्रश्न
13.13 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः

- रणनीतिक मूल्यांकन व नियन्त्रण का परिचय, प्रकृति, कसौटी तथा महत्व को समझ सकें।
- रणनीतिक मूल्यांकन के सहभागी पक्षकारों का वर्णन कर सकें।
- मूल्यांकन के अवरोधक तत्व व प्रभावशाली मूल्यांकन के आवश्यक तत्वों का वर्णन कर सकें।
- नियन्त्रण तकनीक, रणनीतिक नियन्त्रण एवं परिचालनात्मक नियन्त्रण में अन्तर
- रणनीतिक नियन्त्रण की तकनीक व परिचालनात्मक नियन्त्रण की तकनीक का विवेचन कर सकें।
- परिचालनात्मक नियन्त्रण की प्रक्रिया को समझ सकें।
- रणनीतिक मूल्यांकन एवं नियन्त्रण की तकनीक का विवेचन कर सकें।

13.1 प्रस्तावना

रणनीतिक प्रबन्धन की पूर्व इकाइयों में रणनीतिक सामग्री के विकास, रणनीति निर्माण तथा रणनीति के क्रियान्वयन से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। पॉचवें खण्ड में रणनीतिक मूल्यांकन व नियन्त्रण को तीन इकाइयों में समझने का प्रयास किया गया है। इस खण्ड की प्रथम इकाई (इकाई–13) के अन्तर्गत रणनीतिक मूल्यांकन की विभिन्न तकनीकों के साथ ही रणनीतिक व परिचालनात्मक नियन्त्रण की विधियों व प्रक्रिया को समझाया गया है।

13.2 रणनीतिक मूल्यांकन व नियन्त्रण

किसी भी संगठन को अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न योजनाओं तथा रणनीतियों का विकास करना होता है। इन रणनीतियों का क्रियान्वयन सावधानीपूर्वक किया जाता है तथा अन्त में रणनीति की प्रभावोत्पादकता का मूल्यांकन करके यह ज्ञात किया जाता है कि किन क्षेत्रों में संगठन ने अपेक्षित सफलता प्राप्त की है तथा कहॉ इसमें सुधार की आवश्यकता है? इसी आधार पर संगठन की नीतियों में दुर्बलताओं का निराकरण करते हुए सुधार के प्रयास किये जाते हैं। इस प्रकार रणनीतिक मूल्यांकन वह तकनीक है जिसके द्वारा संगठन की नीतियों की समीक्षा की जाती है तथा उसकी कमियों को दूर करने हेतु विकल्प की खोज की जाती है। इस प्रकार रणनीतिक मूल्यांकन का उद्देश्य नीतियों के उचित क्रियान्वयन को सुनिश्चित करना है। नियन्त्रण से आशय रणनीति के मूल्यांकन में ज्ञात हुई कमियों को दूर करने हेतु सुधारात्मक कदम उठाना है।

प्रकृति– रणनीतिक मूल्यांकन एक सुधारात्मक प्रकृति की क्रिया होती है। यह नियन्त्रण की दृष्टि से महत्वपूर्ण एवं अन्तिम क्रिया है। प्रकृति की दृष्टि से रणनीतिक मूल्यांकन में निम्नलिखित कार्य सम्मिलित किये जाते हैं–

- संगठन की रणनीति के आधारभूत सिद्धान्तों का परीक्षण करना तथा यह ज्ञात करना कि क्या वे संगठन के आदर्शों तथा निरन्तर बदलती हुई परिस्थितियों के अनुकूल हैं?
- संगठन के अपेक्षित परिणाम तथा वास्तव में प्राप्त परिणामों में तुलना करना तथा अन्तर के आधारों की खोज करना। अध्ययनोपरान्त यह ज्ञात किया जाता है कि लक्ष्य निर्धारण अवास्तविक था अथवा उसको प्राप्त करने के प्रयासों में कोई कमी थी।
- लक्ष्यों को प्राप्त करने में हुई किसी प्रकार की चूक को सुधारने के लिए आवश्यक सुधारात्मक कदम उठाना।

वस्तुतः संगठन का रणनीतिक मूल्यांकन किसी कार्मिक के निष्पादन मूल्यांकन के समान ही होता है। इसके द्वारा यह ज्ञात किया जाता है कि संगठन ने निर्धारित अवधि में अपने उद्देश्यों व आवधिक लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में कितना सार्थक प्रयास किया है।

रणनीतिक मूल्यांकन व्यापार जगत में तुलनात्मक रुप से एक नया विषय है। इक्कीसवीं सदी में सूचना और तकनीक के क्षेत्र में तीव्र परिवर्तन के फलस्वरुप व्यापार जगत को गलाकाट प्रतियोगिता तथा अन्तर्राष्ट्रीय दबावों का सामना करना पड़ा है। इनका सामना करने के लिए रणनीतिक प्रयासों को किया जाना अनिवार्यता बन गया है। रणनीतिक मूल्यांकन की आवश्यकता निम्न कारणों से होती है–

1. व्यावसायिक वातावरण में नाटकीय एवं तीव्र परिवर्तनों के कारण निर्णयन दुरूह प्रक्रिया बन गया है।
2. व्यापारिक नीतियों में निरन्तर निगरानी तथा सुधार की आवश्यकता हो गई है।

3. फैशन में तीव्र बदलाव के कारण उत्पाद शीघ्र अप्रचलित हो जाते हैं जिनमें बदलाव की आवश्यकता होती है।
4. बाजार में वैकल्पिक उत्पादों तथा प्रक्रियाओं के आने के कारण उपभोक्ता के क्रय व्यवहार में परिवर्तन आया है।
5. समाज में शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण आदि के प्रति जागरूकता तथा सरकारों द्वारा नीतियों में परिवर्तन के कारण व्यापारिक संगठनों को भी अपनी नीतियों में निरन्तर बदलाव करना पड़ता ळें
6. नीतियों को बनाने तथा क्रियान्वित करने के लिए अल्प समय मिलना।

कसौटी–

प्रत्येक संगठन अपनी आवश्यकताओं तथा बाजार की दशाओं के आधार पर रणनीति का मूल्यांकन करता है। इसके लिए वह विशिष्ट नियमों का पालन कर सकता है। संगठन विभिन्न कसौटियों पर परख कर यह जानना चाहता है कि वह अपनी योजनाओं में कहॉ तक सफल रहा है। रिचर्ड रुमेंल्ट ने रणनीति मूल्यांकन की चार कसौटियों[1] का वर्णन किया है–

1. निरन्तरता
2. अनुकूलता
3. व्यवहार्यता
4. लाभप्रदता।

1. <u>**निरन्तरता**</u>– रणनीति इसप्रकार की होनी चाहिए जिसमें निरंतरता का गुण हो अर्थात् जिन्हें लागू करने में किसी प्रकार का विवाद अथवा वैमनस्य न हो। रणनीतिक अस्थिरता की पहचान के लिए निम्न नियम हैं–
   - यदि व्यक्तियों में परिवर्तन के उपरान्त भी प्रबन्धकीय समस्या यथावत हो तथा जब समस्या व्यक्ति आधारित न होकर विषय आधारित हो।
   - यदि संगठन के एक विभाग की सफलता अन्य विभाग की असफलता के रूप में प्रतिध्वनित हो।
   - यदि नीतिगत समस्याओं को सुलझाने के लिए उच्चतम प्रबन्ध के पास भेजना पड़े।

   अच्छी रणनीति निर्विवाद तथा सर्व–स्वीकार्य होती है जिसके कारण यह सम्पूर्ण संगठन में तथा सभी परिस्थितियों में समान रूप से लागू होती है।
2. <u>**अनुकूलता**</u>– रणनीति ऐसी होनी चाहिए जिसमें आन्तरिक तथा वाह्य वातावरण में होने वाले परिवर्तनों को आसानी से समायोजित किया जा सके। समाज तथा अर्थव्यवस्था निरन्तर परिवर्तनशील हैं तथा विभिन्न कारकों से प्रभावित होती हैं। इन परिवर्तनों को समायोजित करते हुए संगठन को उसके उद्देश्यों में सफलता दिलाने वाली नीति ही उचित रणनीति मानी जाती है।
3. <u>**व्यवहार्यता**</u>– रणनीति इसप्रकार की होनी चाहिए जिसमें संगठन के संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग हो सके। न तो संसाधन अप्रयुक्त रहने चाहिए और न ही उनका अतिशोषण किया जाना चाहिए। रणनीति को संगठन

में उपलब्ध भौतिक, मानवीय तथा वित्तीय संसाधनों के अनुकूल होना चाहिए तथा इनमें होने वाले परिवर्तनों को समायोजित करने में सक्षम होनी चाहिए।

4. <u>लाभप्रदता</u>– रणनीति का मूल्यांकन करते समय यह देखा जाना चाहिए कि यह संगठन को लाभप्रदता प्रदान करती हो। यह देखा जाना चाहिए कि संसाधन, योग्यता तथा संगठन की प्रास्थिति के आधार पर कुछ न कुछ बढ़त प्राप्त होती हो।

महत्व–

किसी संगठन में रणनीति के मूल्यांकन का अर्थ यह सुनिश्चित करना होता है कि संगठन अपने लक्ष्यों की प्राप्ति में कितना सफल है। इसके महत्व को निम्नलिखित बिन्दुओं में वर्णित किया जा सकता है–

1. **संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग–** रणनीति के सामयिक मूल्यांकन का मुख्य लाभ संगठन में उपलब्ध भौतिक, वित्तीय व मानव संसाधनों के अनुकूलतम उपयोग को सुनिश्चित करना होता है। यदि मूल्यांकन में किसी प्रकार की अनियमितता अथवा संसाधनों के दुरुपयोग की स्थिति पाई जाती है तो तुरन्त निवारक उपायों द्वारा लाभप्रदता को सुनिश्चित किया जाता है।
2. **समन्वयन–** रणनीति के मूल्यांकन के द्वारा संगठन अपने विभिन्न विभागों के मध्य समन्वय बनाने का प्रयास करता है। नीतियों की एकरुपता तथा उसका निष्ठापूर्ण क्रियान्वयन सभी विभागों तथा कर्मचारियों को साथ लेकर चलने में मदद करती है। निरन्तर मूल्यांकन के परिणाम स्वरुप सामूहिक उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव हो पाती है।
3. **मनोबल में वृद्धि–** मूल्यांकन व नियन्त्रण के फलस्वरुप एक ओर कमियों को दूर करने पर बल दिया जाता है, वहीं कर्मठ व ईमानदार कार्मिकों को प्रोत्साहन भी प्रदान किया जाता है। इससे उनके मनोबल में वृद्धि होती है, वे अधिक कार्य करने को प्रेरित होते हैं तथा उनकी कार्य क्षमता का विकास होता है।
4. **दायित्व निर्धारण–** मूल्यांकन के परिणामों में किसी प्रकार की कमी मिलने पर सम्बन्धित कार्मिकों के दायित्व का निर्धारण किया जाता है। इससे कार्मिकों को सतर्कतापूर्वक कार्य करने की प्रेरणा मिलती है। नियन्त्रण की गतिविधि के कारण सुधारात्मक उपायों को अपनाना सम्भव होता है जिससे संगठन अपने लक्ष्यों की प्राप्ति में सफल होता है।
5. **निष्पादन मूल्यांकन का आधार–** रणनीतिक मूल्यांकन में विभिन्न संसाधनों के सर्वोत्तम उपयोग को सुनिश्चित करते हुए उद्देश्यों की प्राप्ति का प्रयास किया जाता है। कार्मिक भी संगठन के मानव संसाधन हैं। निष्पादन मूल्यांकन किसी संगठन में कार्मिकों के कार्यों का विवेचन, विश्लेषण व मूल्यांकन करके उसमें सकारात्मक ऊर्जा भरने का प्रयास करता है। इसप्रकार निष्पादन मूल्यांकन का आधार रणनीतिक मूल्यांकन ही है।
6. **निर्णयन का आधार–** निर्णयन एक सतत प्रक्रिया है। प्रत्येक निर्णय के बाद उसका क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाता है। यह आवश्यक नहीं है कि

निर्णय उसी रूप में प्रभावशाली हो जिस रूप में सोचा गया था। समय–समय पर यह जानने का प्रयास किया जाता है कि उक्त निर्णय के प्रभावों का आकलन करते हुए सुधारात्मक कदम उठाये जाते हैं अर्थात् नये निर्णय लिये जाते हैं। इसप्रकार रणनीतिक मूल्यांकन संगठन में निर्णयन का आधार बनता है।

13.3 रणनीतिक मूल्यांकन के सहभागी पक्षकार

रणनीति सम्पूर्ण संगठन के लिए बनाई जाती है तथा इससे समस्त सम्बन्धित हितधारक प्रभावित होते हैं। इसलिए रणनीतिक मूल्यांकन में विभिन्न पक्षकारों को सहभागी बनाया जाता है–

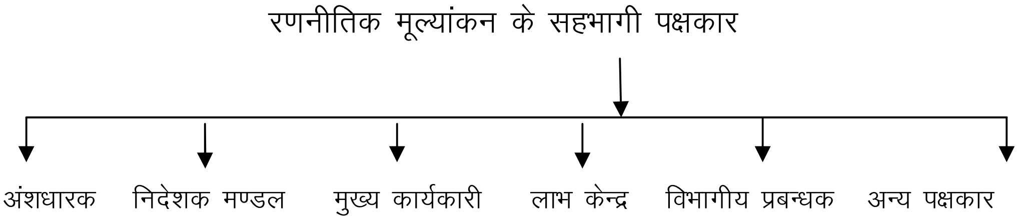

1. **अंशधारक–** अंशधारक किसी भी कम्पनी के स्वामी होते हैं। वे कम्पनी के लिए एक दिशा तय करते हैं। कम्पनी की संदृष्टि के निर्धारण में उनकी प्रमुख भूमिका होती है अतः रणनीति के मूल्यांकन में भी उनकी भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। कम्पनी के किसी भी रणनीतिक निर्णय का सबसे अधिक प्रभाव अंशधारकों के हितों पर ही पड़ता है अतः अंशधारकों को रणनीतिक निर्णयों के मूल्यांकन का अधिकार होता है।
2. **निदेशक मण्डल–** कम्पनी के संचालन का प्रत्यक्ष उत्तरदायित्व उसके निदेशक मण्डल पर ही होता है क्योंकि वे ही कम्पनी की नीतियों का निर्धारण करता है तथा उसके क्रियान्वयन की व्यवस्था करता है। किसी प्रकार की असुविधा की स्थिति में नियन्त्रणात्मक उपाय भी निदेशक मण्डल की सभाओं में ही निर्धारित किये जाते हैं। अतः रणनीतिक मूल्यांकन का कार्य निदेशक मण्डल के द्वारा ही प्रभावी ढंग से किया जा सकता है। अनेक संगठनों में तो सुशासन तथा रणनीतिक निर्देशन का कार्य स्वयं निदेशक मण्डल ही किया जाता है।
3. **मुख्य कार्यकारी–** कुछ संगठनों में निदेशक मण्डल स्वयं मूल्यांकन व नियन्त्रण प्रक्रिया में सहभागी नहीं बनता वरन् कम्पनी का मुख्य कार्यकारी अधिकारी ही इस दायित्व का निर्वहन करता है। वह प्रत्यक्ष रुप से समस्त प्रशासनिक क्रियाओं का संचालन करता है तथा उनके सुचारु रूप से सम्पन्न कराने में उसका ही निर्देशन होता है अतः नियन्त्रण व मूल्यांकन के उत्तरदायित्व का भी वह ही निर्वहन कर सकता है। निदेशक मण्डल केवल मुख्य कार्यकारी अधिकारी के कार्यों का मूल्यांकन करता है।
4. **लाभ केन्द्र–** सभी वृहद संगठन अपने व्यापार का इस प्रकार संचालन करते हैं कि उन्हें अलग–अलग स्तरों पर लाभ की गणना करने तथा तदनुसार प्रशासन को दुरुस्त करने में आसानी हो सके। प्रत्येक लघु व्यापार

इकाई (एस0बी0यू0) के स्तर पर लागत व लाभ की समीक्षा की जाती है तथा कहीं भी प्रतिकूल स्थिति होने पर अविलम्ब सुधारात्मक कार्यवाही की जाती है। लाभ केन्द्र के अधिकारियों रणनीतिक मूल्यांकन की प्रक्रिया सम्मिलित किया जाना संगठन के सभी हितधारकों के लिए उपयोगी होता है।

5. **विभागीय प्रबन्धक–** सम्पूर्ण संगठन का व्यापार विभिन्न विभागों में विभक्त होता है। प्रत्येक विभाग माला में मोती की भॉति एक दूसरे का सहयोगी और पूरक होता है। किसी एक के स्तर पर समस्या आने पर इसका प्रभाव पूरे संगठन पर पड़ता है। विभागीय प्रबन्धक ही सबसे सटीक सूचना उपलब्ध कराते हैं तथा इनकी संस्तुति सबसे अधिक प्रभावशाली होती है अतः विभागीय प्रबन्धकों को रणनीतिक मूल्यांकन व नियन्त्रण की प्रक्रिया में सम्मिलित किया जाता है।

6. **अंकेक्षण समिति–** कुछ संगठन निदेशक मण्डल अथवा मुख्य कार्यकारी अधिकारी के द्वारा निर्मित अंकेक्षण समितियों को संगठन की गतिविधियों के निरन्तर निर्देशन का दायित्व भी प्रदान कर देता है। सेबी के लिस्टिंग समझौता के अनुच्छेद 49 के अनुसार भारत की सार्वजनिक धारित कम्पनियों के प्रभावशाली निगमित सुशासन के लिए गतिविधियों में अधिक पारदर्शिता के द्वारा रणनीतिक एवं कार्यात्मक नियन्त्रण सुनिश्चित किया जाता है।[2]

7. **अन्य पक्षकार–** उपरोक्त के अतिरिक्त अन्य अनेक पक्ष होते हैं जो संगठन को रणनीतिक नियन्त्रण में सहायता करते हैं। इनमें कम्पनी के सचिव, लेखाकार, वित्तीय नियन्त्रक आदि प्रमुख भूमिका का निर्वाह करते हैं। संगठन को सर्वाधिक प्रभावित करने वाले तथा प्रभावित होने वाले पक्षकार उसके ग्राहक हैं। यद्यपि ग्राहक सीधे तौर पर मूल्यांकन में सम्मिलित नहीं होते हैं किन्तु उनके अनुभवों तथा कठिनाइयों का लाभ लेकर नियन्त्रण किया जाता है।

13.4 मूल्यांकन के अवरोधक तत्व

मूल्यांकन किसी भी नीतिगत प्रक्रिया का सबसे महत्वपूर्ण भाग होता है क्योंकि इसी के द्वारा संगठन अपनी नीति की प्रभावशीलता का मापन करता है। यह एक चुनौतीपूर्ण कार्य है तथा थोड़ी सी भी असावधानी से इसके परिणाम गम्भीर हो सकते हैं। मूल्यांकन के अवरोधक तत्व निम्नलिखित हैं–

1. **गत्यात्मकता (Dynamism)**–

मूल्यांकन के अन्तर्गत विभिन्न व्यक्तियों व विभागों के प्रयासों का संगठन की नीतियों के परिप्रेक्ष्य में परीक्षण किया जाता है। इस कार्य में सबसे बड़ी कठिनाई परिस्थितियों की गत्यात्मकता है। व्यापारिक परिस्थितियों में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। यह परिवर्तन राजनीतिक, आर्थिक, भौगोलिक अथवा अन्य किसी परिवर्तन से प्रभावित हो सकता है। विभिन्न स्थानों तथा व्यक्तियों के लिए उपस्थित परिस्थितियों का किसी एक निश्चित मानक के आधार पर मूल्यांकन करना एक कठिन कार्य है तथा इसमें त्रुटि की सदैव सम्भावना बनी रहती है।

2. **मूल्यांकन के प्रति असहिष्णुता (Intolrance Towards Evaluation)**–

प्रायः संगठनों में यह सामान्य प्रवृत्ति पाई जाती है कि विभागीय प्रबन्धक तथा कार्मिक रणनीतिक मूल्यांकन के प्रति एक विरोधात्मक व्यवहार प्रकट करते हैं। उन्हें लगता है कि उनकी व्यावहारिकता, रचनात्मकता तथा सहजता पर इसका विपरीत असर पड़ता है। उच्च प्रबन्धन के नियन्त्रणात्मक व्यवहार का स्वभाविक विरोध करते हुए वे मूल्यांकन के प्रति विद्रोहात्मक प्रतिक्रिया प्रकट कर सकते हैं। इस व्यवहार का सामना करने के लिए प्रबन्धन तथा कार्मिकों के मध्य सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करना अच्छा माना जाता है।

3. **नियन्त्रण की सीमाएं (Limitations of Control)–**

स्वभाव की दृष्टि से नियन्त्रण एवं मनोबल परस्पर विरोधी शब्द हैं। मनोबल में जहॉ सकारात्मकता है वहीं नियन्त्रण में नकारात्मकता का भाव छुपा होता है। मनोबल के द्वारा कार्मिक की उत्पादकता में किसी भी स्तर तक वृद्धि की जा सकती है किन्तु नियन्त्रण की अपनी सीमाएं होती हैं। एक स्तर से अधिक नियन्त्रणात्मक उपाय करने पर विद्रोह का भय रहता है। अतः नियन्त्रण के लिए क्रमिक रुप से, कार्मिकों की सहमति के साथ व उन्हें सम्मिलित करते हुए उपाय अपनाए जाने चाहिए।

4. **मूल्यांकन की चुनौतियॉ (Challenges of Evaluation)–**

मूल्यांकन एक जटिल प्रक्रिया है। इसके मात्रात्मक पक्ष का ही आकलन किसी विधि से किया जा सकता है किन्तु गुणात्मक पक्ष का आकलन किसी सूत्र द्वारा नहीं किया जा सकता। अलग–अलग पद्यति के प्रयोग से भिन्न परिणाम प्राप्त हो सकते हैं। इसके लिए विवेकशीलता की आवश्यकता होती है। प्रत्येक व्यक्ति, दल अथवा विभाग का आकलन तत्कालीन परिस्थितियों तथा पूर्व अनुभवों के आधार पर किया जाता है। मूल्यांकन में किसी प्रकार की असावधानी होने पर कार्मिक का मनोबल गिरने की संभावना रहती है।

5. **अल्पकालीन उपलब्धियों को प्रमुखता (Weight to Short-term Achievements)–**

रणनीतिक मूल्यांकन की विभिन्न विधियॉ किसी नीति अथवा कार्य के किसी विशिष्ट अवधि में उपलब्धि का आकलन करती हैं। प्रायः दीर्घकालीन परिणामों की इसमें अनदेखी कर दी जाती है। इसके कारण सम्बन्धित विभागीय प्रबन्धक व कार्मिक भी अल्पकालीन परिणामों की प्राप्ति में ही अधिक रुचि लेते हैं जिनके कारण संगठन को अपने व्यापक हितों से हाथ धोना पड़ सकता है। अतः उच्च प्रबन्ध को मूल्यांकन में आवश्यक सावधानी का सामना करना पड़ता है।

13.5 प्रभावशाली मूल्यांकन के आवश्यक तत्व

रणनीतिक मूल्यांकन की प्रभावशाली बनाने के लिए किसी संगठन को निम्नलिखित आवश्यक तत्वों को ध्यान में रखना चाहिए–

1. मूल्यांकन की प्रणाली संगठन के मूल स्वभाव तथा कार्य के अनुरुप होनी चाहिए।
2. मूल्यांकन में अल्पकालीन व दीर्घकालीन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक मानकों को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

3. मूल्यांकन में सूचनाओं का मात्रा अत्यधिक नहीं होनी चाहिए क्योंकि अधिक सूचनाएं अरुचि उत्पन्न करती हैं।
4. मात्रात्मक तथा गुणात्मक दोनों प्रकार की सूचनाओं को सम्मिलित किया जाना चाहिए तथा परिमाणात्मक सूचनाओं का मिलान गुणात्मक सूचनाओं के साथ किया जाना चाहिए।
5. सूचनाओं का परीक्षण करके उसकी सत्यता की जॉच की जानी चाहिए क्योंकि अशुद्ध, अपूर्ण अथवा त्रुटिपूर्ण सूचना के कारण परिणाम प्रभावित हो सकते हैं।
6. रणनीतिक मूल्यांकन में नीतिगत विषयों को सम्मिलित किया जाना चाहिए। व्यक्तिगत उपलब्धियों अथवा असफलताओं की अपेक्षा सामूहिक परिणामों पर विचार किया जाना चाहिए।
7. मूल्यांकन में यथासम्भव मनोबल बढ़ाने के उपाय होने चाहिए तथा दण्डात्मक उपायों को न्यूनतम स्तर पर रखा जाना चाहिए। दण्डात्मक उपाय तनाव को जन्म देते हैं जिनका दूरगामी परिणाम संगठन के लिए घातक हो सकता है।

13.6 नियन्त्रण की आवश्यकता व प्रकार

व्यापार नीति को संगठन की आवश्यकताओं के अनुरुप विन्यासित किया जाता है तथा यथासम्भव उनके निर्माण में समस्त सावधानियों का पालन भी किया जाता है किन्तु यह आवश्यक नहीं कि अच्छी व्यापार नीति के अच्छे परिणाम भी प्राप्त हों। इसके लिए संगठन को नीतियों के सामयिक मूल्यांकन करने तथा सुधारात्मक उपाय अपनाने की आवश्यकता होती है।

सुधारात्मक उपायों में मुख्यतः दो प्रकार के नियन्त्रणों को सम्मिलित किया जाता है–

1. रणनीतिक नियन्त्रण, तथा
2. कार्यात्मक अथवा परिचालनात्मक नियन्त्रण।

रणनीतिक नियन्त्रण के अन्तर्गत संगठन की नीतियों का क्रियान्वयन की प्रक्रिया के समय में ही मूल्यांकन किया जाता है तथा किसी प्रकार की विसंगति होने पर तुरन्त ही सुधारात्मक कदम उठाये जाते हैं। इस प्रकार रणनीतिक नियन्त्रण किसी संगठन में अलार्म की तरह कार्य करता है जो संगठन को उसके खतरों के प्रति आगाह करता है। इसमें वाह्य तथा आन्तरिक दोनों प्रकार के प्रभावकारी तत्वों को सम्मिलित किया जाता है।

कार्यात्मक अथवा परिचालनात्मक नियन्त्रण में नीतियों को उचित प्रकार से लागू करने पर बल दिया जाता है। इन्हें पूर्व निर्धारित कार्यक्रमों के माध्यम से लागू किया जाता है। इसके अन्तर्गत बजटरी नियन्त्रण, गुणवत्ता नियन्त्रण, सामग्री नियन्त्रण, लागत नियन्त्रण आदि उपायों को सम्मिलित किया जाता है। कार्यात्मक नियन्त्रण आन्तरिक प्रक्रिया है तथा इसमें वाह्य तत्वों को ध्यान में नहीं रखा जाता है।

रणनीतिक तथा कार्यात्मक नियन्त्रण में निम्नलिखित अन्तर हैं–

क्रमांक	अन्तर का आधार	रणनीतिक नियन्त्रण	कार्यात्मक नियन्त्रण
1	उद्देश्य	इसका प्रमुख उद्देश्य	इसका उद्देश्य यह

		नीतियों की उपयोगिता का परीक्षण करना तथा यह जॉचना है कि नीतियों का क्रियान्वयन संगठन को सही दिशा में ले जा रहा है।	देखना है कि संगठन अपनी निर्धारित नीतियों का क्रियान्वयन ठीक प्रकार कर रहा है।
2	नियन्त्रक अधिकारी	रणनीतिक नियन्त्रण उच्चतम प्रबन्धन द्वारा किया जाता है।	कार्यात्मक नियन्त्रण का कार्य प्रबन्धन के सभी स्तरों पर किया जाता है। उच्चतम प्रबन्धन अपने मध्यम व निम्न प्रबन्धन अधिकारियों के माध्यम से कार्य सम्पादित करता है।
3	मुख्य विषय	रणनीतिक नियन्त्रण का मुख्य कार्य संगठन को सही दिशा प्रदान करना होता है।	कार्यात्मक नियन्त्रण का मुख्य कार्य संगठन द्वारा निर्धारित नीतियों, योजनाओं तथा मानकों को सही प्रकार से लागू करते हुए उचित परिणाम प्राप्त करना है।
4	वातावरण	यह आन्तरिक तथा वाह्य वातावरण से सम्बन्धित है।	यह केवल आन्तरिक वातारण से ही प्रभावित होता है।
5	तकनीकों का प्रयोग	इसके अन्तर्गत वातावरण का सूक्ष्म परीक्षण (स्कैनिंग), सूचना संग्रहण, प्रश्न निर्धारण तथा पुनःपरीक्षण जैसे तकनीकी उपकरणों का प्रयोग किया जाता है।	कार्यात्मक नियन्त्रण में बजट, अनुसूची, तुलनात्मक विश्लेषण, रहतिया नियन्त्रण, उद्देश्य द्वारा प्रबन्धन (एम0बी0ओ0) आदि उपकरणो का उपयोग किया जाता है।
6	समयावधि	रणनीतिक नियन्त्रण दीर्घ अवधि के लिए	कार्यात्मक नियन्त्रण का उपयोग अल्पकाल के

		लागू किया जाता है।	लिए किया जाता है। प्रायः इसकी अवधि एक वर्ष अथवा उससे कम होती है।
7	सूचना सामग्री	रणनीतिक नियन्त्रण में ऐतिहासिक एवं वर्तमान प्रगति से सम्बन्धित सूचनाओं को सम्मिलित किया जाता है।	कार्यात्मक नियन्त्रण में प्रायः ऐतिहासिक सूचनाओं का उपयोग किया जाता है अर्थात् व्यतीत अवधि की सूचनाओं का विश्लेषण किया जाता है।
8	लोचशीलता	रणनीतिक नियन्त्रण लोचपूर्ण होता है तथा समय एवं परिस्थिति के अनुसार इसमें परिवर्तन किये जा सकते हैं।	कार्यात्मक नियन्त्रण प्रायः कम लोचपूर्ण होता है। इसमें जिन मानकों को तय किया जाता है, उनका पालन दृढ़तापूर्वक किया जाता है तथा किसी प्रकार की विसंगति होने पर कार्रवाई की जाती है।

13.7 रणनीतिक नियन्त्रण की तकनीक

संगठन में नीतियों का निर्माण तत्कालीन परिस्थितियों तथा स्थापित मान्यताओं के आधार पर किया जाता है तथा इसका क्रियान्वयन विभिन्न चरणों में किया जाता है। नीतियों के निर्माण तथा क्रियान्वयन के बीच एक अन्तराल होता है जो अनेक विचलनों को जन्म देता है। वांछित परिणामों की प्राप्ति के लिए नीतियों का मूल्यांकन तथा तदोपरान्त नियन्त्रण सम्बन्धी क्रियाएं करनी होती हैं। रणनीतिक नियन्त्रण की तकनीकों को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है–

13.7.1 मूल्यांकन तकनीक, तथा

13.7.2 परिचालनात्मक नियन्त्रण

रणनीतिक नियन्त्रण की तकनीक

मूल्यांकन तकनीक
- प्राकल्पना नियन्त्रण
- कार्यान्वयन नियन्त्रण
- रणनीतिक निगरानी
- विशेष सतर्कता नियन्त्रण

परिचालनात्मक तकनीक
- आन्तरिक विश्लेषण
- तुलनात्मक विश्लेषण

रणनीतिक उछाल नियन्त्रण	विस्तृत विश्लेषण
दायित्व केन्द्र	बजटरी विश्लेषण
	शून्य आधारित बजटन
	अन्य तकनीक

13.7.1 मूल्यांकन तकनीक–

जी0 श्रेयॉग एवं एच0 स्टेनमैन के अनुसार रणनीतिक नियन्त्रण की चार आधारभूत तकनीक हैं–

प्राकल्पना नियन्त्रण, कार्यान्वयन नियन्त्रण, रणनीतिक निगरानी तथा विशेष सतर्कता नियन्त्रण।

अन्य विद्वानों ने इसके अतिरिक्त भी कुछ तकनीकों (यथा– रणनीतिक उछाल केन्द्र, दायित्व केन्द्र आदि) का उल्लेख किया है। सामान्यतः रणनीतिक नियन्त्रण के लिए विभिन्न संगठनों द्वारा अपनाई जाने वाली प्रचलित तकनीक निम्नलिखित हैं–

1. प्राकल्पना नियन्त्रण (Premise Control)–

प्रत्येक संगठन किसी विशिष्ट अवधारणा पर आधारित होता है। इसकी समस्त नीतियॉं इसी के आधार पर निर्मित की जाती हैं। किसी भी नीति के सम्बन्ध में अध्ययन करने के लिए इन प्राकल्पनाओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए। संगठन के नीति निर्धारक अधिकारियों का यह कर्तव्य है कि वे संगठन का संचालन निर्धारित प्राकल्पनाओं के आधार पर करें। यदि कभी यह प्रतीत होता है कि संगठन द्वारा स्वीकार की गई प्राकल्पनाएं कालातीत हो गई हैं अथवा स्थितियों में परिवर्तन होने के कारण उनका प्रभाव कम हो गया है तो उनमें परिवर्तन किया जा सकता है किन्तु नीतियों का प्राकल्पना के अनुरुप होना अनिवार्य है। इसप्रकार संगठन की प्राकल्पनाएं उसकी नीतियों पर नियन्त्रण का आधार बनती हैं।

2. कार्यान्वयन नियन्त्रण (Implementation Control)–

रणनीति का कार्यान्वयन अनेक योजनाओं, कार्यक्रमों, परियोजनाओं आदि के माध्यम से किया जाता है। कार्यान्वयन नियन्त्रण के अन्तर्गत यह जानने का प्रयास किया जाता है कि उक्त सभी प्रयास संगठन को सही दिशा में ले जाने में समर्थ हैं अथवा नहीं। प्रत्येक योजना का मूल्यांकन किया जाता है तथा यह निर्धारित किया जाता है कि उक्त योजना अपने प्रयासों में कहॉं तक सफल हुई है। कुछ संगठन योजना के मूल्यांकन हेतु नियन्त्रण बिन्दु तय करते हैं तथा उन बिन्दुओं के स्तर तक योजना की सफलता को सुनिश्चित करते हैं। योजनाओं का सफल क्रियान्वयन ही संगठन की सफलता का प्रतीक होता है।

3. रणनीतिक निगरानी (Strategic Surveillance)–

रणनीतिक निगरानी नियन्त्रण की एक ऐसी तकनीक है जिसमें सम्पूर्ण संगठन को इस प्रकार निगरानी में रखा जाता है कि समस्त आन्तरिक एवं वाह्य घटनाओं के संगठन पर होने वाले प्रभाव का आकलन किया जा सके। जे0ए0 पियर्स ᴵᴵ एवं आर0बी0 रॉबिनसन के अनुसार– (रणनीतिक निगरानी)... कम्पनी के अन्दर तथा बाहर की उन सभी गतिविधियों की विस्तृत श्रंखला पर निगरानी रखने के लिए विशेषतः बनाई जाती है जो कम्पनी की रणनीति को खतरा पहुॅंचा सकती है।[4] विशिष्ट

सूचनाओं के आधार पर उन क्षेत्रों को चिन्हित किया जाता है जिनकी सतत निगरानी के द्वारा संगठन अपने निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त कर सकता है। यह भी जानना आवश्यक है कि कौन से आन्तरिक अथवा वाह्य कारक ऐसे हैं जो संगठन की लक्ष्य प्राप्ति में बाधक सिद्ध हो सकते हैं।

4. **विशेष सतर्कता नियन्त्रण (Special Alert Control)–**

संगठन को आकस्मिकताओं का सामना करने के लिए विशेष सतर्कता का पालन करना होता है। किसी भी अस्वभाविक परिस्थिति में संगठन को यदि यह अनुभव होता है कि संगठन अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफल नहीं हो सकेगा तो वह आकस्मिक योजनाओं को अमल में लाता है।

5. **रणनीतिक उछाल नियन्त्रण (Strategic Leap Control)–**

आधुनिक युग प्रतिस्पर्धा का युग है। इसमें अस्थिरता तथा आकस्मिकताओं का पल–पल सामना करता पड़ता है। इन अस्थिरताओं का सामना करने के लिए जिन योजनाओं को बनाया जाता है वे अचानक अप्रचलित हो जाती है। ऐसी स्थिति में तीव्र परिवर्तनशील नियन्त्रण योजना लागू की जाती है। इन प्रयासों में निम्नलिखित सम्मिलित हैं–

- **रणनीतिक विषय प्रबन्धन** (Strategic Issue Management)– इसके अन्तर्गत किसी विशेष विषय अथवा समस्या को लेकर विशिष्ट रणनीति तैयार की जाती है जिसके अन्तर्गत सभी सम्भावित विकल्पों पर विचार किया जाता है। समस्या उत्पन्न होने के दशा में तुरन्त निराकरण सम्भव हो जाता है। चयनित समस्या पर निरन्तर निगाह बनी रहती है जिससे कि उसका तत्काल निवारण हो सके।
- **सिस्टम माडलिंग**(System Modeling)– कम्प्यूटर आधारित माडल के माध्यम से संगठन अपनी विशिष्टताओं तथा वातावरण पर नियन्त्रण रखता है। वह व्यापार के वातावरण में परिवर्तन के कारण संगठन पर होने वाले प्रभावों का आकलन करता है तथा समस्याओं के अग्रिम समाधान के लिए तैयारी करता है।
- **रणनीतिक क्षेत्र विश्लेषण** (Strategic Field Analysis)– इस प्रणाली में व्यापार से सम्बन्धित विभिन्न सहकार्यों की प्रकृति का अध्ययन तथा विश्लेषण किया जाता है तथा यह जानने का प्रयास किया जाता है कि वे वांछित मात्रा से अधिक अथवा कम क्यों हैं? रणनीतिकार उपरोक्त क्षेत्रों के विस्तार व संकुचन से लाभ उठाने का प्रयास करते हैं।
- **परिदृष्य** (Scenario)– संगठन में उन सभी विषयों तथा वातावरण सम्बन्धी मामलों को सम्मिलित किया जाता है जिनका सामना निकट भविष्य में संगठन को करना पड़ सकता है। इन भावी चुनौतियों के आधार पर संगठन की वर्तमान स्थिति का आकलन करना तथा उनसे निबटने के उपाय खोजना नियन्त्रण प्रक्रिया का भाग है।

6. दायित्व केन्द्र (Responsibility Centres)–

संगठन को नियन्त्रण की दृष्टि से विभिन्न विभागों में विभाजित करना तथा उनके परिणामों की समीक्षा करने हेतु दायित्व केन्द्रों की स्थापना की जाती है। दायित्व केन्द्र के माध्यम से संगठन व्यापार के विकास की दशा को इस प्रकार नियन्त्रित करती है जैसे कोई कार चालक ब्रेक, क्लिच व गियर के द्वारा अपनी कार को नियन्त्रित करता है। दायित्व केन्द्र विभिन्न प्रकार के हो सकते हैं–

- **लागत केन्द्र** (Cost Centres)– निर्माणी संगठन प्रायः अपने सम्पूर्ण कार्य को इस प्रकार विभाजित करती है कि विभिन्न अवस्थाओं में उत्पादन की लागत को जॉच सके तथा किसी भी स्तर पर अपव्यय होने पर उसे तुरन्त रोका जा सके। लागत केन्द्र न होने पर यह जानना कठिन हो जाता है कि सम्पूर्ण प्रक्रिया में किस स्तर पर हुई असावधानी के कारण संगठन का व्यय भार बढ़ गया है। इसके लिए मानक लागत को उत्पादित इकाइयों से गुणा करके कुल विभागीय मानक लागत ज्ञात की जाती है तथा वास्तविक लागत से उसका विचलन ज्ञात किया जाता है।
- **आगम केन्द्र** (Revenue Centres)– प्रत्येक उत्पाद अथवा विभाग की आय की गत अवधि की आय से तुलना की जाती है तथा इसमें होने वाले विचलनों के कारणों की जॉच की जाती है। किसी कार निर्माता कम्पनी में कार बिक्री की आय, मरम्मत व अनुरक्षण की आय तथा पुर्जों की बिक्री की आय का विवरण अलग–अलग रखा जाता है। किसी बहुउत्पादी कम्पनी में प्रत्येक वस्तु की बिक्री की आय को अलग से रखकर तुलना की जाती है।
- **व्यय केन्द्र** (Expense Centres)– संगठन के मुख्य व्ययों को वर्गीकृत करके उनका विवरण तुलनात्मक रुप से तैयार किया जाता है। इसके विचलनों की समीक्षा की जाती है। जिन व्ययों को पृथक किया जाना सम्भव न हो उनकी समीक्षा अलग से की जाती है। मदवार, उत्पादवार अथवा विभागवार व्ययों की तुलना व समीक्षा से इन्हें नियन्त्रित करने में सहायता मिलती है।
- **लाभ केन्द्र** (Profit Centres)– लाभ किसी भी व्यापारिक संगठन का सबसे महत्वपूर्ण विषय होता है। उन स्थलों पर जहॉ लाभ का निर्धारण किया जा सकता है, लाभ निर्धारण बिन्दु बनाये जाते हैं तथा विभिन्न अवधियों अथवा उत्पादों के लिए लाभ की गणना करके तुलना व समीक्षा की जाती है।
- **निवेश केन्द्र** (Investment Centres)– व्यापार में धन का निवेश इस आधार पर किया जाता है कि उससे निवेशक को अधिकतम लाभ तथा वृद्धि प्राप्त हो। संगठन उन स्थलों को चिन्हित करता है जहॉ से

यह लाभ प्राप्त हो सकता है। इस प्रकार स्थितियों का परीक्षण करने हेतु निवेश केन्द्रों का उपयोग किया जाता है।

13.7.2 परिचालनात्मक नियन्त्रण की तकनीक–

परिचालनात्मक नियन्त्रण के लिए सामान्यतः निम्नलिखित तकनीकों का प्रयोग प्रचलित है–

आन्तरिक विश्लेषण, तुलनात्मक विश्लेषण, व्यापक विश्लेषण, शून्य आधारित बजट तथा बजटरी विश्लेषण।

1. **आन्तरिक विश्लेषण (Internal Analysis)**–

आन्तरिक विश्लेषण व्यावसायिक संगठन के आन्तरिक पहलुओं की समीक्षा करता है। इसमें संगठन की शक्तियों तथा क्षीर्णताओं का विवेचन करते हुए उसे मजबूत बनाने का प्रयास किया जाता है। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित तकनीकों का प्रयोग किया जाता है–

क) **VRIO ढॉचा**– टत्प्ब ढॉचा एक ऐसी तकनीक है जिसमें चार प्रश्नों के माध्यम से रणनीति की व्याख्या की जाती है। वस्तुतः टत्प्ब अंग्रेजी के चार शब्दों वैल्यू (महत्व), रेअरिटी (दुर्लभता), इमिटेबिलिटी (अनुकरणीयता) तथा ऑर्गनाइजेशन (संगठन) के प्रथमाक्षरों के संयोग से बना है। किसी नीति की समीक्षा करते समय यह प्रश्न किया जाता है कि–

- ✓ नीति फर्म के लिए कितनी महत्वपूर्ण है अर्थात् क्या फर्म नीति का लाभ लेने की स्थिति में है?
- ✓ क्या नीति का प्रयोग अन्य फर्मों के लिए दुर्लभ है अर्थात् क्या इस नीति या संसाधन का प्रयोग करने में फर्म बेहतर स्थिति में है?
- ✓ क्या अन्य फर्मों द्वारा हमारी नीति अथवा उत्पादन का अनुकरण (नकल) करना कठिन होगा अर्थात् क्या हमारी फर्म की नीति विलक्षण है?
- ✓ क्या हमारी फर्म इतनी संगठित है कि अपनी नीति का सर्वोत्तम उपयोग कर लाभ कमा सके?

उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर के आधार पर फर्म अपनी शक्तियों का परीक्षण करता है।

ख) **महत्व श्रंखला विश्लेषण** (वैल्यू चेन एनेलाइसिस)– महत्व श्रंखला विश्लेषण उन विभिन्न अन्तर्सम्बन्धित गतिविधियों को महत्व प्रदान करती है जिनका किसी फर्म के कार्यों (उत्पादन, विपणन आदि) में विशिष्ट भूमिका होती है। विभिन्न गतिविधियों का मूल्यांकन करते हुए उनकी प्रभावशीलता को परखा जाता है। सम्पूर्ण प्रक्रिया के किसी भी अंश में किसी प्रकार की कमी होने की दशा मे तुरन्त ही उक्त भाग को ठीक कर लिया जाता है जिससे कि सम्पूर्ण श्रंखला अबाधित रखी जा सके।

ग) **मात्रात्मक विश्लेषण** (Quantitative Analysis)– इसके अन्तर्गत संगठन के विभिन्न आर्थिक तथा अनार्थिक मानदण्डों को सम्मिलित किया जाता है जिनके परीक्षण द्वारा संगठन की नीतियों का विश्लेषण करते हुए नियन्त्रण स्थापित किया जाता है। इसके अन्तर्गत उत्पादन की मात्रा, विक्रय की मात्रा तथा मूल्य, लाभ की मात्रा तथा उसकी तुलनात्मकता का अध्ययन किया जाता है। मात्रात्मक विश्लेषण के अन्तर्गत अनुपात विश्लेषण, बाजार में रेंकिग आदि को सम्मिलित किया जाता है।

घ) **गुणात्मक विश्लेषण** (Qualitative Analysis)– गुणात्मक विश्लेषण के द्वारा संगठन की गतिविधियों का उनके महत्व के आधार पर परीक्षण किया जाता है। इसके अन्तर्गत उन बिन्दुओं को भी सम्मिलित किया जाता है जिनका मूल्यांकन मात्रा अथवा मुद्रा में संभव नहीं है। इसमें कम्पनी की प्रतिष्ठा तथा उसके उत्पादों के प्रति ग्राहकों का विश्वास भी सम्मिलित है। इसके लिए विभिन्न सर्वेक्षणों का प्रयोग किया जाता है।

2. **तुलनात्मक विश्लेषण (Comparative Analysis)**–

नियन्त्रण की इस प्रणाली में संगठन अपने कार्यों का आकलन तुलना के आधार पर करता है। यह तुलना विभिन्न आधारों पर की जा सकती है–

- **गत अवधि से तुलना**– इस तकनीक में संगठन के कार्यों की तुलना पिछली अवधि से की जाती है। दो तुलनपत्रों की तुलना करके अनुपात विश्लेषण तथा अन्य उपकरणों के माध्यम से संगठन के परिणामों का विश्लेषण किया जाता है। किसी प्रकार का ऋणात्मक विचलन होने पर उसके कारण को ज्ञात किया जाता है तथा समस्या का निवारण किया जाता है।
- **उद्योग से तुलना**– संगठन की प्रगति की तुलना उद्योग की समग्र स्थिति से की जाती है। यदि उद्योग में स्थिति अनुकूल है किन्तु संगठन में प्रतिकूल है अथवा तुलनात्मक रुप से कम अनुकूल है तो इसका विश्लेषण किया जाना चाहिए। उद्योग की स्थिति प्रतिकूल होने पर यदि संगठन सन्तोषजनक कार्य कर रहा है तो इसका विवेचन करने अधिकतम लाभ प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।
- **श्रेष्ठ से तुलना**–संगठन अपने लिए विभिन्न क्षेत्रों में लक्ष्य तय करता है। ये लक्ष्य उस क्षेत्र की श्रेष्ठ संस्था के कार्यों को ध्यान में रखकर तय किया जाता है। उक्त संस्था की तुलना में अपनी प्रगति का आकलन करके संगठन नियन्त्रण का कार्य करता है।

3. **व्यापक विश्लेषण (Comprehensive Analysis)**–

व्यापक विश्लेषण तकनीक के माध्यम से संगठन बाजार में अपने कुल प्रभाव का आकलन करता है। प्रायः संगठन अपने व्यापार के स्वभाव के अनुसार कुछ विशिष्ट क्षेत्रों अथवा क्रियाओं का चुनाव कर लेते है। इन्हें 'की फैक्टर' कहा जाता है। संगठन उपरोक्त चयनित क्षेत्रों में अपनी कार्य प्रगति की समीक्षा करके समस्याओं का पता लगाते हैं तथा तदनुसार उनके निवारण का प्रयास करते हैं।

सन्तुलित स्कोर कार्ड के माध्यम से भी संगठन की प्रगति का विश्लेषण किया जाता है। इस विधि में चार क्षेत्रों में कार्य की तुलना की जाती है–1) ग्राहकों के परिप्रेक्ष्य में, 2) आन्तरिक व्यवसाय के परिप्रेक्ष्य में, 3) नवोन्मेष तथा सीख के परिप्रेक्ष्य में, तथा 4) वित्तीय परिप्रेक्ष्य में। इन चारों क्षेत्रों में सन्तुलन के आधार पर संगठन की प्रगति का आकलन किया जाता है जिसके लिए विभिन्न मानक तय किये जाते हैं।

पर्ट (कार्यक्रम मूल्यांकन समीक्षा तकनीक) तथा सी0पी0एम0 (समीक्षात्मक मार्ग विधि) जैसी तकनीकों के माध्यम से संगठन के कार्यो के सतत मूल्यांकन द्वारा समीक्षा की जाती है तथा सुधार के उपायों को लागू किया जाता है। सी0पी0एम0 में कार्य का एक ऐसा पथ स्वीकार किया जाता है जो संगठन को उसके लक्ष्य तक पहुॅचाती है तथा जिसके अनुपालन के द्वारा सफलता प्राप्त की जा सकती है।

4. **बजटरी विश्लेषण (Budgetary Analysis)–**

इस तकनीक के अन्तर्गत व्यापारिक संगठन विभिन्न प्रकार से बजट तैयार करते हैं तथा निर्धारित अवधि के बाद वास्तविक परिणामों की तुलना सम्बन्धित बजट से करते हुए कमियों का निर्धारण करते हुए सुधार के उपायों को अपनाते हैं। इसके अन्तर्गत रोकड़ बजट, पूॅजी बजट, विक्रय बजट, व्यय बजट आदि को उपकरणों के रुप में प्रयोग किया जाता है। बजटरी नियन्त्रण किसी संगठन में गतिविधियों को नियमित करने तथा लागत को नियन्त्रित करने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यह विश्लेषण उत्तरदायित्वों से बचने की प्रवृत्ति से भी संगठन की रक्षा करता है।

5. **शून्य आधारित बजटन (Zero Base Budgeting-ZBB)–**

शून्य आधारित बजट से आशय बजटन की उस विशिष्ट तकनीक से है जिसमें किसी अवधि के लिए बजट का निर्माण स्वतन्त्र रुप से किया जाता है अर्थात् पूर्व की अवधि के अभिलेखों तथा उपलब्धियों को नये बजट का आधार नहीं बनाया जाता है। शून्य आधारित बजट में समस्त आवश्यकताओं का नए सिरे से आकलन किया जाता है। व्यापार में स्वामित्व परिवर्तन अथवा उक्त क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन की दशा में इस तकनीक का प्रयोग अधिक किया जाता है।

6. **अन्य तकनीक (Other Techniques)–**

उपरोक्त के अतिरिक्त अन्य अनेक तकनीकों का प्रयोग संगठन की कार्यप्रणाली पर नियन्त्रण रखने के लिए किया जाता है। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित तकनीकों को सम्मिलित किया जाता है–

- **उद्देश्य द्वारा प्रबन्धन** (Management By Objectives-MBO)– यह तकनीक मध्यम अधिकारियों को भी प्रबन्धन प्रक्रिया में सम्मिलित करती है। उच्च तथा मध्यम स्तर के प्रबन्धक पारस्परिक सहमति से

संगठन के लिए लक्ष्य निर्धारित करते हैं तथा उन लक्ष्यों के आलोक में संगठन की प्रगति सुनिश्चित करते हैं।

- **सहमति ज्ञापन** (Memorandou of Understanding- MOU)– जब दो संगठन (जिनमें सें प्रायः एक सरकारी तथा दूसरा निजी क्षेत्र का होता है) किसी कार्य को सम्पन्न करने हेतु सहमत होते हैं तो वे कार्य की आधारभूत शर्तें तय करते हैं। इन शर्तों का दोनों पक्षों को पालन करना होता है। यह सहमति पत्र ही नियन्त्रण का मुख्य उपकरण सिद्ध होता है।

परिचालनात्मक नियन्त्रण की प्रक्रिया–

रणनीतिक मूल्यांकन एक सतत प्रक्रिया है। इसमें निरन्तरता बनी रहती है। एक बार की प्रक्रिया पूर्ण होने पर अगली प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। मूल्यांकन की प्रक्रिया को निम्नलिखित रुप से प्रस्तुत किया जा सकता है–

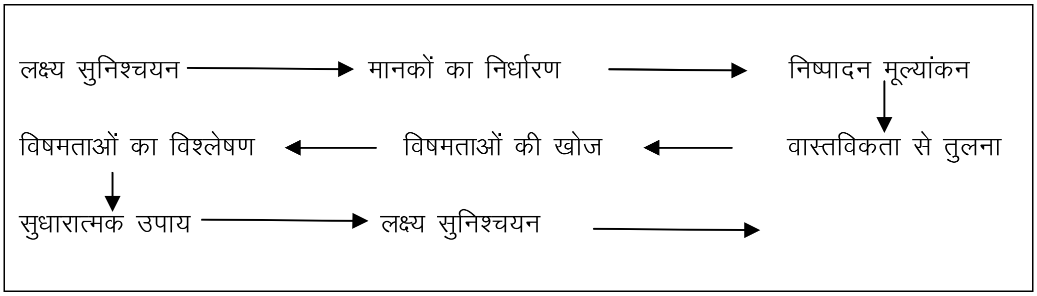

1. **लक्षित कार्यों का सुनिश्चयन–** किसी कार्य, विभाग अथवा नीति का मूल्यांकन करने से पूर्व यह ज्ञात होना आवश्यक है कि वास्तव में उससे किन परिणामों की आशा की जा सकती है। बिना मंजिल का पता जाने यह ज्ञात करना असम्भव है कि यात्रा सही दिशा में हुई है अथवा नहीं। नियन्त्रण की परिचालनात्मक अथवा कार्यात्मक प्रक्रिया में सर्वप्रथम संगठन की संदृष्टि, ध्येय, लक्ष्य आदि निर्धारित किये जाते हैं।

2. **मानकों का निर्धारण–** निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मात्रात्मक लक्ष्य तय किये जाते हैं। इन्हें वास्तविक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए प्राप्त किये जा सकने योग्य निर्धारित किया जाना चाहिए, अन्यथा ये अपनी उपयोगिता खो देते हैं।

3. **निष्पादन मूल्यांकन–** निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु विभिन्न विभागों के मध्य तथा विभागों के अन्दर विभिन्न अधिकारियों व कार्मिकों को कार्य आबन्टन किया जाता है। निर्धारित अवधि (मासिक/त्रैमासिक/वार्षिक आदि) के बाद निष्पादन मूल्यांकन किया जाता है। निष्पादन मूल्यांकन के लिए मात्रात्मक तथा गुणात्मक रीति से सूचना प्राप्त की जाती है। प्रगति आख्या के माध्यम से लक्ष्यों की प्राप्ति की जानकारी मिलती है तथा इसे उपलब्ध परिस्थितियों व अवसरों के सापेक्ष पुष्ट किया जाता है।

4. **वास्तविक निष्पादन की मानकों से तुलना–** निर्धारित मानकों के सापेक्ष वास्तविक कार्य प्रगति का आकलन किया जाता है। यह जानने का प्रयास किया जाता है कि प्रदर्शित प्रगति वास्तविक रुप से प्राप्त की गई है अथवा बनावटी आधार पर तात्कालिक लक्ष्य पूर्ति की औपचारिकता कर दी गई है।

5. **विषमताओं का पता लगाना–** यह ज्ञात किया जाता है कि वास्तविक प्रगति निर्धारित मानकों की तुलना में किस स्तर की है। लक्ष्य यदि प्राप्त नहीं हो सके हैं तो उन कारणों की खोज की जाती है जिनके कारण यह अन्तर उत्पन्न हुआ है। प्रत्येक संगठन अपने लक्ष्यों का निर्धारण करने के साथ ही एक संभाव्य विषमता सीमा भी तय करता है। इसे विचलन की स्वीकार्य सीमा भी कहा जा सकता है। उदाहरण के लिए कोई संगठन अपने विक्रय विभाग को 200 टन सामग्री के विक्रय का लक्ष्य देता है और आन्तरिक रुप से यह तय करता है कि 10 प्रतिशत का विचलन स्वीकार्य होगा तो विभाग द्वारा 180 टन से कम की बिक्री को गम्भीरता से लिया जायेगा।

6. **विषमताओं का विश्लेषण–** लक्ष्य तथा वास्तविक प्रगति के अन्तर का विश्लेषण किया जाना आवश्यक होता है। विचलन की स्वीकार्य सीमाओं के अन्दर विलचन होने पर विशेष कार्रवाई की आवश्यकता नहीं होती है किन्तु अधिक विचलन होने पर उनका विश्लेषण किया जाना अनिवार्य हो जाता है। यह देखा जाना चाहिए कि–

- विचलन लक्ष्यों के अवैज्ञानिक तथा अव्यावहारिक रुप से तय किये जाने के कारण तो नहीं है। लक्ष्य से अधिक उपलब्धि होने पर भी यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि लक्ष्य कम तो तय नहीं कर दिया गया था।
- विचलन अपरिहार्य कारणों से तो नहीं है अर्थात् उन परिस्थितियों के कारण तो नहीं है जिन पर सम्बन्धित व्यक्तियों का वश नहीं था। बाजार की परिस्थितियों में उच्चावचन, राजनीतिक अस्थिरता अथवा स्थानीय कारकों से भी असामान्य परिस्थिति उत्पन्न हो सकती है?
- विचलन सम्बन्धित व्यक्तियों की त्रुटि, भूल, अयोग्यता, अक्षमता आदि के कारण है अथवा किसी अनैतिक कृत्य व धोखाधड़ी के कारण?
- विचलन के लिए कौन से संस्थागत और व्यक्तिगत कारण उत्तरदायी हैं?

7. **सुधारात्मक कदम उठाना–** सम्पूर्ण नियन्त्रण प्रक्रिया का एकमात्र उद्देश्य संगठन की कार्य प्रणाली को सुदृढ करना होता है। संगठन अपने लक्ष्यों के प्राप्त न होने के कारणों की खोज इसी आशय से करता है कि कमियों को दूर करके भविष्य में अधिक सफलता प्राप्त की जा सके। संगठन द्वारा निम्नलिखित सुधारात्मक कदम उठाये जा सकते हैं–

- यदि लक्ष्य निर्धारण उचित नहीं किया गया है तो भविष्य में इसे ठीक किया जाता है।

- यदि विचलन अपरिहार्य परिस्थितियों के कारण है तो संगठन को दीर्घकालीन वैकल्पिक योजनाएं बनाना चाहिए जिससे कि भविष्य में किसी भी प्रकार के जोखिम से बचा जा सके।
- यदि विचलन कार्मिकों की त्रुटि, भूल, अयोग्यता, अक्षमता आदि के कारण आया है तो इसका अर्थ है कि कार्मिकों को प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।
- यदि कर्मचारियों में नीरसता के कारण उपलब्धियॉ कम हो रही हैं तो उनका मनोबल बढ़ाया जाना चाहिए।
- अनैतिक कृत्यों के सम्बन्ध में दण्डात्मक कार्रवाई किया जाना अपरिहार्य है।

13.8 सारांश

किसी भी संगठन को अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न योजनाओं तथा रणनीतियों का विकास करना होता है। इन रणनीतियों का क्रियान्वयन सावधानीपूर्वक किया जाता है तथा अन्त में रणनीति की प्रभावोत्पादकता का मूल्यांकन करके यह ज्ञात किया जाता है कि किन क्षेत्रों में संगठन ने अपेक्षित सफलता प्राप्त की है तथा कहॉ इसमें सुधार की आवश्यकता है? प्रत्येक संगठन अपनी आवश्यकताओं तथा बाजार की दशाओं के आधार पर अपनी रणनीति का समय–समय पर मूल्यांकन करता है। रिचर्ड रुमेंल्ट ने रणनीति मूल्यांकन की चार कसौटियों का वर्णन किया है– निरन्तरता, अनुकूलता, व्यवहार्यता तथा लाभप्रदता।संगठन में रणनीति के मूल्यांकन संसाधनों के अनुकूलतम उपयोग, समन्वयन, मनोबल में वृद्धि, दायित्व निर्धारण आदि की दृष्टि से लाभकारी होता है। यह संगठन से जुड़े समस्त पक्षकारों यथा– अंशधारक, संचालक, विभागीय प्रबन्धक, लाभ केन्द्र आदि के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। मूल्यांकन एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। इसकी प्रक्रिया में अनेक अवरोध आते हैं जिनमें प्रमुख हैं– गत्यात्मकता, मूल्यांकन के प्रति असहिष्णुता, मूल्यांकन की चुनौतियॉ, नियन्त्रण की सीमाएं तथा अल्पकालीन उपलब्धियों को प्रमुखता दिया जाना आदि। रणनीतिक मूल्यांकन की प्रभावशाली बनाने के लिए किसी संगठन को अल्पकालीन व दीर्घकालीन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक मानकों को सम्मिलित करना चाहिए तथा मात्रात्मक तथा गुणात्मक दोनों प्रकार की सूचनाओं को सम्मिलित करना चाहिए। सूचनाएं सीमित तथा तर्कपूर्ण मॉगी जानी चाहिए तथा उनकी सत्यता की जॉच, समेकन व विश्लेषण किया जाना चाहिए। इसके अन्तर्गत दण्डात्मक के स्थान पर मनोबल बढ़ाने के उपाय होने चाहिए।

व्यापार नीति का सामयिक मूल्यांकन करने तथा सुधारात्मक उपाय अपनाने की आवश्यकता होती है जिसमें मुख्यतः दो प्रकार के नियन्त्रणों को सम्मिलित किया जाता है– रणनीतिक नियन्त्रण, तथा कार्यात्मक नियन्त्रण। रणनीतिक नियन्त्रण के अन्तर्गत संगठन की नीतियों का क्रियान्वयन की प्रक्रिया के समय में ही मूल्यांकन किया जाता है तथा किसी प्रकार की विसंगति होने पर तुरन्त ही सुधारात्मक कदम उठाये जाते हैं। इसमें वाह्य तथा आन्तरिक दोनों प्रकार के प्रभावकारी तत्वों को

सम्मिलित किया जाता है। कार्यात्मक अथवा परिचालनात्मक नियन्त्रण में नीतियों को उचित प्रकार से लागू करने पर बल दिया जाता है। इन्हें पूर्व निर्धारित कार्यक्रमों के माध्यम से लागू किया जाता है। इसके अन्तर्गत बजटरी नियन्त्रण, गुणवत्ता नियन्त्रण, सामग्री नियन्त्रण, लागत नियन्त्रण आदि उपायों को सम्मिलित किया जाता है। कार्यात्मक नियन्त्रण आन्तरिक प्रक्रिया है तथा इसमें वाह्य तत्वों को ध्यान में नहीं रखा जाता है।

रणनीतिक नियन्त्रण की तकनीकों को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है– (अ) मूल्यांकन तकनीक, तथा (ब) परिचालनात्मक नियन्त्रण

जी0 श्रेयॉग एवं एच0 स्टेनमैन के अनुसार रणनीतिक नियन्त्रण की चार आधारभूत तकनीक हैं– प्राकल्पना नियन्त्रण, कार्यान्वयन नियन्त्रण, रणनीतिक निगरानी तथा विशेष सतर्कता नियन्त्रण। अन्य विद्वानों ने इसके अतिरिक्त भी कुछ तकनीकों (यथा– रणनीतिक उछाल केन्द्र, दायित्व केन्द्र आदि) का उल्लेख किया है।

परिचालनात्मक नियन्त्रण के लिए सामान्यतः निम्नलिखित तकनीकों का प्रयोग प्रचलित है– आन्तरिक विश्लेषण, तुलनात्मक विश्लेषण, व्यापक विश्लेषण, शून्य आधारित बजट तथा बजटरी विश्लेषण। रणनीतिक मूल्यांकन एक सतत प्रक्रिया है। इसमें निरन्तरता बनी रहती है। एक बार की प्रक्रिया पूर्ण होने पर अगली प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। मूल्यांकन की प्रक्रिया को निम्नलिखित रुप से प्रस्तुत किया जा सकता है– लक्ष्य सुनिश्चयन, मानकों का निर्धारण, निष्पादन मूल्यांकन, विषमताओं का विश्लेषण, विषमताओं की खोज, वास्तविकता से तुलना, सुधारात्मक उपाय तथा पुनः लक्ष्य सुनिश्चयन।

13.9 शब्दावली

रणनीतिक मूल्यांकन — रणनीतिक मूल्यांकन वह तकनीक है जिसके द्वारा संगठन की नीतियों की समीक्षा की जाती है तथा उसकी कमियों को दूर करने हेतु विकल्प की खोज की जाती है।

रणनीतिक नियन्त्रण — नियन्त्रण से आशय रणनीति के मूल्यांकन में ज्ञात हुई कमियों को दूर करने हेतु सुधारात्मक कदम उठाना है।

परिचालनात्मक नियन्त्रण — संगठन द्वारा अपनाई गई नीतियों के सफलतापूर्ण सम्पादन के लिए किए जाने वाले प्रयास।

प्राकल्पना नियन्त्रण — संगठन द्वारा स्वीकृत अवधारणाओं के आधार पर गतिविधियों को नियन्त्रित करने की तकनीक।

रणनीतिक निगरानी — सम्पूर्ण संगठन को इस प्रकार निगरानी में रखना कि समस्त आन्तरिक एवं वाह्य घटनाओं के संगठन पर होने वाले प्रभाव का आकलन किया जा सके।

विशेष सतर्कता नियन्त्रण	संगठन द्वारा आकस्मिकताओं का सामना करने के लिए विशेष सतर्कता का पालन करना व आकस्मिक योजनाओं को लागू करना।
रणनीतिक उछाल नियन्त्रण	व्यापारिक अस्थिरताओं का सामना करने के लिए तीव्र परिवर्तनशील योजना लागू करके नियन्त्रण स्थापित करना।
दायित्व केन्द्र	योजनाओं के सफल क्रियान्वयन के लिए लघु निगरानी केन्द्र जिसें निर्धारित दायित्व सौंपे जाते हैं।
आन्तरिक विश्लेषण	संगठन की आन्तरिक शक्तियों तथा क्षीर्णताओं का विवेचन करने की नियन्त्रण तकनीक
तुलनात्मक विश्लेषण	नियन्त्रण की इस प्रणाली में संगठन अपने कार्यों का आकलन, गत अवधि, उद्योग अथवा श्रेष्ठ से तुलना के आधार पर किया जाता है।
व्यापक विश्लेषण	संगठन द्वारा 'की फैक्टर' क्षेत्रों में अपनी कार्य प्रगति की समीक्षा द्वारा नियन्त्रण की तकनीक
बजटरी विश्लेषण	विभिन्न प्रकार के बजट बनाकर संगठन के वास्तविक परिणामों की तुलना सम्बन्धित बजट से करते हुए कमियों का निर्धारण करने की तकनीक
शून्य आधारित बजटन	पूर्व की अवधि के अभिलेखों तथा उपलब्धियों को आधार बनाये बिना नये बजट के निर्माण द्वारा संगठन की क्रियाओं पर नियन्त्रण
उद्देश्य द्वारा प्रबन्धन	पारस्परिक सहमति से संगठन के उद्देश्यों का निर्धारण तथा तदनुरुप नियन्त्रण करनाा।
सहमति ज्ञापन	दो पक्षों द्वारा मिलकर कार्य करने की सहमति की निर्धारित शर्तों के आधार पर नियन्त्रण
एस0बी0यू0	स्माल बिजनेस यूनिट (लघु व्यापार इकाई)
वी0आर0आई0ओ0	वैल्यू, रेअरिटी, इमिटेबिलिटी, आर्गनाइजेशन (महत्व, दुर्लभता, अनुकरणीयता, संगठन)
पी0ई0आर0टी0 (पर्ट)	प्रोग्राम इवैल्युएशन रिव्यू टेक्नीक (कार्यक्रम मूल्यांकन समीक्षा तकनीक)
सी0पी0एम0	क्रिटिकल पाथ मेथड (आलोचनात्मक मार्ग विधि)

जेड0बी0बी0	जीरो बेस बजटिंग (शून्य आधारित बजटन)
एम0बी0ओ0	मैनेजमेन्ट बाई आब्जेक्टिव्स (उद्देश्य द्वारा प्रबन्धन)
एम0ओ0यू0	मेमोरेण्डम ऑफ अन्डरस्टेंडिग (सहमति ज्ञापन)
एस0ई0बी0आई0(सेबी)	सिक्योरिटी एक्सचेंज बोर्ड आफ इण्डिया (भारतीय प्रतिभूति विनिमय बोर्ड)

13.10 बोध प्रश्न

(क) अपनी प्रगति जॉचें

बताएं निम्न कथन सत्य हैं अथवा असत्य–

(अ) रणनीतिक मूल्यांकन एक सुधारात्मक प्रकृति की क्रिया होती है। (सत्य/असत्य)

(आ) संगठन का रणनीतिक मूल्यांकन किसी कार्मिक के निष्पादन मूल्यांकन के समान ही होता है। (सत्य/असत्य)

(इ) रणनीति ऐसी होनी चाहिए जिसमें आन्तरिक तथा वाह्य वातावरण में होने वाले परिवर्तनों को आसानी से समायोजित किया जा सके। (सत्य/असत्य)

(ई) विभागीय प्रबन्धक तथा कार्मिक प्रायः रणनीतिक मूल्यांकन के प्रति एक सहयोगात्मक तथा उत्साहजनक व्यवहार प्रकट करते हैं। (सत्य/असत्य)

(उ) मनोबल के समान ही नियन्त्रण में भी सकारात्मकता का भाव छुपा होता है। (सत्य/असत्य)

(ऊ) रणनीतिक नियन्त्रण में प्रायः अल्पकालीन परिणामों को ही अधिक महत्व दिया जाता है। (सत्य/असत्य)

(ए) मूल्यांकन में सूचनाओं की मात्रा अत्यधिक नहीं होनी चाहिए अन्यथा यह एक नीरस प्रक्रिया बन जायेगा। (सत्य/असत्य)

(ऐ) रणनीतिक मूल्यांकन में व्यक्तिगत उपलब्धियों अथवा सफलताओं को सम्मिलित किया जाना चाहिए, न कि नीतिगत विषयों को। (सत्य/असत्य)

(ओ) मूल्यांकन में यथासम्भव मनोबल बढ़ाने के उपाय होने चाहिए तथा दण्डात्मक उपायों को न्यूनतम स्तर पर रखा जाना चाहिए। (सत्य/असत्य)

(ख) अपनी प्रगति जॉचें

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए–

2. (रणनीतिक/कार्यात्मक) नियन्त्रण का प्रमुख उद्देश्य संगठन की नीतियों की उपयोगिता का परीक्षण करना होता है।
2. कार्यात्मक नियन्त्रण (आन्तरिक/वाह्य/आन्तरिक व वाह्य दोनों) वातावरण से प्रभावित होता है।
3. रणनीतिक नियन्त्रण (दीर्घ/अल्प) अवधि के लिए लागू किया जाता है।
12. प्राकल्पना नियन्त्रण, रणनीतिक निगरानी, दायित्व केन्द्र आदि को नियन्त्रण की (मूल्यांकन तकनीक/कार्यात्मक तकनीक) के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है।

13. महत्व श्रंखला, मात्रात्मक विश्लेषण, गुणात्मक विश्लेषण आदि को परिचालनात्मक नियन्त्रण की (आन्तरिक विश्लेषण/तुलनात्मक विश्लेषण/व्यापक विश्लेषण) तकनीक के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है।
14. (आन्तरिक विश्लेषण/तुलनात्मक विश्लेषण/व्यापक विश्लेषण) तकनीक के अन्तर्गत 'की फैक्टर' क्षेत्रों में अपनी कार्य प्रगति की समीक्षा करके समस्याओं का पता लगाते हैं तथा तदनुसार उनके निवारण का प्रयास करते हैं।

13.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

(क) – अपनी प्रगति जॉचें

(अ) सत्य, (आ) सत्य, (इ) सत्य,(ई) असत्य, (उ) असत्य, (ऊ) सत्य, (ए) सत्य, (ऐ) असत्य, (ओ) सत्य.

(ख) – अपनी प्रगति जॉचें

(1) रणनीतिक (2) आन्तरिक (3) दीर्घ (4) मूल्यांकन तकनीक (5) आन्तरिक विश्लेषण (6) व्यापक विश्लेषण

13.12 स्वपरख प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न–

(अ) रणनीति मूल्यांकन की प्रकृति समझाइए।
(आ) संगठन अपनी नीतियों की परख करने के लिए कौन सी कसौटियों का प्रयोग करते हैं?
(इ) किसी संगठन में रणनीति का मूल्यांकन किया जाना क्यों महत्वपूर्ण है?
(ई) रणनीतिक मूल्यांकन के अवरोधक तत्व कौन से हैं? समझाइए।
(उ) प्रभावशाली मूल्यांकन के आवश्यक तत्वों पर प्रकाश डालिए।
(ऊ) रणनीतिक नियन्त्रण तथा कार्यात्मक नियन्त्रण में क्या अन्तर है? समझाइए।
(ए) रणनीतिक नियन्त्रण की मूल्यांकन तकनीक के अन्तर्गत दायित्व केन्द्रों की भूमिका पर प्रकाश डालिए।
(ऐ) रणनीतिक नियन्त्रण की तुलनात्मक विश्लेषण तकनीक पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

निबन्धात्मक प्रश्न–

9. रणनीतिक मूल्यांकन से क्या आशय है? इसमें किन हितधारकों को सम्मिलित किया जाता है? रणनीतिक मूल्यांकन में किन कारणों से अवरोध उत्पन्न हो सकता है?
10. रणनीतिक मूल्यांकन का महत्व बताइए। एक प्रभावशाली मूल्यांकन प्रणाली के आवश्यक तत्वों पर प्रकाश डालिए।
3. रणनीतिक नियन्त्रण से क्या आशय है? रणनीतिक नियन्त्रण की मूल्यांकन तकनीक के अन्तर्गत किन उपकरणों का प्रयोग किया जाता है?
4. रणनीतिक नियन्त्रण की विभिन्न तकनीकों को संक्षेप में समझाइए।
5. रणनीतिक नियन्त्रण को परिभाषित कीजिए। इसकी प्रक्रिया को समझाइए।
6. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–

(अ) प्राकल्पना नियन्त्रण तकनीक
(ब) रणनीतिक उछाल नियन्त्रण
(स) रणनीतिक निगरानी
(द) आन्तरिक विश्लेषण द्वारा परिचालनात्मक नियन्त्रण
(ई) शून्य आधारित बजट द्वारा नियन्त्रण

13.13 सन्दर्भ पुस्तकें

1 रिचर्ड रुमेल्ट, इवैल्युएशन आफ बिजनेस स्ट्रेटेजी, बिजनेस पॉलिसी एण्ड स्ट्रेटेजिक मैनेजमेन्ट, थर्ड एडीसन, मैकग्रा हिल पब्लिशिंग, यूएसए (1980) पृ0–2।

2 सेबी वेबसाइट www.sebi.gov.in/commreport/clause49.html.

3 जी0 श्रेयॉग एवं एच0 स्टेनमैन, स्ट्रेटेजिक कन्ट्रोलः ए न्यू पर्सपेक्टिव, एकेडमी ऑफ मेनेजमेन्ट रिव्यू,12 न01 (1987), 91–103।

4 जे0ए0 पियर्स ण् एवं आर0बी0 रॉबिनसन जू0, स्ट्रेटेजिक मैनेजमेन्टः स्ट्रेटेजी फार्मुलेशन एण्ड इम्प्लीमेन्टेशन, थर्ड एडी0, होमवुड,II राचर्ड डी0 इर्विन, 1988,पृ0 409।

5. Business Policy and Strategic Management, P. Subba Rao, Himalaya Publishing House, Mumbai.

6. Strategic Management, Azhar Kazmi- Adela Kazmi, Tata McGraw-Hill Education (India) Private Limited, New Delhi.

7. Business Policy and Strategic Management, GV Satya Sekhar, I K International Publishing House, New Delhi.

8. Business Policy and Strategic Management, Francis Cherunilam, Himalaya Publishing House, Mumbai.

9. Study Material of University of Mumbai (Institute of Distance Education), M.Com. Part I, Strategic Management.

इकाई–14 रणनीति एवं प्रौद्योगिकी प्रबन्धन

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना
14.2 तकनीक व प्रौद्योगिकी
14.3 तकनीक व प्रौद्योगिकी में अन्तर
14.4 प्रौद्योगिकी के प्रकार
14.4.1 उत्पाद प्रौद्योगिकी
14.4.2 प्रक्रिया प्रौद्योगिकी
14.4.3 प्रबन्धन प्रौद्योगिकी
14.4.4 गुणवत्ता प्रौद्योगिकी
14.5 प्राचीन व आधुनिक प्रौद्योगिकी
14.5.1 प्राचीन, परम्परागत अथवा पिछड़ी प्रौद्योगिकी
14.5.2 आधुनिक, प्रगतिशील अथवा तकनीकी प्रौद्योगिकी
14.5.3 माध्यमिक प्रौद्योगिकी,
14.6 प्रौद्योगिकी व समाज
14.7 प्रौद्योगिकी हस्तांतरण
14.7.1 प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के विविध रुप
14.8 प्रौद्योगिकी हस्तांतरण मॉडल
14.9 रणनीतिक प्रौद्योगिकी
14.10 प्रौद्योगिकी प्रबन्धन
14.11 प्रौद्योगिकी प्रबन्धन का महत्व
14.12 प्रौद्योगिकी विकास
14.13 रणनीतिक प्रौद्योगिकी प्रबन्धन
14.14 सारांश
14.15 शब्दावली
14.16 बोध प्रश्न
14.17 बोध प्रश्नों के उत्तर
14.18 स्वपरख प्रश्न
14.19 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः

- तकनीक व प्रौद्योगिकी का आशय एवं प्रकार का विवेचन कर सकें।
- प्राचीन, आधुनिक व माध्यमिक प्रौद्योगिकी का वर्णन कर सकें।
- प्रौद्योगिकी व समाज को समझ सकें।
- प्रौद्योगिकी हस्तांतरण का आशय, महत्व व प्रक्रिया का वर्णन कर सकें।

- प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रौद्योगिकी हस्तांतरण व प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण मॉडल का विवेचन कर सकें।
- रणनीतिक प्रौद्योगिकी व रणनीतिक प्रौद्योगिकी प्रबन्धन का विवेचन कर सकें।
- प्रौद्योगिकी प्रबन्धन व प्रौद्योगिकी विकास को समझ सकें।

14.1 प्रस्तावना

रणनीतिक प्रबन्धन किसी भी संगठन को उसके समकक्ष किसी अन्य संगठन की अपेक्षा श्रेष्ठतर स्थिति प्रदान करने का कौशल है। इसके अन्तर्गत तात्कालिक बाजार, समाज, तकनीक आदि की परिस्थितियों के आधार पर अपना तथा अन्य संगठनों का मूल्यांकन करते हुए एक ऐसा मार्ग तैयार किया जाता है जिस पर चलकर संगठन अपने लक्ष्यों को प्राप्त करता है। रणनीतिक तकनीकी प्रबन्धन के अन्तर्गत रणनीति के तकनीकी पक्ष का परीक्षण किया जाता है अर्थात् व्यावसायिक संगठन द्वारा अपने क्षेत्र के लिए आवश्यक पारम्परिक व आधुनिक तकनीक को अपनाये जाने, शोध व विकास को प्रोत्साहन देने, तथा प्रतिस्पर्धी संगठनों की तकनीकी रणनीतियों के परिप्रेक्ष्य में अपने संगठन की रणनीति में परिवर्तन व सुधार करने की प्रक्रिया है। प्रस्तुत इकाई में तकनीक के प्रयोग, तकनीकी प्रबन्धन तथा रणनीतिक तकनीकी प्रबन्धन के विभिन्न पक्षों को समझने का प्रयास किया गया है। प्रौद्योगिकी के अन्तर्गत विज्ञान के उन सिद्धान्तों तथा प्रक्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है जिनका प्रयोग उपकरणों के संचालन के लिए किया जाता है।

14.2 तकनीक व प्रौद्योगिकी (Technique and Technology)

तकनीक व प्रौद्योगिकी शब्दों का प्रयोग इस प्रकार किया जाता है कि प्रायः इनमें अन्तर बताना कठिन हो जाता है। अनेक बार तकनीक के स्थान पर प्रौद्योगिकी तथा प्रौद्योगिकी के स्थान पर तकनीक शब्द का प्रयोग भी कर दिया जाता है किन्तु इन दोनों शब्दों में अन्तर होता है। तकनीक किसी कार्य को करने के लिए उपकरणों के विशिष्ट प्रकार से प्रयोग की कला है। इसके अन्तर्गत प्रारम्भिक रुप से किसी वस्तु के उत्पादन के तौर तरीकों को सम्मिलित किया जाता था किन्तु कालान्तर में व्यापार के सभी विभागों मे इसका प्रयोग किया जाने लगा। यथा– लेखांकन तकनीक, विपणन तकनीक आदि।

प्रौद्योगिकी शब्द तुलनात्मक रुप से विस्तृत शब्द है जिसमें तकनीक को सम्मिलित किया जाता है। सामान्य शब्दों में प्रौद्योगिकी का अर्थ है– किसी वस्तु के उत्पादन अथवा किसी कार्य को करने के लिए तकनीकों का व्यवस्थित उपयोग। प्रौद्योगिकी के लिए प्रयुक्त अंग्रेजी शब्द टेक्नोलोजी का उदय ग्रीक शब्द टेक्ने (techne) तथा लोगोस (logos) के मेल से बना है। टेक्ने का अर्थ है कला व शिल्प तथा लोगोस का अर्थ है शब्द, वार्ता अथवा भाषण। इसप्रकार टेक्नोलोजी का अर्थ कला अथवा शिल्प से सम्बन्धित किसी विषय से था। 17वीं शताब्दी तक इसका प्रयोग कला व कलात्मकता के क्षेत्र में किया जाता था। 20वीं शताब्दी आने तक टेक्नोलोजी शब्द का प्रयोग मशीन व उपकरण के प्रयोग की तकनीक, प्रणाली अथवा प्रक्रिया के लिए किया जाने लगा। आधुनिक युग में टेक्नोलोजी अर्थात प्रौद्योगिकी का आशय

यन्त्रों, उपकरणों तथा नवोन्मेषी सेवाओं के समन्वयन की तकनीक है जो संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति में महत्वपूर्ण होती है।

14.3 तकनीक व प्रौद्योगिकी में अन्तर

समान प्रतीत होने वाले इन दोनों शब्दों को उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है– क्रिकेट के खेल में सभी खिलाड़ी एक ही प्रकार के बैट से समान मैदान पर समान बॉल से खेलते हैं किन्तु प्रत्येक खिलाड़ी किसी बॉल को किसी विशेष ढंग से खेलता है। इसे हम उसके खेल की तकनीक के रुप में जानते है बैट का भार व उसे पकड़ने का ढंग तथा क्रीज पर खड़े होने का तरीका आदि सम्मिलित है। प्रौद्योगिकी में वैज्ञानिक शोधों व प्रक्रियाओं के द्वारा किसी कार्य परिणाम को प्राप्त किया जाता है। जैसे प्रकाश व्यवस्था के लिए क्रमशः बल्ब, ट्यूब लाइट, सी0एफ0एल0 तथा एल0ई0डी0 का प्रयोग प्रौद्योगिकी विकास को प्रदर्शित करता है। इसीप्रकार, पानी के शुद्धीकरण के लिए अल्ट्रावायलेट रे अथवा रिवर्स आस्मोसिस (आर0ओ0) जैसी प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जाता है जिसमें एक विशिष्ट प्रक्रिया के द्वारा उपकरणों के माध्यम से पानी को शुद्ध करने का कार्य किया जाता है। बड़े संस्थानों में उच्च स्तरीय प्रौद्योगिकी की जटिलता में अनेक तकनीकों का समावेश हो सकता है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि–

- तकनीक किसी कार्य को करने का विशिष्ट ढंग होता है जबकि प्रौद्योगिकी में वैज्ञानिक सिद्धान्तों के आधार पर उपकरणों का प्रयोग किया जाता है।
- तकनीक का निरन्तर उपयोग कार्य को तीव्र गति से तथा दक्षता के साथ करने में सहायक होता है। प्रौद्योगिकी वैज्ञानिक सिद्धान्तों के उपयोग द्वारा मशीनों व उपकरणों के कुशल उपयोग पर आधारित होती है।
- एक ही प्रौद्योगिकी का प्रयोग अलग–अलग व्यक्ति अलग–अलग तकनीक से कर सकता है।
- विज्ञान व अभियन्त्रण का प्रयोग प्रौद्योगिकी को ज्ञान की विशिष्ट शाखा बना देता है।
- तकनीक कला के निकट है जबकि प्रौद्योगिकी विज्ञान के निकट है।
- तकनीक की तुलना में प्रौद्योगिकी का क्षेत्र व्यापक है तथा ज्ञान प्राप्त करना जटिल है।
- प्रौद्योगिकी वैज्ञानिक सिद्धान्त पर आधारित होती है जबकि तकनीक अभ्यास पर आधारित होती है। तकनीक में रचनात्मक व नवोन्मेषी विचारों की आवश्यकता होती है।

14.4 प्रौद्योगिकी के प्रकार

प्रौद्योगिकी के निम्नलिखित स्वरुप सामान्यतः पाये जाते हैं–

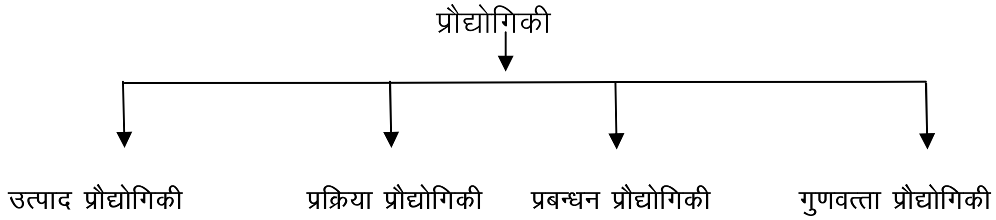

14.4.1 उत्पाद प्रौद्योगिकी

किसी औद्योगिक संगठन को अपने उत्पाद के निर्माण में कुछ विशिष्टताओं को अनिवार्यतः प्राप्त करना होता है अन्यथा प्रतिस्पर्धात्मक युग में बाजार में अपना अस्तित्व बनाये रखना तथा व्यापार को विकसित करना एक बड़ी चुनौती बन जाती है। एक प्रौद्योगिकी को जब अपनाया जाता है तो उससे पूर्व एक दीर्घ शोध प्रक्रिया के द्वारा प्रयोगशाला परीक्षण किया जाता है जिसमें भारी धन निवेश किया जाता है। नई प्रौद्योगिकी का प्रारम्भिक लाभ कम्पनी को प्राप्त होता है यद्यपि शीघ्र ही अन्य कम्पनियों द्वारा उक्त प्रौद्योगिकी कों अपनाने पर यह लाभ बॅट जाता है। नई प्रौद्योगिकी का उपयोग उत्पाद का डिजायन तैयार करने, उसे अधिक उपयोगी तथा मितव्ययी बनाने आदि के लिए किया जा सकता है। ऐसा करने से कम्पनी की प्रतिष्ठा में वृद्धि तथा बाजार में पकड़ मजबूत होती है।

14.4.2 प्रक्रिया प्रौद्योगिकी–

इस प्रकार की प्रौद्योगिकी का प्रयोग प्रायः निर्माणी उद्योगों में किया जाता है। किसी विशिष्ट उद्योग में उत्पादन की विभिन्न प्रौद्योगिकी एक साथ उपयोग में लाई जाती हैं। उत्पादक उनमें से किसी एक अथवा उनके किसी संयोजन को अपने संगठन में प्रयोग करता है। यहाँ यह विचारणीय है कि प्रौद्योगिकी का चयन किस प्रकार किया जायेगा। प्रक्रिया प्रौद्योगिकी के चयन में कच्चे माल की उपलब्धता, मानव संसाधन की उपलब्धता, धन की उपलब्धता, कम्पनी की संदृष्टि तथा सरकारी नीतियों का योगदान होता है। पूँजी प्रधान अथवा श्रम प्रधान प्रौद्योगिकी का प्रयोग कम्पनी की परिस्थितियों तथा रणनीतिक दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। अपनाई गई प्रक्रिया प्रौद्योगिकी के अनुरुप ही प्लान्ट का डिजायन तैयार किया जाता है, संसाधनों का अधिग्रहण व उपयोग किया जाता है तथा कार्य का नियन्त्रण करने हेतु आवश्यक निर्देश प्रदान किये जाते हैं।

14.4.3 प्रबन्धन प्रौद्योगिकी–

प्रबन्धन सम्पूर्ण उपक्रम को एक सूत्र में पिरोने तथा संसाधनों को उपयुक्ततम ढंग से प्रयोग करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। जिस प्रकार से उच्च प्रबन्धन अपने संसाधनों का उपयोग करता है वह उस संगठन की प्रबन्धन प्रौद्योगिकी कहलाती है जिसमें मानव संसाधन प्रबन्धन, विपणन प्रबन्धन, सामग्री प्रबन्धन, वित्तीय प्रबन्धन आदि को सम्मिलित किया जाता है।

मानव संसाधन प्रबन्धन की विभिन्न तकनीक संगठनों के द्वारा अपनाई जाती हैं। कुछ संगठन उच्च ज्ञान, क्षमता व अनुभव वाले कर्मचारियों का चयन अधिक वेतन पर करके उत्कृष्ट परिणाम प्राप्त करने तथा लाभ कमाने की तकनीक प्रयोग करते हैं तो कुछ अन्य नये उत्साही युवाओं को भर्ती करके उन्हें प्रशिक्षण प्रदान करके अपने

संगठन की आवश्यकता के अनुसार तैयार करते हैं। इन कार्मिकों का संगठन से दीर्घकालीन जुड़ाव रहता है। इसीप्रकार सामग्री प्रबन्धन के अन्तर्गत कच्चे माल के क्रय की उचित मात्रा तथा श्रोत का निर्धारण करना होता है जिससे कि किसी भी समय सामग्री की कमी न हो तथा सामग्री ऐसे समय व मात्रा में खरीदी जाये जबकि वह न्यूनतम मूल्य में उपलब्ध हो सके। विज्ञापन व विपणन तकनीक का प्रयोग तथा वित्तीय नियन्त्रण की तकनीक का उपयोग सही प्रकार से करके कम्पनी परिणामों को अपने पक्ष में करती है। विपणन प्रबन्धन के द्वारा वस्तु का मूल्य निर्धारण, विपणन मध्यस्थों का चयन, वस्तु की उपलब्धता, मॉग, पैकेजिंग आदि के सम्बन्ध में नीतियों का निर्धारण व संचालन किया जाता है। वित्तीय नियन्त्रण की तकनीक अल्पपूॅजीकरण तथा अति पूॅजीकरण के दोषों से बचाकर कम्पनी को निवेशित धन पर अधिकतम लाभ कमाने का प्रबन्ध करती है।

14.4.4 गुणवत्ता प्रौद्योगिकी–

गुणवत्ता प्रौद्योगिकी किसी कार्य को सर्वश्रेष्ठ परिणाम तक पहॅुचाने की तकनीक है। इसका प्रत्यक्ष लक्ष्य आबन्टित कार्य को इस प्रकार पूर्ण करना है कि न्यूनतम लागत व प्रयास में अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके। काइजन, कानबान, सिक्स सिग्मा, क्वालिटी सर्किल, काइकाकू, फाइव एस (सेइरी, सेइटन, सेइसो, सेइकेत्सु एवं शित्सुके) आदि अनेक तकनीक किसी संगठन को उसके कार्यो में गुणवत्ता के नये मापदण्ड स्थापित करने में सहायता करती हैं। इन विभिन्न तकनीकों का प्रयोग करके कम्पनी अपने उत्पादन व सेवाओं के द्वारा एक उच्चतम आदर्श स्थापित करती हैं। गुणवत्तापूर्ण प्रबन्धन के द्वारा कम्पनी ग्राहकों की सन्तुष्टि बढाती है तथा न्यूनतम त्रुटि के द्वारा ग्राहकों की शिकायतों के न्यूनीकरण के साथ विकास के मानदण्ड स्थापित करती है। आधुनिग प्रतिस्पर्धी युग में जबकि सभी फर्म खुले बाजार से एक ही प्रकार का कच्चा माल, मशीन आदि क्रय कर सकते हैं, उक्त का गुणवत्तापूर्ण प्रयोग ही किसी फर्म को लाभ की दौड़ में आगे निकलने मे मदद कर सकता है।

14.5 प्राचीन व आधुनिक प्रौद्योगिकी

प्रौद्योगिकी का चयन कम्पनी अपनी नीतियों, संसाधनों तथा बाजार की परिस्थितियों के आधार पर करती है। कोई भी प्रौद्योगिकी सर्वकालिक नहीं हो सकती है। कुछ समय बाद इसका अप्रचलित हो जाना स्वभाविक है क्योंकि निरन्तर शोध के कारण सुगम, मितव्ययी तथा तीव्रगामी प्रौद्योगिकी प्रकाश में आती रहती हैं जिनके कारण पुरानी प्रौद्योगिकी को छोड़कर नई तकनीक को अपनाना अनिवार्य हो जाता है। प्राचीन व आधुनिक प्रौद्योगिकी में निम्नलिखित अन्तर पाये जाते हैं–

14.5.1 प्राचीन, परम्परागत अथवा पिछड़ी प्रौद्योगिकी

प्राचीन प्रौद्योगिकी से आशय उस प्रौद्योगिकी से है जो कि पूर्व में विकसित की गई थी किन्तु उसके बाद अनेकों सुधार किये जा चुके हों अथवा उसके स्थान पर कोई नई एवं अधिक सुविधाजनक, सक्षम एवं मितव्ययी तकनीक प्रचलित हो चुकी हो। प्रायः प्राचीन तकनीक धीमी गति की होती है तथा इसका उत्पाद गुणवत्ता में नई तकनीक की अपेक्षा कम होता है। प्रायः पुरानी प्रौद्योगिकी सरल होती है तथा इसका

रखरखाव भी आसान होता है। इसमें साधारण उपकरणों का प्रयोग किया जाता है तथा इसकी लागत भी कम होती है। प्राचीन प्रौद्योगिकी के प्रयोग में सामान्य दक्षता की आवश्यकता होती है। इसमें अधिकांशतः स्थानीय कच्चे माल का ही उपयोग किया जाता है। यह प्रौद्योगिकी प्रायः श्रम प्रधान होती है। इसमें उत्पादन मात्रात्मक एवं गुणात्मक आधार पर निम्न स्तर का होता है।

14.5.2 आधुनिक, प्रगतिशील अथवा तकनीकी प्रौद्योगिकी

आधुनिक अथवा नवीन प्रौद्योगिकी पुरानी प्रौद्योगिकी पर सुधार होती है। इसे प्रगतिशील अथवा तकनीकी प्रौद्योगिकी भी कहा जाता है। यह मशीन आधारित होती है तथा रखरखाव की दृष्टि से व्ययशील होती है। यह एक जटिल प्रणाली होती है अतः इसके संचालन के लिए विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है। आधुनिक प्रौद्योगिकी वैज्ञानिक तकनीकों पर आधारित होती है तथा इसमें अधिक पूँजी की आवश्यकता होती है। श्रम की निर्भरता इसमें कम होती है। इस प्रौद्योगिकी में उत्पादन समरुप, उच्च गुणवत्तापूर्ण तथा तीव्र गति से होता है। अधिक व्ययशील प्रणाली होने पर भी तीव्र गति से उत्पादन होने तथा अपशिष्ट की मात्रा कम होने के कारण अधिक उत्पादन करने पर इसकी प्रति इकाई लागत कम होती है।

14.5.3 माध्यमिक प्रौद्योगिकी–

इस प्रकार की प्रौद्योगिकी का विचार सर्वप्रथम शूमाकर द्वारा अपनी पुस्तक स्माल इज ब्यूटीफुल के माध्यम से दिया। उनके अनुसार पुरानी तथा आधुनिक प्रौद्योगिकी के अपने गुण–दोष हैं। पुरानी प्रौद्योगिकी जहॉं सरल व सस्ती है वहीं आधुनिक तकनीक अधिक कार्यक्षम। अल्पविकसित देश जहॉं श्रम की पर्याप्तता है तथा पूँजी की कमी, वहॉं माध्यमिक प्रौद्योगिकी अधिक उपयोगी है। ये देश अपने संसाधनों का उपयोग करते हुए धीरे–धीरे औद्योगिक विकास की गति बढ़ाते हैं। उनके अनुसार मध्यम आकार के उद्यम अधिक सफल होते हैं। अति बड़े उद्यम संचालन की दृष्टि से कठिन होते हैं। इसप्रकार, माध्यमिक प्रौद्योगिकी से अभिप्राय ऐसी प्रौद्योगिकी से हैं जिसमें प्राचीन तथा नवीन प्रौद्योगिकी के समन्वय से एक ऐसी प्रौद्योगिकी डिजायन की जाये जिससे विकासशील देशों को उनके संसाधनों के अनुकूलतम उपयोग में मदद मिले।

14.6 प्रौद्योगिकी व समाज

प्रौद्योगिकी व समाज एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। ये दोनों एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। समाज उसी प्रौद्योगिकी को स्वीकार करता है जो तत्कालीन समाज के लिए लाभदायक हो। यदि समाज यह अनुभव करता है कि कोई अन्य प्रौद्योगिकी लाभदायक हो सकती है तभी पुरानी प्रौद्योगिकी का उपयोग बन्द करके नई को स्वीकार किया जाता है अन्यथा नहीं।समाज का नेतृत्व जिस प्रकार के व्यक्ति, संगठन अथवा राजनीतिक दल के पास होगा उसी प्रकार की नीतियॉं वहॉं प्रभावी होने लगती हैं। यह आश्चर्यजनक है कि प्राचीन प्रौद्योगिकी का सर्वाधिक विकास चीन तथा मध्यपूर्व के देशों में हुआ किन्तु औद्योगिक क्रान्ति का सूत्रपात हुआ इग्लैण्ड में। इस रहस्य का उत्तर यद्यपि अनुत्तरित है किन्तु इनके सामाजिक विकास के परिप्रेक्ष्य में

इसे समझा जा सकता है। चीन जब मार्क्सवाद के प्रभाव में था तब इग्लैण्ड में पूँजीवाद अपना स्थान बना चुका था। अधिकांश देशों में अंग्रेजों का शासन होने के कारण इग्लैण्ड उन देशों का उपयोग भी अपनी पूँजीवादी शक्तियों को बढ़ाने में लगा रहा था। अधिक से अधिक लाभ कमाने के लिए बड़ी मात्रा में उत्पादन किया जाना आवश्यक था तथा अधिक उत्पादन की आवश्यकता ने मशीनीकरण का मार्ग प्रशस्त किया।बड़ी मशीनों को अधिक कच्चे माल की आवश्यकता थी जो उन्होंने अपने अधीन देशों से पूर्ण की तथा अपने अतिरिक्त उत्पादन का विक्रय भी अन्य देशों को किया। वृहद स्तरीय उत्पादन का लाभ यह हुआ कि उन्होंने अपने माल की आपूर्ति कच्चे माल के आपूर्तिदाता देश को भी अत्यन्त कम दामों पर करके लाभ कमाया। उच्च तकनीक का प्रयोग पूँजीवादी विचारधारा के कारण ही सम्भव हो सका। इग्लैण्ड के पास मानव संसाधन की कमी ने भी मशीनीकरण को प्रोत्साहन दिया। चीन व मध्य पूर्वी राज्यों की स्थिति इससे भिन्न थी। वहॉ पूँजी प्रधान के स्थान पर श्रम प्रधान तकनीकों को ही अधिक महत्व दिया गया जिससे कि बेरोजगारी की समस्या न हो। भारत में महात्मा गॉधी की विचारधारा ग्रामीण स्वराज की थी जबकि जवाहर लाल नेहरु नवीन प्रौद्योगिकी के समर्थक थे। भारत की आर्थिक तथा प्रौद्योगिकी नीतियों में इन दोनों विचारधाराओं का समन्वय दिखाई देता है।

प्रौद्योगिकी भी समाज को प्रभावित करती है। औद्योगिक विकास के कारण शहरीकरण, पलायन, परिवार विभाजन, जाति प्रथा से मुक्ति जैसे सामाजिक परिवर्तन समाज को दिशा प्रदान करते हैं। इनके अपने गुण व दोष हैं जिन्हें समाज को स्वीकार करना होता है। पिछड़े देशों में कृषि प्रधान तथा विकसित देशों में औद्योगिक क्रियाओं को अपनाया जाता है तथा इन्हीं क्रियाओं के अनुरुप सामाजिक ढॉचा विकसित किया जाता है। उस समाज की परम्पराएं भी इसी के अनुरुप होतीं हैं। जैसे भारत में समस्त त्यौहार फसलों पर आधारित होते हैं।

14.7 प्रौद्योगिकी हस्तांतरण

प्रौद्योगिकी हस्तांतरण का अर्थ है किसी एक देश में प्रयुक्त प्रौद्योगिकी को अन्य देश में प्रयोग किया जाना अथवा प्रयोग की अनुमति दिया जाना। यह हस्तांतरण अनेक प्रकार से हो सकता है। जब कोई कम्पनी अपने व्यापार का विस्तार कर रही होती है तो उसके सामने एक बड़ी चुनौती प्रौद्योगिकी के हस्तांतरण की भी होती है। बौद्धिक सम्पदा कानून सम्बन्धी प्रावधानों के कारण आजकल प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के लिए अनेक सावधानियों का पालन करना अनिवार्य हो गया है। किसी कम्पनी द्वारा कड़ी मेहनत, शोध तथा धन व्यय करके जिस प्रौद्योगिकी को विकसित किया जाता है उसका प्रयोग कोई अन्य बिना अनुमति के नहीं कर सकता, अर्थात् यदि कोई अन्य कम्पनी उस प्रौद्योगिकी को प्राप्त करना चाहती है तो उसे वास्तविक कम्पनी से अधिकार प्राप्त करने होंगे जिसके लिए वह कम्पनी कुछ धन वसूल करेगी।

14.7.1 प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के विविध रुप–

सामान्यतः प्रौद्योगिकी का हस्तांतरण दो प्रकार से होता है–प्रत्यक्ष हस्तांतरण तथा अप्रत्यक्ष हस्तांतरण।

प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण

प्रत्यक्ष हस्तांतरण

1. लाइसेंसिंग अनुबन्ध
2. तकनीकी सेवा अनुबन्ध
3. फ्रचाइजिंग अनुबन्ध
4. मशीनरी सहयोग अनुबन्ध
5. अभियन्त्रण एवं निर्माण अनुबन्ध
6. प्रबन्धन अनुबन्ध
7. उपठेका अनुबन्ध
8. समन्वित अनुबन्ध

अप्रत्यक्ष हस्तांतरण

1. संयुक्त उपक्रम
2. प्रत्यक्ष विदेशी निवेश

1. **प्रत्यक्ष हस्तांतरण**–इसे Unbundled Transfer भी कहा जाता है। इसके अन्तर्गत प्रौद्योगिकी का प्राप्तकर्ता अनेक स्थानों से प्रौद्योगिकी प्राप्त करता है। यह एक विशिष्ट तकनीक हो सकती है अथवा अनेक तकनीकों का समन्वय। प्रौद्योगिकी प्रदाता तथा प्राप्तकर्ता दोनों ही स्वतन्त्र फर्म होती हैं तथा किसी विधिक अनुबन्ध के द्वारा एक दूसरे से जुड़े रहते हैं। दोनों फर्म एक दूसरे के प्रति अनुबन्ध की शर्त के आधार पर व्यवहार करते हैं। इस प्रक्रिया में प्रौद्योगिकी का प्राप्तकर्ता विभिन्न प्रदाताओं से प्रौद्योगिकी प्राप्त कर सकता है–

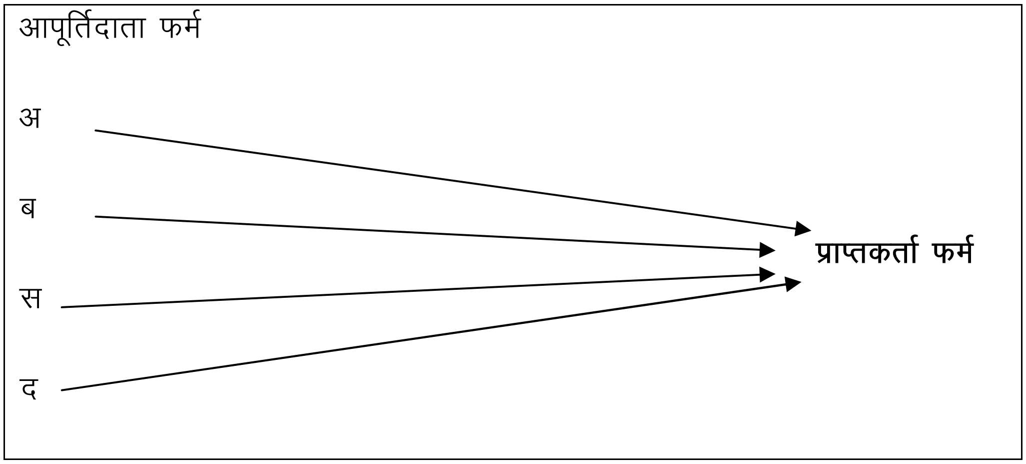

इसे वाह्यकृत मार्ग (Externilised Route) भी कहा जाता है। इस मार्ग में कोई कम्पनी अन्य देश में धन निवेश करने तथा अधिक जोखिम लेने से बचते हैं। वे बाहरी रुप से प्रौद्योगिकी को हस्तांतरित करने का प्रयास करते हैं।

इस प्रकार के प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के निम्नलिखित रुप पाये जाते हैं–

1. **लाइसेंसिंग अनुबन्ध**– इस प्रकार के अनुबन्ध में एक कम्पनी जिसके पास कोई बौद्धिक सम्पदा (तकनीक, वस्तु, ब्राण्ड, अधिकार आदि) होती है, अपने अधिकार का प्रयोग करने की अनुमति किसी अन्य कम्पनी को किसी वित्तीय पुरस्कार (रायल्टी आदि) के बदले में प्रदान करती है। यह एक पुरानी प्रणाली है। सोवियत रुस तथा जापान ने भी पश्चिमी देशों से प्रौद्योगिकी को प्राप्त करने के लिए इस प्रणाली का उपयोग किया था। जब कोई कम्पनी विदेश में प्रत्यक्ष निवेश नहीं करना चाहती है किन्तु अपने व्यापार का प्रसार अन्य देशों में करना चाहती है तो यह तकनीक उपयोगी है।
2. **तकनीकी सेवा अनुबन्ध**– ये अनुबन्ध किसी कम्पनी द्वारा अन्य कम्पनी को तकनीकी सेवाएं प्रदान करने से सम्बन्धित होते हैं। किसी विदेशी कम्पनी से तकनीकी सेवाएं प्राप्त करने के लिए आवश्यक भुगतान किये जाते हैं। इसमें अभियांत्रिकी, वित, विधि रखरखाव आदि कार्य को पूर्ण करने हेतु सेवा प्रदान की जाती हैं।
3. **फ्रेंचाइजिंग अनुबन्ध**– फ्रेचाइजिंग के अन्तर्गत प्रधान कम्पनी किसी अन्य कम्पनी को अपनी तकनीक व उत्पादों की ब्राण्ड वैल्यू के प्रयोग की अनुमति विशेष शर्तों के आधीन मूल्य भुगतान के द्वारा करते हैं। यह लाइसेंसिंग की तुलना में अधिक प्रभावशाली है क्योंकि इस अनुबन्ध में प्रधान फर्म का निरन्तर निरीक्षण रहता है तथा वह अपनी तकनीक, उत्पाद तथा साख पर प्रभावी नियन्त्रण रख पाती है। इन अनुबन्धों में प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के रुप में तकनीक, डिजायन, पैकेजिंग, प्रशिक्षण तथा व्यापार गतिविधियों पर नियन्त्रण आदि का हस्तांतरण किया जाता है।
4. **मशीनरी सहयोग अनुबन्ध**– इस प्रकार के अनुबन्धों के अन्तर्गत आपूर्तिदाता फर्म अपने ग्राहक के साथ भुगतान के आधार पर मशीनरी व उपकरणों की निरन्तर आपूर्ति का वचन देती है। इन अनुबन्धों के द्वारा प्राप्तकर्ता कम्पनी को उच्च तकनीक प्राप्त हो जाती है तथा प्रदाता को अपना व्यापार व्यापार बढाने का अवसर मिलता है। विकासशील देश प्रायः नई व विकसित प्रौद्योगिकी प्राप्त करने के लिए इस प्रकार के अनुबन्ध करते हैं। उदाहरण के लिए–अस्पतालों में विदेशों से मशीनों को मॅगाकर रोगी की जॉच की जाती है। इसके लिए आपूर्तिदाता कम्पनी मशीन के अतिरिक्त उसे स्थापित करने तथा

उपयोग हेतु प्रशिक्षण देने का कार्य भी करती है तथा मशीन के रखरखाव व मरम्मत का उत्तरदायित्व भी ले सकती है।

5. **अभियन्त्रण एवं निर्माण अनुबन्ध–** इस प्रकार के अनुबन्धोंमें एक फर्म किसी अन्य देश की फर्म से अभियांत्रिकी व निर्माण सम्बन्धी सेवाओं को प्राप्त करती है। आपूर्तिदाता फर्म अपने विशेषज्ञों के निरीक्षण में कार्य को किसी अन्य देश की कम्पनी के लिए संचालित करती है।
6. **प्रबन्धन अनुबन्ध–** इस प्रकार के अनुबन्ध सामान्य प्रबन्धन, विपणन प्रबन्धन, तकनीकी प्रबन्धन के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी के हस्तांतरण के सम्बन्ध में किये जाते हैं। इनमें आपूर्तिदाता फर्म निर्धारित शुल्क के आधार पर विशिष्ट सेवाएं प्रदान करती हैं। विशेषज्ञता प्राप्त संगठन होने के कारण प्राप्तकर्ता कम्पनी को वह कार्य स्वयं सम्पादित करने की तुलना में कम लागत में तथा अधिक गुणवत्तापूर्ण प्राप्त होता है। इन अनुबन्धों में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एक व्यावहारिक समस्या दो भिन्न देशों में प्रयुक्त कार्य संस्कृति, वातावरण तथा भाषा आदि की भिन्नता के कारण उत्पन्न होती है जिसके लिए विदेशी फर्म प्रायः स्थानीय स्तर पर अपने कुछ अधिकारी रखकर तालमेल स्थापित करती है।
7. **उपठेका अनुबन्ध–** उपठेका प्रणाली के अन्तर्गत वह फर्म जिसने विदेश में किसी बड़ी परियोजना को पूर्ण करने का ठेका लिया है, उक्त देश में कार्य का विभाजन करके परियोजना का एक अंश उपठेका देकर स्थानीय फर्म से पूर्ण करा लेता है। इस प्रकार के अनुबन्ध से मुख्य फर्म को स्थानीय परिस्थितियों का लाभ मिलता है तथा स्थानीय फर्म बड़ी परियोजना के अनुभव का लाभ लेती है। विदेशी फर्म के अनुभव, तकनीक तथा पूँजी निवेश के फलस्वरुप स्थानीय फर्म को भी प्रौद्योगिकी हस्तांतरण का लाभ प्राप्त होता है।
8. **समन्वित अनुबन्ध–** इस प्रकार के अनुबन्ध को टर्न–की एग्रीमेन्ट भी कहा जाता है। इनमें किसी विदेशी फर्म से विभिन्न प्रकार की सेवाओं, वस्तुओं तथा तकनीकों को इस प्रकार से प्राप्त किया जाता है कि सम्पूर्ण प्रौद्योगिकी हस्तांतरण का लाभ समेकित रुप से मिल सके। विदेशी फर्म दूसरे देश में जाकर संयत्र की स्थापना करने तथा उसे संचालित करने की सम्पूर्ण व्यवस्था सुनिश्चित करती है। इस प्रकार समन्वित अनुबन्ध में तकनीक, विपणन, प्रशिक्षण आदि के विभिन्न अनुबन्ध एक पैकेज में प्राप्त हो जाते हैं।

2. अप्रत्यक्ष हस्तांतरण–

प्रौद्योगिकी के अप्रत्यक्ष हस्तांतरण को Bundled Transfer भी कहा जाता है। इस प्रकार के प्रौद्योगिकी हस्तांतरण में विदेशी प्रौद्योगिकी प्रदाता द्वारा अन्य देश में एक सम्पूर्ण प्रौद्योगिकी बन्डल प्रदान किया जाता है। इस प्रक्रिया में प्रदाता कम्पनी प्राप्तकर्ता कम्पनी में पूँजी निवेश करती है तथा उसके परिणामों को साझा करती है।

इसे आन्तरिकीकृत मार्ग (Internalised Route) भी कहा जाता है क्योंकि इस विधि में प्रौद्योगिकी का प्रदाता इसके प्राप्तकर्ता के साथ आन्तरिक रुप से जुड़ा होता है।

सामान्यतः अप्रत्यक्ष प्रौद्योगिकी हस्तांतरण की निम्नलिखित विधियों का प्रयोग किया जाता है–

1. **संयुक्त उपक्रम (Joint Venture- JV)**– संयुक्त उपक्रम से आशय एक ऐसी व्यापारिक व्यवस्था से है जिसमें दो पूरक अथवा प्रतिस्पर्धी कम्पनी मिलकर एक नई कम्पनी का निर्माण करती हैं। वे पूॅजी में प्रतिभाग करते हैं तथा लाभ हानि को मिलकर वहन करते हैं। लाइसेंसिंग जैसे उपायों के द्वारा प्रौद्योगिकी हस्तांतरण में सहभागी कम्पनी का नियंत्रण व्यापारिक परिणामों पर नहीं होता है। संयुक्त उपक्रम व्यवस्था सन् 1960 के दशक में प्रचलन में आई। एशियाई देशों में अमेरिका तथा जापान की संयुक्त उपक्रम कम्पनियों की सफलता के कारण इस व्यवस्था को बढावा मिला।

   वस्तुतः संयुक्त उपक्रम व्यवस्था दो पूर्व विकसित विधाओं पूॅजी निवेश व्यवस्था तथा अनुबन्ध आधारित व्यवस्था का समन्वय है। इसमें किसी विशिष्ट परियोजना को सम्पन्न करने के लिए दो कम्पनी मिलकर एक नई कम्पनी का निर्माण करती हैं। उक्त परियोजना के अतिरिक्त दोनों कम्पनी अपने–अपने क्षेत्र में स्वतन्त्र कार्य करती हैं। संयुक्त उपक्रम में दोनों कम्पनियों को पूॅजी, प्रबन्धन व लाभ–हानि में हिस्सेदारी का अवसर मिलता है। ये दोनों कम्पनी प्रौद्योगिकी का हस्तांतरण करके नये उपक्रम को विकसित करती हैं।

2. **प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (Foreign Direct Investment-FDI)**–किसी अन्य देश के लिए प्रौद्योगिकी हस्तांतरण का एक प्रभावी माध्यम प्रत्यक्ष विदेशी निवेश भी है। इस प्रक्रिया में एक कम्पनी किसी अन्य देश में तकनीक, प्लान्ट व मशीनरी आदि के रुप में भौतिक पूॅजी का निवेश करती है। यह विदेशी पोर्टफोलिओ निवेश (Foreign Portfolio Investment-FPI) से भिन्न होता है। एफ0पी0आई0 में अधिकतम प्रत्याय की दर के लिए अंशपूॅजी व बॉण्ड आदि में निवेश किया जाता है तथा इससे कोई सरोकार नहीं रहता कि वह कम्पनी किस प्रकार धन को प्रयोग कर रही है, जबकि एफ0डी0आई0 में निवेश पर प्रत्यक्ष नियन्त्रण भी रखा जाता है। एफ0पी0आई0 में धन का प्रवाह न्यून प्रत्याय दर से उच्च प्रत्याय दर वाले देशों की ओर होता है किन्तु एफ0डी0आई0 में धन का प्रवाह विभिन्न दिशाओं में हो सकता है। यह सम्पन्न देश से विपन्न देश, एक सम्पन्न देश से दूसरे सम्पन्न देश, एक विपन्न देश से दूसरे विपन्न देश और यहॉ तक कि एक विपन्न देश से सम्पन्न देश के लिए भी हो सकता है।

14.8 प्रौद्योगिकी हस्तांतरण मॉडल

प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण के निम्नलिखित मॉडल अधिक प्रचलित हैं–

1. प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण प्रक्रिया अवस्था मॉडल
2. प्रौद्योगिकी अभिग्रहण मॉडल

प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण प्रक्रिया अवस्था मॉडल का प्रतिपादन ई0 साउडर (1990) द्वारा किया गया। इस मॉडल में हस्तान्तरण की चार अवस्थाओं का वर्णन किया गया है– (1) प्रत्याशा, (2) विकास, (3) परीक्षण तथा (4) अंगीकरण। इस मॉडल के अनुसार प्रारम्भिक अवस्था में सम्भावना को खोज करते हुए कुछ विकल्पों पर कार्य किया जाता है। इसके बाद उनमें से किसी एक का चुनाव अथवा उनमें से कुछ के मिश्रण के द्वारा अनुकूल प्रौद्योगिकी का तदर्थ चुनाव किया जाता है। उक्त प्रौद्योगिकी का परीक्षण करके उपयुक्तता की व्यावहारिक जॉच की जाती है तदुपरान्त वह प्रौद्योगिकी संगठन में उपयोग के लिए अन्तिम रुप से स्वीकार की जाती है।

प्रौद्योगिकी अभिग्रहण मॉडल (1984) का प्रतिपादन एडीकिबी द्वारा किया गया। इसे पूर्ववर्ती मॉडल की तुलना में अधिक व्यावहारिक माना गया है। इस मॉडल में भी प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण की चार अवस्थाएं बताई गई हैं– भौतिक हस्तांतरण अवस्था, लंगर डालना, विस्तारण तथा समावेशन। इस मॉडल के अनुसार सर्वप्रथम भौतिक प्रौद्योगिकी का हस्तांतरण किया जाता है जिसमें प्लान्ट, मशीनरी, सामग्री, पेटेण्ट, मानव संसाधन आदि का हस्तान्तरण एक देश से दूसरे देश को किया जाता है। इस अवस्था में 3 से 8 वर्ष का समय सामान्यतः लगता है। दूसरे चरण में प्रौद्योगिकी के तकनीकी पक्ष को परिचित कराया जाता है जिससे कि वे मेजमान देश में स्वीकार्य हो सकें। इस अवस्था में स्थानीय कार्मिकों को प्रशिक्षित करके विदेशी प्रौद्योगिकी के लिए आधार तैयार किया जाता है। इसे दूसरे देश में लंगर डालना कह सकते हैं। प्रारम्भ में विदेशी तकनीक का परिचय कराया जाता है, तदुपरान्त उसका स्थानीयकरण किया जाता है जिससे कि वह सहजता से ग्राह्य हो सके। तृतीय चरण में तकनीक का विस्तारण होता है। इस अवस्था में विदेशी तकनीक के अपने देश में आते ही उसकी नकल करके कुछ उत्पाद स्थानीय बाजार में आ जाते हैं। जो कम्पनी विदेशी तकनीक को अपने देश में लाते हैं वे भी स्थानीय आवश्यकता के अनुरुप उत्पाद में परिवर्तन करती हैं। धीरे–धीरे मेजमान कम्पनी प्राप्त की गई तकनीक में सुधार करते हुए अपनी नई व उन्नत तकनीक तैयार करती है तथा अन्य स्थानीय कम्पनियों में भी इस दिशा में कार्य करते हुए नवोन्मेष किये जाते हैं। इसप्रकार प्रौद्योगिकी का हस्तान्तरण होता है। समावेशन की अवस्था में प्रौद्योगिकी का समावेश स्थानीय मॉग के अनुरुप तथा जनकल्याण के कार्यों में होने लगता है। इस अवस्था की कोई निश्चित अवधि नहीं है। विदेशी प्रौद्योगिकी धीरे–धीरे स्वदेशी प्रौद्योगिकी का अंग बन जाती है।

14.9 रणनीतिक प्रौद्योगिकी (Strategic Technology)

रणनीतिक प्रौद्योगिकी से आशय किसी विशेष संगठन के लिए उसकी आवश्यकताओं, उत्पाद की बाजार मॉग, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक परिस्थितियों, उपभोक्ताओं की अभिरुचियों में परिवर्तन आदि के आधार पर तकनीकी आधार पर व्यवहार्य ऐसी प्रौद्योगिकी के चुनाव से है जो कि वर्तमान व भावी आवश्यकताओं को पूर्ण कर सके तथा जो लागत की दृष्टि से भी मितव्ययी हो।

रणनीतिक प्रौद्योगिकी में तुलनात्मकता भी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है। यह ध्यान रखा जाता है कि प्रतिस्पर्धी फर्मों के द्वारा किस प्रकार की प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जा रहा है। उदाहरणार्थ– किसी शहर में दो प्रतिस्पर्धी समाचार पत्र व्यापार कर रहे हैं तथा एक सी प्रौद्योगिकी का प्रयोग कर रहे हैं। अचानक उनमें से कोई एक समाचार पत्र उन्नत प्रौद्योगिकी की छपाई मशीन ले आता है तो दूसरे समाचार पत्र को भी बाजार में अपना हिस्सा बनाये रखने के लिए उन्नत प्रौद्योगिकी की मशीन स्थापित करनी होगी। यदि कोई नया समाचार पत्र उन्नत तकनीक के साथ आता है तो प्रौद्योगिकी के साथ बाजार सम्बन्धी अन्य प्रतिस्पर्धात्मक नीतियों में भी परिवर्तन करना आवश्यक होगा।

14.10 प्रौद्योगिकी प्रबन्धन (Technology Management)

प्रौद्योगिकी किसी संगठन को पूर्ण क्षमता से कार्य करने के यन्त्र प्रदान करता है किन्तु यन्त्रों की प्राप्ति मात्र से उद्देश्य पूर्ण नहीं हो सकते। प्रौद्योगिकी प्रबन्धन उपरोक्त यन्त्रों में से सर्वश्रेष्ठ का चुनाव कुशलतापूर्वक करने की तकनीक प्रदान करता है। विभिन्न विद्वानों व संगठनों ने इसे परिभाषित करने का प्रयास किया है।

नेशनल रिसर्च काउन्सलिंग रिपोर्ट (1987) के अनुसार–प्रौद्योगिकी प्रबन्धन से आशय किसी संगठन के रणनीतिक एवं संचालनात्मक उद्देश्यों के निर्धारण एवं प्राप्ति के लिए तकनीकी क्षमताओं के नियोजन, विकास तथा कार्यान्वयन हेतु अभियांत्रिकी, विज्ञान तथा प्रबन्धन को जोड़ने से है।[1]

ह्वाइट एवं ब्रूटन के अनुसार–प्रौद्योगिकी प्रबन्धन से आशय किसी संगठन में रणनीतिक उद्देश्यों के निर्धारण व निष्पादन के लिए तकनीकी क्षमताओं के नियोजन, विकास, अनुश्रवण तथा नियन्त्रण हेतु विभिन्न विधाओं के एकीकरण से है।

उपरोक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि प्रौद्योगिकी प्रबन्धन तकनीकी क्षमताओं के अनुकूलतम विदोहन का समन्वित प्रयास है जो कि संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता करता है। प्रौद्योगिकी प्रबन्धन का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है तथा इसके अन्तर्गत विभिन्न तकनीकों को सम्मिलित किया जाता है जिसमें अभियांत्रिकी, उत्पादन, वित्त, प्रबन्धन आदि की तकनीक सम्मिलित हो सकती हैं।

14.11 प्रौद्योगिकी प्रबन्धन का महत्व

संगठन के सर्वांगीण विकास के लिए कुशल तकनीक का अंगीकरण तथा उपयोग आवश्यक है। नेशनल टास्कफोर्स ऑन टेक्नोलोजी (1987) द्वारा तकनीकी प्रबन्धन को अपनाने के लिए निम्नलिखित पॉच महत्वपूर्ण बिन्दुओं का उल्लेख किया है–

1. तकनीकी परिवर्तनों की तीव्र गति के कारण प्रतिजातीय पद्धति को अपनाये जाने की आवश्यकता होती है जिससे तकनीकी अवसरों का लाभ लेते हुए आर्थिक विकास को प्रभावशाली तथा कुशलतम ढंग से किया जा सके।
2. प्रौद्योगिकी विकास की तीव्र गति तथा उपभोक्ताओं के संवेदनशील होने के कारण उत्पाद जीवन चक्र की अवधि कम हो गई है। इसकारण संगठनों को प्रौद्योगिकी प्रबन्धन के प्रति अधिक सक्रिय होने की आवश्यकता हो गई है।
3. संगठनों में उत्पाद विकास अवधि में कटौती तथा अधिक लोचशीलता की आवश्यकता है। प्रौद्योगिकी विकास के कारण उत्पाद को विचारण के स्तर से बाजार में विपणन के स्तर तक लाने के समय में कमी आई है। अत: प्रौद्योगिकी प्रबन्धन को अपनाना महत्वपूर्ण हो गया है।
4. अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिस्पर्धा में वृद्धि हुई है जिसके कारण संगठन को नवीनतम प्रौद्योगिकी के प्रयोग द्वारा अधिक प्रतिस्पर्धी बनाये जाने की आवश्यकता है।
5. नवीन प्रौद्योगिकी के उदय के साथ बाजार में प्रबन्धन की नई शैली का उपयोग करना पड़ता है। किन उपकरणों व प्रक्रियाओं का प्रयोग कब किया जाय, यह जानना आवश्यक है।

संक्षेप में कह सकते हैं कि निरन्तर बदलती हुई परिस्थितियों में उत्पादन की श्रेष्ठता तथा बाजार पर पकड़ बनाये रखने के लिए प्रौद्योगिकी प्रबन्धन का बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग आवश्यक है। इसके लिए सर्वप्रथम राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर

पर बाजार की परिस्थितियों का अध्ययन किया जाता है। बाजार की आवश्यकताओं तथा भावी संभावनाओं का पता लगाया जाता है। तत्पश्चात् अपने तथा प्रतिस्पर्धी संगठन की क्षमता का आकलन किया जाता है। इसके लिए उत्पाद तथा फर्म का वित्तीय विश्लेषण किया जाता है। भविष्य के परिवर्तनों का अनुमान लगाया जाता है तथा प्रौद्योगिकी में परिवर्तन व नवीन प्रौद्योगिकी के अंगीकरण सम्बन्धी निर्णय लिए जाते हैं। उदाहरण के लिए– विश्व स्तर पर पेट्रोलियम उत्पादों की कमी को देखते हुए इलेक्ट्रिक कार तथा सौर ऊर्जा चालित कारों पर प्रयोग किया जा रहा है तथा स्थान की कमी को देखते हुए ऐसे डिजायन विकसित किये जा रहे हैं जिनमें कम स्थान में भी पार्किंग होने की क्षमता विकसित की जा रही है तथा क्षमता बढ़ाने के लिए अन्य अनेकों प्रयोग भी किये जा रहे हैं।

14.12 प्रौद्योगिकी विकास

प्रौद्योगिकी विकास का अर्थ है किसी उद्योग अथवा संगठन की आवश्यकता के अनुरुप प्रौद्योगिकी को विकसित करना। प्रौद्योगिकी विकास एक सतत प्रक्रिया है। एक प्रौद्योगिकी को अपनाने के बाद कुछ समय के बाद अथवा सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन होने की दशा में वह अनुपयोगी होने के कारण अपरिचालित होने लगती है। इसमें कुछ सुधार किये जाने की आवश्यकता हो जाती है। इसप्रकार सुधार की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। इसे निम्न चार्ट[4] द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है–

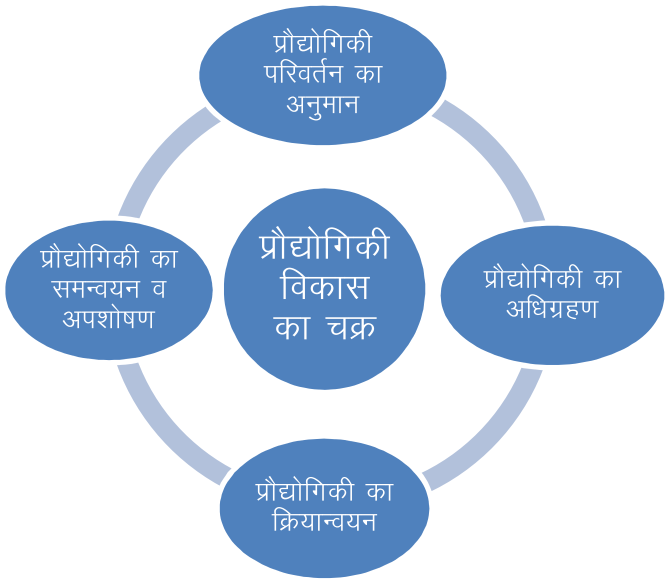

प्रौद्योगिकी विकास चक्र में सर्वप्रथम परिवर्तनों का अनुमान लगाया जाता है। तत्पश्चात् उचित अध्ययन व विवेचन के बाद नई प्रौद्योगिकी का अधिग्रहण किया जाता है। नवीन प्रौद्योगिकी का क्रियान्वयन करने के लिए आवश्यक कदम उठाये जाते हैं। विभिन्न प्रौद्योगिकी कार्यक्रमों का समन्वयन करने के उपरान्त नये कार्यक्रमों को कार्यरुप में परिणित किया जाता है। कुछ समय के बाद बाजार में कुछ नए परिवर्तन आ जाते हैं जिनके अनुरुप संगठन को पुनः समायोजन करने होते हैं और वह नई प्रौद्योगिकी का अनुमान लगाने की ओर प्रवृत्त होता है। यह चक्र निरन्तर चलता है।

14.13 रणनीतिक प्रौद्योगिकी प्रबन्धन (Strategic Technology Management)

रणनीतिक प्रौद्योगिकी प्रबन्धन से आशय ज्ञान, संरचना, संसाधन तथा सामाजिक–आर्थिक वातावरण के प्रयोग द्वारा कम्पनी–कौशल को तकनीकी गतिविधियों के साथ नियोजन, संयोजन, नेतृत्व तथा नियंत्रण द्वारा संयोजित करना है जिससे कि कम्पनी के मूल व दीर्घकालिक उद्देश्यों व लक्ष्यों के प्रतिपादन व कार्यान्वयन, कार्य योजनाओं के अंगीकरण तथा निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक संसाधनों का आबन्टन किया जा सके।

रणनीतिक प्रौद्योगिकी प्रबन्धन के अन्तर्गत उद्यम, वातावरण तथा समाज को एकीकृत करने तथा पारस्परिक लाभ पहुँचाने के उद्देश्य से संगठनात्मक प्रबन्धन, तकनीकी प्रबन्धन तथा रणनीतिक प्रबन्घन की प्रक्रियाओं को अपनाना आवश्यक होता है।

रणनीतिक तकनीकी प्रबन्धन के ढॉचे को सामान्यतः तीन वर्गों में[5] वर्गीकृत किया जा सकता है–

1. **संरचना–**

संरचना के अन्तर्गत वे सभी तत्व तथा प्रक्रियाएं सम्मिलित की जाती हैं जो तकनीकी प्रबन्धन का आधार बनती हैं–

- **शिल्पकृति–** शिल्पकृति के अन्तर्गत वे सभी तत्व सम्मिलित होते हैं जो संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्राथमिक रुप से अनिवार्य हैं। इनके अन्तर्गत प्रौद्योगिकी प्रबन्धन की प्रक्रिया सम्पन्न करने के फलस्वरुप प्राप्त समस्त सूचनाओं, अभिलेखों, योजनाओं आदि को रखा जाता है।
- **प्रक्रिया–** संगठन की प्रारम्भिक सूचनाओं को निवेशन से शिल्पकृति में परिवर्तित करने के कार्य में प्रयुक्त कार्यप्रणाली तथा कार्यविधियों को प्रक्रिया के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है।
- **प्रणाली व उपकरण–** सूचना तकनीक तथा अन्य समस्त प्रणाली व उपकरण जिनका उपयोग प्रौद्योगिकी प्रबन्धन की प्रक्रिया के अन्तर्गत किया जाता है, को रुपरेखा में सम्मिलित किया जाता है। ये उपकरण सूचनाओं को संग्रहित व प्रसंस्करित करने में उपयोगी होते हैं।
- **संचालन–** प्रौद्योगिकी प्रबन्धन की निर्णयन से सम्बन्धित गतिविधियों के संचालन व सम्पादन के कार्यों को सम्पन्न करने की क्रिया को प्रौद्योगिकी प्रबन्ध की रुपरेखा में संचालन के अन्तर्गत रखा जाता है।
- **संगठनात्मक कार्य–** संगठन को संचालित करने के लिए सामान्य प्रबन्धन की सभी क्रियाओं, यथा– नियोजन, संगठन, नेतृत्व, अनुश्रवण आदि का समावेशन प्रौद्योगिकी प्रबन्ध की रुपरेखा में इस श्रेणी के अन्तर्गत किया जाता है।
- **सहयोग तन्त्र–** कम्पनी का निर्माण व संचालन करने में जिन व्यक्तियों व संस्थाओं का सहयोग रहता है, उन्हें भी कम्पनी की प्रौद्योगिकी प्रबन्धन रुपरेखा में सम्मिलित किया जाता है। इसके अन्तर्गत कम्पनी के अंशधारक तथा अन्य सहयोगी फर्म सम्मिलित की जाती हैं जिनके आर्थिक या तकनीकी सहयोग से संगठन अपनी स्वरुप निर्धारित करती है।

2. उद्‌देश्य–

संगठन की व्यावसायिक रणनीति की प्रतिकृति इसके उद्‌देश्यों में दिखाई देती है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि कम्पनी के उद्‌देश्यों के आधार पर ही इसकी रणनीति तैयार की जाती है। इसमें तकनीकी रणनीति भी सम्मिलित है। कम्पनी द्वारा बाजार में प्रस्तुत किये जाने वाले विभिन्न उत्पादों के लिए पृथक रणनीति को अपनाना उचित होता है। इन रणनीतियों को बनाने में कम्पनी के मुख्य उद्‌देश्य को ध्यान में रखकर तथा बाजार की दशा, उपभोक्ताओं की प्रकृति, आर्थिक नीतियों आदि के आधार पर प्रौद्योगिकी का चयन किया जाता है। प्रौद्योगिकी की लागत तथा उत्पाद जीवन चक्र के आधार पर उत्पाद वैविध्य तैयार किया जाता है जो कि संगठन में सही समय पर सही प्रौद्योगिकी के क्रियान्वयन का आधार बनता है।

3. प्रभाव–

इसके अन्तर्गत प्रौद्योगिकी के दृष्य एवं अदृष्य प्रभावों को सम्मिलित किया जाता है। दृष्य प्रभावों में कम्पनी द्वारा प्रदत्त उत्पाद अथवा सेवा के आर्थिक, सामाजिक तथा पर्यावरणीय प्रभावों को प्रदर्शित किया जाता है। अदृष्य प्रभावों में समस्त संदर्भित अथवा असंदर्भित ज्ञान अथवा जानकारियों को रखा जाता है जिनसे कम्पनी की प्रौद्योगिकीय क्षमताओं में वृद्धि होती है।

इस प्रकार रणनीतिक प्रौद्योगिकी प्रबन्धन के अन्तर्गत संगठन के सामान्य प्रबन्धन, रणनीतिक प्रबन्धन तथा प्रौद्योगिकी प्रबन्धन के विभिन्न प्रारुपों का समन्वित रुप प्रदर्शित होता है।

14.14 सारांश

तकनीक व प्रौद्योगिकी शब्दों का प्रयोग इस प्रकार किया जाता है कि प्रायः इनमें अन्तर बताना कठिन हो जाता है किन्तु इन दोनों शब्दों में अन्तर होता है। **तकनीक** किसी कार्य को करने के लिए उपकरणों के विशिष्ट प्रकार से प्रयोग की कला है। प्रौद्योगिकी शब्द तुलनात्मक रुप से विस्तृत शब्द है जिसमें तकनीक को सम्मिलित किया जाता है। सामान्य शब्दों में प्रौद्योगिकी का अर्थ है– किसी वस्तु के उत्पादन अथवा किसी कार्य को करने के लिए तकनीकों का व्यवस्थित उपयोग। तकनीक किसी कार्य को करने का विशिष्ट ढंग होता है जबकि प्रौद्योगिकी में वैज्ञानिक सिद्धान्तों के आधार पर उपकरणों का प्रयोग किया जाता है। प्रौद्योगिकी वैज्ञानिक सिद्धान्त पर आधारित होती है जबकि तकनीक अभ्यास पर आधारित होती है। तकनीक में रचनात्मक व नवोन्मेषी विचारों की आवश्यकता होती है। प्रौद्योगिकी के चार प्रकार होते हैं– उत्पाद प्रौद्योगिकी, प्रक्रिया प्रौद्योगिकी, प्रबन्धन प्रौद्योगिकी तथा गुणवत्ता प्रौद्योगिकी। कोई भी प्रौद्योगिकी सर्वकालिक नहीं हो सकती है। कुछ समय बाद इसका अप्रचलित हो जाना स्वभाविक है क्योंकि निरन्तर शोध के कारण सुगम, मितव्ययी तथा तीव्रगामी प्रौद्योगिकी प्रकाश में आती रहती हैं जिनके कारण पुरानी प्रौद्योगिकी को छोड़कर नई तकनीक को अपनाना अनिवार्य हो जाता है। आधुनिक प्रौद्योगिकी वैज्ञानिक तकनीकों पर आधारित होती है तथा इसमें अधिक पूँजी की आवश्यकता होती है। श्रम की निर्भरता इसमें कम होती है। इस प्रौद्योगिकी में उत्पादन समरुप, उच्च गुणवत्तापूर्ण तथा तीव्र गति से होता है। प्रौद्योगिकी हस्तांतरण का अर्थ

है किसी एक देश में प्रयुक्त प्रौद्योगिकी को अन्य देश में प्रयोग किया जाना अथवा प्रयोग की अनुमति दिया जाना। यह हस्तांतरण अनेक प्रकार से हो सकता है। प्रत्यक्ष हस्तान्तरण के अन्तर्गत लाइसेंसिंग, तकनीकी सेवा, फ्रचाइजिंग, मशीनरी सहयोग, अभियन्त्रण व निर्माण, प्रबन्धन, उपठेका व समन्वित अनुबन्धों को सम्मिलित किया जाता है तथा अप्रत्यक्ष हस्तान्तरण में संयुक्त उपक्रम तथा प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को सम्मिलित किया जाता है। प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण के दो मॉडल महत्वपूर्ण हैं– प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण प्रक्रिया अवस्था मॉडल (ई0 साउडर–1990) तथा प्रौद्योगिकी अभिग्रहण मॉडल (एडीकिबी–1984)। इनके द्वारा प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण की विभिन्न अवस्थाओं का वर्णन किया गया है।

रणनीतिक प्रौद्योगिकी से आशय किसी विशेष संगठन के लिए उसकी आवश्यकताओं, उत्पाद की बाजार मॉग, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक परिस्थितियों, उपभोक्ताओं की अभिरुचियों में परिवर्तन आदि के आधार पर तकनीकी आधार पर व्यवहार्य ऐसी प्रौद्योगिकी के चुनाव से है जो कि वर्तमान व भावी आवश्यकताओं को पूर्ण कर सके तथा जो लागत की दृष्टि से भी मितव्ययी हो। प्रौद्योगिकी प्रबन्धन से आशय किसी संगठन में रणनीतिक उद्देश्यों के निर्धारण व निष्पादन के लिए तकनीकी क्षमताओं के नियोजन, विकास, अनुश्रवण तथा नियन्त्रण हेतु विभिन्न विधाओं के एकीकरण से है। रणनीतिक तकनीकी प्रबन्धन से आशय ज्ञान, संरचना, संसाधन तथा सामाजिक–आर्थिक वातावरण के प्रयोग द्वारा कम्पनी–कौशल को तकनीकी गतिविधियों के साथ नियोजन, संयोजन, नेतृत्व तथा नियंत्रण द्वारा संयोजित करना है जिससे कि कम्पनी के मूल व दीर्घकालिक उद्देश्यों व लक्ष्यों के प्रतिपादन व कार्यान्वयन, कार्य योजनाओं के अंगीकरण तथा निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक संसाधनों का आबन्टन किया जा सके। रणनीतिक तकनीकी प्रबन्धन के अन्तर्गत उद्यम, वातावरण तथा समाज को एकीकृत करने तथा पारस्परिक लाभ पहुॅचाने के उद्देश्य से संगठनात्मक प्रबन्धन, तकनीकी प्रबन्धन तथा रणनीतिक प्रबन्घन की प्रक्रियाओं को अपनाना आवश्यक होता है।

14.15 शब्दावली

तकनीक किसी कार्य को करने के लिए उपकरणों के विशिष्ट प्रकार से प्रयोग की कला

प्रौद्योगिकी किसी वस्तु के उत्पादन अथवा किसी कार्य को करने के लिए यन्त्रों, उपकरणों तथा नवोन्मेषी सेवाओं के समन्वयन की तकनीक जो कि संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति में महत्वपूर्ण होती है।

माध्यमिक प्रौद्योगिकी प्राचीन तथा नवीन प्रौद्योगिकी के समन्वय से एक ऐसी प्रौद्योगिकी डिजायन करना जो विकासशील देशों को उनके संसाधनों के अनुकूलतम उपयोग में मदद करे।

प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण	किसी एक देश में प्रयुक्त प्रौद्योगिकी को अन्य देश में प्रयोग किया जाना अथवा प्रयोग की अनुमति दिया जाना।
लाइसेंसिंग अनुबन्ध	अपने बौद्धिक अधिकार का प्रयोग करने की अनुमति किसी अन्य कम्पनी को किसी वित्तीय पुरस्कार (रायल्टी आदि) के बदले में प्रदान करने का अनुबन्ध।
फ्रेंचाइजिंग अनुबन्ध	प्रधान कम्पनी किसी अन्य कम्पनी को अपनी तकनीक व उत्पादों की ब्राण्ड वैल्यू के प्रयोग की अनुमति अपने सतत निर्देशन में विशेष शर्तों के आधीन मूल्य भुगतान के द्वारा करने का अनुबन्ध।
उपठेका अनुबन्ध	किसी बड़ी परियोजना के ठेके का एक भाग अन्य कम्पनी को ठेके पर देकर कार्य कराने का अनुबन्ध।
टर्न–की अनुबन्ध	किसी विदेशी फर्म से विभिन्न प्रकार की सेवाओं, वस्तुओं तथा तकनीकों को इस प्रकार से प्राप्त किया जाता है कि सम्पूर्ण प्रौद्योगिकी हस्तांतरण का लाभ समेकित रुप से मिल सके।
संयुक्त उपक्रम	किसी विशिष्ट परियोजना को पूर्ण करने के लिए दो कम्पनियों द्वारा मिलकर एक नई कम्पनी की स्थापना करना।
प्रत्यक्ष विदेशी निवेश	किसी अन्य देश में मशीन, पूँजी आदि में बिना किसी स्थानीय सहयोगी के पूँजी निवेश करना।
विदेशी पोर्टफोलिओ निवेश	अधिक प्रत्याय दर की आशा में विदेशी कम्पनियों में धनराशि में निवेश करना।
रणनीतिक प्रौद्योगिकी	प्रौद्योगिकी का प्रयोग प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की नीतियों को ध्यान में रखकर किये जाने की नीति।
प्रौद्योगिकी प्रबन्धन	तकनीकी क्षमताओं के अनुकूलतम विदोहन का समन्वित प्रयास जो कि संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता करता है। इन तकनीकों में अभियांत्रिकी, उत्पादन, वित्त, प्रबन्धन आदि की तकनीक सम्मिलित हो सकती हैं।

रणनीतिक प्रौद्योगिकी प्रबन्धन	प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की रणनीति को ध्यान में रखकर अपने संगठन के लिए तैयार की जाने वाली समन्वित प्रौद्योगिकी।
जे0वी0	ज्वाइन्ट वेंचर (संयुक्त उपक्रम)
एफ0डी0आई0	फॉरेन डाइरेक्ट इन्वेस्टमेन्ट (प्रत्यक्ष विदेशी निवेश)
एफ0पी0आई0	फॉरेन पोर्टफोलिओ इन्वेस्टमेन्ट (विदेशी पोर्टफोलिओ निवेश)

14.16 बोध प्रश्न

(क)– अपनी प्रगति जॉचें

बताएं निम्न कथन सत्य हैं अथवा असत्य–

(अ) तकनीक एवं प्रौद्योगिकी शब्द समानार्थी हैं। (सत्य / असत्य)

(आ) तकनीक कला के निकट है जबकि प्रौद्योगिकी विज्ञान के निकट है। (सत्य / असत्य)

(इ) मानव संसाधन का अनुकूलतम उपयोग करना प्रबन्धन प्रौद्योगिकी के क्षेत्रान्तर्गत आता है। (सत्य / असत्य)

(ई) काइजन, कानबान, सिक्स सिग्मा, काइकाकू, फाइव एस आदि तकनीकों का प्रयोग गुणवत्ता प्रौद्योगिकी में सम्मिलित किया जाता है। (सत्य / असत्य)

(उ) माध्यमिक प्रौद्योगिकी का विचार सर्वप्रथम शूमाकर द्वारा दिया गया। (सत्य / असत्य)

(ऊ) प्रत्यक्ष हस्तांतरण को आन्तरिकीकृत मार्ग भी कहा जाता है। (सत्य / असत्य)

(ए) समन्वित अनुबन्ध को टर्न–की एग्रीमेन्ट भी कहा जाता है। (सत्य / असत्य)

(ऐ) संयुक्त उपक्रम के अन्तर्गत किसी विशिष्ट परियोजना को सम्पन्न करने के लिए दो कम्पनी मिलकर एक नई कम्पनी का निर्माण करती हैं तथा उक्त परियोजना के अतिरिक्त दोनों कम्पनी अपने–अपने क्षेत्र में स्वतन्त्र कार्य करती हैं। (सत्य / असत्य)

(ओ) प्रौद्योगिकी अभिग्रहण मॉडल का प्रतिपादन ई0 साउडर द्वारा किया गया।

(ख)– अपनी प्रगति जॉचें

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए–

1. (प्रौद्योगिकी प्रबन्धन / संगठन संरचना) से आशय किसी संगठन में रणनीतिक उद्देश्यों के निर्धारण व निष्पादन के लिए तकनीकी क्षमताओं के नियोजन, विकास, अनुश्रवण तथा नियन्त्रण हेतु विभिन्न विधाओं के एकीकरण से है।
2. (शिल्पकृति / तकनीक) के अन्तर्गत वे सभी तत्व सम्मिलित होते हैं जो संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्राथमिक रुप से अनिवार्य हैं। इनके अन्तर्गत प्रौद्योगिकी प्रबन्धन की प्रक्रिया सम्पन्न करने के फलस्वरुप प्राप्त समस्त सूचनाओं, अभिलेखों, योजनाओं आदि को रखा जाता है।
3. प्रारम्भिक सूचनाओं को निवेशन से शिल्पकृति में परिवर्तित करने के कार्य में प्रयुक्त कार्यप्रणाली तथा कार्यविधियों को (समेकन / प्रक्रिया) के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है।

4. (दृष्य प्रभावों/ अदृष्य प्रभावों) में कम्पनी द्वारा प्रदत्त उत्पाद अथवा सेवा के आर्थिक, सामाजिक तथा पर्यावरणीय प्रभावों को प्रदर्शित किया जाता है।
5. (दृष्य प्रभावों/ अदृष्य प्रभावों) में समस्त संदर्भित अथवा असंदर्भित ज्ञान अथवा जानकारियों को रखा जाता है जिनसे कम्पनी की प्रौद्योगिकीय क्षमताओं में वृद्धि होती है।

14.17 बोध प्रश्नों के उत्तर

(क) – अपनी प्रगति जॉचें

(अ) असत्य, (आ) सत्य, (इ) सत्य, (ई) सत्य, (उ) सत्य, (ऊ) असत्य, (ए) सत्य, (ऐ) सत्य, (ओ) असत्य.

(ख) – अपनी प्रगति जॉचें

(1) प्रौद्योगिकी प्रबन्धन (2) शिल्पकृति (3) प्रक्रिया (4) दृष्य प्रभावों (5) अदृष्य प्रभावों

14.18 स्वपरख प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न–

(अ) रणनीति एवं प्रौद्योगिकी में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
(आ) प्राचीन व नवीन प्रौद्योगिकी में क्या अन्तर है?
(इ) प्रौद्योगिकी तथा समाज के अन्तर्सम्बन्ध को स्पष्ट कीजिए।
(ई) प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के अभिग्रहण मॉडल को समझाइए।
(उ) प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के लाइसेंसिंग तथा फ्रेंचाइजिंग अनुबन्धों को समझाइए।
(ऊ) गुणात्मक प्रौद्योगिकी पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
(ए) प्रत्यक्ष विदेशी निवेश तथा विदेशी पोर्टफोलिओ निवेश को संक्षेप में समझाइए।
(ऐ) प्रौद्योगिकी विकास एक सतत प्रक्रिया है। टिप्पणी कीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्न–

11. प्रौद्योगिकी से क्या आशय है? इसके विभिन्न प्रकारों का वर्णन कीजिए। आधुनिक युग में गुणवत्ता प्रौद्योगिकी क्यों महत्वपूर्ण हो रही है?
12. प्रौद्योगिकी किसे कहते हैं? प्राचीन व नवीन प्रौद्योगिकी में अन्तर बताइए। माध्यमिक प्रौद्योगिकी किन परिस्थितियों में लाभदायक विकल्प सिद्ध होती है?
3. प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण से क्या आशय है? इसके प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष प्रकारों में सम्मिलित विधियों को समझाइए।
4. प्रौद्योगिकी प्रबन्धन को परिभाषित कीजिए। इसके क्षेत्र तथा महत्व को समझाइए।
5. रणनीतिक प्रौद्योगिकी प्रबन्धन से क्या आशय है? रणनीतिक प्रौद्योगिकी प्रबन्धन के ढॉचे का वर्णन कीजिए।
6. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–
   (क) माध्यमिक प्रौद्योगिकी
   (ख) प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण
   (ग) फ्रेंचाइजिंग अनुबन्ध
   (घ) टर्न–की अनुबन्ध

(ड़) संयुक्त उपक्रम
(च) प्रत्यक्ष विदेशी निवेश
(छ) प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण प्रक्रिया अवस्था मॉडल

14.19 सन्दर्भ पुस्तकें

1 मार्ग्रेट ए ह्वाइट एवं गैरी डी0 ब्रूटन, द मैनेजमेन्ट आफ टेक्नोलोजी एण्ड इनोवेशनः ए स्ट्रेटेजिक एप्रोच, थामसन साउथ वेस्टर्न (2007), में संदर्भित। पृष्ठ–17।

2 यथोक्त पृष्ठ–18।

3 यथोक्त पृष्ठ–18।

4 यथोक्त पृष्ठ–25।

5 कैरी सालमन, एलीमेन्ट्स ऑफ स्ट्रेटेजिक टेक्नालोजिक मैनेजमेन्ट, यूनीवर्सिटी आफ आउलू, फिनलैण्ड (2010), पृष्ठ–46।

6. Business Policy and Strategic Management, P. Subba Rao, Himalaya Publishing House, Mumbai.

7. Strategic Management, Azhar Kazmi- Adela Kazmi, Tata McGraw-Hill Education (India) Private Limited, New Delhi.

8. Business Policy and Strategic Management, GV Satya Sekhar, I K International Publishing House, New Delhi.

9. Business Policy and Strategic Management, Francis Cherunilam, Himalaya Publishing House, Mumbai.

10. Study Material of University of Mumbai (Institute of Distance Education), M.Com. Part I, Strategic Management.

11. Elements of Strategic Technology Management, Kari Sahlman, University of Oulu, Finland (2010).

12. The Management of Technology and Innovation: A Strategic Approach, Margaret A. White- Garry D Bruton, Thompson South Western, USA (2007).

इकाई 15 रणनीतिक प्रबन्धन के नए आयाम

इकाई की रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना

15.2 रणनीति एवं वैश्वीकरण

15.2.1 वैश्वीकरण बनाम् विश्वस्थानीयकरण

15.2.2 वैश्वीकरण के लाभ

15.2.3 वैश्वीकरण के दोष

15.2.4 विश्वस्थानीयकरण (ग्लोकलाइजेशन)

15.3 रणनीति एवं परिवर्तन प्रबन्ध

15.3.1 परिवर्तन के अवरोध

15.4 रणनीति एवं ज्ञान प्रबन्धन

15.4.1 ज्ञान प्रबन्धन की प्रक्रिया

15.4.2 रणनीति निर्धारण में ज्ञान प्रबन्धन का योगदान

15.5 श्रेणीयन (पोर्टफोलिओ) रणनीति

15.5.1 श्रेणीयन रणनीति को प्रभावित करने वाले घटक

15.6 रणनीति तथा विलय एवं अधिग्रहण

15.6.1 विलय एवं अधिग्रहण

15.6.2 विलय व अधिग्रहण के लाभ

15.7 रणनीति एवं समाज सेवी संगठन, न्यास आदि गैर व्यापारिक संगठन

15.7.1 गैर व्यापारिक संगठनों (एन0बी0ओ0) में रणनीतिक प्रबन्धन

15.7.2 गैर व्यापारिक संगठनों के रणनीतिक प्रबन्धन की बाधाएं

15.7.3 सामाजिक संगठनों की रणनीतियॉ

15.8 रणनीति एवं नैतिक मूल्य

15.8.1 नैतिक मूल्यों सम्बन्धी रणनीति

15.9 रणनीति एवं सामाजिक उत्तरदायित्व

15.10 सारांश

15.11 शब्दावली

15.12 बोध प्रश्न

15.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.14 स्वपरख प्रश्न

15.15 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः

- रणनीति एवं वैश्वीकरण को समझ सकें।
- रणनीति एवं परिवर्तन प्रबन्धन व ज्ञान प्रबन्धन का वर्णन कर सकें।
- पोर्टफोलिओ रणनीति का विवेचन कर सकें।

- विलय व अधिग्रहण रणनीति की व्याख्या कर सकें।
- रणनीति एवं लाभरहित संगठन का विवेचन कर सकें।
- रणनीति एवं नैतिक मूल्य का वर्णन कर सकें।
- रणनीति एवं सामाजिक उत्तरदायित्व का विवेचन कर सकें।

15.1 प्रस्तावना

व्यापार का अर्थ है लाभ अर्जित करने के उद्देश्य से वस्तु व सेवाओं का प्रत्यक्ष अथवा धन के माध्यम से विनिमय। इसमें उत्पादन और वितरण सम्बन्धी क्रियाएं भी सम्मिलित होती हैं। लाभ कमाने का लक्ष्य व्यापार में प्रतिस्पर्धा उत्पन्न करता है और इससे गलाकाट प्रतियोगिता का दौर प्रारम्भ होता है। विगत कुछ दशकों में तकनीकी प्रगति, सूचना व संचार माध्यमों के विकास तथा विपणन के क्षेत्र में आये क्रान्तिकारी परिवर्तनों के कारण व्यापारिक संगठनों को अपनी नीतियों का बार–बार विश्लेषण तथा परिवर्तन करने की आवश्यकता होने लगी है। प्रतिस्पर्धी संगठनों की नीति को ध्यान में रखकर अपनी नीतियों को सुधारना रणनीति का अंग है।

आधुनिक युग में व्यापार नीति तथा रणनीति प्रबन्धन के क्षेत्र में जो परिवर्तन प्रभावकारी ढंग से परिलक्षित हुए हैं, उन्हें निम्न शीर्षकों में विभाजित किया जा सकता है–

15.2 रणनीति एवं वैश्वीकरण

वैश्वीकरण का अर्थ है विश्व अर्थव्यवस्था के साथ राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का सामन्जस्य करना। इसके अन्तर्गत एक देश की कम्पनी अन्य देशों में अपने व्यापार का विस्तार करती है। वस्तुतः वैश्वीकरण एक ऐसी मानसिक अवस्था है जिसमें सम्पूर्ण विश्व को एक बाजार के रुप में देखा जाता है। फिलिप कोटलर के अनुसार– (वैश्वीकरण की दशा में) "कम्पनी स्वयं को राष्ट्रीय कम्पनी के रुप में देखना बन्द कर देती है जो विदेशों में व्यापार करती है वरन वह स्वयं को विश्वस्तरीय व्यापारी समझती है। उसका सर्वोच्च प्रबन्ध तथा कार्मिक विश्वस्तरीय उत्पादन सुविधाओं, विपणन नीतियों, वित्तीय प्रवाह तथा परिवहन व्यवस्था के सम्बन्ध में नियोजन करता है। प्रबन्धन में विभिन्न देशों के लोगों को नियुक्त किया जाता है, वस्तुओं व आपूर्तियों को वहॉ से क्रय किया जाता है जहॉ वे न्यूनतम मूल्यों में मिल सकेंतथा निवेश वहॉ किया जाता है जहॉ से अधिकतम प्रत्याय प्राप्त हो सके।"[1]

विभिन्न GATT सम्मेलनों (1947–1994) तथा WTO (1995)के प्रादुर्भाव के कारण सम्पूर्ण विश्व में व्यापारिक प्रतिबन्धों में कमी आने के साथ ही वैश्विक गॉव (ग्लोबल विलेज) की परिकल्पना साकार होने लगी। सभी देश अन्य देशों को अपने यहॉ आकर व्यापार करने की अनुमति देने लगे।

भारत में वर्ष 1991 व्यापार के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तनों का वर्ष सिद्ध हुआ। इस वर्ष भारत में उदारीकरण, निजीकरण तथा वैश्वीकरण की नीति को आर्थिक सुधार के रुप में स्वीकार किया गया जिसे प्रचलित रुप में LPG नीति कहा जाता है। देश में व्यापार को बन्धनमुक्त किया गया, लाइसेन्स राज की समाप्ति हुई तथा सार्वजनिक उपक्रमों को निजी क्षेत्र के लिए खोल दिया गया। वैश्वीकरण की नीति के

फलस्वरुप विदेशी कम्पनियों के लिए भारत में आने के द्वार खुल गये जिससे प्रतिस्पर्धा का स्वरुप ही बदल गया है। वैश्वीकरण की नीति से पूर्व भारतीय कम्पनियों की प्रतिस्पर्धा देशी कम्पनियों के साथ थी किन्तु वैश्वीकरण की नीति अपनाने के बाद उन्हें विदेशी कम्पनियों के उत्पादों से प्रतिस्पर्धा करना अपरिहार्य हो गया। कुछ देशी कम्पनी बन्द हो गईं तथा अन्य को अपनी रणनीतियों में इस प्रकार परिवर्तन करना पड़ा कि वे अपने अस्तित्व की रक्षा कर सकें। यद्यपि कुछ कम्पनियों ने इस स्थिति का लाभ उठाते हुए अपनी पैठ विश्व बाजार में बनाने में सफलता भी प्राप्त की। अनेक भारतीय कम्पनियों का अधिग्रहण विदेशी कम्पनियों के द्वारा किया गया तथा अनेक विदेशी कम्पनियों को भारतीय कम्पनियों ने अधिग्रहीत कर लिया। इसप्रकार, वैश्वीकरण ने विश्वव्यापी व्यापारिक परिदृष्य में व्यापक परिवर्तन किये तथा सभी प्रकार के व्यापारिक प्रतिष्ठानों को अपनी नीतियों–रणनीतियों पर पुनर्विचार करने तथा उनमें बदलाव लाने के लिए विवश होना पड़ा।

15.2.1 वैश्वीकरण बनाम् विश्वस्थानीयकरण

वैश्वीकरण आधुनिक समाज की आवश्यकता है। थेडॉर लेविट के अनुसार– विस्व स्तर पर आवश्यकताएं तथा अभिलाषाएं अपरिहार्यतः एकरुप हो रही हैं। इस कारण से बहुदेशीय संगठन अप्रचलित हो गये हैं तथा वैश्विक संगठन अनिवार्य हो गये हैं।[3]वैश्वीकरण के अनेक लाभ विशेषज्ञों के द्वारा बताये गये हैं किन्तु इसके कतिपय दोष भी प्रकट हुए है। इन दोषों से बचने के लिए बाजार विशेषज्ञों ने विश्वस्थानीयकरण (ग्लोकलाइजेशन) की रणनीति अपनाने का सुझाव दिया है। इस विचारधारा के अनुसार वैश्विक तथा स्थानीय बाजार की नीतियों के समन्वयन को रणनीति का आधार बनाया जाता है जिससे कि वैश्वीकरण के लाभों के साथ स्थानीय विशेषज्ञता के लाभों का समन्वयन कर सर्वश्रेष्ठ परिणाम प्राप्त किये जा सकें। रोलेन्ड राबर्टसन ने विश्वस्थानीयता को वैश्वीकरण तथा विशिष्टीकरण की प्रवृत्तियों का सहअस्तित्व बताया है।[2]

15.2.2 वैश्वीकरण के लाभ

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक व आर्थिक परिस्थितियों के फलस्वरुप वैश्वीकरण की विचारधारा का उदय हुआ है। विभिन्न बाजारशास्त्रियों के अनुसार इसके अनेक लाभ राष्ट्रीय बाजार तथा उत्पादकों को होते हैं, जिनमें प्रमुख हैं–

1. **प्रतिस्पर्धा के लाभ–** वैश्वीकरण के फलस्वरुप विभिन्न विदेशी कम्पनियॉ देश में व्यापार के लिए प्रवेश करती हैं जिससे देशी कम्पनियों का वर्चस्व समाप्त हो जाता है तथा उन्हें अपने विदेशी प्रतिस्पर्धियों का सामना करने के लिए कम मूल्य तथा उच्च गुणवत्ता को अपनाना पड़ता है। इस प्रतिस्पर्धा का सबसे बड़ा लाभ देशी उपभोक्ता को होता है जिसे कम मूल्य में गुणवत्तापूर्ण उत्पाद प्राप्त होता है। यह उपभोक्ता के जीवन स्तर को सुधारने में भी सहायक होता है।
2. **तकनीकी विकास–** विदेशी उत्पादक उच्च तकनीक से वस्तुं का उत्पादन करते हैं। इनसे प्रतिस्पर्धा के कारण देशी उत्पादकों को भी उत्पादन प्रणाली

में सुधार के लिए विवश होना पड़ता है। तकनीकी प्रतिस्पर्धा के कारण शोध तथा आविष्कार की दिशा में प्रगति होती है।

3 **अन्तर्राष्ट्रीय उपभोक्ता–** आधुनिक युग में यातायात व संचार साधनों के विकास के कारण बड़ी संख्या में विदेशी पर्यटकों का आवागमन रहता है, उन्हें विदेश में भी अपने प्रिय उत्पादों की उपलब्धता आकर्षित करती है। विदेशों में पलायन के कारण भी बाजार के वैश्वीकरण को बढ़ावा मिला है।

4 **राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ावा–** राष्ट्रीय स्तर के सुदृढ़ उद्योगों को क्षमता विकास तथा उत्कृष्ठ प्रदर्शन का पुरस्कार उनके व्यापार के विस्तार के रुप में मिलता है तथा उन्हें अपना व्यापार विश्व के अन्य देशों में फैलाने का अवसर मिलता है।

5 **विश्वस्तरीय मानक–** किसी भी देश में अनेक देशों के व्यापारिक प्रतिष्ठानों के प्रवेश के कारण एक दूसरे से आगे निकलने के लिए सर्वोत्तम तकनीक के प्रयोग से विश्वस्तरीय उत्पाद को बाजार में लाते हैं। प्रतियोगिता के कारण कम गुणवत्ता वाले उत्पाद बाजार से बाहर हो जाते हैं। इसप्रकार विश्वस्तरीय मानकों का विकास होता है।

15.2.3 वैश्वीकरण के दोष–

फिलिप कोटलर के अनुसार प्रत्येक देश में जाकर विपणन करना अंग प्रत्यारोपण के समान है। प्रश्न यह है कि क्या यह सफल हो सकेगा। वैश्वीकरण के कारण अनेक समस्याएं उत्पन्न हो जाती है, जिनमें से प्रमुख हैं–

1 **छोटे उद्योगों के लिए घातक–** वैश्वीकरण के फलस्वरुप विभिन्न देशों के बड़े उद्योगपति छोटे देशों में अपने व्यापार का विस्तार करने लगते हैं। उनके वृहद स्तरीय उत्पादन, उच्च तकनीक तथा भारी निवेश के कारण उक्त छोटे देश के उद्योग–धन्धों के अस्तित्व पर संकट उत्पन्न हो जाता है तथा वे समापन की ओर अग्रसर होते हैं।

2 **आक्रामक बाजार नीति–** बड़े देशों के उद्योग अपनी आक्रामक व्यापार नीतियों के द्वारा छोटे देशी उद्योगों का अधिग्रहण करने का प्रयास करते हैं। इससे एक ओर तो उनकी उत्पादन क्षमता बढ़ती है, वहीं उन्हें अपने निकटवर्ती प्रतिद्वन्द्वी से मुक्ति प्राप्त होती है। इसका दुष्प्रभाव यह होता है कि विदेशी संगठन विज्ञापन तथा विपणन में भारी निवेश करते हुए अपना कम गुणवत्ता वाला माल भी बेच लेते हैं जबकि स्थानीय उद्योग अपना गुणवत्तापूर्ण माल भी बेच नहीं पाते हैं।

3 **स्थानीय अस्वीकार्यता–** यह पक्ष आर्थिक के साथ मनोवैज्ञानिक भी है। अनेक बार यह देखा जाता है कि स्थानीय उपभोक्ता अपनी देशभक्ति प्रदर्शित करते हुए विदेशी माल का बहिष्कार करते हैं। कुछ उपभोक्ता मनोवैज्ञानिक कारणों से नए उत्पादों को स्वीकार नहीं करते हैं। इसप्रकार वैश्वीकरण में अस्वीकार्यता का भय भी रहता है।

15.2.4 विश्वस्थानीयकरण (ग्लोकलाइजेशन)–

इस नवप्रचलित अवधारणा में वैश्विक बाजार की अवधारणा के सभी गुणों को जीवित रखते हुए उसके दोषों से बचने का प्रयास किया जाता है। इस व्यवस्था में विदेशी फर्म किसी एक देश की नहीं होती है। वह जिस देश में कार्य करती है वहीं के संसाधनों की प्रयोग करती है तथा प्रबन्धन में भी वहॉ के लोगों को सम्मिलित करती है। यहॉ तक कि वह अपने उत्पाद को स्थानीय आवश्यकताओं तथा मॉग के अनुरुप परिवर्तित करती है। उदाहरणस्वरुप मेकडोनाल्ड के भारत में बिकने वाले उत्पाद अन्य राष्ट्रों में बिकने वाले उत्पादों से भिन्न हैं। इसी प्रकार लिरिल का साबुन जापान में भारतीय साबुन की तुलना में पूर्णतः भिन्न है।

इस अवधारणा में सर्वप्रथम स्थानीय आवश्यकताओं का अनुमान लगाया जाता है तथा वहॉ की मॉग का आकलन किया जाता है। तत्पश्चात अपने उत्पाद को उपरोक्तानुरुप परिवर्तित तथा संवर्द्धित किया जाता है। निरन्तर बाजार पर नजर रखी जाती है तथा अपने उत्पाद को स्थानीय उपभोक्ताओं के अनुकूल बनाया जाता है।

रणनीतिक प्रबन्धन की दृष्टि से वैश्वीकरण एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। किसी स्थानीय कम्पनी के लिए विदेशी कम्पनी का बाजार में आगमन उसके अस्तित्व तथा विकास के लिए एक बड़ी चुनौती है। उसे यह निर्धारित करना होगा कि अपने संगठन, कार्यशैली तथा उत्पाद में कौन सा तथा कितना बदलाव किया जाय कि पुराने स्थानीय प्रतिस्पर्धियों के साथ ही विदेशी फर्मों का भी सामना किया जा सके। वैश्वीकरण के कारण स्थानीय कम्पनियों के लिए अन्य देशों में विस्तार का अवसर भी प्राप्त होता है। उन्हें अपनी रणनीति में इस दृष्टि से भी पुनर्विचार करना चाहिए कि वे किस प्रकार विदेशों में अपने उत्पाद की मॉग सृजित कर सकते हैं। भारत के संदर्भ में टाटा, आदित्य बिरला, इन्फोसिस, महिन्द्रा, डाबर, आईटीसी, रिलाइन्स, ओएनजीसी आदि को वैश्वीकरण एक अवसर के रुप में प्राप्त हुआ। श्रम शक्ति को भी इस परिवर्तन से लाभ हुआ है। बिल गेट्स के अनुसार– भारत में साफ्टवेयर पेशेवरों का जबरदस्त समूह है तथा विश्व को इसका लाभ लेना चाहिए।

15.3 रणनीति एवं परिवर्तन प्रबन्ध

परिवर्तन जीवन का नियम है। हमारे परिवेश में जो कुछ भी है वह परिवर्तनशील है । इसीलिए यह भी कहा जाता है कि केवल एक ही चीज अपरिवर्तनशील है और वह है परिवर्तन। जब भी कोई व्यक्ति (अथवा फर्म) कोई निर्णय लेता है तो तात्कालिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर सर्वोत्तम निर्णय ही लेता है किन्तु कालान्तर में यह प्रतीत होता है कि निर्णय की प्रभावशीलता कम हो गई है। अतः निर्णयों पर पुनर्विचार कर नई नीति बनाई जाती है। वस्तुतः सरकारी नीतियों, अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों, व्यापारिक पर्यावरण, विधिक निर्णयों, सामाजिक परिवर्तनों का प्रभाव व्यापारिक परिस्थितियों पर पड़ता है तथा पूर्व के निर्णय निष्प्रभावी हो जाते हैं।

परिवर्तन सामान्य अथवा तीव्र हो सकता है, आंशिक अथवा पूर्ण हो सकता है, कम अथवा अधिक महत्वपूर्ण हो सकता है या प्रत्याशित अथवा अप्रत्याशित हो सकता है किन्तु परिवर्तनों का सामना करना किसी भी संगठन के लिए अपरिहार्य है। पीटर एफ0 ड्रकर के अनुसार– बहुत कम व्यवसाय ही ऐसे होते हैं जिनमें 5–7 साल तक

भी कोई बड़ा परिवर्तन नहीं होता तथा उस मूल अवधारणा में वृहद पुनर्विचार नहीं होता जिस पर वह आधारित है।

15.3.1 परिवर्तन के अवरोध–

परिवर्तन होना सुनिश्चित होने पर भी यह सामान्यतः पाया जाता है कि किसी भी प्रकार के परिवर्तन को संगठन में लागू करना अत्यन्त चुनौतीपूर्ण होता है। परिवर्तन के प्रमुख अवरोध निम्नलिखित हैं–

1 **समस्या के प्रति उपेक्षाभाव–** अनेक परिस्थितियों में यह पाया जाता है कि संगठन के नीति नियंता समस्या के प्रति अनजान रहते हैं अथवा उन्हें समस्या के परिणामों की गम्भीरता का अनुमान नहीं होता। वे समस्या के प्रति उपेक्षा का भाव रखते हैं जिसके कारण वे किसी प्रकार के नीतिगत परिवर्तन के लिए सहमत नहीं होते हैं।

2 **परिवर्तन का मनोवैज्ञानिक विरोध–** मानव स्वभाव इस प्रकार का है कि वह किसी भी प्रकार के परिवर्तन को आसानी से स्वीकार नहीं करता। वह अपनी वर्तमान स्थिति से इस प्रकार सामन्जस्य स्थापित कर लेता है कि उसमें कोई भी परिवर्तन उसे असहज कर देता है। वह प्रत्येक परिवर्तन का विरोध करने लगता है जबकि यह उसके लिए आत्मघाती सिद्ध होता है।

3 **संसाधनों की कमी–** अनेक मामलों में यह पाया जाता है कि प्रबन्धन यद्यपि समस्या की विकरालता समझ जाता है किन्तु उसके पास ऐसा कोई विकल्प उपलब्ध नहीं होता जो उस समस्या से मुक्ति दिला सके। संसाधनों के अभाव में वह प्रायः अनिर्णय की अवस्था में बना रहता है। उदाहरण के लिए यदि किसी व्यापार में परिवर्तित परिस्थिति का सामना करने के लिए भारी विनियोग की आवश्यकता है और कम्पनी के पास पर्याप्त वित्तीय संसाधन उपलब्ध नहीं हैं तो वह चाहकर भी परिवर्तन का सामना नहीं कर सकती।

4 **अन्य कारण–** कभी–कभी जनविरोध के कारण कम्पनी को अपनी परिवर्तनकारी नीतियों को वापस लेना पडता है। राजनीतिक अथवा विधिक परिस्थितियॉं भी परिवर्तन लागू करने में अनेक अवरोध उपस्थित करती हैं।

उपरोक्त परिस्थितियों के उपरान्त भी कम्पनी अपने व्यापार के विकास व विस्तार के लिए समय–समय पर आवश्यक नीतिगत परिवर्तन करती है क्योंकि ये परिवर्तन अपरिहार्य होते हैं। रणनीतिक निर्णयन में यह भी आवश्यक है कि परिवर्तन यदि समय रहते कर लिए जाये तो समस्या से बचाव सरल होता है किन्तु पानी सर पर गुजर जाये तो उनका लाभ नहीं होता। इसीलिए व्यापार में रणनीतिकार की दूरदृष्टि अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। भारत में कोक पेय पदार्थों (कोका कोला, पेप्सी आदि) की जॉंच में पेस्टीसाइड्स की अधिकता पाये जाने के बाद उसके विरुद्ध जनजागरण के कारण इन पेयों की बिक्री में तीव्र गिरावट आने से इन कम्पनियों ने एक ओर अपने पेयों को सुरक्षित बताने का विज्ञापन अभियान चलाया किन्तु साथ ही वैकल्पिक बाजार की तलाश भी प्रारम्भ कर दी। इस क्रम में उन्होंने पैकेज्ड मिनरल वाटर तथा जूस (मिनटमेड, माजा, किनले, ट्रोपिकाना, एक्वाफिना आदि) के क्षेत्रों में अपनी दस्तक दी। इस परिवर्तन ने इन कम्पनियों को नवजीवन प्रदान किया।

परिवर्तन प्रबन्ध अत्यन्त संवेदनशील विषय है। इसे सावधानी के साथ तथा रणनीतिक उपायों को अपनाते हुए लागू करना होता है अन्यथा इसके परिणाम विपरीत भी हो सकते है। प्रसिद्ध प्रबन्धशास्त्री जॉन पी0 कॉटर ने अपनी पुस्तक मैनेजिंग चेन्ज[6] में परिवर्तन प्रबन्ध के सम्बन्ध में रणनीति लागू करने के लिए आठ सोपानों की व्याख्या की है–

एक– परिवर्तन की आवश्यकता जाग्रत करना

दो– आवश्यक निर्देशन दल तैयार करना

तीन– भावनात्मक पक्ष को सम्मिलित करते हुएरणनीतिक संदृष्टि विकसित करना

चार– अधिक से अधिक पक्षकारों को सम्मिलित करते हुए परिवर्तन का सम्प्रेषण करना

पॉच– प्रतिक्रिया व सुझाव प्राप्त करना तथा कमियों व बाधाओं को दूर करना

छः– आसान तथा अल्पकालिक लक्ष्यों को प्राप्त करना तथा बड़े लक्ष्य की ओर बढ़ना

सात– परिवर्तन की दिशा में निरन्तर काम करना तथा उत्साह को बनाए रखना

आठ– परिवर्तन को संगठन की संस्कृति में सम्मिलित करना

यह पहले ही चर्चा हो चुकी है कि परिवर्तन से बचा नहीं जा सकता। इसे अपनाकर ही संगठन का अस्तित्व बनाये रखा जा सकता है। केवल यह तय किया जा सकता है कि परिवर्तन किस समय तथा किस प्रकार प्रभावी ढंग के लागू किया जाये जिससे कि अपेक्षित सफलता प्राप्त हो सके।

15.4 रणनीति एवं ज्ञान प्रबन्धन

ज्ञान प्रबन्धन आधुनिक प्रबन्धन प्रणाली के सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्यों में सम्मिलित है।विभिन्न विद्वानों व शब्दकोषों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि **अवलोकन, अध्ययन, अनुभव व अनुसंधान के माध्यम से अर्जित सूचना, तथ्य अथवा विचार को ज्ञान की श्रेणी में सम्मिलित किया जाता है**। इस ज्ञान की आवश्यकता आधुनिक प्रतिस्पर्धात्मक युग में व्यापारिक संगठनों को बहुत अधिक है।सूचना के संकलन, समेकन तथा विश्लेषण के द्वारा ही ज्ञान की प्राप्ति होती है जो किसी व्यक्ति अथवा संगठन को नीति निर्धारण में मदद करती है। ज्ञान प्रबन्धन सम्बन्धित सूचनाओं को व्यावहारिक लाभ के योग्य बनाने की प्रक्रिया है। वस्तुतः **उपयुक्त समय पर, उपयुक्त ज्ञान (अथवा सूचना) को, उपयुक्त स्थान तक पहॅुचाना तथा उसका उपयुक्ततम उपयोग सुनिश्चित करना ही ज्ञान प्रबन्धन है**।

15.4.1 ज्ञान प्रबन्धन की प्रक्रिया–

ज्ञान प्रबन्धन की प्रक्रिया को निम्न तालिका द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है–

	ज्ञान प्रबन्धन			
प्रक्रिया	**संग्रहण**	**व्यवस्थीकरण**	**परिष्कृतीकरण**	**विस्तारण**
गतिविधियॉ	1. समंक अभिलेखन 2-	1. कैटेलॉगिंग 2. सूचीकरण 3. फिल्टरिंग	1. संदर्भांकन 2. सहयोजन 3. सुदृढीकरण	1. प्रवाह(फ्लो) 2. सहभाजन (शेयरिंग)

	O.C.R.एवंस्कैनिंग 3.ध्वन्यात्मक सूचनाओं को सम्मिलित करना 4. अन्य श्रोतों से प्राप्त सूचनाओं को जोड़ना	4. संयोजन	4. प्रस्तुतीकरण 5. सूचना की खोज	3. सतर्कता (एलर्ट) 4. सम्वर्द्धन (पुश)

विभिन्न विद्वानों ने ज्ञान प्रबन्धन की निम्नलिखित प्रक्रिया बताई है–

1. सर्वप्रथम ज्ञान व सूचना व ज्ञान सम्बन्धी आवश्यकताओं का आकलन किया जाता है।
2. यह अनुमान लगाया जाता है कि सम्बन्धित सूचना किस माध्यम/माध्यमों से एकत्रित की जा सकती है।
3. तत्पश्चात् सूचना का एकत्रीकरण किया जाता है। विभिन्न प्रकार की सूचना के लिए भिन्न विधियों का प्रयोग किया जाता है।
4. संकलित सूचना का प्रसंस्करण किया जाता है अर्थात् उसे प्रयोग लाने योग्य प्रारूप में विन्यासित किया जाता है। विन्यासित सूचनाओं का विश्लेषण किया जाता है। व्यापार के आकार तथा प्रकार के अनुसार विश्लेषण रीतियों का प्रयोग किया जाता है।
5. विश्लेषण परिणामों का प्रदर्शनयोग्य तथा प्रभावशाली प्रस्तुतीकरण किया जाता है।
6. सूचनाओं को सुरक्षित रखा जाता है जिससे कि भविष्य में आवश्यक होने पर उसका प्रयोग किया जा सके।
7. संगठन में एकत्रित सूचनाओं के प्रभावी प्रयोग के लिए एक मजबूत सूचना प्रणाली का विकास किया जाता है जिससे कि अनवरत सही सूचना सही समय पर मिल सके।

ज्ञान प्रबन्धन के लाभ निम्नलिखित हैं–

1. यह नीति निर्माण में सहायक है। सूचनाओं के परिणामों के आधार पर किसी नीति की सफलता या असफलता का अनुमान लगाना आसान होता है।
2. यह नियन्त्रण में सहायक होता है। जिन क्षेत्रों के सम्बन्ध में सूचनाएं सकारात्मक तथा आशा से कम हैं वहॉं विशेष ध्यान देकर संगठन को मजबूत किया जाता है।
3. ज्ञान प्रबन्धन सभी विभागों में निर्णयन का आधार है। समस्त निर्णयों को लेने से पहले सम्बन्धित ऑंकड़ों व सूचनाओं का अध्ययन किया जाता है।
4. यहपूर्वानुमान का आधार भी है। पूर्व सूचनाओं के आधार पर प्रवृत्ति विश्लेषण आदि के द्वारा पूर्वानुमान ज्ञात किये जाते हैं।

5. ज्ञान प्रबन्धन के द्वारा ही संगठन में स्वयं के तथा अन्य संगठनों, विभागों आदि के सम्बन्ध में सूचना एकत्रित, विश्लेषित व प्रस्तुत की जाती है। इस प्रकार यह संगठन में शोध एवं विकास का आधार होता है।

15.4.2 रणनीति निर्धारण में ज्ञान प्रबन्धन का योगदान

ज्ञान सूचनाओं का परिष्कृत रुप होता है। सूचना निरपेक्ष होती हैं। इनकी उपयोगिता इनके उपयोगकर्ता के कौशल पर निर्भर है। ज्ञान प्रबन्धन सूचनाओं के एकत्रण, संयोजन, विश्लेषण तथा निर्णयन की एक ऐसी विधा है जो संगठन को एक सुदृढ़ आधार प्रदान करती है। कम्पनी का उच्च प्रबन्धन संगठन की क्रियाओं तथा सफलता–असफलता का पूर्ण अभिलेख रखते हुए उसका विश्लेषण करती है। कम्पनी अपने श्रोतों के माध्यम से अन्य प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की सूचनाओं का भी विश्लेषण करते हुए तुलनात्मक अध्ययन करती है जिससे कि रणनीतिक निर्णय लेने में आसानी होती है। ज्ञान प्रबन्धन आधुनिक युग में व्यावसायिक सफलता के लिए अनिवार्य विधा हो गई है।

15.5 श्रेणीयन (पोर्टफोलिओ) रणनीति

वर्तमान व्यावसायिक जगत में व्यापार के इतने प्रारुप उद्घाटित हो चुके हैं कि यह ज्ञात करना अत्यन्त कठिन है कि किस व्यापार में तथा किस स्तर पर व्यवहार से व्यापार में सफलता प्राप्त होगी। अनेकों व्यापारिक योजनाओं तथा प्रत्येक के लिए परिस्थिति के अनुसार पृथक नीतियों की आवश्यकता होती है। श्रेणीयन रणनीति का आशय उन योजनाओं का चुनाव करने से है जो वर्तमान व्यापार के लिए तात्कालिक परिस्थितियों तथा भावी आवश्यकताओं की दृष्टिगत रखते हुए उपयुक्त है तथा यह प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की रणनीति से मुकाबला करने में भी सक्षम है। वर्तमान युग में पोर्टफोलिओ के मूल्यांकन व प्रबन्धन के विभिन्न मॉडल उपयोग किये जाते हैं– बी0सी0जी0 मेट्रिक्स माडल, जी0ई0 मल्टीफैक्टर पोर्टफोलियो मेट्रिक्स, शैल्स डाइरेक्शनल पॉलिसी मेट्रिक्स, हॉफर प्रोडक्ट / मार्केट इवैल्युएशन मेट्रिक्स आदि।

15.5.1 श्रेणीयन रणनीति को प्रभावित करने वाले घटक–

श्रेणीयन रणनीति व्यापार की समस्त गतिविधियों को सम्मिलित करते हुए तथा अन्य कम्पनियों द्वारा अपनाई गई नीतियों के आधार पर तय की जाती है। निम्नलिखित घटक श्रेणीयन रणनीति को प्रभावित करते हैं–

1. **संगठन की संदृष्टि व ध्येय**– संदृष्टि वह वक्तव्य होता है जो सम्पूर्ण संगठन के लिए एक दिशा सूचक यन्त्र का कार्य करता है। संगठन के प्रबन्धन के लिए रणनीति निर्माण में यह मार्गदर्शन करता है तथा उन्हें कुछ विशिष्ट मार्गों पर चलने अथवा न चलने के लिए निर्देशित करता है। इसप्रकार संगठन विभिन्न नीतियों में से उनका चुनाव करता है जो उस संगठन की संदृष्टि के अनुकूल हो। संदृष्टि के आधार पर ही ध्येय निर्धारित होते हैं। नीतियों का चयन करने में ध्येय भी समान रुप से महत्वपूर्ण हैं।
2. **नैतिक मूल्य एवं व्यवहार**– प्रत्येक संगठन अपने जीवनकाल में किसी विशेष प्रकार से अपनी छवि विकसित कर लेता है तथा किसी भी स्थिति में उससे

बाहर निकलना पसन्द नहीं करता। ये मूल्य उसकी यू0एस0पी0 या विशिष्टता होते हैं। कम्पनी के लिए नीतियों का चयन करने में यह अनिवार्यतः ध्यान रखा जाता है कि वे संचालकों द्वारा स्थापित मूल्यों के अनुरुप हों।

3. **सरकारी नीतियॉं**– सरकारी नीतियों का प्रत्यक्ष प्रभाव रणनीतिक पोर्टफोलिओ के निर्माण पर पड़ता है। संगठन की रणनीति में जिन विभिन्न उपनीतियों का सामंजस्य रखा जाता है, उनमें सरकारी निर्णयों के अनुरुप तत्काल परिवर्तन करने पड़तें हैं। उदाहरणार्थ–यदि सरकार किसी विशेष क्षेत्र में प्रोत्साहन योजना लागू करती है तो कम्पनी उस क्षेत्र में भावी सम्भावनाओं को देखते हुए अचानक निवेश के लिए तैयार हो जाती है जबकि वह पूर्व में किसी अन्य क्षेत्र में विस्तार की योजना बना रही थी।
4. **उत्पाद जीवन चक्र की दशा**– उत्पाद जीवन चक्र की दशा भी पोर्टफोलियो प्रबन्धन की नीतियों को प्रभावित करती है। यदि कोई उत्पाद जीवन चक्र में पतन की अवस्था में है तो कम्पनी को उक्त उत्पाद के उत्पादन व विकास के स्थान पर नई वस्तु को बाजार में लाना अधिक लाभप्रद हो सकता है।

15.6 रणनीति तथा विलय एवं अधिग्रहण

विश्वव्यापी उदारीकरण के वातावरण के फलस्वरुप विभिन्न देशों में कम्पनियों को अन्य देशों की फर्मों द्वारा सीधी चुनौती प्राप्त होती है। इस भागदौड़ में देशी तथा विदेशी कम्पनियॉ अपने व्यापार को सुदृढ बनाने के लिए अन्य व्यापारों के साथ तालमेल बनाती हैं। इस क्रम में कम्पनियों को विलय व अधिग्रहण का सहारा लेना होता है।

15.6.1 विलय एवं अधिग्रहण–

दो व्यापारिक इकाइयों के व्यापार को मिलाकर एक करने की क्रिया को विलय अथवा अधिग्रहण कहा जाता है। तकनीकी रुप से विलय का आशय है दो व्यापारों एकीकरण करके किसी नए व्यापार को स्थापित करना। इसीप्रकार अधिग्रहण का अर्थ है किसी बड़ी कम्पनी द्वारा किसी छोटी अथवा कमजोर कम्पनी के व्यवसाय को क्रय करना। सामान्यतः इन दोनों घटनाओं को अलग करके नहीं देखा जाता है तथा किसी भी प्रकार से दो व्यापारों के मिलन को इस संयुक्त नाम से जानते हैं। इस विलय के विभिन्न कारण हो सकते हैं किन्तु उद्देश्य एक ही है– पारस्परिक लाभ। प्रायः कम्पनियों के मिलन से प्रतिस्पर्धा में कमी आती है, लागत में कमी आती है तथा व्यापार का विकास होता है।

विश्व अर्थव्यवस्था में अनेक बार विलय की लहरें आई हैं। इनमें आन्तरिक अथवा वाह्य कारणों से बहुत सी फर्मों ने पारस्परिक विलय का मार्ग अपना लिया था। विलय व अधिग्रहण की प्रमुख लहरें निम्न अवधियों में अनुभव की गई हैं–

प्रथम–	1895–1904
द्वितीय–	1922–1929
तृतीय–	1940–1947
चतुर्थ–	1966–1969
पंचम–	1981–1989

षष्टम– 1992–2000

सप्तम्– 2003 के बाद

बहुदेशीय व्यापार समझौते के आठवें चक्र के अन्तर्गत 1986 से 1994 के मध्य हुए उरुग्वे सम्मेलन में 123 देशों के मध्य विभिन्न समझौतों तथा 1995 में विश्व व्यापार संगठन की स्थापना के वातावरण में विश्व भर में उदारता की तीव्र लहर चली जिसके फलस्वरुप 1992 से 2000 के मध्य विलय तथा अधिग्रहण के द्वारा व्यापार के विकास के प्रयास सभी देशों के व्यापारिक प्रतिष्ठानों के द्वारा किये जाने लगे। पुनः इन प्रयासों में 2003 के बाद एक और लहर दिखाई दी। भारत की दृष्टि से वर्तमान लहर में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर टाटा स्टील द्वारा कोरस समूह का (2007), भारती एयरटेल द्वारा जेन अफ्रीका का (2010), अदाणी माइनिंग द्वारा लिंक एनर्जी का (2010), टाटा मोटर्स द्वारा जगुआर कार का (2008) व अन्य अधिग्रहण महत्वपूर्ण हैं।

सामान्यतः विलय के प्रकार निम्नलिखित हैं–

विलय एवं अधिग्रहण		
समतल	**क्षैतिज**	**समूहन (संपिण्डन)**
समान कार्य व व्यवसाय वाली फर्मों का विलय	सहयोगी कार्यों व व्यवसाय वाली फर्मों का विलय	फर्म केव्यवसाय का आकार बड़ा करने के लिए अन्य प्रकृति की फर्म का विलय
दो बैंकों का विलय	रबर बनाने वाली कम्पनी का टायर बनाने वाली कम्पनी के साथ विलय	बहुउत्पादी कम्पनी के व्यापार का किसी अन्य क्षेत्र में कार्यरत कम्पनी के साथ विलय
उत्तरांचल ग्रामीण बैंक व नैनीताल अल्मोड़ा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक का विलय होकर उत्तराखण्ड ग्रामीण बैंक का उदय	पॉलिफिन रबर कैमिकल्स तथा अपोलो टायर्स का विलय	गोदरेज समूह द्वारागुडनाइट ब्राण्ड का अपने ग्रुप में अधिग्रहण करना

15.6.2 विलय व अधिग्रहण के लाभ–

प्रत्येक विलय व अधिग्रहण की अपनी एक कहानी होती है तथा यह सामान्यतः एक पारस्परिक हित की 'विन–विन स्टोरी' होती है तथापि कुछ अवसरों पर बलात् अधिग्रहण की घटनाएं भी परिलक्षित होती हैं।

विलय व अधिग्रहण के प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं–

1. **क्षमताओं का अनुकूलतम उपयोग**–कोई निर्माणी संगठन यदि अपनी पूर्ण क्षमता से इस कारण से उपयोग नहीं कर रहा है कि उसके पास उत्पाद को बेचने का बाजार उपलब्ध नहीं हैं तो वह किसी विक्रेता कम्पनी के साथ मिल सकता है जिससे कि वह पूर्ण क्षमता से उत्पादन में लिप्त हो

सके तथा विक्रय के प्रति आश्वस्त हो सके। दूसरी ओर विक्रेता भी उक्त उत्पाद की बिक्री के एकाधिकार का लाभ ले सकता है।

2. **लागत में कमी**–जब दोएक ही प्रकार की कम्पनियों के बीच विलय का समझौता होता है तो उनकी विक्रय की मात्रा बढ़ जाती है किन्तु प्रशासनिक लागतों में बहुत अधिक बचत होती है। ये बचत लाभों में वृद्धि का आधार बनते हैं।

3. **प्रतिस्पर्धा में कमी का लाभ**– दो प्रतिस्पर्धी कम्पनियों का विलय होने पर एक दूसरे से आगे बढ़ने की होड़ समाप्त हो जाती है। इससे विपणन व विज्ञापन पर होने वाला अनावश्यक दबाव कम होता है। स्वभाविक आन्तरिक प्रतिस्पर्धा का लाभ दोनों कम्पनियों को मिल जाता है। कभी–कभी किसी नई बड़ी अथवा बाहरी कम्पनी से मिलने वाली चुनौती से निबटने के लिए दो देशी कम्पनी विलय कर लेती हैं जिससे उनकी सम्मिलित शक्ति किसी अन्य बड़ी कम्पनी का मुकाबला करने सक्षम होती है।

4. **बाजार का विस्तार**– एक क्षेत्र में स्थापित कम्पनी जब किसी नए क्षेत्र में अपना विस्तार करना चाहती है तो वह उक्त क्षेत्र में पहले से कार्यरत कम्पनी का अधिग्रहण कर सकती है। ऐसे अधिग्रहण से स्थापित कम्पनी को नए क्षेत्र में पुरानी कम्पनी के अनुभवों का लाभ मिलता है। साथ ही, उक्त कम्पनी से होने वाली प्रतिस्पर्धा से भी बचाव होता है।

5. **उन्नत तकनीक का उपयोग**–नई तथा उन्नत तकनीक का उपयोग गुणवत्तापूर्ण, मितव्ययी तथा तीव्र गति उत्पादन के लिए किया जाता है जिसका उपयोग न कर पाने के कारण छोटी कम्पनी प्रतिस्पर्धा से बाहर हो सकती है। किसी अन्य कम्पनी में विलय के द्वारा दोनों कम्पनी मिलकर उन्नत तकनीक का लाभ उठा सकती हैं।

विलय व अधिग्रहण की कमियॉ– विलय व अधिग्रहण प्रायः तभी किया जाता है जबकि सभी पक्षों को उससे लाभ हो किन्तु व्यवहार में यह पाया जाता है कि इसके कारण पक्षकारों अथवा ग्राहकों व समाज को इस प्रक्रिया से कुछ हानि हो जाती है। विलय व अधिग्रहण की प्रमुख कमियॉ निम्नलिखित हैं–

1. **प्रबन्धकीय समस्याएं**– दो कम्पनियों के विलय में सबसे बड़ी समस्या उनके प्रबन्धकों, कार्मिकों आदि के सामंजस्य की होती है। प्रत्येक कम्पनी अपनी संदृष्टि के आधार पर अपना कार्य वातावरण तथा कार्य संस्कृति तैयार करती है। विलय की स्थिति में दो भिन्न संस्कृतियों को मिलकर कार्य करना होता है जिसके कारण टकराव की स्थिति बन सकती है।

2. **मूल्यों में वृद्धि**– दो कम्पनियों के विलय के कारण लागत में बचत होने से मूल्यों में कमी होने की अपेक्षा की जाती है किन्तु दो कम्पनियों का विलय प्रतिस्पर्धा में कमी लाता है जिससे कि मुनाफाखोरी का लालच वस्तुओं का मूल्य बढ़ाने के लिए प्रवृत्त करता है। कभी–कभी अपने प्रतिस्पर्धी से बढत लेने के लालच में कम्पनी किसी अन्य कम्पनी को उसके सामान्य मूल्य से

अधिक पर क्रय कर लेती हैं। इसका मूल्य चुकाना क्रेता कम्पनी को भारी पड़ता है और उसे मूल्य बढ़ाने पड़ते हैं।

3. **बलात् अधिग्रहण–** कभी–कभी कोई कम्पनी ऐसी परिस्थितियॉ उत्पन्न कर देती है कि दूसरी कम्पनी को विवश होकर अपना व्यापार बेचना पड़ता है। इसके लिए बाध्यकारी परिस्थितियॉ उत्पन्न की जाती हैं जिसका प्रभाव नकारात्मक होता है तथा अनेक विवाद भी न्यायालय में योजित हो जाते हैं।

विलय एवं अधिग्रहण कम्पनी की दीर्घकालीन नीतियों का अंग होते हैं। इसमें बाजार की शक्तियों के प्रभाव तथा राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय बाजार की प्रवृत्तियों के अनुसार रणनीतिक निर्णय लेने होते हैं। कम्पनी की संदृष्टि के अनुरुप प्रबन्धकों को इस प्रकार की रणनीति तैयार करनी होती हैं जिनमें वह विलय को सफलतापूर्वक पूर्ण करा सके। विक्रेता की दृष्टि से व्यापार की सम्पत्तियों का अधिकतम मूल्यांकन कराना तथा क्रेता की दृष्टि से विलय के बाद की परिस्थितियों में दीर्घकालीन लाभ के लक्ष्य को विलय का आधार बनाया जाता है जिसके लिए तदनुरूप नीतियों व रणनीतियों का निर्माण किया जाता है।

15.7 रणनीति एवं समाज सेवी संगठन, न्यास आदि गैर व्यापारिक संगठन

सामान्यतः रणनीतिक प्रबन्धन के अन्तर्गत व्यापारिक संगठनों का अध्ययन किया जाता है जबकि रणनीति की आवश्यकता उन संगठनों को भी होती है जिनका उद्देश्य लाभ कमाना नहीं होता। ये संगठन किसी विशेष सामाजिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए संचालित किए जाते हैं। प्रायः किसी न्यास (ट्रस्ट) के माध्यम से इनको विद्यालय, अस्पताल, धर्मशाला, सहकारी स्टोर, वेलफेयर सोसायटी आदि के संचालन के लिए किया जाता है। इन संगठनों का संचालन निजी अथवा सार्वजनिक धन से किया जा सकता है। इन संगठनों का प्रबन्ध इनके सदस्यों के सदस्यता शुल्क, चन्दे, दान तथा गैर सदस्यों व सरकार से प्राप्त सहयोग से किया जाता है। ये संगठन लाभ को नहीं वरन् समाज तथा सदस्यों की सेवा को अपना लक्ष्य मानते हैं। ये संगठन व्यापारिक क्रियाएं भी करते हैं तथा लाभ भी उत्पन्न कर सकते हैं किन्तु इन लाभों का प्रयोग वे सामाजिक लाभ तथा सदस्यों के हितों की पूर्ति में ही करते हैं।

15.7.1 गैर व्यापारिक संगठनों (एन0बी0ओ0) में रणनीतिक प्रबन्धन–

इन संगठनों में रणनीति का प्रबन्धन अन्य व्यापारिक संगठनों के समान ही किया जाता है। इन संगठनों में जो भी आय प्राप्त की जाती है वो सामाजिक कार्यों में व्यय कर दी जाती है। अतः इनमें किसी प्रकार का व्यापार बढ़ाने का दबाव व्यावसायिक संगठनों के समान नहीं होता है। अन्य शब्दों में, इनमें उतनी ही आय उत्पन्न की जाती है जितनी कि आवश्यकता होती है। जब किसी संगठन में किसी बड़े उद्देश्य की पूर्ति के लिए लक्ष्य निर्धारित किया जाता है तो उसे व्यापारिक संस्थाओं की ही भॉति रणनीतिक प्रयास करने होते हैं।

15.7.2 गैर व्यापारिक संगठनों के रणनीतिक प्रबन्धन की बाधाएं–

व्यापारिक संगठनों की तुलना में गैर– व्यापारिक सामाजिक संगठनों के रणनीतिक प्रबन्धन में निम्नलिखित बाधाएं उपस्थित होती हैं–

- लाभ का लक्ष्य निर्धारित न होने के कारण वित्तीय प्रेरणा का अभाव होता है। अतः रणनीति को लागू करना कठिन हो जाता है।
- इन संगठनों से जुड़े लोग स्वेच्छापूर्वक कार्य करते हैं। इन्हें इच्छा के विरूद्ध अथवा इच्छा से अधिक कार्य नहीं लिया जा सकता।
- इन संगठनों का उद्देश्य समाजसेवा होता है। समाज सेवा के कार्य का मूल्यांकन करना सम्भव नहीं होता।
- प्रायः इन संगठनों का अपने सदस्यों व ग्राहकों से सम्बन्ध सामाजिक, मनोवैज्ञानिक तथा आध्यात्मिक होता है। अतः व्यापारिक संगठनों के समान रणनीति नहीं बनाई जा सकती।
- जिन व्यक्तियों, संगठनों तथा सरकारी संस्थाओं से सामाजिक संगठन को मदद मिलती है, उनकी निर्धारित शर्तों का पालन करने की भी अनिवार्यता होती है।
- अन्य हितधारकों (यथा– सामाजिक समूह, राजनीतिक संस्थाएं, विधिक पक्षकार, सरकारी विभाग आदि) के विचारों को भी संगठन अपनी रणनीति में सम्मिलित करता है क्योंकि प्रायः इनके प्रतिनिधि भी संचालकगणों में सम्मिलित होते हैं।

15.7.3 सामाजिक संगठनों की रणनीतियॉं–

सामाजिक संगठनों के उद्देश्य तथा संगठन संरचना व्यापारिक संगठनों से भिन्न होती हैं, अतः इनकी रणनीतियॉं का निर्माण व लक्ष्य भी कुछ अलग होता है। सामाजिक संगठनों द्वारा अपनाई जाने वाली कुछ नीतियॉं निम्नलिखित हैं–

रणनीतिक पिगीबैकिंग– पिगीबैकिंग शब्द का प्रयोग रणनीति के क्षेत्र में सर्वप्रथम आर0पी0नेल्सन ने अपने शोध पत्र[7] में किया। इससे आशय किसी सामाजिक संगठन की उन गतिविधियों से है जो सामाजिक कार्यों से होने वाली हानियों की पूर्ति के लिए प्रारम्भ की जाती हैं। पिगबैकिंग गतिविधियों से व्यापारिक गतिविधियों की भॉंति लाभ कमाया जाता है जिसका प्रयोग संगठन के मुख्य उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया जाता है। इसप्रकार संगठन गैर व्यापारिक होते हुए भी व्यापारिक गतिविधियॉं संचालित करते हैं तथा उन सभी रणनीतियों का पालन करते हैं जो कोई अन्य व्यापारिक संगठन करता है। पिगीबैकिंग करते समय यह ध्यान रखा जाता है कि संगठन का मूल उद्देश्य बाधित न हो, अतः संगठन यह विचार करता है कि व्यापारिक गतिविधि उनके मूल विचार के अनुकूल हो, उसके संचालन के लिए आवश्यक सुविधा, योग्यता, क्षमता, पूॅंजी आदि उपलब्ध हो। उदाहरण के लिए– डॉ0 श्राफ चैरिटेबल आई हास्पिटल (दिल्ली), अत्यन्त कम मूल्य पर निर्धनों की ऑंख की चिकित्सा करता है किन्तु साथ ही वह प्राइवेट पंजीकरण के रूप में धनवानों से अधिक फीस लेकर भी चिकित्सा करता है जिसके लिए उन्हें कुछ विशिष्ट अतिरिक्त सुविधाएं भी उपलब्ध कराता है। इसप्रकार यह चिकित्सालय एक ओर ऑंख का इलाज करने के अपने ध्येय के अनुरूप कार्य करता है वहीं वह अधिक लाभ का अर्जन भी करता है जिसका उपयोग वह गरीबों की चिकित्सा में करता है। वह अपने विशेषज्ञ चिकित्सकों,

आपरेशन थियेटर आदि का प्रयोग करके ही पिगीबैकिंग करता है जिसके लिए उसका ट्रस्ट उसे अनुमति देता है।

<u>अन्तर–संगठन सम्पर्क</u>– इस रणनीति के अन्तर्गत संगठन अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में अन्य संगठनों से सहयोग लेता है तथा किसी विशिष्ट कार्य के संचालन हेतु उनके साथ समझौते करता है। इस श्रृंखला में वे अपने विशेषज्ञ क्षेत्र से बाहर के कार्य के लिए किसी अन्य संगठन की सेवा का लाभ लेता है। उदाहरण के लिए कोई स्कूल अपने बच्चों के स्वास्थ्य की जॉच के लिए किसी अस्पताल का सहयोग ले अथवा कोई अस्पताल अपने रोगियों के लिए किसी अन्य अस्पताल के विशेषज्ञ चिकित्सकों या आपरेशन थियेटर की सेवाओं को प्राप्त करे। यह रणनीति संगठनों को लागत कम करने में भी सहयोग करती है क्योंकि किसी सेवा को अपने यहॉ स्थापित करने की तुलना में अन्य संगठन से प्राप्त करना मितव्ययी हो सकता है। कभी–कभी संगठन पारस्परिक सहयोग के लिए सेवाओं का आदान–प्रदान भी करते हैं।

<u>लाभ अर्जक संगठनों के साथ सम्पर्क</u>– इस रणनीति में गैर व्यापारिक सामाजिक संगठन अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए पेशेवर व्यापारिक लाभ अर्जक संगठनों के साथ अपने सम्पर्क को मजबूत करते हैं। इससे उन्हें धन की कमी का सामना नहीं करना पड़ता। इस प्रकार की रणनीति अपनाते समय लाभ अर्जक संस्था को गैर व्यापारिक सामाजिक संस्था के समर्पित संगठन का लाभ मिलता है तथा सामाजिक संस्था को पूॅजी व पेशेवर व्यवहार की। उदाहरण के लिए– एक प्रबन्धन अध्ययन की संस्था किसी बैंक के साथ समझौता करती है। इस समझौते के अन्तर्गत बैंक अपने विशेषज्ञ अधिकारी अतिथि व्याख्याता के रूप में भेजता है तथा छात्रों को अपने यहॉ रोजगार का आश्वासन देता है। दूसरी ओर प्रबन्ध अध्ययन संस्थान उस बैंक की आवश्यकताओं के अनुरूप प्रबन्धक तैयार करता है जिससे बैंक को प्रशिक्षण सम्बन्धी व्ययो में बचत होती है। इसप्रकार की रणनीति गैर व्यापारिक संगठनों को अनेक समस्याओं से बचाती है।

15.8 रणनीति एवं नैतिक मूल्य

नैतिकता एक दार्शनिक विषय है। किसी व्यक्ति के लिए कौन सा कार्य नैतिक अथवा अनैतिक है, इसका निर्धारण करना अत्यन्त कठिन है। साथ ही यह परिस्थिति आधारित भी है। एक परिस्थिति में एक कार्य नैतिक तो किसी अन्य परिस्थिति में वही कार्य अनैतिक भी सिद्ध हो सकता है। नैतिक मूल्य वह मानक होते हैं जिन्हें समाज में व्यापक रूप से स्वीकृति प्राप्त होती है। नैतिक मूल्य यह बताते हैं कि कौन सा कार्य सही है तथा कौन सा गलत। साथ ही, ये इस प्रश्न का भी उत्तर होते हैं कि क्या होना चाहिए। किसी व्यक्ति की ही भॉति व्यापारिक संगठनों को भी नैतिक मूल्यों का पालन करना होता है।

सामान्यतः व्यापार का उद्देश्य लाभ कमाना होता है तथा पुराने समय से ही यह माना जाता है कि लाभ कमाने के लालच में व्यापारी के नैतिक मूल्यों का पतन हो सकता है। कानून में Caveat Emptor अर्थात् क्रेता सावधान का स्थापित नियम यह इंगित करता है कि क्रय करते समय क्रेता को सावधानी रखनी चाहिए। यद्यपि इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि विक्रेता को बेईमानी करनी चाहिए। व्यापार में नैतिक

मूल्यों का पालन उतना ही आवश्यक है जितना सामान्य मानव जीवन में। व्यापार में नैतिक मूल्यों का आशय है व्यापारिक लक्ष्यों का मानवीय आवश्यकताओं व व्यवहार के साथ समन्वय। इसका अर्थ है कि व्यापार अपने बिक्री व लाभ सम्बन्धी लक्ष्यों को तो प्राप्त करे किन्तु इसके लिए ग्राहकों, कर्मचारियों, सरकार, समाज, पर्यावरण आदि का कोई अहित नहीं होना चाहिए।

व्यापार में नैतिक मूल्य निम्नलिखित सिद्धान्तों पर आधारित होते हैं–

1. व्यापार का मुख्य बिन्दु उसके ग्राहकहैं तथा व्यापार का उद्देश्य उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करना है।
2. उपभोक्ताओं के हितों तथा उनके स्वास्थ्य का ध्यान रखा जाना अनिवार्य है।
3. व्यापार के आकार में विस्तार के साथ ही साथ मानवीय मूल्यों का भी विकास होता है।
4. व्यापार को न्यास के सिद्धान्त पर चलाया जाना चाहिए। इसमें सेवा का स्थान लाभ के स्थान से ऊँचा होता है।
5. व्यापार को अपने समस्त हितधारकों (यथा– ग्राहक, कर्मचारी, आपूर्तिदाता, सरकार, समाज आदि) के प्रति उत्तरदायी नीतियों का पालन करना चाहिए।
6. विभिन्न हितधारकों के विरोधात्मक पक्षों के बीच तटस्थ भूमिका के साथ सहकार स्थापित करने का प्रयास करना चाहिए।

15.8.1 नैतिक मूल्यों सम्बन्धी रणनीति–

व्यावहारिक रूप से व्यापार में नैतिक मूल्यों का स्थान दीर्घकालीन सफलता के लिए महत्वपूर्ण है। कोई भी व्यापार अपनी ऊँचाइयों को तभी प्राप्त कर सकता है जबकि वह पूर्ण शुचिता के साथ अपने व्यापार को करे, किसी अनैतिक तथा अवांछित लाभ को प्राप्त करने का प्रयास न करे तथा अपने प्रतियोगियों के प्रति भी छल–कपट न करे। कोई भी व्यापारी अल्पकालीन लाभ के लिए अपनी साख को गॅवाना स्वीकार नहीं कर सकता। व्यापार की नैतिक मूल्यों सम्बन्धी विभिन्नरणनीतियों में उपयोगितावाद की रणनीति महत्वपूर्ण है जिसके अनुसार कोई व्यवहार तभी उचित है जबकि वह बड़े वर्ग के हितों की रक्षा करता है। यह नीति सर्वजन हिताय– सर्वजन सुखाय की भावना पर आधारित है। नैतिकता सबके सुख को संरक्षित करने का एक उपकरण है। दूसरी रणनीति सर्वोत्तमवाद की है। इस नीति के अनुसार जो न्यायपूर्ण वही नीतिपूर्ण है अर्थात् यदि सही तथा नीतिपूर्ण कार्य व्यापक हित में नहीं भी है तो भी उसे किया जाना चाहिए। यह रणनीति नीर–क्षीर विवेक के सूत्रवाक्य पर आधारित है। इनके अतिरिक्त विभाजनकारी न्याय का सिद्धान्त भी नैतिक मूल्यों के सम्बन्ध में प्रयोग किया जाता है जिसके अनुसार लाभों का विभाजन न्याय आधारित होना चाहिए न कि समानता आधारित। इसका अर्थ है कि जिसके लिए जो भी उचित हो उसे वह मिलना चाहिए अर्थात् यत् भद्रम तन्न आसुवः (जो उचित हो मिले) का सूत्रवाक्य इस नीति को व्याख्यायित करता ळें यदि गहनता से देखा जाय तो उपरोक्त तीनों नीतियॉ एक ही हैं क्योंकि यदि प्रत्येक को उसका उचित अंश प्राप्त हो जायेगा तो सब सुखी हो जायेंगे। इसप्रकार के निर्णय नैतिकता, न्याय तथा समाज के सभी मानदण्डों पर पूर्णतः खरे उतरेंगे।

नैतिकता का पालन राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय दोनों प्रकार के व्यापारों में किया जाना चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की दशा में आगन्तुक कम्पनी का यह कर्तव्य है कि वह अतिथि धर्म की मर्यादाओं का पालन करते हुए वहॉ के प्राकृतिक व मानव संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग करे। किसी प्रकार के हानिकारक तत्वों का प्रयोग उत्पाद के निर्माण अथवा प्रक्रिया में न करें। साथ ही, जो लाभ व्यापार से कमाया जा रहा है उसका एक अंश उस देश के विकास के लिए अवश्य उपयोग करें। इसप्रकार नैतिकता व्यापार के प्रत्येक रूप में समान रूप से महत्वपूर्ण है।

15.9 रणनीति एवं सामाजिक उत्तरदायित्व

पूर्व में भी यह चर्चा की जा चुकी है कि व्यापार का एकमात्र उद्देश्य अधिकतम लाभ कमाना माना जाता रहा है। इस सम्बन्ध में मिल्टन फ्रीडमैन का कथन–The business of business is business[8]– इन विचारों की पुष्टि करता है। फ्रीडमैन तथा अन्य अनेक विद्वान यह मानते थें कि व्यापार करना एक व्यक्तिगत क्रिया है। उससे प्राप्त लाभ पूर्णतः उसके स्वामियों की उद्यमिता का पारिश्रमिक है। वे यह भी मानते थे कि व्यापार के धन को किसी भी प्रकार के सामाजिक कार्य में लगाने का अर्थ है कि आप धन का उपयोग परिवर्तित कर रहे हैं।

विगत कुछ दशकों में व्यापारिक लाभों के प्रति विचारों में विश्व भर में परिवर्तन आया है। धीरे–धीरे यह धारणा पुष्ट होती जा रही है कि व्यापार एक साधन है साध्य नहीं अर्थात् व्यापार का लक्ष्य केवल अपने स्वामी के लिए लाभ कमाना नहीं है वरन् उसे समस्त सम्बन्धित पक्षकारों के प्रति सहृदय तथा उत्तरदायी होना चाहिए।

व्यापार के सामाजिक दायित्व को विभिन्न हितधारकों के सम्बन्ध में निम्न प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है–

1. **स्वामी अथवा अंशधारकों के प्रति–** व्यापार का सबसे बड़ा उत्तरदायित्व उसके स्वामी, प्रवर्तक, साझेदार या अंशधारक के प्रति होता है क्योंकि व्यापार का अस्तित्व उन्हीं संकल्पना, श्रम तथा जोखिम के फलस्वरूप होता है। अर्थशास्त्र में लाभ को जोखिम का प्रत्याय माना जाता है। अतः अपने स्वामी को व्यापार के समस्त लाभों को अर्पण करना व्यापार का कर्तव्य है। व्यापार का यह कर्तव्य है कि समस्त संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग करे, परिसम्पत्तियों का उचित प्रयोग करे, सन्तुलित विकास की योजनाओं को लागू करे तथा लाभांश का उचित व न्यायपूर्ण वितरण करे। व्यापार द्वारा अपने स्वामियों को व्यापार सम्बन्धी आवश्यक परिणामों व सूचनाओं से भी अवगत कराना चाहिए।
2. **ग्राहकों के प्रति–** ग्राहक सम्पूर्ण व्यापार के केन्द्र बिन्दु होते हैं। महात्मा गॉधी के अनुसार–''ग्राहक हमारे परिसर में आने वाला सबसे महत्वपूर्ण आगन्तुक है। वह हम पर निर्भर नहीं है वरन हम उस पर निर्भर हैं। वह हमारे काम में बाधा नहीं है। वह इसका मकसद है। वह कोई बाहरी व्यक्ति नहीं है। वह इसका एक अंश है। हम उसकी सेवा करके उसे कृतज्ञ नहीं कर रहे। वह हमें ऐसा करने का अवसर देकर हमें कृतज्ञ कर रहा है।'' इसप्रकार व्यापार का कर्तव्य है कि ग्राहक को गुणवत्तापूर्ण उत्पाद की आपूर्ति उचित मूल्य तथा उत्तम

सेवा के साथ प्रदान करे। व्यापार को कोई ऐसा कार्य नहीं करना चाहिए जिससे कि ग्राहक स्वयं को छला गया अनुभव करे।

3. **कर्मचारियों के प्रति–** कर्मचारी किसी व्यापार में रीढ़ की हड्डी के समान होते हैं। उनके आधार पर ही सम्पूर्ण संगठन संरचना का निर्माण होता है। प्रबन्धन के विभिन्न तत्वों में से मानव ही ऐसा है जो एक तत्व भी है तथा अन्य तत्वों का संचालक भी। वह माल, मशीन, मुद्रा आदि के संचालन, नियन्त्रण आदि का कार्य भी करता है अतः मानव संसाधन प्रबन्धन को किसी संगठन में महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। संतुष्ट कर्मचारी संगठन को सफलता तथा लाभ प्रदान करते हैं। संगठन का उत्तरदायित्व है कि वह कार्य का न्यायपूर्ण वितरण करे, उन्हें सेवाओं का उचित पारिश्रमिक प्रदान करे, कार्य का सकारात्मक वातावरण सृजित करे तथा कर्मचारियों को विकास का उचित अवसर प्रदान करे।

4. **सरकार के प्रति–** सरकार के प्रति व्यापार के अधिकांशतः उत्तरदायित्व वैधानिक हैं तथा उनके पूर्ण न होने पर विधिक दण्ड की व्यवस्था है किन्तु व्यापार को उन उत्तरदायित्वों का स्वेच्छा से पालन करना चाहिए। व्यापार का उत्तरदायित्व है कि वह सरकारी नियमों तथा व्यवस्थाओं का पालन करे, करों का ससमय भुगतान करे, वातावरण को प्रदूषित न करे तथा सरकारी नीतियों में सहयोग करे। उसे मिलावट, जमाखोरी, घटतौली, काला बाजारी जैसी दूषित प्रवृत्तियों से बचना चाहिए।

5. **सह–व्यापार के प्रति–** व्यापार का अपने साथ के अन्य व्यापारों के साथ प्रतिद्वन्द्वी का सम्बन्ध होता है तथापि उसके अन्य व्यापारों के प्रति कुछ उत्तरदायित्व भी होते हैं। उसे सदैव गुणवत्ता का विकास तथा उत्तम सेवा प्रदान करके ही स्वस्थ प्रतिस्पर्धा करना चाहिए। प्रतिबन्धित तथा अनियमित व्यापार के द्वारा कमाई गई सफलता व्यापारिक उत्तरदायित्वों का उल्लंधन है।

6. **समाज के प्रति–** पुरातन परम्परा के अनुसार भारत में प्रत्येक व्यक्ति अपने भोजन में से गाय, कौवे, कुत्ते को भी एक अंश अवश्य देता है। यह परम्परा इस बात का आभास कराती है कि किस प्रकार मनुष्य अपने साथ आसपास के परिवेश का भी ध्यान रख सकता है। व्यापार से कमाये गये लाभों का एक भाग समाज को दिये जाने की एक संस्कृति भारत में प्राचीन काल से रही है। पुराने व्यापारी कुँए खुदवाते थे, धर्मशाला, मन्दिर, स्कूल आदि बनवाते थे तथा गरीबों को दान देते थे। यह उन व्यापारियों का समाज के प्रति उत्तरदायित्वबोध था। आधुनिक युग में भी व्यापारी समाज के विभिन्न कार्यों में अपना सहयोग प्रदान करते हैं। आधुनिक युग में निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व के रुप में कम्पनी अपनी शुद्ध आय का 2 प्रतिशत सामाजिक कार्यों में व्यय करना होता है। ये व्यय सामान्यतः शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवार कल्याण तथा पर्यावरण केक्षेत्र में किये जाते हैं।

व्यापार अन्य विभिन्न रूपों में भी समाज की सेवा करते हैं। वे अच्छा सामान व सेवा उपलब्ध कराते हैं जिससे समाज का जीवन स्तर बढ़ता है। ये नवयुवकों को

रोजगार प्रदान करते हैं। व्यापार का उत्तरदायित्व है कि वह योग्यतानुसार रोजगार प्रदान करे जिससे कि जनशक्ति का विकास हो। ये युवाओं को इंटर्नशिप व प्रशिक्षण प्रदान करते हैं तथा उनके भविष्य का बनाने में सहयोग करते हैं।

15.10 सारांश

व्यापार का अर्थ है लाभ अर्जित करने के उद्‌देश्य से वस्तु व सेवाओं का प्रत्यक्ष अथवा धन के माध्यम से विनिमय। इसमें उत्पादन और वितरण सम्बन्धी क्रियाएं भी सम्मिलित होती हैं। विगत कुछ दशकों में आये क्रान्तिकारी परिवर्तनों के कारण व्यापारिक संगठनों को अपनी नीतियों का बार–बार विश्लेषण तथा परिवर्तन करने की आवश्यकता होने लगी है। आधुनिक युग में व्यापार नीति तथा रणनीति प्रबन्धन के क्षेत्र में जो परिवर्तन प्रभावकारी ढंग से परिलक्षित हुए हैं, उनमें प्रमुख हैं–वैश्वीकरण, परिवर्तन प्रबन्धन, ज्ञान प्रबन्धन, पोर्टफोलिओ, विलय व अधिग्रहण, लाभरहित संगठन, नैतिक मूल्य तथा सामाजिक उत्तर दायित्व।

वैश्वीकरण का अर्थ है विश्व अर्थव्यवस्था के साथ राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का सामन्जस्य करना। वैश्वीकरण एक ऐसी मानसिक अवस्था है जिसमें सम्पूर्ण विश्व को एक बाजार के रुप में देखा जाता है। इस अवस्था में बाजार में विश्वस्तरीय कम्पनियों के आने के कारण प्रतिस्पर्धा का स्वरूप बदल जाता है तथा रणनीति में तदनुरूप परिवर्तन करने पड़ते हैं। वैश्वीकरण की कमियों को दूर करने के लिए विश्वस्थानीयकरण का विचार सामने आया।इसके अनुसार वैश्विक तथा स्थानीय बाजार की नीतियों के समन्वयन को रणनीति का आधार बनाया जाता है जिससे कि वैश्वीकरण के लाभों के साथ स्थानीय विशेषज्ञता के लाभों का समन्वयन कर सर्वश्रेष्ठ परिणाम प्राप्त किये जा सकें।

परिवर्तन प्रबन्ध का अर्थ हैपरिवर्तनों को स्वीकार करना,तदनुरूप अपने नियमों को समायोजित करना तथा उनके आधार पर स्वयं को ढालना एक कठिन कार्य है। परिवर्तनों को लागू करने के लिए विशेष प्रकार की रणनीतिक सूझबूझ की आवश्यकता होती है।

अवलोकन, अध्ययन, अनुभव व अनुसंधान के माध्यम से अर्जित सूचना, तथ्य अथवा विचार को ज्ञान की श्रेणी में सम्मिलित किया जाता है। उपयुक्त समय पर, उपयुक्त ज्ञान (अथवा सूचना) को उपयुक्त स्थान तक पहॅुचाना तथा उसका उपयुक्ततम उपयोग सुनिश्चित करना ज्ञान प्रबन्धन कहलाता है।

पोर्टफोलिओ अथवा श्रेणीयनप्रबन्धन की रणनीति का आशय उन योजनाओं का चुनाव करने से है जो वर्तमान व्यापार के लिए वर्तमान परिस्थितियों तथा भावी आवश्यकताओं की दृष्टिगत रखते हुए उपयुक्त है तथा यह प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की रणनीति से मुकाबला करने में भी सक्षम है।

विलय एवं अधिग्रहण आधुनिक युग की चुनौती है। अब विश्वस्तरीय संगठनों के विस्तार के कारण स्थानीय उत्पादकों तथा व्यापारियों को अपने प्रारूप में परिवर्तन करना पड़ रहा है। व्यापार की आवश्यकता एवं परिस्थियों के आधार पर विभिन्न व्यापारिक संगठन विलय प्रस्तावों पर विचार करते हैं। कभी एक मजबूत कम्पनी का सामना दो कमजोर कम्पनी मिलकर करती हैं तो कभी एक बड़ी कम्पनी छोटी कम्पनी का व्यापार क्रय कर लेती है। विलय समतल, क्षैतिज अथवा समूहन प्रकृति का हो

सकता है। विलय से कम्पनियों को लागत कम करने तथा प्रतिस्पर्धा का सामना करने में मदद मिलती है। विलय के कारण कुछ प्रबन्धकीय समस्याएं भी उत्पन्न होती हैं जिनका समाधान उच्च प्रबन्धन के लिए चुनौती होता है।

गैर व्यापारिक सामाजिक संगठनों व न्यास आदि में रणनीतिक प्रबन्धन भी अन्य व्यापारिक संगठनों के समान ही किया जाता है। इन संगठनों में जो भी आय प्राप्त की जाती है वो सामाजिक कार्यों में व्यय कर दी जाती है। अतः इनमें किसी प्रकार का व्यापार बढ़ाने का दबाव व्यावसायिक संगठनों के समान नहीं होता है। जब किसी संगठन में किसी बड़े उद्देश्य की पूर्ति के लिए लक्ष्य निर्धारित किया जाता है तो उसे व्यापारिक संस्थाओं की ही भॉति रणनीतिक प्रयास करने होते हैं।

व्यापार में नैतिक मूल्यों का आशय है व्यापारिक लक्ष्यों का मानवीय आवश्यकताओं व व्यवहार के साथ समन्वय। इसका अर्थ है कि व्यापार अपने बिक्री व लाभ सम्बन्धी लक्ष्यों को तो प्राप्त करे किन्तु इसके लिए ग्राहकों, कर्मचारियों, सरकार, समाज, पर्यावरण आदि का कोई अहित नहीं होना चाहिए। विगत कुछ दशकों में व्यापार के सामाजिक दायित्वों के विचारों में विश्व भर में परिवर्तन आया है। धीरे–धीरे यह धारणा पुष्ट होती जा रही है कि व्यापार एक साधन है साध्य नहीं अर्थात् व्यापार का लक्ष्य केवल अपने स्वामी के लिए लाभ कमाना नहीं है वरन् उसे समस्त सम्बन्धित पक्षकारों के प्रति सहृदय तथा उत्तरदायी होना चाहिए।

15.11 शब्दावली

उदारीकरण	व्यापार करने की बाधाओं (लाइसेन्स आदि) को दूर करना तथा प्रक्रियाओं को सरल बनाने की नीति अथवा प्रक्रिया।
निजीकरण	सार्वजनिक क्षेत्र के लिए आरक्षित क्षेत्रों को निजी क्षेत्रों के लिए व्यापार हेतु खोलने की नीति अथवा प्रक्रिया।
वैश्वीकरण	राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का विश्व अर्थव्यवस्था से सामंजस्य स्थापित करने की नीति अथवा प्रक्रिया।
वैश्विक गॉव	उदारीकरण के फलस्वरूप विश्वभर में कहीं भी व्यापार करने की नीतियों के कारण सम्पूर्ण विश्व को एक गॉव के समान छोटा व सुगम मानने के लिए प्रयुक्त शब्द।
विश्वस्थानीयकरण	वैश्वीकरण तथा स्थानीयकरण के मध्य की वह नीति जिसमें स्थानीय विशेषज्ञता के साथ विश्व स्तरीय अर्थव्यवस्था के लाभ लिये जाने का प्रयास किया जाता है।
ओ0सी0आर0	ऑप्टीकल करेक्टर रिकॉगनीशन का लघु रुप जिसका आशय उस कम्प्यूटर आधारित

	प्रणाली से है जिसमें चित्रों अथवा हस्तलेखों को शब्दाक्षरों में परिवर्तित किया जाता है।
समूहन (संपिण्डन)	विभिन्न प्रकार के उद्योगों/व्यवसायों का समूह जिसे बाजार में साम्राज्य स्थापित करने की दृष्टि से गठित किया जाता है।
विन–विन स्टोरी	पारस्परिक हित की वह स्थिति/समझौता जिसमें दोनों पक्ष स्वयं को विजेता समझते हैं।
क्रेता सावधान	लेटिन शब्द Caveat Emptor (Buyer Beware)के लिए प्रयुक्त हिन्दी शब्द जिसका अर्थ है कि क्रेता को क्रय में आवश्यक सावधानी बरतनी चाहिए।
पिगीबैकिंग	रणनीतिक प्रबन्धन में इस शब्द का प्रयोग गैर लाभ संगठनों द्वारा किये जाने वाले उन व्यावसायिक कार्यों के लिए किया जाता है जो संगठन के मुख्य उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक हैं।
जी0ए0टी0टी0 (गैट)	जनरल एग्रीमेंट ऑन टैरिफ एण्ड ट्रेड (प्रशुल्क एवं व्यापार पर सामान्य समझौता)
डब्ल्यू0टी0ओ0	वर्ल्ड ट्रेड ऑगेनाइजेशन (विश्व व्यापार संगठन)
एल0पी0जी0	लिबरलाइजेशन, प्राइवेटाइजेशन, ग्लोबलाइजेशन (उदारीकरण, निजीकरण, वैश्वीकरण)
ओ0सी0आर0	ऑप्टीकल करेक्टर रिकॉगनीशन
यू0एस0पी0	यूनीक सेलिंग प्रेपोजीशन
बी0सी0जी0	बोस्टन कन्सल्टिंग ग्रुप

15.12 बोध प्रश्न

(क)– अपनी प्रगति जॉचें

बताएं निम्न कथन सत्य हैं अथवा असत्य–

(अ) सन् 1991 से भारत में आर्थिक सुधारों के रूप में उदारीकरण, निजीकरण तथा वैश्वीकरण का सूत्रपात किया गया। (सत्य/असत्य)

(आ) वैश्वीकरण से छोटे घरेलू उद्योगों को विशेष लाभ होता है। (सत्य/असत्य)

(इ) विश्वस्थानीयकरण में वैश्वीकरण तथा स्थानीयकरण के लाभों को समन्वित करने का सुझाव दिया गया है। (सत्य/असत्य)

(ई) मानव स्वभाव इस प्रकार का है कि वह किसी भी प्रकार के परिवर्तन को आसानी से स्वीकार नहीं करता। (सत्य/असत्य)

(उ) उदारीकरण की अवधारणा में बैंक उद्योगों को आसान शर्तों पर ऋण प्रदान करते हैं। (सत्य/असत्य)

(ऊ) श्रेणीयन रणनीति व्यापार के लिए तात्कालिक परिस्थितियों तथा भावी आवश्यकताओं की दृष्टिगत रखते हुए नीतियों का चुनाव है। यह प्रतिस्पर्धी कम्पनियों की रणनीति से मुकाबला करने में भी सक्षम होती है।(सत्य/असत्य)

(ख)– अपनी प्रगति जॉचें

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए–

15. अधिग्रहण का अर्थ है किसी बड़ी कम्पनी द्वारा किसी छोटी अथवा कमजोर कम्पनी के व्यवसाय को क्रय करना (विलय/अधिग्रहण) कहलाता है।
16. समान कार्य व व्यवसाय वाली फर्मों के विलय को (समतल/क्षैतिज) विलय कहते हैं।
17- कम्प्यूटर बनाने वाली कम्पनी तथा प्रिन्टर बनाने वाली कम्पनी का विलय (समतल/क्षैतिज) विलय का उदाहरण हैं।
18. किसी होटल उद्योग तथा फैशन उत्पाद बनाने वाली कम्पनी का विलय (समतल/क्षैतिज/ समूहन) विलय माना जायेगा।
19. गैर व्यावसायिक सामाजिक संगठनों का मुख्य उद्देश्य (लाभ कमाना/सामाजिक कार्य करना) होता है।
20. सामाजिक संस्थाएं अपने मुख्य सामाजिक उद्देश्य की पूर्ति हेतुधन उपलब्ध कराने के लिए लाभपूर्ण व्यवसाय भी संचालित कर सकती हैं इसे (पिगीबैकिंग/पिग्मी बैंकिंग) कहते हैं।
21. Caveat Emptor के अनुसार (क्रेता/विक्रेता) को सदैव सावधान रहना चाहिए।
22. Business of business is business. यह कथन (जान मिल्टन/मिल्टन फ्रीडमैन) का है।

15.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

(क) – अपनी प्रगति जॉचें

(अ) सत्य, (आ) असत्य, (इ) सत्य, (ई) सत्य, (उ) असत्य, (ऊ) सत्य

(ख) – अपनी प्रगति जॉचें

(1) अधिग्रहण(2) समतल (3) क्षैतिज (4) समूहन (5) सामाजिक कार्य करना (6) पिगीबैकिंग (7) क्रेता (8) मिल्टन फ्रीडमैन

15.14 स्वपरख प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न–

(अ) विश्वस्थानीयकरण की अवधारणा को समझाइए।

(आ) लोग परिवर्तन का विरोध क्यों करते हैं? परिवर्तन प्रबन्ध के संदर्भ में विरोध के मनोवैज्ञानिक कारणों की संक्षिप्त पड़ताल कीजिए।

(इ) विलय के समतल, क्षैतिज व समूहन प्रकारों को संक्षेप में समझाइए।

(ई) ''व्यापार ही व्यापार का व्यापार है।'' व्यापार के समाज के प्रति उत्तरदायित्व के सम्बन्ध में इस कथन को संक्षेप में समझाइए।

(उ) व्यापार में नैतिक मूल्यों की प्रभावशीलता किन सिद्धान्तों पर आधारित होती है?

निबन्धात्मक प्रश्न–

13. वैश्वीकरण से क्या आशय है? इसके गुण व दोषों का वर्णन कीजिए।
14. परिवर्तन प्रबन्धन किसे कहते हैं? इसकी प्रमुख कठिनाइयॉं क्या हैं? परिवर्तन प्रबन्ध को प्रभावशाली ढंग से कैसे लागू किया जा सकता है?
3. ज्ञान प्रबन्धन का आधुनिक युग में क्या महत्व है? इसकी प्रक्रिया समझाइए।
4. पोर्टफोलिओ प्रबन्धनको समझाइए। इसको प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।
5. विलय एवं अधिग्रहण से क्या आशय है? इसके लाभों को समझाइए। विलय व अधिग्रहण के दोषों का भी संक्षिप्त वर्णन कीजिऐ।
6. गैर व्यावसायिक सामाजिक संगठनों के सम्बन्ध में रणनीति निर्धारण में किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है? किन रणनीतियों का उपयोग सामान्यतः इस हेतु किया जाता है?
7. निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व से आप क्या समझते हैं? समाज के विभिन्न वर्गों के प्रति व्यापार के उत्तरदायित्व की व्याख्या कीजिए।

15.15 सन्दर्भ पुस्तकें

1 फिलिप कोटलर, मार्केटिंग मैनेजमेन्ट (नई दिल्ली, प्रेन्टिस हॉल आफ इण्डिया), 1994, पृ0 429।

2 https://en.wikipedia.org/wiki/Glocalization में संदर्भित(19/05/2016)

3 थेडॉर लेविट, द ग्लोबलाइजेशन ऑफ मार्केटस्, हार्वर्ड बिजनेस रिव्यू, मई–जून 1983, पृ0–93।

4 शुभंकर चटर्जी, ग्लोबलाइजेशन इन इण्डियाः इफेक्टस् एण्ड कांसिक्वेसेज, http://www.daldrup.org/University/International%20Management/Globalization%20in%20India.pdf.

5 पीटर एफ0 ड्रकर एवं इसाव नाकौची, ड्रकर आन एशिया, (आक्सफोर्ड बटरवर्थ हैनमैन, 1977) पृ0 98।

6 जॉन पी0 कॉटर, लीडिंग चेन्ज, हावर्ड बिजनेस रिव्यू प्रेस (1996)।

7 आर0पी0नेलसन, एस0एम0आर0फोरमःस्ट्रेटेजिक पिगीबैकिंग– ए सेल्फ सब्सिडाइजिंग स्ट्रेटेजी फॉर नान प्रोफिट इन्स्टीट्यूशन्स, स्लोन मैनेजमेन्ट रिव्यू, समर, 1982, पृ0 66–69।

8 मिल्टन फ्रीडमैन, द सोशल रेस्पोन्सिबिलिटी ऑफ बिजनेस टु इन्क्रीज प्रोफिट, न्यूयॉर्क टाइम मैगजीन, सितम्बर 13 1970, पृ0 32।

9. Business Policy and Strategic Management, P. Subba Rao, Himalaya Publishing House, Mumbai.

10. Strategic Management, Azhar Kazmi- Adela Kazmi, Tata McGraw- Hill Education (India) Private Limited, New Delhi.

11. Business Policy and Strategic Management, GV Satya Sekhar, I K International Publishing House, New Delhi.

12. Business Policy and Strategic Management, Francis Cherunilam, Himalaya Publishing House, Mumbai.